॥ श्रीः ॥

अष्टकवर्ग महानिबन्धः

(संस्कृत हिन्दी टीका द्वयोपेतः)

(Secrets of Ashtakavarga)

मूल ग्रन्थकार :
आचार्य मुकुन्द दैवज्ञ 'पर्वतीय'

व्याख्याकारः सम्पादकश्च
डॉ० सुरेश चन्द्र मिश्रः
आचार्य, एम० ए०, पी-एच, डी०
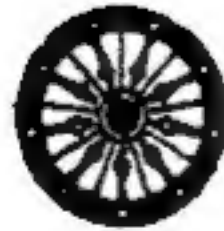
रंजन पब्लिकेशन्स
16, अन्सारी रोड, दरियागंज
नई दिल्ली-110002

विषयानुक्रम

प्ररोचना

अथैतदष्टकवर्गमहानिबन्धस्य मञ्जुलाक्षरयासंवलितमादिमं संस्करणं जगदीशकृपया देवद्विजगुरुप्रसादाच्च, ज्योतिःशास्त्रानुरागिणां पाठकानां समक्षं सुतरां चकास्ति।

अयं महानिबन्धः मूलरूपेण बाणबाणाब्धितुल्यैः श्लोकैरुपनिबद्धः सम्प्रति सम्यक् सम्पादनानुरोधादाकाशेषुसमुद्रतुल्यैः श्लोकैर्निबद्धकलेवरः ग्रन्थकृता स्वयं कृतया संस्कृतविवृत्योपेतः सम्प्रति हिन्दी व्याख्योपेतोऽपि सोदाहरण विवेचन संवलन पुरस्सरमावश्यकावान्तरविषयसुसज्जितश्च प्रथमतया ग्रन्थकृल्लेखानुसारं सुसम्पादनसंस्कारपरिष्कारादिपूर्वकं प्राकाश्यं नीतः।

अष्टकवर्गपद्धतिरतीव प्राचीना शुद्धा च पद्धतिः फलकथनप्रसंगे सुधीभिः मन्यते। अस्याः समाश्रयेण जातस्य जन्मकालिकग्रहस्थितेः गोचरेण सामञ्जस्य-मुपकल्प्य नितरां प्रामाणिकं भविष्यत्कथनं कर्तुं शक्यत इति न तिरोहितं ज्योतिर्विद्वरेण्याणाम्।

श्रूयते ,भगवान् भूतभावनः स्वयमेव पुरा यामलशास्त्रेऽष्टकवर्गरहस्यं प्रोवाच। पश्चाद् ब्रह्मनारदवशिष्ठपराशरादीनां ज्योतिः शास्त्रप्रवर्तकानामनु-क्रमेणेदं रहस्यं स्फोटमवाप।

इदमष्टकवर्गरहस्यमनेकैराचार्यैः स्वस्वग्रन्थेषु संक्षिप्ततया विवेचितं दृश्यते इत्थं समाम्नातपूर्वोऽयं विषयः सर्वथांकुरकल्प एव विविधाचार्यप्रज्ञामृतसेकमवाप्य सम्प्रति सजीवः प्रवर्धमानश्च वर्तते। समग्रविषयस्य विवेचनमेकत्रग्रन्थे ग्रहणत्याग-विवेकपुरस्सरं हीनोपादेयता विविक्तमिहास्मिन्नष्टकवर्गमहानिबन्धे ग्रन्थे विदुषा ग्रन्थकृता श्रीमुकुन्ददैवज्ञेन कृतं येनायं विषयः सम्यक्तया महावृक्षस्य विशालतां, प्रौढिमां, श्रान्ताश्रययोग्यतां च बिभ्राणः सम्प्रति समग्रतामुपलभ्य समुल्लसति।

यशःकायस्य ग्रन्थकारस्य यथान्ये ग्रन्थाः (भावमञ्जरी, आयुर्निर्णयः, नष्टजातकम्, प्रसवचिन्तामणिरित्याद्याः) प्रकाशितचराः सन्ति। येषामादिमौ भाव-मञ्जरी-आयुर्निर्णय इत्याख्यौ द्वौग्रन्थौ मयैव पाठकानां समक्षमुपस्थापितौ तथैवास्य ग्रन्थस्यापि सम्पादन व्याख्यादि कार्यस्य गुरुतरो भारः सामोदमश्रान्तेन गुरुप्रसादा-दूढः। हिन्दीसंस्कृतव्याख्याद्वयेनान्येन चावश्यकानुषंगिक विवेचनेन सुसज्जितोऽयं महानिबन्धः सनिश्चयं ज्योतिःशास्त्रेऽनुसंधित्सूनां जिज्ञासूनां पाठकानां भविष्या-

अध्यासूणां ज्योतिःशास्त्राजीविनां च कमप्युपकारं विधास्यतीति मत्वा सोत्कण्ठमहं ज्योतिःशास्त्रधुरन्धराणां परमविदुषामाशीः राशिप्रस्थानयोग्यमिमं सुविस्तीर्णम ग्रन्थग्रन्थिप्रस्तरं लिपिमयं सवर्णमसंकुलमर्थमप्यप्रकाशिनं च मार्गमकरवम् ।

अस्य ग्रन्थस्य सम्पादने परमगुरूणां विष्णुपदवीमधिरूढानां स्नेहिलः स्पर्श एव मम महान् निधिरभूत् ।

येषां प्राचां विदुषां ग्रन्था अत्र कार्ये उपकरणत्वमगुस्तेभ्यो नमोवाकमुदीर्य तेषामधमर्णतां वहन्नहं गौरवमनुभवामि । यैः सहृदयैः सुहृद्भिरधिकारिभिश्चात्र सहयोगं कृतवद्भिस्तैर्नूनमेवोपकृतिपथे विनिवेशितोऽहं तान् प्रति कृतज्ञतां ज्ञापयामि । ममायमुद्योगः सर्वथायुर्वेदान्तर्गतानां जीवकप्रभृतीनामष्टकवर्गाणां कल्पसंस्कृतौषधविशेष इव पाठकानां विषयदौर्बल्यनिवारणमुखं परिणाममेव विधास्यतीति दृढ़ विश्वसिमि ।

अन्ते च वन्दनीयान् विद्वद्वरिष्ठान् प्रति—

दोषजातमभिलक्ष्य भ्रान्तिजं
मर्षयेयुरिह नैजभावतः ।
सद्विशुद्धिरपि काम्यते यतो
गच्छतामेव च्युतिर्विलोक्यते ॥

विदुषां वशंवदः

सुरेशचन्द्र मिश्रः
श्री समन्तभद्र महाविद्यालय
दरियागंज नई दिल्लीस्थः

जगदीशरथयात्रा
आषाढ़ शु० २ सं० २०४३ वि०
९-७-१९८६ ई०

व्याख्यादिकृन्मंगलाचरणम्

वक्रतुण्डं महाकायं श्रीगणेशमहं भजे ।
पशुराडात्मजोऽप्येष प्रथते बुद्धिशालिताम् ॥१॥

क्लेशखण्डशोभितं नगात्मजाविलोभितम् ।
समग्रसृष्टिकारणं नमामिमृत्युदारणम् ॥२॥

यस्माज्जातं जगत्सर्वं यस्मिंल्लयमुपैष्यति ।
संस्थितिर्येन तं वन्दे गुरुं धाम्नान्निधिपरम् ॥३॥

मार्तण्डोऽत्र पराक्रमं कुमुदिनीनाथः कृतौ संस्थितिं,
धैर्यं ह्यस्य निरन्तरं सुविमलां मेधां धनिष्ठाभवः ।
धार्यं वाक्पतिरास्फुजिः विशदतां दृष्टेः प्रभाभास्वरां
सौख्यं वासरनायकः समुदयं लग्नं च पुष्णातु नः ॥४॥

नमाम्यष्टकवर्गाणामष्टौ या अधिदेवताः ।
अष्टाभिश्च सरस्वत्याः मात्राभिर्निर्मिताः खलु ॥५॥

नमो रुद्राय येनैतद् यामले भाषितं पुरा ।
हिताय सर्वलोकानां पश्चात्पाराशरेस्फुटम् ॥६॥

समाम्नाताः पूर्वैरिह फलितशास्त्रेऽष्टप्रमिताः,
सुवर्गा विद्वद्भिर्न खलु प्रथिताः स्पष्ट वचनैः ।
अभावं तद्दूरीकरणनिपुणां विस्तृतियुतां,
मिमां व्याख्यां कुर्वे सरलवचनैः मञ्जुरचनैः ॥७॥

'मञ्जुलाक्षरा'मित्याख्यामिमां व्याख्यामसंकुलाम् ।
विप्रवंश्यः सुरेशोऽयं मिश्रोपाह्वः प्रभाषते ॥८॥

एक दृष्टि में

(i) अष्टकवर्ग के समस्त पक्षों का विस्तृत अध्ययन।

(ii) भिन्नाष्टकवर्ग से विभिन्न विषयों का फलादेश।

(iii) सर्वाष्टक एवं गोचराष्टक के गूढ़ रहस्य।

(iv) गोचर व अष्टकवर्ग का अभूतपूर्व एकत्र फलादेश।

(v) जीवन की विभिन्न घटनाओं का समयबद्ध विवेचन।

(vi) विभिन्न रेखाओं का विस्तृत फल (अन्यत्र दुर्लभ)।

(vii) अष्टकवर्ग से सभी भावों का फलादेश।

(viii) अष्टकवर्ग एवं भाग्य, धन, वाहन एवं राजयोग।

(ix) अष्टकवर्ग एवं आयु का उत्तम विचार।

(x) अष्टकवर्ग दशा पद्धति एवं फल।

(xi) अष्टकवर्ग से व्यक्तिगत शुभाशुभ मुहूर्त एवं वेला निर्णय।

(xii) विभिन्न सम्बन्धियों का शुभाशुभ फल ज्ञान।

(xiii) फलादेश की समग्रता एवं सटीकता।

(xiv) वराह, मणित्थ, बादरायण, देवशाल, वृद्धयवन, रुद्रयामल आदि का सारसंग्रह।

(xv) मौलिक, सरल, विस्तृत, सोदाहरण, शास्त्रीय विवेचन।

(xvi) समग्र फल एवं विवेचन : अन्यत्र कहीं नहीं।

(xvii) मूल हस्तलिखित पाण्डुलिपि से प्रकाशित : कालजयी रचना।

मूल संस्कृत श्लोक, संस्कृतटीका, विस्तृत हिन्दी भाष्य (सोदाहरण)।

पं० महादेव पाठक-विरचितम्

जातक-तत्वम्

अखिलाक्षरा-हिन्दी-व्याख्योपेतम्

व्याख्याकार : संस्कर्ता च
डॉ० सुरेशचन्द्र मिश्र
आचार्य: एम० ए०, पी-एच डी०

(पराशर-जैमिनी-वराह-वैद्यनाथ-कल्याणवर्मा आदि के सिद्धान्तों का सूत्रशैली में सारभूत प्रामाणिक विवेचन)
(फलादेश का एक प्राचीन महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ)

प्रस्तुत ग्रन्थ में प्राचीन होराशास्त्र के ग्रन्थों में वर्णित मन्तव्यों का सारभूत तत्त्व प्रामाणिक रूप में प्रस्तुत है। पराशर, जैमिनी, वराह, कल्याण वर्मा, वैद्यनाथ आदि के ग्रन्थों का सार एक ही स्थान पर समेट कर रख दिया है। ऐसे विभिन्न सहस्राधिक योग, जो आपको एक स्थान पर देखने के लिए भी नहीं मिलेंगे, उन्हें ग्रन्थकार ने लगभग ढाई हजार सूत्रों में संकलित किया है। सूतिका, जातक, अरिष्ट, राजयोग, रोग, विकार, विवाह, दशान्तर्दशा, धन, विद्या, बुद्धि, आयु, व्यापार, सम्मान, यश, स्त्री जातक आदि समस्त विचारणीय विषयों का विवेचन यहाँ सरल और सारगर्भित भाषा में आपको मिलेगा। सरलता, विचारों की गूढ़ता, विवेचन की प्रामाणिकता, मूल पाठ की शुद्धता व प्रस्तुतीकरण की आधुनिकता सचमुच आपका मन मोह लेगी। फलित ज्योतिष का सौ वर्षों से भी अधिक प्राचीन एक ऐसा ग्रन्थ, जिससे प्रेरणा लेकर कई विशालकाय ग्रन्थों की रचना हुई है। आप इसे संग्रह करने के लोभ का संवरण नहीं कर पाएंगे।

जैमिनी की सूत्र शैली का सरल व विशिष्ट प्रयोग

मूल्य : १०० रुपये

मूक प्रश्न विचार (Silent Questions Answered)

विद्वान् लेखक डॉ० शुकदेव चतुर्वेदी, ज्योतिषाचार्य द्वारा रचित सर्वथा कठिन एवं अछूते विषय पर सरस एवं व्यावहारिक रचना जिसमें बिना बताए मन में सोचे हुए प्रश्नों का ज्योतिष द्वारा समाधान प्रस्तुत है। आशा है पाठकगण हमारी इस अनुपम पुस्तक पर मुग्ध हो जाएंगे।

भावमंजरी

प्राचीन, अनुपम, फलित ग्रन्थ भाषा टीका सहित

मूल रचनाकार स्व० आचार्य मुकुन्द दैवज्ञ पर्वतीय के दीर्घकालीन परिश्रम के सुफल रूप में यह ग्रन्थ कुण्डली के भावों का फलादेश कहने का सोपान है। हिन्दी व्याख्या डॉ० सुरेश चन्द्र मिश्र ने की है।

कुण्डली में स्थित ग्रह के बलाबल आदि के आधार पर फलकथन के प्रकार का ज्ञान तो आप सामान्यतः सभी एतद् विषयक ग्रन्थों में पा सकेंगे, किन्तु भावों की भी जन्मतिथि, नक्षत्र एवं मुहूर्त निकालकर तदनुसार भाव से सम्बन्धित फल कब, कितनी मात्रा में मिलेगा ? इसका समाधान आप प्रस्तुत ग्रन्थ में ही पा सकेंगे।

भाव में स्थित ग्रहों के आधार पर तो मनुष्य को जीवन में शुभाशुभ फल मिलता ही है। साथ ही भावेश, भावकारक एवं भाव का विचार भी इस सन्दर्भ में आवश्यक है। फलादेश का सर्वांगपूर्ण प्रकार बताने की दिशा में ग्रन्थकार के प्रयास की प्रशंसा किए बिना आप रह न सकेंगे।

अनेक अशुभ योगों के कारण ग्रहों से घिरे हुए भाव का फल भी मिलेगा। इसके लिए ग्रहों की परस्पर बाधकता का ज्ञान जरूरी है, जैसे कुण्डली में अशुभ राहु का दोष बलवान् बुध शान्त कर देता है तथा इन दोनों के अशुभ फल को अकेला शनि दूर कर सकता है। कुण्डली के फलादेश में उठने वाले कई अनुत्तरित प्रश्नों का उत्तम व तर्कसंगत समाधान आपको मिलेगा।

कई उच्चस्थ ग्रह होने पर भी व्यक्ति भाग्यहीन हो सकता है तथा नीच व अल्पबली ग्रहों के बावजूद भी एक बलवान् शुभ ग्रह जीवन में कैसे और कब सफलता देगा ? इन सब शंकाओं का समाधान आपको मिलेगा। ग्रन्थ में विषय का सर्वांगीण विवेचन, अनेक ऐसी गुत्थियों का समाधान है जो अभी तक सुलझ नहीं पा रहीं थी। फलादेश विषयक अनोखे ढंग का ग्रन्थ जो अपनी मौलिकता से निश्चय ही आपको प्रसन्न कर देगा।

ज्योतिष शास्त्र के रसज्ञ विद्वानों को कृतकृत्य करने वाली इस मंजरी से आप अपना पुस्तकोपवन अवश्य सजाना पसन्द करेंगे।

संस्कृत भाषा में श्लोकबद्ध हस्तलिखित पाण्डुलिपि से सरल व सुबोध शैली में हिन्दी व्याख्या सहित सर्वप्रथम सम्पादित व प्रकाशित एक विलक्षण ग्रन्थ, जो आपको अपनी वैज्ञानिक दृष्टि से प्रभावित करेगा। साथ ही ग्रन्थकार के कवित्व को देखकर तो निश्चय ही आप खिल उठेंगे। मूल्य : ४० रुपये

उत्तर कालामृत

कवि कालिदास द्वारा रचित

हिन्दी व्याख्याकार—जगन्नाथ भसीन

भला ज्योतिष जगत् के महर्षि पराशर के सिद्धान्तों को कौन काट सकता है ? किन्तु आप इस ग्रन्थ में कई ऐसे सिद्धान्त पाएंगे जो पराशर विरोधी; किन्तु व्यवहार में सर्वथा सही हैं।

दक्षिण भारत में इसका विशेष आदर है। सरल हिन्दी व्याख्या सहित इस ग्रन्थ में सच्चे उदाहरणों द्वारा विषय का प्रामाणिक विवेचन किया गया है। हिन्दी भाषा का यह पहला प्रामाणिक संस्करण आपके लाभार्थ है।

नीच ग्रहों से बनने वाले राजयोगों का सोदाहरण विवेचन, शुक्र अनिष्ट स्थानों में भी शुभ फल कारक, आरूढ़ व पद से समस्याओं के समाधान की अनोखी विधि, आयु-विचार, भाव-विचार, मृत्यु का प्रकार, राहु-केतु का विशेष अध्ययन, प्रश्न-विचार आदि विषयों का आश्चर्यपूर्ण विवेचन आप इस ग्रन्थ में पाएंगे।

घड़ी के बिना भी लग्न का ज्ञान हो सकता है, जन्मपत्री के बिना भी भविष्य कथन प्रामाणिक होगा, शनि बहुत सामर्थ्य वाला ग्रह है। पत्नी कैसी होगी ? गर्भस्थ शिशु का ज्ञान आदि सरल ढंग से समझाया गया है।

ग्रहों के कारकत्व का सर्वथा निराला विवेचन आप यहां पाएंगे। दशा व अन्तर्दशा के फल का विवेचन तो सचमुच आपको गागर में सागर प्रतीत होगा।

ग्रन्थ में आपको कई ऐसी चुटीली जानकारी मिलेंगी जो आपको चौंका देंगी तथा आपको सत्य कथन दैवज्ञ बनाकर आपकी प्रतिष्ठा में चार चांद लगाएंगी। मुहूर्त व प्रश्न पर भी चटपटी सामग्री, राजयोग भंग, सन्तान, दत्तक पुत्र, पत्नी, सम्पत्ति, रोग, अमृत घटियों का फल आदि आप सरल शैली में पाएंगे।

ज्योतिष साहित्य का यह गौरव ग्रन्थ अपने नाम के अनुरूप अमृत ही है जिसे आप अवश्य संजोना पसन्द करेंगे।

ज्योतिष शास्त्र में कई मौलिक सिद्धान्तों का सूत्रपात करने वाला परम प्रामाणिक ग्रन्थ अब सरलता से उपलब्ध है।

नवीन, परिवर्द्धित, संशोधित संस्करण, मूल्य : ५० रुपये

॥ श्रीपतिः पातु वः सदा ॥

१

प्रस्तावनाध्यायः

मंगलाचरण :

> नारायणो नन्दनिकेतने वसन्
> बालावृतो बालमुकुन्दरूपवान् ।
> लीलां चकारेतमलां मनोरमां
> लोकोपकाराय नमामि केन तम् ॥१॥

अथ निर्विघ्नग्रन्थसमाप्त्यर्थं मंगलमाचरन् चिकीर्षितं प्रतिजानीते। नारायण इति । यो बालमुकुन्दरूपवान् नारायणः श्रीकृष्णः बालैर्गोपानां शिशुभिरावृतो वेष्टितः, नन्दस्य निकेतने गृहे वसन् श्रीकृष्णरूपेण तिष्ठन् लोकानामुपकाराय, इतमलां निर्मलां मनोरमां शोभनां, लीलां क्रीडां, चकार कृतवान्, तं केन सिरसा नमामि नमस्करोमि अहमिति शेषः ।

नन्द के घर में निवास करते हुए जिन भगवान नारायण ने अनेक गोपाल बालकों से घिरे हुए बालमुकुन्द रूप को धारण कर संसार का उपकार करने के लिए अनेक मनोहर लीलाएं कीं, उन श्रीकृष्ण रूप परमेश्वर को मैं ग्रन्थकार सिर झुका कर प्रणाम करता हूं ।

अपने अभीष्ट कार्य की सिद्धि के मार्ग में आने वाली विघ्न-बाधाओं के निराकरण की कामना, शिष्टाचार एवं शिष्य शिक्षा के प्रयोजन स्वरूप मंगलाचरण करने की परिपाटी है । यहां भी ग्रन्थकार श्री मुकुन्द दैवज्ञ अपने ग्रन्थ की सम्यक् समाप्ति की इच्छा से स्वेष्टदेव भगवान् श्रीकृष्ण को नमस्कार करते हैं ।

ग्रन्थकार को श्रीकृष्ण का बालरूप विशेष प्रिय है। अपने पूर्व प्रकाशित ग्रन्थों में भी इन्होंने श्रीकृष्ण की ही स्तुति की है। इस श्लोक में 'क' शब्द मेदिनी कोश के अनुसार 'सिर' अर्थ में प्रयुक्त हुआ है—

'सुखशीर्षजलेषु कम्।' (मेदिनी कोश)

इसी प्रकार का प्रयोग इनकी अन्य पुस्तक **भावमंजरी** में भी मिलता है—

'''कच्छेदपापान्न सुखांकुराति मनोव्यथापरयलमा विनाशात्।

(भाव०, मारकप्रकरण, श्लोक २१)

अष्टकवर्ग शास्त्र का महत्त्व :

संयुक्तः समकर्म्मणां फलैर्यः
प्राचीनैः परिकीर्तितोऽष्टवर्गः।
विज्ञानं विदुषाऽन्यथा फलानां
दुर्ज्ञेयं गुणदोषसम्भवं च ॥२॥

संयुक्त इति। सर्वेषां शुभाशुभानां कर्म्मणां, फलैः शुभाशुभफलैः, संयुक्तः सहितः प्राचीनैः पूर्वैः, होराविद्भिः यज्ज्ञानं विज्ञायते सोऽष्टवर्गः अष्टकवर्गरूपेण परिकीर्तितः कथितः। अन्यथा अपरथा फलानां शुभाशुभात्मकानां, गुणदोषसम्भवं गुणदोषजन्यं, विज्ञानं विशेषज्ञानं, विदुषा होराविदा, दुर्ज्ञेयं कष्टसाध्यम्। तदुक्तं फलदीपिकायाम्—

'सर्वकर्मफलोपेतमष्टवर्गकमुच्यते।
अन्यथा फलविज्ञानं दुर्ज्ञेयं गुणदोषजम् ॥' इति ॥

होराशास्त्र के प्राचीन महर्षियों व आचार्यों ने सभी प्रकार के कर्मों से उत्पन्न होने वाले शुभ या अशुभ फलों को जानने के लिए जिस पद्धति का विकास किया उसे 'अष्टकवर्ग' कहा जाता है। इसके विशेष ज्ञान के बिना बुद्धिमान् दैवज्ञ भी गुण-दोष से उत्पन्न शुभाशुभ फल को अच्छी प्रकार से नहीं जान सकेगा।

अष्टकवर्ग के ज्ञान से मनुष्य के समस्त कर्मजनित शुभ या अशुभ फल को वैज्ञानिक ढंग से जाना जा सकता है। अष्टकवर्ग की सहायता से फलादेश को अत्यन्त सूक्ष्मता प्रदान की जाती है। व्यष्टि व समष्टि के अपूर्व समन्वय का सिद्धान्त इस पद्धति में देखा जा सकता है। ग्रहों व भावों के आधार पर जाने गए फलों में परस्पर विरोध, संकर या

संकुलता हो सकती है। तब वास्तविक फलादेश का निर्णय कैसे किया जाएगा? इस सन्दर्भ में ही विद्वानों ने इस पद्धति का आश्रय लेना बताया है। सामान्य फलित सिद्धान्तों का अनुसरण करके ग्रह-भाव-जन्य फल की मात्रा, समय व स्वरूप का निर्णय करना अर्थात् सामान्य तत्त्व को विशेष, निर्णायक, इदमिथ्यंतया, ऐसा ही होगा तथा इस प्रकार से जानना इस पद्धति द्वारा सम्भव है। उदाहरणार्थ कोई ग्रह शुभग्रहों से युक्त या दृष्ट होकर स्वराशि, उच्चराशि या मित्रादि की राशि में स्थित हो तो अपने भाव से सम्बन्धित बातों की वृद्धि करेगा, यह एक सामान्य सिद्धान्त है। लेकिन कितनी वृद्धि करेगा? अर्थात् कुल शुभ व अशुभ फल का अनुपात क्या होगा? इस विषय में अष्टकवर्ग पद्धति ही निर्णायक मानी गई है। इसकी सहायता से आयु, धन, विद्या, बुद्धि व सुखादि का विशेष निर्णय किया जाता है। यही कारण है कि पाराशर होराशास्त्र में अष्टकवर्गाध्याय की प्रस्तावना में कहा गया है—

'···होराशास्त्रं द्विधाप्रोक्तं सामान्यं निश्चयात्मकम्।
सामान्यांशस्तु सम्प्रोक्तो निश्चयांशोऽथ कथ्यते।'
(पाराशर होरा० अष्टकवर्ग, श्लोक १०)

'अर्थात् होराशास्त्र सामान्य व निश्चयात्मक रूप से दो प्रकार का होता है। अभी तक (पूर्वभाग में) सामान्यांश कहा गया है। अब निश्चयांश (अष्टकवर्गादि) कहा जा रहा है।'

अतोऽष्टवर्गो मुनिभिः पुराणैः
सङ्कीर्तितो लोकहितेच्छुभिर्यः।
सारं समुद्धृत्य ततोऽष्टवर्ग-
निबन्धमेतं कुरुते 'मुकुन्दः' ॥३॥

अत इति। अतः अस्मात्कारणात्, पुराणैः, प्राचीनैः, लोकानां जनानां, हितं मंगलं, तस्येच्छवः आकांक्षिणस्तैः मुनिभिः योऽष्टवर्गोऽष्टकवर्गशास्त्रं, संकीर्तितः कथितः ततस्तस्मात् अष्टकवर्गशास्त्राद् 'मुकुन्दः' मुकुन्द नामा दैवज्ञः, सारं तत्त्वरूपं समुद्धृत्य संगृह्य, एतमष्टवर्गनिबन्धं कुरुते वितनुते।

पूर्वोक्त कारणों से ही संसार का भला चाहने वाले प्राचीन महर्षियों ने अष्टकवर्ग शास्त्र को कहा है। मैं मुकुन्द दैवज्ञ उन्हीं

महर्षियों के वचनों का सारांश लेकर प्रकृत 'अष्टकवर्ग महानिबन्ध' नामक ग्रन्थ की रचना कर रहा हूं।

प्राचीन महर्षियों ने इस विषय में बहुत कुछ कहा है। किन्तु वह सारा विवरण ज्योतिष के आकर ग्रन्थों में बिखरा पड़ा है। उसी महर्षि प्रोक्त शास्त्र को ग्रन्थकार विशेष ऊहापोह युक्त अपेक्षित समस्त विवेचन के साथ अप्रमत्त होकर प्रस्तुत निबन्ध में निबद्ध कर रहे हैं।

पारिभाषिक शब्द :

पर्य्यायाः सन्ति रेखायाः रेखास्थानं फलं कला।
अथैते करणं बिन्दुर्दायोऽक्षं बिन्दुवाचकाः ॥४॥

तत्रादौ ग्रन्थोपयोगिनीं परिभाषामनुष्टुभाह। पर्याया इति। रेखा, स्थान, फलं, कला एते रेखायाः (।) पर्याया वाचकाः सन्ति। अथ आनन्तर्यार्थे करणं, बिन्दुः, दाय, अक्षमेतेशब्दाः बिन्दुवाचकाः बिन्दोः (०) पर्यायाः सन्तीति।

सर्वप्रथम ग्रन्थकार इस शास्त्र के पारिभाषिक शब्दों का उल्लेख कर रहे हैं। रेखा (।) के ये चार पर्यायवाची हैं—रेखा, स्थान, फल एवं कला। इसी प्रकार बिन्दु (०) के भी चार पर्याय शब्द हैं—करण, बिन्दु, दाय और अक्ष।

अष्टकवर्ग द्वारा फलादेश जानते समय देखा जाता है कि वहां पर कितनी रेखाएं व बिन्दु हैं? शुभफल को प्राय: रेखा (।) से व्यक्त किया जाता है और अशुभफल को बिन्दु (०) से प्रकट करने की परिपाटी है। किन्तु दक्षिणी भारत में शुभफल का द्योतक बिन्दु माना जाता है। आशय यह है कि शुभफल का प्रतीक यदि रेखा को माना जाता है तो विपरीत फल के लिए बिन्दु को स्वीकार करते हैं। यदि बिन्दु से शुभ-फल द्योतित किया जा रहा हो तो अशुभ फल को स्वाभाविक रूप से रेखा से ही प्रकट करेंगे। ये तो केवल शुभ या अशुभ फल के प्रतीक या संकेत मात्र हैं। इनमें स्वयं शुभ या अशुभ फल निहित नहीं हैं। प्राय: शून्य अभाव का द्योतक होता है, अतः शुभफल के अभाव को बिन्दु से प्रकट करना अधिक संगत व प्रचलित है। यदि हम शुभफल को धन (+) व अशुभ फल को ऋण (—) चिह्न से भी प्रकट करें या कोई अन्य स्वेच्छानुकूल चिह्न अपना लें तो भी विशेष अन्तर नहीं पड़ेगा,

केवल व्यवहार में कठिनाई से बचने के लिए और शास्त्रीय व्यवस्था को सार्वभौम बनाने के लिए ही ऐसे निर्धारित चिह्नों को स्वीकार किया जाता है।

यहां पर्यायवाची बताने का प्रयोजन यही है कि आगे ग्रन्थ के मूल श्लोकों में इनका यथावसर प्रयोग किया जाएगा। उन स्थलों पर पाठकों को इससे अर्थ निर्धारण में सुगमता होगी।

सूर्यरेखाष्टक वर्ग :

रविः स्वात्केन्द्राष्टार्थनवभवगः स्वादिवकुजात्
तथा मन्दाच्चेन्दोरुपचयगतः सान्त्यसुखगः।
तनोः शस्तो ज्ञात्सान्तिमनवमधीस्थः सुरगुरो-
स्तपोध्यायारिस्थोऽन्त्यरिपुमदगो दैत्यसचिवात् ॥५॥

अधुना रविरेखाष्टकवर्गं शिखरिण्याह। रविरिति। स्वात् निजाधिष्ठित-राशेः, सकाशात् केन्द्रेषु लग्नचतुर्थसप्तमदशमानामन्यतमेषु, अष्टमे, अर्थे द्वितीये, नवमे, भवे एकादशे, चेज्जन्मनि गोचरे वा रविस्तिष्ठति तदा शस्तः शुभफलप्रदः स्यात्। अर्थात् १, ४, ७, १०, ८, २, ९, ११ एतानि स्थानानि रवितः शुभानि रेखाप्रदानि भवन्ति। स्वादिव स्वस्मादिव, कुजाद् भौमादपि एतान्येव स्थानानि शुभानि भवन्ति। तथा मन्दाच्छनेरपि तान्येव स्थानानि शुभानि ज्ञेयानि। इन्दोश्चन्द्राद् उपचयगतः तृतीयषष्ठदशमैकादश-स्थानेषु रविस्तिष्ठति चेत्तदा शुभः स्यात्। अर्थाच्चन्द्रात् ३, ६, १०, ११ एतानि स्थानानि शुभानि भवन्ति। तनोर्लग्नात् अन्त्ये द्वादशे सुखे चतुर्थे उपचयेषु रविः संस्थितश्चेत् तदा शस्तो भवति, अर्थात् १२, ४, ३, ६, १०, ११ एषु शुभो भवेदित्यर्थः। ज्ञाद् बुधात् अन्तिमे द्वादशे, नवमे, धियि पंचमे, उपचये च रविस्तिष्ठति चेत्तदा शुभः स्यात्। सुरगुरोर्बृहस्पतेः, तपसि नवमे, धियि पचमे, आये एकादशे, अरौ षष्ठे, रविः शुभः स्यात्। दैत्यसचिवात् शुक्रात् १२, ६, ७ एषु स्थानेषु रविः शस्तो भवतीत्यर्थः।

सूर्य अपनी अधिष्ठित राशि से अपने अष्टकवर्ग में केन्द्र स्थान, अष्टम, द्वितीय, नवम, एकादश स्थानों (१, २, ४, ७, ८, ९, १०, ११) में शुभ रेखाप्रद होता है। अर्थात् सूर्याष्टक वर्ग बनाते समय सूर्य अपनी अधिष्ठित राशि से उक्त स्थानों में पड़ने वाली राशियों को शुभ रेखा देने वाला माना जाएगा। इन्हीं पूर्वोक्त केन्द्रादि स्थानों में मंगल

व शनि भी सूर्याष्टक वर्ग में अपनी अधिष्ठित राशियों से शुभफलप्रद होता है।

चन्द्रमा अपनी अधिष्ठित राशि से उपचय स्थानों (३, ६, १०, ११) में शुभफलप्रद होता है।

बुध भी उपचय (३, ६, १०, ११) त्रिकोण (५, ९) व द्वादश में शुभफलप्रद होता है।

बृहस्पति (५, ६, ९, ११) स्थानों, में शुक्र (६, ७, १२) स्थानों में शुभफल अर्थात् रेखाप्रद होगा।

लग्न अपने उपचय, द्वादश व चतुर्थ (३, ६, १०, ११, ४, १२) स्थानों में शुभफलप्रद होता है।

आशय यह है कि सूर्यादि सातों ग्रह तथा लग्न इन आठों के अष्टकवर्ग पृथक्-पृथक् बनाने चाहिएं। सूर्य के अष्टकवर्ग में जो ग्रह जिन भावों को पूर्वोक्त पद्धति से शुभफलप्रद होगा वहां पर शुभफल की द्योतक रेखा (।) लगानी चाहिए तथा शेष स्थानों में अशुभफल का द्योतक अन्य चिन्ह लगाना चाहिए। शेष ग्रहों के रेखाप्रद स्थान आगे बताये जा रहे हैं। ग्रहों के अष्टकवर्ग चक्र के निर्माण की प्रक्रिया समझना आवश्यक है। एतदर्थ हमें १४ रेखाएं खड़ी और १३ रेखाएं पड़ी खींचकर कोष्ठक बना लेने चाहिएं। इसमें ऊपर सूर्याष्टक वर्ग बनाते समय सूर्य की अधिष्ठित राशि से आरम्भ कर सभी राशियों को स्थापित करना चाहिए। जिस राशि में जो ग्रह हो वहीं उसे लिखना चाहिए। बायीं तरफ खड़े कोष्ठकों में सूर्यादि सातों ग्रह, लग्न व योग लिखना चाहिए। अब प्रत्येक ग्रह के समस्त पूर्वोक्त रेखाप्रद स्थानों में रेखाएं व शेष में बिन्दु लिख लेना चाहिए। इस प्रकार कोष्ठक पूरे हो जाने पर नीचे सब रेखाओं का योग कर लेना चाहिए। इस रेखा-योग के नीचे सुविधार्थ बिन्दुओं का योग लिखकर देखना चाहिए कि रेखाएं अधिक हैं या बिन्दु ? जिस भाव की रेखाएं अधिक होंगी, जब-जब गोचर में सूर्य उन भावों में आएगा, उस भाव का शुभफल होगा। यदि बिन्दु होंगे तो अशुभफल एवं रेखाबिन्दु की समान मात्रा होने पर मिश्रित फल जानना चाहिए।

उदाहरणार्थं हम यहां एक कल्पित उदाहरण प्रस्तुत कर रहे हैं, इससे प्रक्रिया को समझने में सुविधा होगी। उदाहरण कुण्डली इस प्रकार है—

इसी प्रक्रिया द्वारा चन्द्रादि ग्रहों की अधिष्ठित राशि से प्रारम्भ कर अन्य चक्र भी बना लेने चाहिएं।

चन्द्ररेखाष्टक वर्ग :

शशीज्यात्सन्केन्द्रान्त्यभवमरणे सत्रितनये
विरिःफे शाच्छुक्रात्त्रिखसुखतपोधीमदभवे।
शनेः षट्त्रिध्यायेऽङ्गत उपचये सात्मजतपो-
धनेऽस्रात्स्वात्सास्तोदयगृह इनात्साष्टममदे ॥६॥

अधुना चन्द्ररेखाष्टकवर्गं शिखरिण्याह—

शशीति। यदा जन्मनि गोचरे वा, इज्यात् बृहस्पतेः, केन्द्रान्त्यभवमरणे केन्द्रद्वादशैकादशाष्टमस्थाने, चन्द्रः शुभः रेखाप्रदः स्यात्। शात् केन्द्रान्त्यभवमरणे विरिःफे द्वादशरहिते सत्रितनये तृतीयपंचमाभ्यां सहिते; यदीन्दुस्तदा शुभः स्यात्। शुक्रात् त्रिखसुखतपोधीमदभवे तृतीयदशमचतुर्थनवमपंचमसप्तमैकादशे, शनेः त्रिध्ययायि षष्ठतृतीयपंचमैकादशे, चन्द्रः शस्तः। अंगतो लग्नाद् उपचये तृतीयषष्ठदशमैकादशे, यदि चन्द्रस्तिष्ठति तदा सत् स्यात्। अस्राद् भौमाद् उपचये सात्मजतपोधने पंचमनवमद्वितीयैः सहिते चन्द्रः शुभरेखाप्रदो भवति। स्वात् निजात् उपचये सास्तोदयगृहे सप्तमलग्नाभ्यां सहिते, चन्द्रः शस्तः। इनात् सूर्यादुपचये साष्टममदे अष्टमसप्तमाभ्यां सहिते शुभः स्यादिति।

सूर्याष्टकवर्ग का कल्पित चक्र

राशि	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन	मेष	वृष
ग्रह	सू.बु.	—	चं.मं.वृ.	—	—	शनि	—	—	—	लग्न	—	शु.
सूर्य	।	।	०	।	०	०	।	।	।	।	।	०
चन्द्र	।	०	०	०	।	०	०	।	०	०	०	।
मंगल	।	०	।	।	०	।	०	०	।	।	।	।
बुध	०	०	।	०	।	।	०	०	।	।	।	।
गुरु	।	०	०	०	०	०	।	।	०	०	।	०
शुक्र	०	०	०	०	।	।	०	०	०	०	।	०
शनि	।	।	।	।	०	।	।	०	।	०	०	।
लग्न	।	०	।	०	०	०	।	।	।	०	०	।
रेखा योग	६	२	४	३	३	४	४	४	५	३	५	५
बिन्दु योग	२	६	४	५	५	४	४	४	३	५	३	३

चन्द्रमा के अष्टक वर्ग में रेखाप्रद स्थान इस प्रकार होते हैं—चन्द्रमा अधिष्ठित राशि से (१, ३, ६, ७, १०, ११) स्थानों में, मंगल (२, ३, ५, ६, ९, १०, ११) स्थानों में, बुध (१, ३, ४, ५, ७, ८, १०, ११) स्थानों में, गुरु (१, ४, ७, ८, १०, ११, १२) स्थानों में, शुक्र (३, ४, ५, ७, ९, १०, ११) स्थानों में, शनि (३, ५, ६, ११) स्थानों में, लग्न (३, ६, १०, ११) स्थानों में और सूर्य (३, ६, ७, ८, १०, ११) स्थानों में शुभ रेखाप्रद होता है।

मंगलरेखाष्टक वर्ग :

> **कुजः स्वात्केन्द्रायस्वमृतिषु शनेः कण्टकतपो-**
> **भवाष्टस्थो ज्ञात्षट्त्रिसुतभवगोऽच्छात्त्रिकभवे।**
> **रवेःषट्खत्र्याये ससुतसबनेऽङ्गात्खविफले**
> **तनोः साङ्के रिःफायखरिपुषु शस्तोऽमरगुरोः ॥७॥**

अधुना भौमाष्टकवर्गं शिखरिण्याह—

कुज इति। स्वान्निजाक्रान्तराशेः सकाशात् केन्द्रायस्वमृतिषु केन्द्रैकादशद्वितीयाष्टमेषु, कुजो भौमो, जन्मनि गोचरे वा, शस्तः स्यात्। शनेः कण्टकतपोभवाष्टमस्थः केन्द्रनवमैकादशाष्टमेषु, यदा कुजः संस्थितस्तदा शुभः स्यात्। ज्ञाद् बुधात् षट्त्रिसुतभवगः षष्ठतृतीयपंचमैकादशगतः कुजः शस्तः स्यात्। अच्छाच्छुक्रात्, त्रिकभवे षष्ठाष्टमद्वादशैकादशे कुजः शस्तः स्यात्। रवेः सूर्यात्, षट्खत्र्याये, षष्ठदशमतृतीयैकादशे सांगे अंगेन लग्नेन सहिते, कुजः शस्तः स्यात्। अमरगुरोः बृहस्पतेः, रिःफायखरिपुषु द्वादशैकादशदशमषष्ठेषु, कुजः शुभः स्यात् इति।

मंगल अपनी अधिष्ठित राशि से अपने अष्टक वर्ग में (१, २, ४, ७, ८, १०, ११) स्थानों में, बुध (३, ५, ६, ११) स्थानों में, गुरु (६, १०, ११, १२) स्थानों में, शुक्र (६, ८, ११, १२) स्थानों में, शनि (१, ४, ७, ८, ९, १०, ११) स्थानों में, लग्न (१, ३, ६, १०, ११) स्थानों में, सूर्य (३, ५, ६, १०, ११) स्थानों में और चन्द्रमा (३, ६, ११) स्थानों में शुभ रेखाप्रद होता है।

बुधरेखाष्टक वर्ग :

> **तयःकेन्द्राष्टार्याप्तिषु विदसृजार्क्योस्त्रिकभवे**
> **गुरोश्चन्द्रात्स्वार्यायखमृतिसुखेऽङ्गात्सवपुषि।**

शुभोऽयापुत्राष्टायनवसु कवेर्धीव्ययतपो-
भवारिस्थोऽर्कात्स्वात्सुतनवमवृद्ध्यन्त्यतनुगः ॥८॥

अथेदानीं बुधरेखाष्टकवर्गं शिखरिण्याह—

तप इति। यदा जन्मनि गोचरे वा असृग्भाग्योम्मात: केन्द्राष्टाधी-ष्विषु नवमकेन्द्राष्टमद्वितीयैकादशेषु, यदि विद् बुधः स्थितस्तदा शस्तः। गुरोर्बृहस्पतेः त्रिकभवे षष्ठाष्टमद्वादशैकादशे बुधः शुभः। चन्द्रात् स्वार्थायव्ययमृति-सुखे द्वितीयषष्ठैकादशदशमाष्टमचतुर्थे बुधः शस्तः। अथ लग्नात् द्वितीयषष्ठैका-दशादिके सवपुषि लग्नसहिते बुधः प्रशस्तः। अथ मन्दात्तत्स्थानेष्वेव, कवेः शुक्राद् आपुत्रायाष्टमनवसु लग्नात् पंचमपर्यन्तेषु नवमाष्टमयोश्च बुधः शुभो रेखाप्रदः। अर्कात् सूर्यात् धीव्ययतपोभवारिस्थः पंचमद्वादशनवमैकादशषष्ठस्थाने, बुधः शस्तः। स्वात्निजात् स्वाधिष्ठितराशेः सुतनवमादीनि, पंचमनवमतृतीय-षष्ठदशमैकादशलग्ने, बुधः शस्तः शुभः स्यादिति शेषः।

अपने अष्टक वर्ग में बुध अपनी अधिष्ठित राशि से (१, ३, ५, ६, ९, १०, ११, १२) स्थानों में, गुरु (६, ८, ११, १२) स्थानों में, शुक्र (१, २, ३, ४, ५, ८, ९, ११) स्थानों में, शनि (१, २, ४, ७, ८, ९, १०, ११) स्थानों में, लग्न (१, २, ४, ६, ८, १०, ११) स्थानों में, सूर्य (५, ६, ९, ११, १२) स्थानों में, चन्द्रमा (२, ४, ६, ८, १०, ११) स्थानों में और मंगल (१, २, ४, ७, ८, ९, १०, ११) स्थानों में रेखाप्रद होता है।

गुरुरेखाष्टक वर्ग :

शनेःषड्धीत्र्यन्त्येऽम्बरितनुखकोणायभवगो
विदोऽङ्गारात्सास्तस्थो गुरुररिखधीस्वायशुभगः।
कवेरिन्दोर्ध्यायार्थनवमदगोऽस्वात्स्मवमृति-
स्वकेन्द्रस्थः स्वात्सानुजगत इनात्सत्रिगुरुगः ॥९॥

अथ साम्प्रतं गुरोरेखाष्टकवर्गं शिखरिण्याह—

शनेरिति। शनेः षड्धीत्र्यन्त्ये षष्ठपंचमतृतीयद्वादशे गुरुः शुभः। विदो बुधात् अम्बरीति चतुर्थषष्ठलग्नदशमपंचमनवमद्वितीयैकादशगतो गुरुः शुभः। अंगारात्लग्नादेष्वेव स्थानेषु स्थितः सास्तस्थः सप्तमस्थश्च गुरुः शुभः। कवेः शुक्राद् अरिखधीस्वायशुभगः षष्ठदशमपंचमद्वितीयैकादशनवमगतो गुरुः शुभः। इन्दोश्चन्द्रात् ध्यायार्थनवमदगः पंचमैकादशद्वितीयनवमसप्तमगः शुभः।

असाद् भौमात् भवमूर्तिस्वकेन्द्रस्थः एकादशाष्टमद्वितीयकेन्द्रगतः शुभः। स्वात् सानुजगतोऽष्टमैकादशद्वितीयकेन्द्रतृतीयगतः इनात् सूर्यात् च तृतीयनवमाभ्यां सहितेष्वेषु गुरुः शुभः स्यादिति।

बृहस्पति अपने अष्टक वर्ग में स्वाधिष्ठित राशि से (१, २, ३, ४, ७, ८, १०, ११) स्थानों में, शुक्र (२, ५, ६, ९, १०, ११) स्थानों में, शनि (३, ५, ६, १२) स्थानों में, लग्न (१, २, ४, ५, ६, ७, ९, १०, ११) स्थानों में, सूर्य (१, २, ३, ४, ७, ८, ९, १०, ११) स्थानों में, चन्द्रमा (२, ५, ७, ९, ११) स्थानों में, मंगल (१, २, ४, ७, ८, १०, ११) स्थानों में और बुध (१, २, ४, ५, ६, ९, १०, ११) स्थानों में शुभ रेखाप्रद होता है।

शुक्ररेखाष्टक वर्ग :

> **व्ययायाष्टस्थोऽर्कात्खमूर्तिभवकोणेषु गुरुतः**
> **सितः सौरे सव्यम्बुषु भवतपोधीत्रिरिपुगः।**
> **विदो भूपुत्रात्सान्त्यगत उदयादासुतशुभा-**
> **युरायस्थोऽब्जात्सान्तिमगृहगतः स्वात्सपदगः॥१०॥**

अथसम्प्रति शुक्ररेखाष्टकवर्ग शिखरिण्याह—

व्ययायेति। जन्मनि गोचरे वा, अर्कात् सूर्यात् व्ययाष्टस्थः सितः शुक्रः शुभो ज्ञेयः। एवमेव गुरुतो खमूर्तिभवकोणेषु दशमाष्टमैकादशत्रिकोणेषु। सौरेः शनैश्चरात् खमूर्तिभवकोणेषु, सव्यम्बुषु तृतीयचतुर्थाभ्यां सहितेषु। विदो बुधात् भवतपोधीत्रिरिपुग एकादशनवमपंचमतृतीयषष्ठस्थानेषु स्थितः। भूसाद् भौमाद् भवतपोध्यादिषु, सान्त्यगतो द्वादशसहितेषु। उदयाल्लग्नाद् आसुतशुभायुरायस्थो, लग्नात् पंचमान्तेषु, त्रिदशमेषु अष्टमादेकादशान्तेषु च शुक्रः शुभः स्यात्। अब्जाच्चन्द्रात् आसुतेत्यादिषु सान्तिमगृहगतः द्वादशभावगतश्च। स्वात् निजादेष्वेव, आसुतेत्यादिगतः पुनश्च सपदगः पदेन दशमेन सहितेषु स्थितः शुक्रः शुभोऽर्थात् रेखाप्रदः स्यादिति।

शुक्र अपनी अधिष्ठित राशि से (१,२,३,४,५,८,९,१०,११) स्थानों में, शनि (३, ४, ५, ८, ९, १०, ११) स्थानों में, लग्न (१, २, ३, ४, ५, ८, ९, ११) स्थानों में, सूर्य (८, ११, १२) स्थानों में, चन्द्रमा (१, २, ३, ४, ५, ८, ९, ११, १२) स्थानों में, मंगल (३, ५, ६, ९, ११, १२) स्थानों में, बुध (३, ५, ६, ९, ११) स्थानों में एवं बृहस्पति (५, ८, ९, १०, ११) स्थानों में शुभ रेखाप्रद होता है।

शनिरेखाष्टक वर्ग :

शनिः शस्तोऽब्जात्षट्सहजभवगः स्वात्ससुतगः
सधीखान्त्यस्थोऽस्रात्सखसुखतनुस्थस्तनुमतः।
रवेः केन्द्राष्टार्थाप्तिषु भृगुजतोऽन्त्यारिभवगः
सधीस्थो जीवाज्ज्ञात्सनिधनतपोव्योमगृहगः ॥११॥

अथाधुना शनिरेखाष्टकवर्गं शिखरिण्याह---

शनिरिति। अब्जाच्चन्द्रात्, षट्सहजभवगः शनिः शस्तः प्रशस्तः स्यादिति सर्वत्रान्वयः। स्वात्निजात्स्वर्क्षादित्यर्थः षट्सहजभवगतोऽपि सुतभावगतः शस्तः। अस्राद् भौमात् षट्सहजेत्यादिगतः, सधीखान्त्यस्थः पञ्चमदशमद्वादश-गतश्च। तनुमतो लग्नात् पूर्वोक्तभावगतः सखसुखतनुस्थः दशमचतुर्थलग्नस्थोऽपि शुभः। रवेः सूर्यात् केन्द्राष्टार्थाप्तिषु, केन्द्राष्टमधनैकादशेषु। भृगुजतः शुक्रात् अन्त्यारिभवगः द्वादशैकादशषष्ठगतः। जीवाद् बृहस्पतेः अन्त्यारिभवगोऽपि सधीस्थः पञ्चमस्थः शुभः। ज्ञाद् बुधात् अन्त्यारिभवगोऽपि सनिधनतपोव्योम-गृहगोऽष्टमनवमदशमगतः शनिः शुभः शुभरेखाप्रदः स्यादिति।

शनि अपनी अधिष्ठित राशि से (३, ५, ६, ११) स्थानों में, लग्न (१, ३, ४, ६, १०, ११) स्थानों में, सूर्य (१, २, ४, ७, ८, १०, ११) स्थानों में, चन्द्रमा (३, ६, ११) स्थानों में, मंगल (३, ५, ६, १०, ११, १२) स्थानों में, बुध (६, ८, ९, १०, ११, १२) स्थानों में, गुरु (५, ६, ११, १२) स्थानों में एवं शुक्र (६, ११, १२) स्थानों में शुभ रेखाप्रद होता है।

लग्नरेखाष्टक वर्ग :

तनुः काव्याद्धीनवमृतिषु शस्ताऽऽयनवषट्
स्वधीकेन्द्रस्थेज्यात्स्वत उपचयस्था दिनकरात्।
सबन्ध्वन्त्यस्थाऽऽर्केः ससतनुसुखगाऽऽस्रात्सतमुगा
विधोः सान्त्यस्था ज्ञात्स्वतनुमृतिखाय्याप्तिसुखगा ॥१२॥

अथेदानीं लग्नरेखाष्टकवर्गं शिखरिण्याह---

तनुरिति। काव्याच्छुक्रात् आद्धीनवमृतिषु, लग्नात् पंचमस्थेषु निधननवमसहितेषु जन्मनि गोचरे वा लग्नं तनुः शस्तेति सर्वत्र। इज्याद् बृहस्पतेः, आयनवमषट्स्वधीकेन्द्रस्था तनुः शस्ता स्वतो द्वितीयोऽप्यनुगमम्। स्वतो लग्नाद् उपचयस्था तृतीयषष्ठदशमैकादशस्था। दिनकरात् सूर्यात्

उपचयगतापि सबन्ध्वन्त्यस्था, चतुर्थद्वादशगता। आर्के: शने: सतनुसुखगा लग्नचतुर्थोपचयगता। असाद् भौमाद् उपचयस्था सतनुगा लग्नगता। विधोश्चन्द्राद्युपचयस्था, सान्त्यस्था द्वादशभावसहिता। ज्ञाद् बुधात् स्वतनुमृतिखार्यीप्सि सुखगा द्वितीयलग्नदशमषष्ठैकादशचतुर्थगता तनुः लग्नं शुभा स्यादिति।

लग्न के अष्टक वर्ग में लग्न (३, ६, १०, ११) स्थानों में, सूर्य (३, ४, ६, १०, ११, १२) स्थानों में, चन्द्रमा (३, ६, १०, ११, १२) स्थानों में, मंगल (१, ३, ६, १०, ११) स्थानों में, बुध (१, २, ४, ६, ८, १०, ११) स्थानों में, बृहस्पति (१, २, ४, ५, ६, ७, ९, १०, ११) स्थानों में, शुक्र (१, २, ३, ४, ५, ८, ९) स्थानों में और शनि (१, ३, ४, ६, १०, ११) स्थानों में शुभ रेखाप्रद होता है।

राहुरेखाष्टक वर्ग :

शस्तोऽहिस्त्रिचतुष्टयस्वमृतिगोऽर्काज्ज्ञाद् व्ययाम्बवष्टम-
स्वास्तेषु त्रिधनान्त्यधीषु कुजतोऽङ्गात्त्र्यङ्कधीकान्त्यगः।
द्वेष्यास्तान्त्यभवेषु भात्त्रिनिधनाम्बाङ्गारिगो वाक्पतेः
सौरेः प्रान्त्यखसोदरास्तमयधीलाभेषु रेखा अगोः ॥१३॥

अथेदानीं राहुरेखाष्टकवर्गं शार्दूलविक्रीडितेनाह—

शस्त इति। अर्कात् सूर्यात्, जन्मनि गोचरे वा, त्रिचतुष्टय-स्वमृतिगः तृतीयकेन्द्रद्वितीयाष्टमभावेषु स्थितो राहुः शुभः स्यादिति सर्वत्र। ज्ञाद् बुधाद् व्ययाम्ब्वष्टमस्वास्तेषु द्वादशचतुर्थाष्टमद्वितीयसप्तमेषु। कुजतो भौमात् त्रिधनान्त्यधीषु। अंगाल्लग्नात् त्र्यङ्कधीकान्त्यगः तृतीयनवमसप्तम-द्वादशगतः। भाच्छुक्रात् द्वेष्यास्तान्त्यभवेषु षष्ठसप्तमद्वादशैकादशस्थानेषु। वाक्पतेः बृहस्पतेः, त्रिनिधनाम्बाङ्गारिगस्तृतीयाष्टमचतुर्थलग्नषष्ठभावगतः। सौरेः शनेः प्रान्त्यखसोदरास्तमयधीलाभेषु द्वादश-दशम-तृतीय-सप्तम-षष्ठ-पंचमैकादशभावेषु। अगोः राहोः रेखाः भवन्तीति शेषः।

राहु के अष्टकवर्ग में सूर्य (१, २, ३, ४, ७, ८, १०) स्थानों में, चन्द्रमा (१, ३, ५, ७, ८, ९, १०) स्थानों में, मंगल (२, ३, ५, १२) स्थानों में, बुध (२, ४, ७, ८, १२) स्थानों में, बृहस्पति (१,३,४,६,८) स्थानों में, शुक्र(६, ७, ११, १२) स्थानों में, शनि(३,५,७,१०,११,१२) स्थानों में और लग्न (३, ४, ५, ९, १२) स्थानों में शुभप्रद होता है।

यद्यपि अष्टकवर्ग के प्रकरण में लग्न व सूर्यादि शनि पर्यन्त सात ग्रहों का ही ग्रहण होता है; किन्तु ग्रन्थकार ने यहां पर राहु का अष्टक वर्ग बताया है। यहां पर स्पष्ट करना आवश्यक है कि राहु का अष्टक वर्ग चक्र या कुण्डली नहीं बनाई जाती है। राहु के गोचर प्रभाव का सम्यक्तया निर्णय करने के लिए राहु के अष्टक वर्ग में रेखाप्रद स्थानों का विचार किया जा सकता है। अन्यत्र आयुर्दाय व दशादि के प्रभाव-निर्णय में राहु का ग्रहण नहीं किया जाएगा। केवल गोचरजनित शुभाशुभ फल जानने के लिए राहु के रेखाप्रद स्थानों का विचार करना चाहिए। अन्य स्थानों में इसका उपयोग नहीं होगा। यही कारण है कि राहु के स्वयं कोई रेखा स्थान नहीं बताए गए हैं। पाठकों की सुविधा के लिए सभी ग्रहों के रेखा स्थानों के चक्र यहां दिए जा रहे हैं—

सूर्याष्टक वर्ग रेखास्थान (४८)

सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.
१	३	१	३	५	६	१	३
२	६	२	५	६	७	२	४
४	१०	४	६	९	१२	४	६
७	११	७	९	११		७	१०
८		८	१०			८	११
९		९	११			९	१२
१०		१०	१२			१०	
११		११				११	

चन्द्राष्टक वर्ग रेखास्थान (४९)

चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.	सू.
१	२	१	१	३	३	३	३
३	३	३	४	४	५	६	६
६	५	४	७	५	६	१०	७
७	६	५	८	७	११	११	८
१०	९	७	१०	९			१०
११	१०	८	११	१०			११
	११	१०	१२	११			
		११					

मंगलाष्टक वर्ग रेखास्थान (३९)

मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	ल.	सू.	चं.
१	३	६	६	१	१	३	३
२	५	१०	८	४	३	५	६
४	६	११	११	७	६	६	११
७	११	१२	१२	८	१०	१०	
८				९	११	११	
१०				१०			
११				११			

बुधाष्टक वर्ग रेखास्थान (५४)

बु.	बृ.	शु.	श.	ल.	सू.	चं.	मं.
१	६	१	१	१	५	२	१
३	८	२	२	२	६	४	२
५	११	३	४	४	९	६	४
६	१२	४	७	६	११	८	७
९		५	८	८	१२	१०	८
१०		८	९	१०		११	९
११		९	१०	११			१०
१२		११	११				११

बृहस्पत्यष्टक वर्ग रेखा स्थान (५६)

बृ.	शु.	श.	ल.	सू.	चं.	मं.	बु.
१	२	३	१	१	२	१	१
२	५	५	२	२	५	२	२
३	६	६	४	३	७	४	४
४	९	१२	५	४	९	७	५
७	१०		६	७	११	८	६
८	११		७	८		१०	९
१०			९	९		११	१०
११			१०	१०			११
			११	११			

शुक्राष्टक वर्ग रेखास्थान (५२)

शु.	श.	ल.	र.	चं.	मं.	बु.	बृ.
१	३	१	८	१	३	३	५
२	४	२	११	२	५	५	८
३	५	३	१२	३	६	६	९
४	८	४		४	९	९	१०
५	९	५		५	११	११	११
८	१०	८		८	१२		
९	११	९		९			
१०		११		११			
११				१२			

शन्यष्टक वर्ग रेखास्थान (३९)

श.	ल.	र.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु
३	१	१	३	३	६	५	६
५	३	२	६	५	८	६	११
६	४	४	११	६	९	११	१२
११	६	७		१०	१०	१२	
	१०	८		११	११		
	११	१०		१२	१२		
		११					

लग्नाष्टक वर्ग रेखास्थान (४९)

ल.	र.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
३	३	३	१	१	१	१	१
६	४	६	३	२	२	२	३
१०	६	१०	६	४	४	३	४
११	१०	११	१०	६	५	४	६
	११	१२	११	८	६	५	१०
	१२			१०	७	८	११
				११	९	९	
					१०		
					११		

ग्रहों के बिन्दुप्रद स्थान :

इत्युक्तानि प्रशस्तानि स्थानानि व्योमचारिणाम् ।
यान्यनुक्तानि नेष्टानि तानि ज्ञेयानि कोविदैः ॥१४॥

अथेदानीं रेखाणां शुभाशुभत्वमनुष्टुभाह—

इतीति । इतीत्थम्, व्योमचारिणो, ग्रहाणां, यानि स्थानानि उक्तानि तानि प्रशस्तानि शुभानि, कोविदैः पण्डितैः ज्ञेयानि । यानि अनुक्तानि कथितेतराणि स्थानानि तानि नेष्टानि अशुभानि ज्ञेयानि । इति

यहां तक ग्रहों के शुभ अर्थात् रेखाप्रद स्थानों का विवरण दिया जा चुका है। उन स्थानों के अतिरिक्त स्थानों को अशुभ अर्थात् बिन्दु-प्रद समझना चाहिए। अर्थात् जहां रेखा न पड़े उस स्थान में बिन्दु समझना चाहिए।

ग्रहों का रेखा योग :

व्यालोदन्वत्सम्मिता गोसमुद्रै—
र्नन्वग्रामैर्वेदबाणै रसार्कैः ।
वृङ्नाराचैर्गोगुणैर्गोऽब्धिभिस्त्रि-
वेदैस्तुल्या रेखिकाः स्युः पतङ्गात् ।१५॥

अथाधुना ग्रहाणां रेखासंख्याः शालिन्याह—

व्यालेति । व्यालाः सर्पाः अष्टौ, उदन्वन्तः समुद्राश्चत्वारः । एवमष्ट-चत्वारिंशदिति सूर्यस्य । गोसमुद्रैः सम्मिताऽर्थादेकोनपंचाशत् । नन्दग्रामैः नन्दा नव, ग्रामास्त्रय इति एकोनचत्वारिंशत् । वेदबाणैः चतुःपंचाशदिति । रसाक्षैः, रसाः षट्, अक्षाः पंच, तैः तुल्या षट्पंचाशदिति । दृग्बाणैः द्विपंचाशदिति । गोगुणैः गावो नव, गुणास्त्रयस्तैः सम्मिता एकोनचत्वारिंशदिति । गोऽब्धिभिः एकोनपंचाशदिति । त्रिवेदैः त्रिचत्वारिंशदिति क्रमशः सूर्यचन्द्रमंगल बुधगुरुशुक्रशनिलग्नराहूणां रेखिकाः रेखाः स्युरिति ।

तथा च ढुण्ढिराजः—

> 'भुजगवेदा नवसागराश्च नवाग्नयः सागरसायकाश्च ।
> रसेषवो युग्मशरा नवत्रितुल्याः क्रमेणाष्टकवर्गरेखाः ।' इति

सूर्य की कुल रेखाएं ४८, चन्द्रमा की ४९, मंगल की ३९, बुध की ५४, बृहस्पति की ५६, शुक्र की ५२, शनि की ३९, लग्न की ४९ और राहु की ४३ रेखाएं होती हैं। अर्थात् अपने अष्टकवर्ग में सब रेखाओं का यह कुल योग होता है।

अष्टकवर्ग चक्र बनाने का प्रकार :

> **विधेया बुधैरूर्ध्वगा रेखिकाख्या**
> **बिडौजःप्रमास्तिर्यगाः शम्भुतुल्याः ।**
> **खविश्वोन्मिताः कोष्ठकास्तत्र चक्रे**
> **यथास्थानकं स्थापनीयाः खगेन्द्राः ॥१६॥**

अथाधुनाष्टकवर्गचक्रोद्धारे भुजंगप्रयातेनाह—

विधेयेति । बिडौजस इन्द्राः अर्थात् चतुर्दशभिः प्रमाणतुल्या, ऊर्ध्वगा रेखा, बुधैः विधेयाः कार्याः । तथा शम्भुतुल्या एकादश तिर्यगाः रेखाः कार्याः । एवं कृते सति तत्र चक्रे खविश्वोन्मिताः खं च विश्वं च तैरुन्मिता स्तुल्या अर्थात् त्रिशदुत्तरशतकोष्ठका जायन्त इति । तत्र खगेन्द्राः जन्मकालीन-ग्रहा यथास्थानकं जन्मनि यो ग्रहो यस्मिन् राशौ वर्तते तत्रैव स्थापनीयाः बुधैरिति सम्बन्धः ।

तथा च यवनाचार्यः—

> यथैवाद्यैः कृतं शास्त्रमष्टकवर्गात्मकं बुधैः ।
> परं विध्वस्तसम्मोहान्न ज्ञायन्ते हि तेषु च ॥

विशेषभावसूत्रादौ मोहस्तेषां प्रजायते।
अतोऽहममलैवृंतैः सारात्सारतरं ब्रुवे॥
कलधौतशलाकां हि गृहीत्वा स्थिरमानसः।
उर्ध्वरेखा त्रयं कृत्वा तासां भेदं यथा पुनः॥
चतुर्दशोर्ध्वगा रेखा स्तथैकादश तिर्यगाः।
जायन्ते कोष्ठकास्तत्र शतैकं त्रिंशताधिकम्॥
तत्र चक्रे ग्रहाः स्थाप्या यथास्थानं तु गोलवित्।
स्वस्थानात्पूर्वसंयुक्ताद् रेखाबिन्दून् प्रदापयेत्॥ इति।

चौदह रेखाएं खड़ी और ग्यारह रेखाएं पड़ी खींचकर १३० कोष्ठकों वाला 'अष्टकवर्ग चक्र' बनाना चाहिए।

इस चक्र में जन्मकालीन ग्रहों की स्थिति के अनुसार ही सूर्यादि ग्रहों को स्थापित कर लेना चाहिए। अर्थात् जन्म समय जिस राशि में जो ग्रह हों, उसी में स्थापित करना चाहिए।

अष्टकवर्ग चक्र बनाने का एक प्रकार हम पीछे श्लोक ५ की व्याख्या में बता चुके हैं। वहां हमने बताया था कि जिस ग्रह का अष्टकवर्ग चक्र बनाना हो, उसी की अधिष्ठित राशि से शुरू कर सब राशियों को कोष्ठकों में स्थापित कर लेना चाहिए। इसका एक अन्य प्रकार यह भी हो सकता है—मेषादि राशियों को कोष्ठकों में यथाक्रम ही स्थापित कर लेना चाहिए। जो ग्रह जिस राशि में हो उसे वहीं उस राशि के नीचे स्थापित करके लग्न राशि के नीचे लग्न लिख लेना चाहिए। इस प्रकार में यह विशेष सुविधा होगी कि हमें बार-बार राशियों का क्रम नहीं बदलना पड़ेगा। इस सारी प्रक्रिया को समझने के लिए ग्रन्थकार ने उदाहरण दिया है।

ममान्तेवासिनश्चक्रधरस्योत्पत्तिखौकसाम्।
गणितोदाहृतिः शिष्यहितायास्मिन्विनिर्मिता॥१७॥

अथेदानीमस्मिन्ग्रन्थेयज्जन्मकालिक ग्रह गणितोदाहरण मस्ति तत्सम्बन्धमनुष्टुभाह—

ममेति। उत्पत्ति खौकसां जन्मकालिकग्रहाणाम्। शेषं स्पष्टम्।

इस अष्टकवर्ग महानिबन्ध नामक ग्रन्थ में विषय को स्पष्ट करने के लिए और शिष्यों के हितार्थ में (ग्रन्थकार) अपने प्रिय शिष्य

श्री चक्रधर शर्मा के जन्मकालिक ग्रहों का उदाहरण प्रस्तुत कर रहा हूं—

विक्रम संवत् १९६६ भाद्रपद शुक्ल द्वादशी, श्रवण नक्षत्र सुकर्मा योग, बव करण में ३५.५४ घट्यात्मक सूर्योदयादिष्टकाल में श्री बदरीश धाम हिमालय रेखांश ७८° ३६' पूर्व अक्षांश ३०° ९' उत्तर में श्री लक्ष्मीधर जी के पुत्र श्री चक्रधर शर्मा का जन्म हुआ। ग्रहलाघवीय दिनगण १७००, चक्र ३५, अयनांश २३-७-०० पलभा ७-१ उस समय थी।

ग्रह स्पष्ट चक्र (सर्वानन्द करण)

र.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	रा.	के.
५	९	११	६	५	६	११	१	१
१०	२९	२	४	३	१८	०८	१८	१[illegible]
१८	७	५९	२३	५४	५३	३०	१०	१[illegible]
५१	५	५१	४२	१	२३	२१	५०	५[illegible]
५८	८८४	२०	४२	१३	७१	४	३	
५४	४७	२	१३	१०	३	३०	११	१

जन्म कुण्डली नवांश कुण्डली

अब पूर्वोक्त क्रम से इस उदाहरण का सूर्याष्टक वर्ग बनाने की प्रक्रिया समझते हैं। पूर्वोक्त प्रकार से कोष्ठक बनाकर मेषादि बारह राशियों को स्थापित किया। मेष लग्न है। सूर्यादि ग्रहों व लग्न को यथास्थान लिखकर पूर्वोक्त रेखा स्थानों में तदनुसार रेखाएं लिखेंगे। सूर्य कन्या राशि में है, अतः कन्या से (१, २, ४, ७, ८, ९, १०, ११) स्थानों अर्थात् कन्या, तुला, धनु, मीन, मेष, वृष, मिथुन, कर्क में रेखा स्थापित की तथा शेष स्थानों में सूर्य के सम्मुख बिन्दु स्थापित किया। इसी प्रकार चन्द्रादि रेखा स्थानों में भी रेखाएं व शेष स्थानों में बिन्दु स्थापित किए तो चक्र निम्नोक्त प्रकार से बनेगा—

रवेरष्टक वर्गः

रा. ग्र.	मे. ल.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क. र.बु.	तु. गु.शु.	वृ.	ध.	म. चं.	कुं.	मी. मं.श.
श.	।		।			।	।	।	।	।		।
गु.		।		।						।	।	
मं.	।		।			।	।	।	।	।		।
र.	।	।	।	।		।	।		।			।
शु.	।					।						।
बु.			।	।	।	।			।		।	।
चं.			।				।	।				।
ल.			।	।		।				।	।	।
रे. यो.	४	२	६	४	१	६	४	३	४	४	३	७
बि. यो.	४	६	२	४	७	२	४	५	४	४	५	१

चन्द्राष्टक वर्गः

रा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
ग्र.	ल.					र.बु.	बु.शु.			चं.		म.श.
श.		।		।	।					।		
बृ.	।		।	।	।	।			।			।
मं.	।	।		।	।			।	।	।		
र.	।		।	।				।			।	।
शु.	।		।	।	।				।	।	।	
बु.	।	।		।	।		।		।	।	।	
चं.			।	।			।	।		।		
ल.			।			।				।	।	।
रे. यो.	५	३	५	७	५	२	२	३	४	६	४	३
बि. यो.	३	५	३	१	३	६	६	५	४	२	४	५

भौमाष्टक वर्गः

रा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
ग्र.	ल.					र.बु.	बु.शु.			चं.		मं.श.
श.			।			।	।	।	।	।		।
बृ.			।	।	।						।	
मं.	।		।			।	।		।	।		।
र.			।	।				।		।	।	
शु.		।			।	।						।
बु.					।				।		।	।
चं.			।					।				।
ल.	।		।			।				।	।	
रे. यो.	२	१	६	२	३	४	२	३	३	४	४	५
बि. यो.	६	७	२	६	५	४	६	५	५	४	४	३

बुधाष्टक वर्गः

रा. ग्र.	मे. भ.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क. र.बु.	तु. बु.शु.	वृ.	ध.	म. चं.	कुं.	मी. मं.श.
श.	।		।			।	।	।	।	।		।
बृ.	।			।	।						।	
मं.	।		।			।	।	।	।	।		।
र.		।		।	।					।	।	
शु.		।	।		।		।	।	।	।	।	
बु.			।	।	।	।	।		।		।	।
चं.	।		।		।		।	।			।	
ल.	।	।		।		।		।		।	।	
रे.यो.	५	३	५	४	५	४	५	५	४	५	६	३
बि.यो.	३	५	३	४	३	४	३	३	४	३	२	५

गुरोरष्टक वर्गः

रा. ग्र.	मे. भ.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क. र.बु.	तु. बु.शु.	वृ.	ध.	म. चं.	कुं.	मी. मं.श.
श.		।		।	।						।	
बृ.	।		।	।		।	।	।	।			।
मं.	।		।			।	।		।	।		।
र.	।	।	।	।		।	।	।	।			।
शु.			।	।	।			।			।	।
बु.			।	।	।		।	।		।	।	।
चं.		।		।		।		।			।	
ल.	।	।		।	।	।	।		।	।	।	
रे.यो.	४	४	५	७	४	५	५	५	४	३	५	५
बि.यो.	४	४	३	१	४	३	३	३	४	५	३	३

शुक्राष्टक वर्गः

रा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
ग्र.	ल.					र.बृ.	बु.शु.			चं.		मं.श.
श.		।	।	।			।	।	।	।		
बृ.	।	।	।	।						।		
मं.		।		।	।			।		।	।	
र.	।			।	।							
शु.		।	।	।	।		।	।	।	।	।	
बु.			।		।				।		।	।
चं.	।	।			।	।		।	।	।	।	।
ल.	।	।	।	।	।			।	।		।	
रे. यो.	४	६	५	६	६	१	२	५	५	५	५	२
वि. यो.	४	२	३	२	२	७	६	३	३	३	३	६

शनेरष्टक वर्गः

रा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
ग्र.	ल.					र.बृ.	बु.शु.			चं.		मं.श.
श.		।		।	।					।		
बृ.				।	।					।	।	
मं.		।		।	।				।	।	।	
र.	।		।	।		।	।		।			।
शु.					।	।						।
बु.		।	।	।	।	।						।
चं.			।					।				।
ल.	।		।	।		।				।	।	
रे. यो.	२	३	४	६	५	४	१	१	२	४	३	४
वि. यो.	६	५	४	२	३	४	७	७	६	४	५	४

लग्नाष्टक वर्ग:

रा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु.	मी.
ग्र.	ल.					र.बु.	बृ.शु.			चं.		मं.श.
श.		।	।		।				।	।		।
बृ.		।	।	।		।	।		।	।	।	।
मं.		।			।				।	।		।
र.			।	।	।			।	।		।	
शु.		।	।				।	।	।	।	।	
बु.		।		।	।		।	।		।		।
चं.			।				।	।	।			।
ल.			।			।				।	।	
रे. यो.	०	५	६	३	४	२	४	४	६	६	४	५
बि. यो.	८	३	२	५	४	६	४	४	२	२	४	३

इन चक्रों में ग्रन्थकार ने ग्रहों का क्रम शनि, बृहस्पति, मंगल, सूर्य, शुक्र, बुध, चन्द्रमा व लग्न के क्रम से अपनाया है। ग्रहाधिष्ठित राशि से चक्र बनाने पर सूर्यादि क्रम से तथा मेषादि राशि क्रम से बनाने से ग्रहों को इस प्रकार से रखने की प्रथा है। हम समझते हैं कि राशियां मेषादि क्रम से और ग्रहों को सूर्यादि क्रम से स्थापित करने में सुविधा होगी तथा ऐसा करने से व्यावहारिक हानि भी नहीं दिखती।

यह स्थिति रेखाष्टक वर्गादि के प्रसंग में तो ठीक होगी, किन्तु प्रस्ताराष्टवर्ग में नियमत: कक्ष्याक्रम से अर्थात् शनि बृहस्पति आदि क्रम से ही ग्रहों को स्थापित किया जाएगा। अत: पाठक चाहें तो प्रारम्भ से ही इस क्रम से अभ्यास कर सकते हैं। प्रत्येक परिस्थिति में यह ध्यातव्य है कि राशियां स्थापित किए जाने पर भी अष्टक वर्ग की रेखाओं की कुण्डली बनाते समय तत्तत् ग्रह की अधिष्ठित राशि से ही आगे भाव क्रम से गणना की जाएगी। जैसे पहले सूर्य का रेखाष्टक वर्ग चक्र बनाया गया है। जन्म लग्न मेष है तथा सूर्य कन्या राशि में छठे स्थान में स्थित है। सूर्य के अष्टक वर्ग में किस भाव को कितनी शुभ रेखाएं मिलीं ? इसका निर्णय सूर्याधिष्ठित राशि से प्रथम (लग्न) भाव की कल्पना कर आगे लिखेंगे। यथा सूर्य की रेखा कुण्डली इस प्रकार बनाई जाएगी—

वास्तविक उदाहरण :

सूर्य रेखा कुण्डली

सूर्य की अधिष्ठित राशि से लग्नादि भावों की कल्पना की गई। तब जिस भाव में सूर्य के पूर्वोक्त अष्टक वर्ग चक्र में जितनी रेखाएं पड़ी थीं, उनकी व्यंजक संख्या उसी भाव में अंकित कर दी। यहां पर अंक रेखाओं की संख्या का द्योतक है। राशियों को अनेक आद्यक्षर से प्रदर्शित किया जा सकता है। किन्तु यह आवश्यक नहीं है। ऊपर सूर्याष्टक रेखा व चन्द्राष्टक रेखा आदि स्पष्ट अंकित होने पर यही समझा जाएगा कि यहां पर भावों की कल्पना तत्तद् ग्रहों की अधिष्ठित राशि से आगे की गई है। अतः राशि लिखना आवश्यक नहीं है। उपर्युक्त कुण्डली से यह निष्कर्ष निकला कि सूर्य के अष्टक वर्ग में लग्न में ६ रेखाएं व द्वितीय स्थान में ४ रेखाएं आदि हैं। रेखा संख्या को ८ में से घटानेपर किसी भी भाव की बिन्दु (अशुभ) संख्या जानी जा सकेगी। इसी पद्धति से शेष अष्टक वर्ग कुण्डलियां इस प्रकार बनेंगी—

चन्द्र रेखा कुण्डली

मंगल रेखा कुण्डली
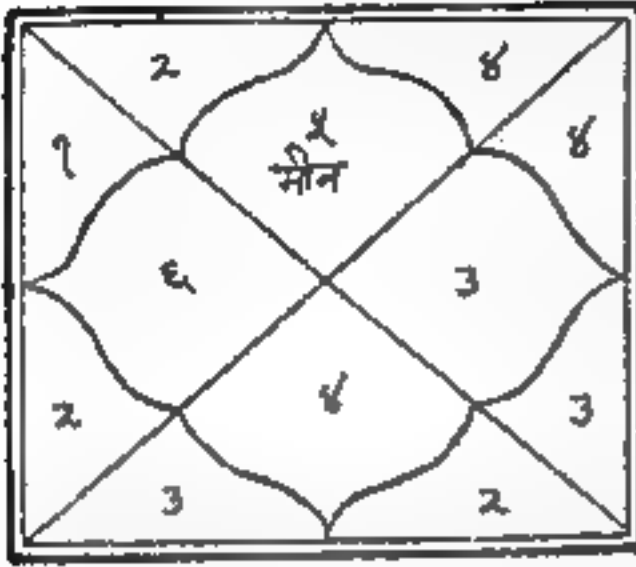
बुध रेखा कुण्डली

गुरु रेखा कुण्डली
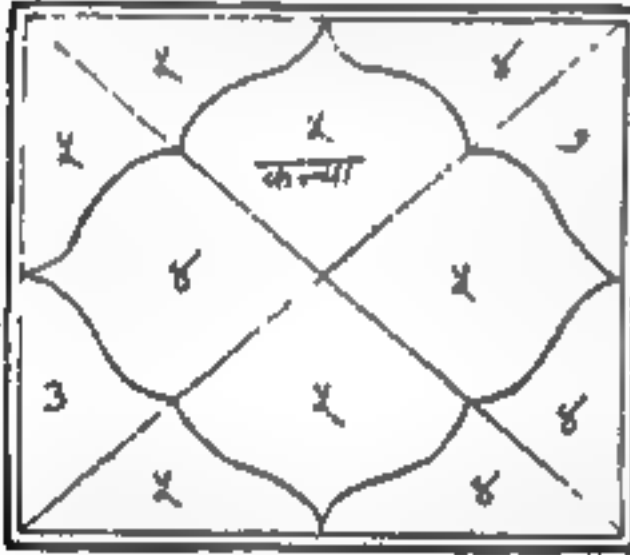
शुक्र रेखा कुण्डली
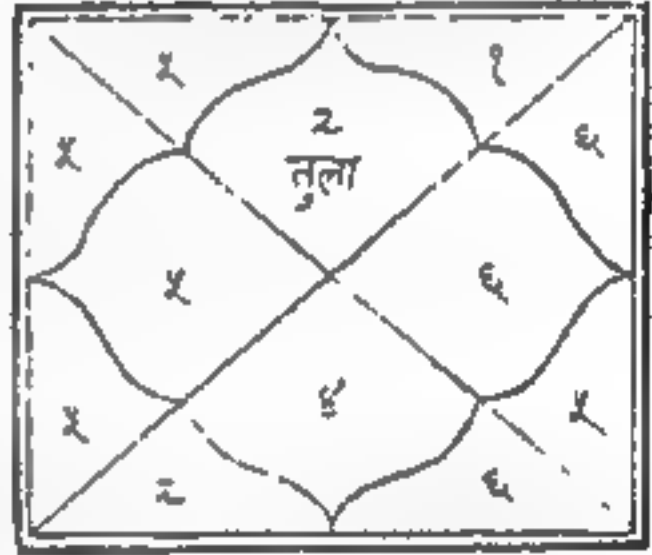
शनि रेखा कुण्डली
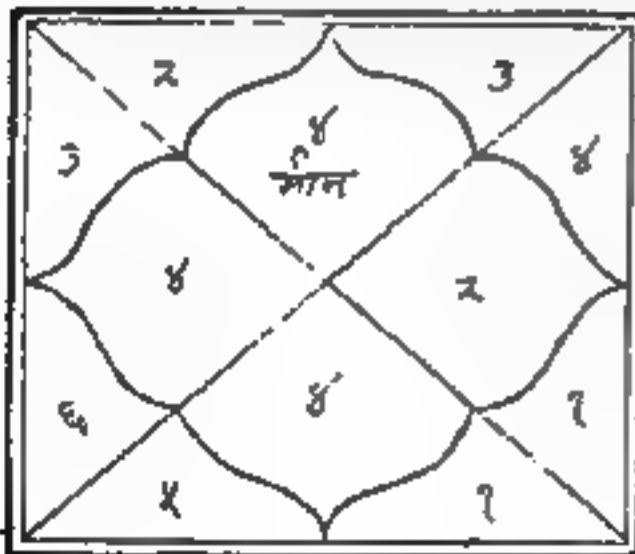
लग्न रेखा कुण्डली
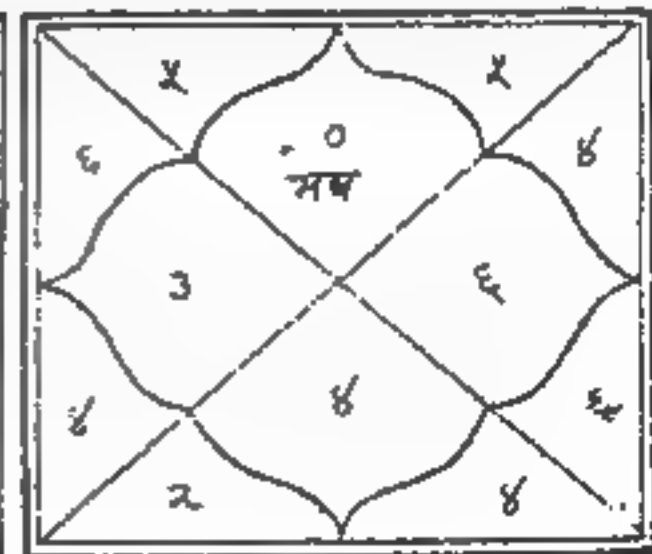
रेखा स्थापन विधि :

यस्मिन्नाशौ खेचरो विद्यते य-
स्तस्माद् गण्या रेखिकाः प्राङ्निरुक्ताः ।
रेखादेयास्तत्रमेऽन्येषुदाया
देया रेखा शोभना दायकोऽसन् ॥१८॥

अथेदानीं रेखास्थापनविधि शालिन्याह—

यस्मिन्निति । यः खेचरो जन्मकाले यस्मिन् राशौ विद्यते, तस्माद्राशेः सकाशात् प्राङ् निरुक्ताः पूर्वोक्ता रेखा गण्या गणनीयाः । तत्र मे यस्मिन् राशौ रेखा देया । अन्येषु राशिषु दाया बिन्दवो देयाः । अत्र रेखा शोभना शुभफलप्रदा, दायको बिन्दुश्चासन् अशुभ इति ।

जन्म समय में जो ग्रह जिस राशि में स्थित हो, उसी राशि के क्रम से बारह राशियों को रेखाष्टक वर्ग चक्र में लिखें ।

ग्रहों को अपनी-अपनी अधिष्ठित राशियों के नीचे ही लिख लें । सूर्यादि ग्रहों की अधिष्ठित राशि से पूर्वोक्त रेखाप्रद स्थानों को जान कर उन स्थानों में रेखा का (।) चिह्न अंकित कर लेना चाहिए । खाली स्थानों में बिन्दु (०) लिख लेना चाहिए । तत्पश्चात् रेखाओं व बिन्दुओं का योग करें ।

रेखाओं की अधिकता होने पर शुभफल व बिन्दुओं की अधिकता होने पर अशुभफल अधिक होगा । रेखा व बिन्दुओं की संख्या की समानता होने पर मध्यम अर्थात् शुभाशुभ मिश्रितफल जानना चाहिए ।

इस विषय को पहले प्रत्यक्ष समझ चुके हैं । अब यहां ग्रन्थ के अनुरोध से कहा गया है । अतः पिष्टपेषण अनावश्यक है । यहां तक रेखाष्टक वर्ग बनाने का प्रकार समझाया गया है । इसका खूब अभ्यास कर लेना चाहिए । रेखाएं लिखकर उन्हें पुनः परीक्षित कर लेना चाहिए, क्योंकि कभी-कभी रेखास्थापन में त्रुटि रह सकती है । रेखाष्टक वर्ग की साधारण सी त्रुटि का परिणाम आगे बड़ी त्रुटि में परिवर्तित हो जाएगा तथा इससे मिलने वाले निष्कर्ष भी निश्चय से भ्रामक होंगे । अतः सावधानी से स्थिर चित्त होकर स्थापना करनी चाहिए । अब आगे भिन्नाष्टकादि वर्गों का निर्माण व उनका फल बताया जाएगा ।

[इति श्रीमत्पण्डितमुकुन्ददैवज्ञविरचितेऽष्टकवर्गमहानिबन्धे पं० सुरेशमिश्र कृतायां मञ्जुलाक्षरायां हिन्दी व्याख्यायां प्रस्तावनाध्यायोऽवसितः ।]

२

भिन्नाष्टकवर्गाध्यायः

रेखायुक्त राशि का शुभाशुभ ज्ञान :

> **यत्र ग्रहेन्द्रा नरजन्मकाले**
> **चेत्तत्ररेखा शुभदा भवेत्सा ।**
> **फलं न शस्तं यदि तत्र बिन्दु-**
> **स्तयोरभावे तु फलं समानम् ॥१॥**

अथेदानीं रेखाबिन्दुयुक्तानां ग्रहाणां सदसत्फलमुपजात्याह—

यत्रेति । नरस्य पुरुषस्य जन्मन उत्पत्तेः कालः समयस्तस्मिन्, यत्र राशौ ग्रहेन्द्राः सूर्यादिग्रहा विद्यन्त इति शेषः । तत्र तस्मिन् राशौ रेखा भवेत् तदा सा शुभदा । यदि बिन्दुः स्यात् तदा शस्तं शुभं फलं न स्यात् । तयो रेखाबिन्द्वोरभावे तु समानं फलं ज्ञेयमिति शेषः ।

मनुष्य के जन्म समय उसकी जन्म कुण्डली में जिस राशि को रेखाएं प्राप्त हों और उस स्थान पर ग्रह भी हों तो शुभफल होता है ।

यदि किसी राशि में बिन्दु हों तथा रेखा न हों तो अशुभ-फल होता है । किसी राशि में रेखा व बिन्दु की संख्या समान हो और उसमें साथ ही ग्रह भी विद्यमान हो तो उसका मिश्रित (सम) फल होता है । यदि किसी स्थान पर कुछ भी न हो तो समफल (सामान्य) होता है ।

इस प्रसंग में यह बात विशेष ध्यातव्य है कि रेखा शुभफल की द्योतक है और बिन्दु अशुभफल का द्योतक होता है ।

यदि किसी स्थान में बिन्दु व रेखा की मात्रा (संख्या) समान अर्थात् ४-४ हों तो समान शुभाशुभफल समझना चाहिए । यदि किसी भाव में बिन्दु कम व रेखाएं अधिक हों तो शुभफल का अनुपात अधिक

होगा। इसी प्रकार बिन्दु, रेखाओं की अपेक्षा अधिक हों तो अशुभफल की मात्रा अपेक्षाकृत बढ़ जाएगी। इस बात को प्रकट करने के लिए वराहमिहिर ने '**बिन्द्वधिके नैव शोभनं प्रायः**' में प्रायः शब्द का प्रयोग किया है।

रेखा व बिन्दु का शोधन :

> **कला विशोध्या इह दायमध्या-**
> **न्मध्यात्कलानां करणं विशोध्यम्।**
> **चेत्तत्र रेखोर्वरिता शुभा सा**
> **दायावशेषं गदिता महापत् ॥२॥**

अथेदानीं रेखाबिन्दुशोधनमुपजात्याह—

कला इति। इह भिन्नाष्टक वर्गे दायमध्याद् बिन्दुमध्यात् कला रेखा विशोध्याः। कलानां रेखाणां मध्यात् करणं बिन्दुः विशोध्यम्। चेत् तत्र रेखोर्वरिता अवशिष्टा तदा सा शुभा। चेद् दायावशेषं तदा महापत् महाविपत्तिः कष्टमिति यावत्। गदिता कथिता दैवज्ञैरिति शेषः।

इस भिन्नाष्टक वर्ग के प्रसंग में रेखा संख्या में से बिन्दु संख्या और बिन्दु संख्या में से रेखा संख्या घटाकर देखना चाहिए। यदि रेखाएं शेष बचें तो शुभफल होगा और बिन्दु बचने पर अशुभफल होगा। ऐसा ज्योतिषशास्त्र के मर्मज्ञों ने कहा है।

यहां पर पूर्वोक्त नियम को ही परिभाषित किया गया है। सरल प्रकार यही है। रेखाएं अधिक होने पर सदा शुभफल होता है। यहां पर रेखाओं व बिन्दुओं के संस्कार अर्थात् शोधन का सामान्य प्रकार बताया गया है। किन्तु इन्हें स्पष्ट करने के लिए और अधिक संस्कार आवश्यक है। यह विषय अगले श्लोकों में बताया जा रहा है।

रेखा-बिन्दु के शोधन का स्पष्टीकरण :

> **रेखाभावे बिन्दवोऽष्टौ कलैका**
> **षड्दाया द्विस्थानयोर्वैवदायाः।**
> **त्रिस्थानेषु स्तो द्विदायौ समानं**
> **तुर्यस्थानेष्वेवमस्तोन्मितासु ॥३॥**

रेखासु द्वेरेखिके षट्कलासु
बेदारेखाः सप्तरेखासु रेखाः।
शास्त्रैस्तुल्या रेखिका नागतुल्या
नो लुप्यन्ते शोधनं रेखिकाणाम् ॥४॥

अधुना रेखाबिन्दुशोधस्फुटीकरणं शालिनीद्वयाभ्यामाह—

रेखाभाव इति। रेखास्विति च। रेखाभावे यत्र तत्राष्टौ बिन्दवः। यत्रैका रेखा तत्र षड् दाया बिन्दवः। द्विस्थानयोर्द्वयोः रेखयोः वेददायाः चत्वारो बिन्दवः। त्रिस्थानेषु द्विदायौ द्वौ बिन्दू। तुर्यस्थानेषु चतसृषु रेखासु समानं कुर्यादिति चत्वारो बिन्दवः। अर्थात् शून्यं फलं देयम्। अक्षोन्मितासु पञ्चसु रेखासु द्वे रेखिके। षट् कलासु षट्सु रेखासु वेदा रेखाश्च तिस्रो रेखाः। सिप्त रेखासु शास्त्रैस्तुल्याः षट्प्रमिता रेखाः स्युः। यत्र नागतुल्या अष्टसम्मिता रेखा भवन्ति तत्र रेखा नो लुप्यन्ते। तत्र बिन्दूनामभावो बोध्यः। एवं रेखिकाणां शोधनं भवति।

इन श्लोकों में रेखाओं व बिन्दुओं के शोधन का स्पष्टीकरण प्रकार बताया जा रहा है। शोधन के लिए इस प्रकार स्थापना करनी चाहिए—

(i) जिस स्थान में कोई रेखा न हो वहां ८ बिन्दु स्थापित किए जाएंगे।
(ii) जहां पर एक रेखा हो तो ६ बिन्दु होंगे।
(iii) जहां २ रेखाएं हों तो उसके नीचे ४ बिन्दु होंगे।
(iv) यदि ३ रेखाएं हों तो २ बिन्दु होंगे।
(v) यदि ४ रेखाएं हों तो समान बिन्दु होंगे।
(vi) यदि ५ रेखाएं हों तो उसके नीचे २ रेखाएं होंगी।
(vii) यदि ६ रेखाएं हों तो उसके नीचे ४ रेखाएं होंगी।
(viii) यदि ७ रेखाएं हों तो उसके नीचे ६ रेखाएं होंगी।
(ix) यदि ८ रेखाएं हों तो कोई बिन्दु नहीं होगा।

यहां पर भ्रमित होने की आवश्यकता नहीं है। श्लोकोक्त ढंग से ऊपर शोधन बताया गया है। अब हम इसे सरल प्रकार से समझते हैं। ध्यान रखिए कि रेखाओं व बिन्दुओं की एक स्थान पर अधिकतम संख्या ८-८ हैं। शोधन से तात्पर्य है कि किसी भाव का आनुपातिक शुभाशुभत्व अर्थात् रेखा या बिन्दुओं की अधिकता का

ज्ञान। यह स्पष्ट कर चुके हैं कि किसी भी स्थान की रेखा संख्या को ८ में से घटाने पर शेष उस स्थान की बिन्दु संख्या होगी। अब हमें प्रत्येक ग्रह की रेखाओं का शोधन करना है। एतदर्थ, किसी भी ग्रह की अष्टक वर्ग चक्र में कही गई रेखाओं के योग को तत्तद् राशियों के नीचे स्थापित कर लीजिए। इस रेखा योग को ८ में से घटाने पर बिन्दु संख्या आ जाएगी। अब रेखाओं के नीचे अलग-अलग राशियों की बिन्दु संख्या को भी लिख लीजिए।

अब रेखा या बिन्दु में से जो अधिक हो उसमें से कम को घटाइए। जो शेष बचेगा वह शोधित बिन्दु या शोधित रेखा होगी। यदि रेखाओं की संख्या अधिक हो तो घटाने पर शेष बचने वाली संख्या रेखा कहलाएगी। यदि बिन्दुओं की संख्या अधिक हो तो शेष संख्या बिन्दु कहलाएगी। इस विषय को हम अपने पूर्वोक्त उदाहरण के सूर्य रेखा वर्ग के सन्दर्भ से समझते हैं।

पिछले उदाहरण में सूर्य के भिन्नाष्टक वर्ग में मेष, कर्क, तुला, धनु व मकर राशि में चार रेखाएं होने के कारण बिन्दु भी चार-चार ही होंगे। अब इन्हें आपस में घटाने पर शेष ० बचेगा। अर्थात् सूर्य रेखा शोधन करने के उपरान्त इन राशियों में रेखा व बिन्दु का अभाव माना जाएगा। वृष राशि को दो रेखाएं मिलीं, अतः बिन्दु ६ हुए। अब बिन्दु (अधिक संख्या) में से रेखा (अल्प संख्या) को घटाया तो शेष ४ बिन्दु बचे। यही संख्या शुद्ध मानी जाएगी। इसी पद्धति से मिथुन व कन्या में ६-६ रेखाएं होने के कारण उनके नीचे शुद्ध रेखाएं ४-४ बनीं। सिंह की एक रेखा है, अतः उसके नीचे ६ शुद्ध बिन्दु स्थापित किए गए हैं। वृश्चिक और कुम्भ के नीचे ३-३ रेखाएं हैं, अतः उन्हें बिन्दु संख्या ५-५ में से घटाने पर शुद्ध बिन्दु २ माने गए हैं। मीन राशि को ७ रेखाएं प्राप्त थीं अतः ६ शुद्ध रेखाएं वहां स्थापित की गई। इसी पद्धति से चन्द्रमा आदि ग्रहों का भी शोधन करना चाहिए।

ध्यान रखिए बिन्दु अधिक होने पर बिन्दु संख्या में से और रेखाएं अधिक हों तो उनमें से बिन्दु या रेखा संख्या को यथावसर घटाया जाएगा। इस प्रकार जो शेष बचे वे ही शुद्ध रेखाएं या बिन्दु होंगे।

उदाहरणार्थ, रेखा व बिन्दु का शोधन यहां दिया जा रहा है।

उदाहरण :

सूर्य रेखा व बिन्दु का शोधन

राशि	मे.	वृ.	मि.	कर्क	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
रेखायोग	४	२	६	४	१	६	४	३	४	४	३	७
बिन्दुयोग	४	६	२	४	७	२	४	५	४	४	५	१
शुद्धरेखा	०	—	४	०	—	४	०	—	०	०	—	६
शुद्धबिन्दु	०	४	—	०	६	—	०	२	०	०	२	—

इसी पद्धति से अन्य ग्रहों का शोधन करने पर निम्नलिखित परिणाम आए—

चन्द्र रेखा बिन्दु शोधन

राशि	मे.	वृ.	मि.	कर्क	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
शुद्धरेखा	२	—	२	६	२	—	—	—	०	४	०	—
शुद्धबिन्दु	—	२	—	—	—	४	४	२	०	—	०	२

मंगल रेखा बिन्दु शोधन

राशि	मे.	वृ.	मि.	कर्क	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
शुद्धरेखा	—	—	४	—	—	०	—	—	—	०	०	२
शुद्धबिन्दु	४	६	—	४	२	०	४	२	२	०	०	—

बुध रेखा बिन्दु शोधन

राशि	मे.	वृ.	मि.	कर्क	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
शुद्धरेखा	२	—	२	०	२	०	२	२	०	२	४	—
शुद्धबिन्दु	—	२	—	०	—	०	—	—	०	—	—	२

गुरु रेखा बिन्दु शोधन

राशि	मे.	वृ.	मि.	कर्क	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
शुद्धरेखा	०	०	२	६	०	२	२	२	०	—	२	२
शुद्धबिन्दु	०	०	—	—	०	—	—	—	०	२	—	—

शुक्र रेखा बिन्दु शोधन

राशि	मे.	वृ.	मि.	कर्क	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म	कु.	मी.
शुद्धरेखा	०	४	२	४	४	—	—	२	२	२	२	—
शुद्धबिन्दु	०	—	—	—	—	६	४	—	—	—	—	४

शनि रेखा बिन्दु शोधन

राशि	मे.	वृ.	मि.	कर्क	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	मं.	कु.	मी,
शुद्धरेखा	—	—	०	४	२	०	—	—	—	०	—	०
शुद्धबिन्दु	४	२	०	—	—	०	६	६	४	०	२	०

लग्न रेखा बिन्दु शोधन

राशि	मे.	वृ.	मि.	कर्क	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
शुद्धरेखा	—	२	४	—	०	—	०	०	४	४	०	२
शुद्धबिन्दु	८	—	—	२	०	४	०	०	—	—	०	—

शुद्ध रेखा-बिन्दु का फल :

रेखाष्टके पूर्णफलं प्रदिष्टं
पादोनमेवं रससंख्यया च ।
रेखाचतुष्केण फलं दलं च
तथा तदर्द्धं युगलेन वेद्यम् ॥५॥
प्रजायते दुष्टफलं सदैवं
बिन्दुप्रभावेण समं फलं स्यात् ।
समानसंख्यं जनिभाद्विहङ्ग
बद्धुः फलं चारवशेन तत्र ॥६॥

अथाधुना शोधितरेखाबिन्दुफलमुपजातिद्वेनाह—

रेखाष्टक इति । प्रजायत इति च । रेखाष्टके अष्टासु रेखासु पूर्णफलं प्रदिष्टम् । पण्डितैरिति शेषः । एवं रससंख्यया षड्भी रेखाभिः पादोनं चतुर्थांशरहितं फलं भवेत् । रेखाचतुष्केणदलमर्धं फलम् । तथा युगलेन रेखाद्वयेन तदर्धं दलार्धमर्धाच्चतुर्थांश फलमिति । एवं बिन्दुप्रभावेण नित्यं दुष्टफलं प्रजायते । यदि समानसंख्यं रेखाबिन्द्वोः साम्यं तदा समं फलं भवति । तत्र

विहंगा ग्रहाः जनिभात् जन्मनि यो ग्रहो यस्मिन् राशौ तिष्ठति तस्मात् चारवशेन गोचरेण फलं स्वकीयं शुभाशुभरूपं दद्युरिति। तथा च बादरायणः—

'एकेन यः शुभः स्यात् षड्भिः स्थानैः स पापदो भवति।
यस्तु चतुर्भिः श्रेष्ठः सर्वफले कल्पनाप्येवम्॥

कष्ट श्रेष्ठे तुल्यसङ्ख्ये फले चेत् स्यातां नाशः फलयोस्तत्रवाच्यः।
वाच्या पंक्तिर्योऽतिरिक्तस्तयोः स्यात् स्थाने स्थाने कल्पनेयं प्रदिष्टे।' इति।

यदि कहीं पर ८ शुद्ध रेखाएं हों तो पूर्ण शुभफल होता है। ६ रेखाएं होने पर त्रिपाद अर्थात् पौना (७५%) फल होता है। ४ रेखाएं होने पर आधा फल होता है। दो रेखाओं का चौथाई फल होता है। इसी अनुपात से बिन्दुओं से अशुभ फल होता है। यदि दोनों की संख्या समान हो, अर्थात् शुद्ध संख्या ० हो तो सम फल होता है। इस शुभ या अशुभ फल की प्राप्ति जन्मराशि से गोचर द्वारा जाननी चाहिए।

रेखा या बिन्दु का फल कब मिलेगा ? इस विषय में ध्यान देना चाहिए कि जन्म समय ग्रह जिस राशि में हो, उस राशि से गोचर वशात् जब-जब रेखा युक्त स्थानों में आएगा तब तब उपर्युक्त मात्रा में शुभ फल प्रदान करेगा। बिन्दु युक्त स्थानों में आने पर उक्त परिमाण में दुष्ट फल देगा। यहां यह ध्यान रखना चाहिए कि अष्टक वर्ग के प्रकरण में ग्रहों की अधिष्ठित राशि को लग्न मानकर चलना है। अतः राशियां वहां उस भाव की द्योतक हैं जिस भाव में वे ग्रह की अधिष्ठित राशि से पड़ती हों। यथा अपने इस उदाहरण में सूर्य कन्या राशि में है। अतः सूर्य का प्रथम भाव कन्या राशि में है। मिथुन, कन्या व मीन में रेखाएं (शुद्ध) हैं।

जब सूर्य गोचर से इन राशियों में आएगा तो रेखाओं के अनुपात से शुभ फल होगा। अथवा जन्म चन्द्र राशि (मकर) से ३, ६, ९ स्थानों में सूर्य के गोचर में रेखानुपात से शुभ फल होगा।

रेखाओं के विशेष फल को ग्रन्थकार ने 'मुक्ता वल्ली' नामक ग्रन्थ के उद्धरण से बताया है।

यदि दो शुद्ध रेखाएं हों तो धन देने वाली और चार रेखाएं शुद्ध हों तो उन्नति, प्रगल्भता व बन्धु-बान्धवों की वृद्धि होती है।

छः रेखाएं शुद्ध होने पर विपुल प्रताप, यश का विस्तार और कांति होती है। यदि आठ रेखाएं शुद्ध हों तो अनेक गुणों से सम्पन्न राजशासन देती हैं। बिन्दुओं का फल जातक चन्द्रिका में इस प्रकार बताया गया है—

दो शुद्ध बिन्दु होने पर मृत्यु, चार शुद्ध बिन्दु होने पर पीड़ा, छः शुद्ध बिन्दु होने पर रोग व दरिद्रता और आठ बिन्दु होने पर मृत्यु होती है। यह फल गोचर वशात् तत्तद् ग्रह के तत्तद् भावों में संक्रमण करने पर समझना चाहिए।

शुभाशुभ फल का विशेष विचार:

योवृद्धिगोऽङ्गविधुतः खचरः स्वभोच्च-
मित्रत्रिकोणभवनेऽष्टकवर्गजन्यम्।
यत्तत्फलं सदखिलं सममत्र दुष्टं
पीडर्क्षगस्य शुभमल्पमसत्प्रपुष्टम् ॥७॥

अथेदानीमष्टकवर्गजफलस्य पुष्टापुष्टत्वपरिज्ञानं वसन्ततिलकेनाह—

य इति। यः खचरो ग्रहोऽङ्गविधुतो लग्नात् चन्द्राद् वा वृद्धिग उपचयभावगतः। स्वराशौ, उच्चराशौ, मूलत्रिकोणभवने मित्रभे स्थितः तस्य ग्रहस्य यदष्टकवर्गजन्यं तत्फलं शुभफलं तदाखिलं भवति। अथ दुष्टमशुभं फलं समं भवति। पीडर्क्षगस्यापचयेतरस्थानगतस्य तृतीयषष्ठदशमैकादशेभ्योऽन्य-भावेषु स्थितस्य शुभमल्पं, असदशुभं प्रपुष्टमधिकं भवतीति। तथा च देवकीर्तिः—

'लग्नादुपचयसंस्थश्चन्द्राद्वा स्वगृहमूलतुङ्गस्थः।
मित्रक्षेत्रगतो वा फलमतिशयिनः शुभं दद्यात्॥
अपचयराशौ नीचे शत्रुक्षेत्रे च जन्म काले स्यात्।
यस्तु स दद्यात्पापं फलमतिशयिनो यथाकालम्॥' इति

जन्म समय में जन्म लग्न से या चन्द्रमा से जो ग्रह वृद्धि अर्थात् उपचय स्थानों (३, ६, १०, ११) में हो तथा स्वराशि, स्वोच्च राशि, मित्रराशि या मूल त्रिकोण राशि में हो तो उसका अष्टक वर्ग जनित फल यदि शुभ हो तो पूर्ण होगा। यदि उक्त परिस्थितियों में अशुभ अष्टक वर्ग जन्य फल हो तो अशुभ फल की मात्रा मध्यम होती है। यदि कोई ग्रह जन्म लग्न या चन्द्र से पीड़ा स्थान अर्थात् अपचय (१, २, ४, ५,

७, ८, ६, १२) में स्थित हो तो उसका शुभफल 'अल्प' होता है तथा अशुभ फल अधिक होता है।

इस प्रसंग में अष्टक वर्ग जन्य शुभाशुभ फल जानने के लिए जो नियम क्रमश: बताए गए हैं वे उत्तरोत्तर बलवान् हैं। सामान्यत: रेखायुक्त होना शुभफलकारी है। किन्तु रेखायुक्त ग्रह भी यदि उपचय स्थान में और स्वोच्चादि राशि में स्थित होगा तो उसका फल पूर्ण और तथावत् अपचय स्थानों में होने पर शुभ फल कम हो जाएगा। यही क्रम अशुभ फल के संदर्भ में भी अपनाना चाहिए। उपचय स्थानगत ग्रह का अशुभ फल मध्यम और अपचय स्थानगत ग्रह का अशुभ फल अधिक होता है।

उक्त शुभाशुभ फल कब प्राप्त होगा ? इस विषय में कहा जा चुका है कि अपने दशा परिपाक काल में अथवा गोचर काल में प्रतिफलित होगा। यही बात ऊपर संस्कृत टीका में दिए गए देवकीर्ति के उद्धरण में 'यथाकालम्' शब्द से स्पष्ट की गई है।

अशुभ फल की अधिकता :

> **किं सूतौ खगविजितो भगाभिभूतो**
> **रश्म्यूनोऽधरगृहगोऽरिभेऽरिदृष्टः।**
> **योऽह्रस्वो यदि वपुषा नभश्चरेन्द्रो**
> **दद्यात्स त्वतिशयितः फलं च पापम् ॥८॥**

अथाधुनाऽशुभफलस्य पुष्टतां प्रहर्षिण्याह—

किमिति। किमथवा सूतौ जन्मनि यो नभश्चरेन्द्रो ग्रहः खगविजितः ग्रहयुद्धे पराजितः। भगाभिभूतो भगेन सूर्येणाऽस्तंगतः, रश्म्यूनो रश्मिभिः करैरूनोन्यूनः, अधरग्रहगतो नीचस्थानगतः, अरिभे शत्रुराशौ, अरिदृष्टो वपुषा बिम्बेन ह्रस्वो न्यूनः सोऽतिशयितोऽतीव पापमशुभं फलं दद्यात्। इति

जन्म के समय जो ग्रह युद्ध में पराजित, अस्तंगत, कम रश्मियों वाला, नीचराशि में स्थित, शत्रुस्थानगत, शत्रुग्रह से दृष्ट और अल्प बिम्ब वाला होगा, वह अष्टक वर्ग जन्य अशुभ फल को अधिक परिपुष्ट करके प्रदान करेगा।

भौमादि पांच ग्रहों (तारा ग्रहों) की यदि समान अंशकला हों तो परस्पर युद्ध होता है। युद्ध में विजयी ग्रह विपुल रश्मिवान्, उत्तर दिशा में स्थित (शुक्र दक्षिण में स्थित) तथा स्निग्ध होता है। इसके विपरीत ग्रह को पराजित माना जाएगा। उपर्युक्त लक्षण वाले ग्रहों का अशुभ फल यदि सिद्ध हो रहा हो तो उसकी मात्रा स्वाभाविक रूप से बढ़ जाएगी। इसके विपरीत यदि शुभ फल सिद्ध हो रहा हो तो वह भी निरुपयोगी अर्थात् अकिञ्चित्कर हो जाएगा। श्री वराह मिहिर ने इस बात को उपमा के माध्यम से समझाया है। उक्त परिस्थितियों में ग्रह इसी प्रकार शुभ फल करने में असमर्थ (कार्याक्षम) हो जाता है जैसे सर्प को मन्त्र से वश में करने पर वह असमर्थ हो जाता है।

दद्याद् ग्रहेन्द्रः स्वफलं प्रपुष्टं
वीर्यान्वितोऽपुष्टफलं बलोनः।
चारे खगामीव समः शशाङ्कः
कष्टप्रदश्चेत्सहसा विहीनः॥९॥

अथाधुना ग्रहाणां बलाबलवशेन फलस्य पुष्टापुष्टत्वं [illegible]

दद्यादिति। यो ग्रहेन्द्रो ग्रहो वीर्यान्वितो [illegible] चारे तथा गोचरे स्वफलं प्रपुष्टमधिकं दद्यात्। बलेन [illegible] न्यूनं फलं दद्यात्। खगामीव ग्रह इव [illegible] समः [illegible] सम्पूर्णमण्डल इत्यर्थः। चेद्यदि सहसा बलेन विहीनो [illegible] स्यादिति।

तथा च देवकीर्तिः—

'पुष्टमपुष्टं स्वफलं दद्यात् सबलो [illegible]।
ग्रह इव सर्वश्चन्द्रः कष्टफलो बलविहीनश्चेत् ॥'

जन्म समय में जो ग्रह बली हो तो गोचर में अपने अष्टक वर्ग जनित फल को और अधिक पुष्ट करके प्रदान करेगा।

इसी प्रकार निर्बल ग्रह अपने फल को अपुष्ट रूप से प्रदान करेगा। फल चाहे शुभ या अशुभ कैसा भी हो उसके पुष्टत्व और अपुष्टत्व का विवेक ग्रह के बलाबल के आधार पर करना चाहिए।

यदि पूर्ण मण्डल वाला चन्द्रमा भी बलहीन होगा तो अवश्य ही अन्य बलहीन ग्रहों की तरह अशुभ फल ही देगा।

मेषादि राशियों की रेखाओं का फल :

> **मेषाद्येषु गृहेषु येऽष्टिभमिता रेखा यदा स्युस्तदा**
> **तद्भानां चयपुष्टिविक्रमकराश्चेत्षट्शरागोन्मितैः।**
> **संयुक्तानि च भानि यानि सततं कल्याणदानि क्षमा-**
> **युग्माग्नि प्रमितैर्युतानि च फलैः स्युः शोभनानीह नो ॥१०॥**

अथेदानीं मेषादिराशिगतरेखाफलं शार्दूलविक्रीडितेनाह—

मेषाद्येष्विति। यदा येषु मेषाद्येषु ग्रहेषु राशिषु इभामिता अष्टौ रेखाः स्युस्तदा तद्भानां तेषां राशीनां चयपुष्टिविक्रमकरा वृद्धिपुष्टि-बलकराः भवन्ति। यानि भवनानि षट्शरागोन्मितैः फलैः षड्भिः पंचभिः सप्तभिर्वा फलैः रेखाभिः संयुक्तानि सहितानि तानि सततं कल्याणदानि ज्ञेयानि। यानि भानि क्षमायुग्माग्निप्रमितैः फलैः युतानि तानीहास्मिन् प्रकरणे शोभनानि सत्फलप्रदानि नो स्युरिति।

जन्म के समय मेषादि राशियों में से जिन राशियों को आठ रेखाएं मिली हों, वे स्वाधिष्ठित भावों की पुष्टि तथा वृद्धि करने वाली होंगी। पांच, छह और सात रेखाओं से युक्त राशियां शुभफल करने वाली होती हैं। एक, दो व तीन रेखाओं वाली राशियां शुभ फल देने वाली न होकर कष्टप्रद होती हैं।

इस प्रकरण में शुद्ध राशियों का ही ग्रहण है। सरल प्रकार यह है कि रेखारहित राशि सर्वथा अशुभ होती है। १, २, ३, रेखाओं से युक्त राशि अधम फल देने वाली होती है। ५, ६, ७, रेखाओं से युक्त राशियां मध्यम और ८ रेखाओं से युक्त राशियां उत्तम होती हैं। संस्कृत टीका में जातकादेश की साक्षी इस विषय में दी गई है। वहीं पर ग्रन्थान्तर के कथनानुसार रेखाओं का फल इस प्रकार बताया गया है—एक रेखा हानिप्रद, दो रेखाएं धन नाशक, तीन क्लेशप्रद, चार सम, पांच क्षेम व आरोग्यकारी, छह धनप्रद, सात आनन्दकारी एवं आठ सभी मनोरथों को पूर्ण करने वाली होती हैं।

पीछे श्लोक ६ की व्याख्या में बताए गए रेखाफल से यहां विरोध झलकता है। दोनों फल अलग ग्रन्थों के आधार पर लिखे गए हैं। फिर भी यह बात तर्क सम्मत है कि चार से अधिक रेखाएं शुभ व चार से कम अशुभ होती हैं। यही सामान्य सरणी अपनायी जानी चाहिए।

मिश्रं फलं स्याछ्रुतितुल्यरेखिका-
योगे खभावा भ्ययवादरोगदाः ।
एकादिरेखाढ्यखगाद्दिवौकसां
वक्ष्यामि भिन्नाष्टगणोद्भवं फलम् ॥११॥

अथाधुना चतूरेखायुक्तराशिफलं रेखोनराशिफलं चेन्द्रवज्रयाह —

मिश्रमिति । श्रुतितुल्य रेखिका योगे चतसृणां रेखाणां योगे सति मिश्रं शुभाशुभात्मकं फलं स्यात् । खभावा इति । ये भावा रेखया रहिताः ते भीतिनिन्दारोगकराः । ज्ञेया इति शेषः । एकादिरेखायुक्तानां सूर्यादि ग्रहाणां भिन्नाष्टगणोद्भवं भिन्नाष्टवर्गजन्यं यत्फलं तद् वक्ष्यामि कथयिष्यामि । अहमिति शेषः ।

जन्म समय जिन राशियों को चार रेखाएं मिली हों तो उनका फल शुभाशुभ मिश्रित समझना चाहिए ।

जो राशियां रेखा रहित हों तो वे भय, अपवाद (बदनामी) तथा रोग बढ़ाने वाली होती हैं ।

अब आगे एकादि रेखा से युक्त सूर्यादि ग्रहों के फल को कहूंगा ।

यहां पर यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि बलवान् या निर्बल राशियां अपना यथोक्त फल अपने स्वामी ग्रह की दशा या गोचर में अथवा जो ग्रह उनमें हों उनके गोचर या दशा में अथवा जो ग्रह उन पर दृष्टि आदि कोई सम्बन्ध रख रहे हों, उनके गोचर या दशा में देंगी ।

रेखायुक्त ग्रहों का विस्तृत फल :

एकस्थानयुतो गतार्थधिषणं चित्तेऽर्थचिन्तां खगो
यानात्पातनमध्वनः प्रकुरुते भ्रंशं तथा कर्म्मणाम् ।
सिद्धि साहसतो व्ययं ह्यपि सकृन्नीचैः कलिं वैरिभि-
र्द्वेषं दुःखभयो भयाटनमुखं नानाविधं चामयम् ॥१२॥

अथुनैकरेखायुक्तग्रहफलमाह—

एकेति । यः खगो ग्रहः एकस्थानयुत एकेन स्थानेन फलेन युतः सहितः तदा अर्थेन धनेन धिषणया बुद्धया गतं रहितं प्रकुरुते । जातमिति शेषः । चित्त इति चित्ते हृदयेऽर्थचिन्तां धनचिन्तां यानाद् वाहनात् पातनं पतनं, अध्वनो मार्गात् भ्रंशं भ्रष्टं तथा साहसतः कर्मणां सिद्धिसकृद् व्ययमपि, नीचैरधमैः

सह कलिं, वैरिभिः शत्रुभिः सार्धं द्वेषं दुःखं अयानटमुखं भयभ्रमादि, नानाविधमनेकप्रकारं, आमयं रोगम् प्रकुरुते । तथा च सत्याचार्य—

एका रेखा विगतधनधीमानसीवित्तचिन्तां
मार्गाद् भ्रंशं जनयति सदा पातनं वाहनाद् वा ।
लोकद्वेषो भवति च कलिर्वाङ्मयेनाधमानां,
शत्रुद्वेष व्ययमपि सकृत्साहसात्कर्मसिद्धिः । इति ।

जन्म समय जो ग्रह केवल एक रेखा से युक्त हो तो वह धन और बुद्धि का नाश करता है। मन में सदा धन की चिन्ता बनी रहती है। वाहन से दुर्घटना, मार्ग भ्रष्ट होना तथा बड़ी हिम्मत से काम का बनना आदि फल होते हैं। तब नीच व्यक्तियों के साथ विवाद, व्यर्थ में एक बार धन का बड़ा अपव्यय, वैर में वृद्धि, दुःख, भय, वृथा भ्रमण और अनेक प्रकार के रोग होते हैं।

यहाँ यह समझना चाहिए कि एक रेखा से युक्त ग्रह का उक्त फल अपनी दशा या गोचर में होगा, अथवा एक रेखा से युक्त राशि में जब कोई ग्रह संक्रमण करेगा तब उक्त फल होगा। संस्कृत टीका में जातक पारिजातकार का जो कथन उद्धृत किया गया है वहाँ पर उनका तात्पर्य एक रेखा युक्त राशि में ग्रह के संक्रमण से ही है।

दाहं शरीरे विविधं व्ययं भयं
रोगं प्रकुर्य्याद् भ्रमणं दृढं द्विकः ।
शून्याटवीभूमितलेऽबलाव्यथां
साक्षादघाढ्यं प्रचुरं प्रवासकम् ॥१३॥

अथाधुना रेखाद्वययुक्तग्रहफलमिन्द्रवंशयाह—

दाहमिति । द्विको रेखाद्वययुक्तो ग्रहः शरीरे दाहं विविधं बहुविधं व्ययं, भयं, रोगं मान्द्यं, शून्याटवीभूमितले, निर्जनवने दृढं तीव्रं भ्रमणं, अबलाव्यथां स्त्रीकष्टं, साक्षात् प्रत्यक्षं, अघाढ्यं पापसंघं, प्रचुरं बहु, प्रवासकं विदेशवासं प्रकुर्यात् । तथा च सत्यः—

'रेखाद्वयं वपुष एव करोति दाहं, स्त्रीदुःखतां विविधरोगभयं च साक्षात् ।
पापं व्ययं विविधमेव बहुप्रवासं शून्याटवी क्षितितले भ्रमणं-सुतीव्रम् ।'

यदि दो रेखाओं से युक्त ग्रह हो तो शरीर में दाह (जलन), अनेक प्रकार से धन का अपव्यय, भय, रोग, निर्जन स्थानों में भ्रमण,

स्त्रीपक्ष से कष्ट, प्रत्यक्ष पाप कर्म में लगना और घर से बाहर रहना आदि फल होते हैं।

दुःशासिता वित्तहृति तनूहृति—
अग्नेर्भयं दुश्चरितान्नृपाद्भयम् ।
यानक्षतिं कुत्सितभोजनाद्भयं
कुर्यात्त्रिको व्याकुलमानसं नरम् ॥१४॥

अथेदानीं रेखात्रययुक्तग्रहफलमिन्द्रवज्रयाह ।

दुःशासितेति । यदि जन्मनि त्रिभी रेखाभिर्युतो ग्रहस्तदा दुःशासिता दुष्टशासकोऽनाय वित्तहृतिं धनापहरणं तनूहृतिं शरीरदण्डः, अग्नेर्भयं दुश्चरिताद् व्यभिचारादितो नृपाद्राज्ञो भयं, यानक्षतिं वाहनहानिं, कुत्सितभोजनात् कदन्नात्, भयं व्याकुलमानसं व्याकुलहृदयं, नरं कुर्यात् । तथा च सत्याचार्यः

रेखात्रयं यदि भवेत् गणनेऽष्टवर्गे,
दुश्चारित्रा नृपतिभीतिः कुभोजनार्थं ।
दुःशासिना धनहानिर्वपुषो हानिर्वा,
वह्नेर्भयं भवति वाहनहानिरेव । इति

यदि ग्रह तीन रेखाओं से युक्त हो तो अग्नि से भय, दुष्ट शासक से भय अर्थात् धन हानि या शरीर हानि, दुश्चरित्र के कारण राजभय, वाहन की हानि, दुष्ट भोजन से कष्ट और चित्त की व्याकुलता जैसे फल होते हैं।

रेखाचतुष्टययुतो द्युचरः प्रकुर्याद्
दौर्भाग्यमग्र्यमथ संहनने कृशत्वम् ।
पीडां तनौ प्रचुरकम्पशुचं प्रघातं
प्राज्यं करोति सुजनैः सह विग्रहाख्यम् ॥१५॥

अथेदानीं रेखाचतुष्टययुक्तग्रहफलं वसन्ततिलकेनाह—

रेखेति । रेखा चतुष्टययुतः चतुर्भी रेखाभिर्युतो द्युचरो ग्रहोऽग्र्यम् प्रधानमधिकं वा दौर्भाग्यं दुष्टभाग्यं प्रकुर्यात् । संहनन इति । संहनने शरीरे कृशत्वं दुर्बलतां तनौ शरीरे पीडां व्यथां, प्रचुरं बहुकम्पं कम्पनं शुचं शोकः प्राज्यं बहु प्रघातमाघातं सुजनैः सज्जनैः सह विग्रहाख्यं कलिं करोति । तथा च सत्याचार्यः—

'बहुप्रघात बहुशोककर्म्म देहे कृशत्वं च शरीरपीडाम्।
दौर्भाग्यमग्र्यम् सुजनैः कलिं चेदुत्पादयेच्च रेखाचतुष्टयम् ॥' इति

जन्म समय यदि ग्रह चार रेखाओं से युक्त हो तो दुर्भाग्य-शीलता, शरीर में निर्बलता और कष्ट, शरीर में कम्पन का बढ़ना, शोक और प्रहार एवं अच्छे लोगों से कलह, ऐसे फल होते हैं।

वैद्यनाथ के मत से चार रेखाओं का फल लाभ और हानि, सुख और दुःख मिश्रित होता है जैसा कि ऊपर दिए गए उद्धरण से स्पष्ट है।

रेखापञ्चयुतः सुशोभनं च
कुर्य्यात्कार्य्यविवाहवाहनानि ।
ताम्रस्वर्णनिकेतमानधान्य-
सम्प्राप्तिं तुरगाविलाभमेवम् ॥१६॥

अथाधुना पञ्चरेखायुक्तग्रहफलं त्रिष्टुब्जात्याह—

रेखापञ्चयुतः पञ्चभिः फलैर्युतो ग्रह इति शेषः। सुशोभनमतीवकल्याणं करोति। कार्यं सत्कार्यं, विवाहः पाणिपीडनं, वाहनं, ताम्रं धातुः, स्वर्णं, निकेतं गृहं, मानं, धान्यं तेषां सम्प्राप्तिं लाभं कुर्यात्। एवं तुरगादीनामश्वादीनां लाभं प्राप्तिं कुर्यात्। तथा च सत्याचार्यः—

'रेखापंचकमतीव शोभनं कार्यवाहनविवाहकृन्नृणाम्।
मानधान्यधनगेहकारकं हेमताम्रहयलाभकृद् भवेत् ॥'

जन्म समय यदि कोई ग्रह पांच रेखाओं से युक्त हो तो अत्यन्त शुभ होता है। शुभकार्य करवाने वाला, विवाह का सुख देने वाला, वाहन, तांबा, सोना, धान्य एवं सम्मान की प्राप्ति कराने वाला और घोड़े आदि वाहन देने वाला होता है।

वैद्यनाथ ने इस विषय में विशेष यह कहा है कि पांच रेखाएं होने पर अच्छे वस्त्र का लाभ, पुत्र का अच्छा लालन-पालन, सज्जनों की संगति, विद्या व धन का लाभ होता है।

षड्रेखिको युद्धजितं च सज्जन-
दानार्पितानामपि लब्धवाससाम्।
लाभं समग्रं बहुलं च सम्पदं
रूपं सुशीलं बलवाहनानि च ॥१७॥

अथाधुना षड्रेखायुक्तग्रहफलमिन्द्रवंशयाह—

षडिति । षड्भिः षड्भी रेखाभिर्युक्तः । युद्धजितं युद्धे जितं जयशीलं, मज्जनं स्नानं, दानं त्यागः, तयोरर्पितानां दत्तानां, अभिनववाससां नूतनवस्त्राणां लाभं, समशां कीर्तिं, बहुलां प्रचुरां, सम्पदं सम्मानं, रूपं सौन्दर्यं, सुशीलं सुष्ठुस्वभावं, बलं सामर्थ्यं, वाहनानि अश्वादीनि कुर्यादिति शेषः । अत्र श्रीमत्याचार्यः—

'अभिनववसनाप्ति स्नानदानार्पितानां जनयति बहुसम्पद्रेखाषट्कं नराणाम् ।' इति

यदि ग्रह छः रेखाओं से युक्त हो तो युद्ध में विजय, स्नान दानादि से पूजित होकर सद्वस्त्रों का लाभ, कीर्ति, बहुत सम्मान, रूप वृद्धि, शील, बल एवं वाहनों की प्राप्ति होती है।

सप्तावरेखो विविधार्थमङ्गिनां
सेनाहयप्राभृतवित्तशोभनम् ।
कुर्यादिहङ्गोऽथ भुजङ्गमप्रम-
रेखायुतः सङ्गरवैरिनाशनम् ॥१८॥
शार्तं कुटुम्बात्किमु साहसाद्वा
सङ्गाद् युवत्याः कनकाव्यजानाम् ।
लाभं भुवः सप्तगुणाभिराम-
राजप्रतापं रजतांशुकाप्तिम् ॥१९॥

अथाधुना सप्ताष्टकरेखायुतग्रहफलमिन्द्रवंशाद्वयेनाह—

सप्ताव रेख इति । श्लोकमिति च । सप्तभिः सप्तभिः रेखाभिः सहितः अर्थात् सप्तरेखायान् ग्रहः । अङ्गिनां मनुष्याणां विविधार्थं अनेकप्रकारं धनं, सेना, हयोऽश्वः, प्राभृतं प्रदेशनं, वित्तं धनं, शोभनं मंगलं, एतानि सर्वाणि वस्तूनि कुर्यात् । यथाह सत्यः—

'विदधाति विविधार्थं रेखिकाः सप्त पुंसाम् ।' इति

अथ शब्दोऽनन्तर वाची । भुजंगमरेखायुतोऽष्टभीरेखाभिर्युक्तो ग्रहः, संगरे युद्धे, वैरिणां नाशनं कुर्यात् । किमु अथवा, कुटुम्बात्, साहसात्, युवत्याः, सङ्गाद्वा शार्तं सुखं स्यात् । कनकं स्वर्णं, अविमेषः, अजा छागः, एतेषां सर्वेषां वस्तूनां, लाभं भुवो भूमेर्लाभं, सप्तभिः गुणैः राजगुणैरभिरामं मनोहरं, राजप्रतापं राज्ञां तेजः, रजतं रौप्यं, अंशुकं वस्त्रम्, तयोराप्तिं कुर्यात् ।

यदि ग्रह सात रेखाओं से युक्त हो तो अनेक प्रकार से धन की प्राप्ति और घोड़े आदि वाहनों का सुख मिलता है। तब मित्रों द्वारा

खूब भेंट मिलती है और सेना वृद्धि अथवा सेना में उच्च पद, धन तथा कल्याण की प्राप्ति होती है।

यदि ग्रह की आठ रेखाएं हों तो युद्ध में शत्रुओं का नाश, कुटुम्ब में सुख, साहस में वृद्धि, स्त्री से सुख होता है। सोना, भेड़-बकरी और भूमि का लाभ होता है। राजपद की प्राप्ति होकर राज्य के सातों अंगों का विस्तार होता है। अर्थात् स्वामी, मंत्री, मित्र, खजाना, प्रजा, दुर्ग एवं सेना का खब विस्तार होता है। राजा की प्रताप-वृद्धि होती है और चांदी व शुभ्र वस्त्रों का लाभ होता है।

एकादिरेखात इह क्रमेण
कष्टं स्वहानिर्व्यसनं च मध्यम्।
क्षेमं च नित्यं द्रविणस्य लाभ-
स्त्वत्यन्तहर्षः सकला च सम्पत् ॥२०॥

अथाधुनैकादिरेखाजन्यफलमिन्द्रवज्रयाह—

एकेति। इहास्मिन् प्रकरणे कष्टं दुःखं, स्वहानिर्धननाशः, व्यसनमापत्, मध्यमं, समं क्षेमं कुशलं, नित्यं सर्वदा द्रविणस्य धनस्य, लाभः अत्यन्तहर्षोऽत्यानन्दः सकला सम्पूर्णा सम्पद् ऐश्वर्यं, एकादिरेखातः क्रमेण एतत्समस्तं फलं ज्ञेयं बुधैरिति शेषः।

यहां एक से आठ रेखाओं तक का फल एक स्थान पर ही संक्षेप में बताया गया है। यदि एक रेखा हो तो कष्ट, दो रेखाओं से धन-हानि, तीन रेखाओं से विपत्ति, चार रेखाओं से मध्यम फल, पांच रेखाओं से कल्याण, छह रेखाओं से नित्य धन-लाभ, सात रेखाओं से अत्यन्त हर्ष व आठ रेखाओं से समस्त सम्पत्तियां मिलती हैं।

पञ्चादिरेखास्थितभाश्रितो निज-
वर्गे विहङ्गः सततं शुभप्रदः।
व्यत्यासतश्चेद्विफलप्रदो मतः
शून्ये फले गोचरतः प्रभाववान् ॥२१॥

अथेदानीं पञ्चादिरेखायुक्तग्रहफलमिन्द्रवंशयाह—

पञ्चेति। पंचादिभी रेखाभिः स्थितं सहितं यद्भं तस्मिन्नाश्रितः सन् यो विहंगो ग्रहो निजवर्गे स्वगृहादिवर्गे तिष्ठति स सततं शुभप्रदः स्यात्। चेदवि

अल्पासतो वैपरीत्यात् विफलप्रदो ज्ञेयः फलरहितो मतः । गोचरतो गोचरवशेन, शून्ये फले फलाभावे प्रमादवान् भवति । जातक दीप शेष ।

पांच शुद्ध रेखाओं से युक्त किसी राशि में यदि ग्रह स्थित हो और साथ ही स्व वर्ग, मित्र के वर्ग या अपने उच्च के वर्ग (मान वर्ग) में स्थित हो तो सदा शुभ फलदायक होता है।

यदि इस कथित प्रकार से विपरीत अर्थात् स्वादि वर्ग में स्थित न हो और पांच से अल्प रेखाओं से युक्त राशि में स्थित हो तो फल रहित अर्थात् अपने गोचरादि काल में विफल होता है।

यदि रेखा रहित राशि में कोई ग्रह स्थित हो तो अगावधानी व प्रमाद जैसे फल उस ग्रह की दशा या गोचर में होते हैं।

ये स्वर्क्षतुङ्गर्क्षसुहृद्गणस्थिताः
केन्द्रादिवीर्य्यैरपि संयुतास्तथा ।
यद्यल्परेखासहिता विहङ्गमा-
स्तेऽनूनका नेष्टफलप्रदा मताः ॥२२॥

अथेदानीं स्वर्क्षादिगतानामल्परेखायुतानां ग्रहाणां फलमिष्टमाह —
य इति । ये विहंगमाः ग्रहाः, स्वर्क्षे स्वराशौ, तुङ्गर्क्षे स्वोच्चराशौ, सुहृद्गणे मित्रवर्गे, स्थिताः समाश्रिताः तथा केन्द्रादि वीर्यै केन्द्रादि बलैः अपि संयुताः, यदि अल्परेखासहिता न्यूनरेखाभिर्युक्ता स्तेऽनूनकाः सम्पूर्णाः, नेष्टफलप्रदा अशुभफलप्रदा मता ज्ञेया बुधैरिति शेषः ।

जन्म समय जो ग्रह अपनी राशि, अपनी उच्च राशि, मित्रादि के वर्ग में स्थित होकर केन्द्रादि बल से युक्त होकर भी कम रेखा वाली राशि में स्थित होगा तो अशुभ फल देने वाला होता है।

पिछले श्लोक में भी बताया गया है कि मित्रादिवर्ग में स्थित ग्रह बली होकर यदि पांच या अधिक रेखायुक्त राशि में स्थित हो तो नित्य शुभ फलदायक होता है। यदि उक्त स्थितियों में रेखा रहित या कम रेखा वाली राशि में स्थित हो तो अशुभ फलदायक होगा। अष्टक वर्ग के महत्त्व को प्रदर्शित करने वाला नियम सामान्यतः ध्यान में नहीं रखा जाता तथा फलादेश की प्रमाणिकता में शिथिलता देखी जाती है। आशय यह है कि अष्टक वर्ग के बल से प्राप्त बल ही वास्तविक व लक्ष्य

सिद्धि कराने वाला बल है। अन्यथा बली ग्रह भी अष्टक वर्ग की दृष्टि से निर्बल होने पर अशुभ फलकारक ही माना जाएगा।

श्लोकोक्त केन्द्रादि बल को जानने के लिए यह ध्यातव्य है कि केन्द्र, पणफर व आपोक्लिम भावों के ये तीन प्रकार से विभाग किए गए हैं। अर्थात् केन्द्र स्थान चार हैं (१, ४, ७, १०)। पणफर स्थान केन्द्र स्थानों से अगले अर्थात् (२, ५, ८, ११) होते हैं। पणफर से अगले-भाव आपोक्लिम (३, ६, ९, १२) होते हैं। यदि कोई ग्रह केन्द्र में स्थित हो तो उसका केन्द्रादि बल ६० कला अर्थात् १ अंश होता है। पणफर स्थानों में स्थित ग्रहों का केन्द्रादि बल ३० कला होता है। इसी अनुपात से आपोक्लिम स्थानों में स्थित ग्रहों का १५ कला बल होता है।

ये प्रान्त्यषष्ठाष्टमभावसंस्थिता
व्योमाटना ये रिपुनीचभांशगाः।
युक्ता यदा चेदधिकैः फलामिधै-
स्ते स्युः समस्ताः सततं शुभप्रदाः ॥२३॥

अथेदानीं दुष्टस्थानगानामधिकरेखायुक्तानां ग्रहाणां फलमिन्द्रवंशयाह—

य इति। ये व्योमाटना ग्रहाः प्रान्त्ये द्वादशे, षष्ठे, अष्टमे संस्थिता आश्रिताः। ये ग्रहाः शत्रुराशौ, शत्रुनवांशे, नीचराशौ, नीचनवांशे वा संस्थिताः सन्तः चेदपि अधिकैर्बहुभिर्फलैः रेखाभिर्युक्ताः ते समस्ताः सर्वे, सततं नित्यं शुभप्रदाः शुभफलदायकाः स्युः।

जो ग्रह जन्म समय में दुष्ट स्थानों (६, ८, १२) में स्थित हों तथा नीच राशि, शत्रु राशि, शुभ या नवांश भी क्यों न हों किन्तु अधिक रेखाओं से युक्त राशियों में हों तो सदा शुभ फलदायक होते हैं।

आशय यह है कि जो ग्रह अष्टक वर्ग से शुभ हो तथा अन्य प्रकार से अशुभ भी क्यों न हो तो अष्टक वर्ग जनित शुभत्व उसके सारे अशुभ-फलदातृत्व का नाश करेगा। यही प्रकार अशुभफल के संदर्भ में भी अपनाया जाएगा।

बली ग्रह की अधिक बलवत्ता—

स्वर्क्षतुङ्गचितिभावगतस्य
पण्डितैः समुदितं फलमेतत्।

वर्त्मनैव हि पुरा कथितेन
शोभनो यदि निजाष्टकवर्गः ॥२४॥
द्विगुणानि फलानि खेचर
इह दद्यात्परथा तदा न चेत्।
इति मूर्त्तिमुखे भगप्रमे
भवने स्वस्वपदे दशाफलम् ॥२५॥

अथेदानीं स्वोच्चादिगानां ग्रहाणां रेखाबलेन द्विगुणफलप्रदत्वं स्वागतया वियोगिन्या चाह—

स्वर्क्षेति। द्विगुणानीति च। यो ग्रहः स्वर्क्षराशिगतः स्वोच्चराशिगतः त्रिति-भावगतः, अर्थादुपचयस्थानस्थितो वा तस्य फलं पूर्वं समुदितं कथितम्। पुरा प्राक् कथितेन मार्गेण, यो खेचरो निजाष्टवर्गे शोभनः शुभः, अर्थात् पञ्चप्रभृतिरेखाभिर्युक्तः तदा द्विगुणानि फलानि दद्यात्। चेद्यदि परथा अन्यथा, तदा द्विगुणफलानि नयच्छेत्। इत्येवं मूर्तिमुखे लग्नादौ, भगप्रमे भवने द्वादशस्थाने, स्वस्वपदे स्वस्वस्थाने, दशायाः विंशोत्तरीमुखायाः फलं ज्ञेयम्। तदुक्तं ग्रहयामले—

फलानि द्विगुणान्यत्र दद्युः खेटा न चान्यथा।
एवं लग्नमूर्त्यादि स्वे स्वे स्थाने दशाफलम् ॥ इति
अत्र स्वागता वियोगिनी च वृत्तद्वयम्।

यदि ग्रह स्वराशि, स्वोच्च राशि अथवा उपचय स्थानों में स्थित हो और साथ ही पांच से अधिक रेखायें उसे अपने अष्टक वर्ग में मिली हों तो दुगुना फल देता है।

यदि ग्रह उक्त प्रकार से स्थित न हो तो शुभ फलदायक नहीं होगा। इसी प्रकार लग्नादि बारह भावों में से स्वोच्चादिगत व अधिक रेखायुक्त ग्रह का जो स्थान होता है, उस स्थान की वृद्धि ग्रह की विंशोत्तरी आदि दशा में होगी।

रेखारहित शनि का फल :

भगादिखेटाष्टगणेषु भास्करि-
रेखा प्रयातोऽमरवर्त्ममन्दिरम्।
करोत्यतावाममयवैरिसाध्वसा-
कुलानि तातादिकभावजन्मनाम् ॥२६॥

अथेदानीं रेखोनराशिगतशनिफलं वंशस्थेनाह—

भगादीति । यदा भास्करस्य सूर्यस्य गोत्रापत्यं भास्करिः शनिः, भगादिखेटाष्टगणेषु सूर्याद्यष्टकवर्गेषु, अमरवर्त्ममन्दिरं रेखारहितगृहं, प्रयातः प्राप्तस्तदा पित्रादिकभावसम्भवानां प्राणिनामामयाः रोगाः, वैरिणः शत्रवः, तेभ्यः साध्वसानि भयानि, आकुलानि व्यस्तानि, करोति इति ।

सूर्यादि ग्रहों के अष्टक वर्गों में जिस राशि को एक रेखा भी न मिली हो, उस राशि में गोचर से जब शनि का संक्रमण हो तो उस भाव से विचारणीय सम्बन्धियों तथा पदार्थों को रोग, शोक, भय या व्याकुलता होती है ।

सूर्य की एकादि रेखाओं का फल :

> रेखास्थोऽरुणकिरणः कुलीनयुक्त-
> मश्वाढ्यस्तुरगमतङ्गजैरुपेतम् ।
> कान्ताढ्यं सखिसहितं प्रगल्भभावं
> रोगाढ्यैर्विरहितमङ्गिनं प्रकुर्यात् ।।२७।।

अथाद्यैकरेखायुक्तरविफलं प्रहर्षिण्याह'—

रेखास्थ इति । यदि अरुणकिरणः सूर्यः आद्यस्थो रेखास्थः अर्थादेकरेखया युक्त इत्यर्थः । तदा कुलीनैः सज्जनैर्युक्तं सहितं, तुरगैरश्वैः, मतङ्गजैर्हस्तिभिः, उपेतं युक्तं, कान्तया स्त्रिया, आढ्यं युक्तं, सखिभिः मित्रैः सहितं, प्रगल्भः प्रतिभायुक्तं भावः शीलं यस्य तथा तम् रोगाढ्यैः रोगैः विरहितं अंगिनं प्राणिनं प्रकुर्यात् । प्रहर्षिणी वृत्तम् । तथा च वृद्धयवनः—

> 'रेखास्थितस्तीक्ष्णकरःप्रगल्भं करोति मर्त्यं गजवाजियुक्तम् ।
> मित्रांगना साधुजनप्रयुक्तं स्थानाद्यके रोगविवर्जितं च ।।' इति

यदि जन्म के समय सूर्य एक रेखा से युक्त हो तो मनुष्य हाथी, घोड़े, मित्र, स्त्री आदि से युक्त होता है । उक्त स्थिति में प्राणी सज्जनों की संगति में रहकर समस्त रोगों से रहित रहेगा ।

उक्त अर्थ की पुष्टि वृद्धयवन द्वारा की गई है ।

> प्रद्योतनो भूमिपतेरभीष्टं
> यातो द्वितीये जितवैरिपक्षम् ।
> विद्यारतं शान्तहृदं प्रभूत-
> वित्तं प्रतापं विपुलं प्रकुर्यात् ।।२८।।

अथ साम्प्रतं रेखाद्वययुक्तसूर्यफलमिन्द्रवज्रयाह—

प्रद्योतन इति। यदि प्रद्योतनः सूर्यः द्वितीये रेखाद्वये यानः प्राप्तः, सदा भूमिपते राज्ञोऽभीष्टं प्रियं, जितो वैरिणां शत्रूणां पक्षो येन तथा तम्। विद्यासु निरतं लीनं, शान्तहृदं शान्तचित्तं, प्रभूतवित्तं बहुधनं, विपुलं विशालं, प्रताप प्रभावं प्रकुर्यात्। अत्र वृद्धयवनः—

द्वितीयसंस्थः प्रचुरप्रतापं प्रभूतवित्तं जितशत्रुपक्षम्।
विद्यानुरक्तं नृपतेरभीष्टं प्रशान्तचित्तं कुरुते सदैव॥ इति

जन्म के समय यदि सूर्य दो रेखाओं वाला हो तो मनुष्य राजा का प्रिय होता है। तब मनुष्य शत्रुओं को जीतने वाला, विद्या का खूब अभ्यास करने वाला, शान्त हृदय, खूब धन सम्पदा से युक्त तथा प्रतापी होता है।

छायापतिः प्रकुरुते पुरुषं प्रसूतं
भूत्या व्ययेन च युतं सुजनैः सुयुज्यम्।
शीलान्वितं रिपुपदं सततं विविक्त-
युक्तं हिरण्यसुतवित्तयुतं तृतीये॥२६॥

अथ सम्प्रति रेखात्रययुक्तसूर्यफलमाह—

छायापतिरिति। यदा तृतीये त्रिभी रेखाभिः सहितः छायापतिः सूर्यः प्रसूतं जातं, पुरुषं नरं, भूत्या ऐश्वर्येण, व्ययेन विगमेन च युक्तं, सुजनैः सुन्दरलोकैः सुयुज्यं युक्तं शीलेन सुन्दरस्वभावेन अन्वितं युक्तं, रिपूणां पदं स्थानं सततं नित्यं, विविक्तेन रहसा, युक्तं, हिरण्येन सुवर्णेन, सुतेन पुत्रेण, वित्तेन धनेन च युतं प्रकुरुते। अत्राह वृद्धयवनः—

'तृतीयगः शत्रुपदं विभूति व्ययेनयुक्तं सुजनैः सुयुज्यम्।
हिरण्यपुत्रार्थविविक्तयुक्तं नरं प्रसूतं सनाऽऽ सुशीलम्॥' इति

यदि सूर्य तीन रेखाओं से युक्त हो तो जातक ऐश्वर्यशाली, धन की प्राप्ति व व्यय दोनों से युक्त तथा अच्छी संगति वाला होता है। तब मनुष्य अच्छे चरित्र से युक्त, शत्रुओं का (ईर्ष्या) स्थान, एकान्त में वास करने वाला एवं सोना, पुत्र, धनादि से युक्त होता है।

चतुर्थगश्चण्डकरः सुशीलं
पूज्यं नृपाणां च नृणां समेषाम्।

पुण्येन युक्तं प्रमदापरं च
नित्यं प्रसूतं मनुजं विधत्ते ॥३०॥

अथाधुना रेखाचतुष्टययुक्तसूर्यफलमुपजात्याह—

चतुर्थग इति। चतुर्थगश्चतुर्भी रेखाभिर्युक्तः सूर्यः प्रसूतं जातं मनुजं मनुष्यं, सुशीलं सुन्दरस्वभावं नृपाणां समेषां सर्वेषां नृणां च पूज्यमर्च्यं, पुण्येन धर्मेण युक्तं, नित्यं सर्वदा प्रमदापरं स्त्रीपरायणं विधत्ते कुरुत इति। तथा च वृद्धयवनः—

चतुर्थगः सर्वजनस्य पूज्यं करोति मर्त्यं सततं सुशीलम्।
नरेन्द्रपूज्यं सुभगं मनुष्यं धर्मान्वितं दारपरं प्रसूतम्॥ इति

यदि सूर्य चार रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य सुशील, सुन्दर-स्वभाव वाला सब मनुष्यों और राजाओं द्वारा सम्मानित, धर्म से युक्त होता है। किन्तु चार रेखाओं वाला सूर्य मनुष्य को स्त्री परायण बनाता है। अर्थात् ऐसा व्यक्ति स्त्रियों से पराजित होता है या अत्यन्त स्त्री प्रेमी होता है।

गोकासरोष्ट्रैः सहितं प्रधानं
वंशेऽमृतान्धः क्षितिदेवभक्तम्।
कुर्यादभीष्टं सुजनैः समेतं
चेत्पिङ्गलः पञ्चमगः पुमांसम्॥३१॥

अथेदानीं पञ्चरेखायुक्तसूर्यफलमिन्द्रवज्रयाह—

गवेति। चेद्यदि पिङ्गलः सूर्यः पञ्चमगः पञ्चभी रेखाभिः सहितस्तदा पुमांसं पुरुषं गावः कासराः महिषाः उष्ट्रास्तैः सहितं युक्तं, वंशे कुले, प्रधानं मुख्यं देवतानां ब्राह्मणानां च भक्तं, अभीष्टं प्रियं, सुजनैः सुन्दरलोकैः समेतं युक्तं कुर्यादिति शेषः। अत्र वृद्धयवनः—

'करोति पुरुषं खलु पंचमस्थः शान्तंरविर्गोमहिषोष्ट्रयुक्तम्।
कुलप्रधानं कुरुते त्वभीष्टं सुसंयुतं ब्राह्मणदेवभक्तम्' ॥ इति

यदि सूर्य पांच रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य गाय, भैंस, ऊंट आदि उपयोगी पशुओं से सम्पन्न, अपने कुल में ऊंचा, देवताओं व ब्राह्मणों का भक्त तथा उत्तम पुरुषों की संगति में रहने वाला होता है।

षष्ठाश्रितश्चेद्धि विपक्षपक्ष-
हर्तारमर्कः कुरुतेऽधिकं च ।
मानामभीष्टं बहुलान्नपानं
देवस्य भक्तं च गुरोः सुवित्तम् ॥३२॥

अथाधुना षड्रेखायुक्तसूर्यफलमिन्द्रवज्रयाह—

षष्ठेति । चेद्यदि सूर्यः षष्ठाश्रितः षड्रेखाभिर्युक्तस्तदा विपक्षाणां शत्रूणां पक्षः समूहस्तस्यहर्तां नाशको यस्तं, अधिकं श्रेष्ठं नराणामिति शेषः । मानां श्रीणामभीष्टं प्रियं, बहुलान्नपानं प्रचुरान्नपानं, देवस्य गुरोश्च भक्तं सुवित्तं प्रभूतधनं कुरुत इति । यथाह वृद्धयवनः—

'हर्ताऽरिपक्षं प्रकरोति षष्ठे स्थितो विवस्वानधिकं नराणाम् ।
श्रीणामभीष्टं गुरुदेवभक्तं प्रभूतवित्तं प्रचुरान्नपानम् ॥' इति

जन्म के समय यदि सूर्य छह रेखाओं से युक्त हो तो व्यक्ति शत्रुओं का नाश करने वाला, लक्ष्मी से सम्पन्न, मनुष्यों में श्रेष्ठ, अत्यन्त धान्यादिक से युक्त गृह वाला, देवताओं और गुरुजनों का भक्त तथा उत्तम धन-सम्पत्ति से युक्त होता है।

वृद्धयवन के कथनानुसार ग्रन्थकार ने माना है कि छह रेखाओं से युक्त सूर्य हो तो मनुष्य सब प्रकार के ऐश्वर्यों से युक्त होता है। लक्ष्मी अर्थात् श्री अर्थात् शोभा का अभीष्ट होने का आशय यह है कि व्यक्ति के पास अच्छे स्रोतों से सम्मानपूर्वक कमाया गया धन खूब होगा तथा लोगों में उसका आदरणीय स्थान होगा। समाज में ऐसा व्यक्ति अग्रगण्य होता है। स्पष्ट ही है कि धन-सम्पत्ति होने के साथ-साथ वह अपनी सम्पदाओं का प्रयोग उत्तम धार्मिक परोपकारादि कार्यों में करेगा। धन की दो उत्तम गतियां दान और भोग उसे अवश्य प्राप्त होंगीं।

चेत्सप्तमस्थः किल सप्तसप्तिः
पद्माप्तियुक्तं विबुधप्रचण्डम् ।
चिन्नामशीलं विभुताप्रयुक्तं
मर्त्यं विधत्ते समुदारचित्तम् ॥३३॥

अथाधुना सप्तरेखायुक्तसूर्यफलमिन्द्रवज्रयाह—

चेदिति । चेद्यदि सप्तसप्तयोऽश्वा यस्य तथा समप्तसप्तिः सूर्यः सप्तमस्थः सप्तभी रेखाभिर्युक्तस्तदा पद्मायाः लक्ष्म्याः आप्तिर्लब्धिस्तया युक्तं, विबुधो

देवः प्रचण्ड उग्रः यस्य तथातम्। विज्ञानशीलं शिल्पशास्त्रविदं, विभुतया प्रभुतया सहितं, समुदारचित्तं सम्यक् सरसहृदयं मर्त्यं मनुष्यं विधत्ते। यथा च वृद्धयवनः—

'श्री लाभयुक्तं खलुसप्तमस्थो नरं विधत्ते किल तीक्ष्णरश्मिः।
उदारचित्तं प्रभुतासमेतं विज्ञानशीलं श्रमरप्रचण्डम्॥' इति

यदि सूर्य सात रेखाओं से युक्त हो तो उसकी आय उत्तम होगी। ऐसा व्यक्ति तीक्ष्ण स्वभाव व स्वरूप वाले देवताओं (शंकर, भैरव, हनुमान आदि) का भक्त होता है। वह शिल्प व विज्ञान का विशेषज्ञ प्रभुता युक्त और उदार हृदय वाला होता है।

'प्रचण्ड देवताओं की आराधना करने वाला' ऐसा कह कर कदाचित् व्यक्ति के दुष्प्रधर्ष्य व्यक्तित्व, स्वाभिमानता, प्रच्छन्न-वीरत्व एवं धीरोदात्तत्व गुणों को रेखांकित किया जा रहा है। वृद्धयवन ने भी ऐसा ही फल माना है। प्रभुता सम्पन्न होने के कारण उस व्यक्ति का स्थान समाज में आदरणीय व प्रभावी होना चाहिए। उग्र देवताओं का भक्त होकर भी वह संसार के कल्याणार्थ ही प्रयत्न करेगा, ऐसा अर्थ उसके उदार हृदय विशेषण से प्रतिभासित हो रहा है।

अर्कोऽष्टमस्थः परिपन्थिपक्ष-
हन्तारमर्यात्मजसंयुतं च।
दान्ताप्रमेयं कुरुते सुरक्त-
मैत्रेयमेवं यशसा प्रसिद्धम्॥३४॥

अथाधुनाऽष्टरेखायुक्तसूर्यफलमिन्द्रवज्रयाह—

अर्क इति। अर्कः सूर्योऽष्टमस्थोऽष्टमी रेखाभिर्युक्तस्तदापरिपन्थिना शत्रूणा पक्षः समूहस्तस्य हन्ता नाशको यस्तम्। अर्येन अनेन आत्मजेन पुत्रेण संयुत सहितं, दान्तं तपःक्लेशसहं, प्रमातुं योग्यः प्रमेयः न प्रमेयोऽप्रमेयस्तम्। अर्थाद् यथार्थज्ञानवन्तमिति। मैत्रेये बुद्धदेवे सुरक्तं लीनं रतम्, एव यशसा कीर्त्या प्रसिद्ध कुरुत इति। तथा च वृद्धयवनः—

स्थानेऽष्टमेपुत्रधनैः समेतं सुरक्तमैत्रेयकमप्रमेयम्।
विख्यातकीर्ति सततं सुदान्तं हन्ता रिपक्षं प्रकरोति भानुरिति।

यदि सूर्य आठ रेखाओं से युक्त हो तो व्यक्ति अपने विपक्षियों व शत्रुओं का समूल नाश करने की शक्ति रखता है। वह धन व

पुत्रादिक से युक्त होता है। ऐसा व्यक्ति तपस्या (त्याग, परोपकार) से होने वाले क्लेश को सहन करने वाला और अप्रमेय होता है। वह बुद्ध भगवान् का भक्त और विख्यात होता है।

अप्रमेय गुण से तात्पर्य है कि उसकी महानता व सद्‌गुणों का अनुमान नहीं लगाया जा सकता। वह विशाल व्यक्तित्व का स्वामी तथा तदनुरूप ही ऊंचे गुणों से युक्त होगा। 'बुद्धदेव का भक्त' यह पद कदाचित् लाक्षणिक है। इसका अर्थ यही समझना चाहिए कि वह व्यक्ति मित्रता, सद्‌भाव, शत्रु को भी क्षमा करने वाला महान् स्वभाव, उत्तम क्षमा, उत्तम आर्जव अर्थात् सरल स्वभाव तथा उत्तम चारित्र एवं अहिंसा जैसे परम गुणों से युक्त होगा।

सूर्य के बिन्दुओं का फल :

> **दायोपगो दिनकरः परदाररक्तं**
> **स्थानाद्यके अनिमतं च विवेकशून्यम्।**
> **नित्यं कृतघ्नमिह दुर्जनमुग्रमान्द्यं**
> **पापं कृशं प्रकुरुते जनसाहसं च॥२५॥**

अथेदानीमेकबिन्दुयुक्तसूर्यफलं वसन्ततिलकेनाह—

दायोपग इति। दायोपगो बिन्दुयुक्तः, दिनकरः यदि स्थानाद्ये प्रथम स्थाने तदा अनिमन्तं प्राणिनं, परदारेषु परस्त्रीषु रक्तमासक्तं, विवेको विचारस्तेन शून्यं वर्जितं, नित्यं सर्वदा कृतघ्नमुपकारविस्मरणशीलं, दुर्जनं खलं, उग्रमान्द्यमुग्ररोगं, पापं पापात्मानं, कृशं दुर्बलशरीरं, [illegible] [illegible], साहसं प्रकुरुते इति। अत्र च वृद्धयवनः—

> बिन्दुस्थितोऽर्कः प्रकरोति पापं स्थानादिमे दुर्बलमुग्ररोगम्।
> कृशं कृतघ्नं परदाररक्तं विवेकशून्यं जनसाहसं च॥ इति

यदि सूर्य एक बिन्दु से युक्त हो तो व्यक्ति पराई स्त्री में रति रखने वाला, विवेक से रहित अर्थात् अच्छे बुरे में भेद न समझने वाला, कृतघ्न अर्थात् किए हुए उपकार को भूल जाने वाला अहसान फरामोश, दुष्ट स्वभाव वाला, भयंकर रोग से युक्त, पापी, दुर्बल और दुःसाहसी अर्थात् लोगों को अपने बल व पदवी से आतंकित करने वाला होता है।

इनो द्वितीये गतधान्यवित्तं
कृतघ्नमज्ञं कुवयस्यरक्तम् ।
शिरोऽर्त्तिवक्त्रामयपित्तदीर्घ-
ज्वरैः प्रकुर्य्यात्परिपीडितं च ॥३६॥

अथेदानीं बिन्दुद्वययुक्तसूर्यफलमुपेन्द्रवज्रयाह—

इन इति । इनः सूर्यः द्वितीये बिन्दुद्वययुक्ते राशौ वर्तते चेत्तदा गतधान्यवित्तं धनधान्यरहित, कृतघ्नमुपकृतिमान्यताहीनमज्ञंमूर्खं, कुवयस्येन कुमित्रेण रक्तं युक्तं शिरस्युत्तमांगे आर्तिः पीडा, वक्त्रस्य मुखस्य आमयो रोगस्तेन पित्तेन दीर्घज्वरेण च परिपीडित दुःखितं प्रकुर्यात् । यथाह वृद्धयवनः—

'मूर्खं कृतघ्नं तु तथा द्वितीये कुमित्ररक्तं धनधान्यहीनम् ।
शिरोऽतिदीर्घज्वरपित्तमुख्यैः प्रपीडितं वक्त्रगतैश्चरोगैः ।' इति

यदि सूर्य दो बिन्दुओं से युक्त हो तो व्यक्ति धन-धान्य से रहित, कृतघ्न, मूर्ख, बुरी संगति में रहने वाला, सिर व मुंह के रोगों से पीड़ित, पित्त एवं लम्बी अवधि तक रहने वाले बुखार से पीड़ित होता है।

तृतीयगो व्योममणिः स्वधान्य-
सुतैर्विहीनं रहितं नयेन ।
क्रियोज्झितं प्राज्यसपत्नपक्षं
सदाऽऽत्तगर्वं पुरुषं प्रसूतम् ॥३७॥

अथेदानीं बिन्दुत्रययुक्तसूर्यफलमुपेन्द्रवज्रयाह—

तृतीयग इति । व्योममणिः सूर्यस्तृतीयगो रेखात्रययुक्ते राशौ स्थित स्तदा स्वधान्यसुतैर्धनधान्यसुतैर्विहीनं रहितं नयेन नीत्या रहितं, क्रियया सत्कृत्येन उज्झितं रहितं, प्राज्यसपत्नपक्षं, बहुशत्रुपक्षं सदा आत्तगर्वमभिभूतम्, प्रसूतं जातं पुरुषं कुर्यादिति शेषः । तथा च वृद्धयवनः—

'नयेन हीनं पुरुषं तृतीये सुतार्थधान्यैः परिवर्जित च ।
सदाभिभूतं बहुशत्रुपक्षं क्रियाविहीनं तु सदा प्रसूतम् ॥' इति

जन्म समय यदि सूर्य तीन बिन्दुओं से युक्त हो तो धन-धान्य व पुत्रादिकों से रहित, अन्यायी, बुरे काम करने वाला, बहुत से शत्रुओं से युक्त तथा सदा घबराया हुआ, दबा हुआ किन्तु घमण्डी होता है।

अब्जनश्चतुर्थोपगतः पराजितं
लोकैः समस्तैः परकामिनीयुतम्।
स्वार्थे विदध्यान्निरतं विवर्जित-
मिष्टैः पुमांसं पुरवेशसेवकम् ॥३८॥

अथेदानीं बिन्दुचतुष्टययुक्तसूर्यफलमिन्द्रवंशयाह—

अब्ज इति। अब्जः सूर्यश्चतुर्थोपगतो रेखाचतुष्टययुक्ते राशौ स्थितः चेत्तदा, पुमांसं समस्तैः लोकैर्जनैः पराजितं पराभूतं, परकामिनीयुतं, अन्यस्त्रिया सहितं, स्वार्थे निजार्थे, निरतमासक्तमिष्टैः प्रियजनैर्विवर्जितं रहितं, पुरं नगरं वेशो गणिकाश्रयः, तयोः सेवकं भक्तं विदध्यात् कुर्यात्।

जन्म के समय सूर्य यदि चार बिन्दुओं से युक्त हो तो मनुष्यों से पराजित अर्थात् सबसे अपमानित, पराई स्त्रियों में अनुरक्त, स्वार्थ साधन में लगा हुआ, प्रियजनों व मित्रों से रहित, नगर में निवास करने वाला तथा वेश्यागामी होता है।

धाम्नान्निधिः पञ्चमगः प्रपीडितं
वित्तेनदैन्येन सुखेन मानवम्।
दौर्भाग्यभाजं च दरिद्रभाषिणं
कुर्याखलं निष्ठुरकं नपुंसकम् ॥३९॥

अथाधुना पञ्चबिन्दुयुक्तसूर्यफलमिन्द्रवंशयाह—

धाम्नां निधिरिति। धाम्नां तेजसां निधिराश्रय एवं भूतः सूर्यः, पंचमगः पंचबिन्दुयुक्तस्तदा मानवं मनुष्यं वित्तेन धनेन, दैन्येन दरिद्रतया, सुखेन, प्रपीडितं दुःखितं दुष्टभाग्यवन्तं, दरिद्रभाषिणं दीनवचनमनं परिपूर्णं निष्ठुरकं क्रूरं नपुंसकं वीर्यरहितं कुर्यात्। यथाह वृद्धयवनः—

'करोति भानुः खलु पंचमस्थः सुखेन दारिद्र्यधनेन पीडितम्।
दौर्भाग्यवन्तं परिदीनभाषितं नरं तथा क्लीबमलं च निष्ठुरम् ॥' इति

यदि सूर्य पांच बिन्दुओं से युक्त हो तो मनुष्य अपनी दरिद्रता से अथवा धन से अथवा सुख से सदा पीड़ित रहता है।

वह व्यक्ति अभागा, दीनतापूर्ण बचन बोलने वाला, निष्ठुर स्वभाव वाला एवं नपुंसक होता है।

सुख, धन व दरिद्रता से पीड़ित होना, इसका आशय यही होना चाहिए कि व्यक्ति गरीब होगा। गरीब व्यक्ति धन की चिन्ता से युक्त

होकर एवं सुख की कामना करते रहने पर भी सुख न पाने का दुःख भोगेगा ही, अतः ऐसा व्यक्ति भाग्यहीन, धनहीन व सुखहीन होता है।

षष्ठोभगोऽरातिचयैः पराजितं
सत्यात्स्वधर्म्मान्निगमाच्च मानतः।
मुक्तं प्रसूतं मलिनं मलिम्लुचं
मायाविनं नो वृषसेवितं नरम् ॥४०॥

अथेदानीं षड्बिन्दुयुक्तसूर्यफलमिन्द्रवंशयाह—

षष्ठ इति। भगः सूर्यः षष्ठो षड्बिन्दुयुतराशिगतश्चेत्तदा प्रसूतं जातं नरं अराति चयैः शत्रुसमूहैः पराजितं, सत्यात् सत्यवचनात् स्वधर्मात् स्वकुलधर्माद् वेदान्निगमात्, मानं प्रसिद्धं तस्मात् च मुक्तं वर्जितं, कपटेन माययायुतं मायाविनं, मलिनं मलिम्लुचं चौरं, नो वृषसेवितं न धर्मसेवितमर्यादधर्मिणामिति भावः। कुरुत इति शेषः।

यदि सूर्य छह बिन्दुओं से युक्त हो तो मनुष्य अपने विरोधियों से पराजित होता है। वह व्यक्ति सच्चाई का त्याग करने वाला, वेदादि धर्म से रहित, अपने कुल की मान-मर्यादा को मिटाने वाला, मलिन, चोर, कपटी और धोखेबाज होता है।

प्रपञ्चभावं विकृतं परान्न-
कलेवरोत्थार्थसमीहितं च।
सुनिष्ठुरं चञ्चलमिन्दिरोनं
गतत्रपं सप्तमगः पतङ्गः ॥४१॥

अथाधुना सप्तबिन्दुयुक्तसूर्यफलमुपेन्द्रवज्रयाह—

प्रपञ्चेति। पतंगः सूर्यः सप्तमगः सप्तभिर्बिन्दुभिर्युक्ते राशौ स्थितश्चेत्तदा प्रपञ्चभावं प्रपंचस्वभावं, विकृतं रोगिणं परान्नकलेवरोत्थार्थसमीहितं परेषां धनान्नपुत्राभिभूषितं, सुनिष्ठुरं परुषं, चंचलं चपलमिन्दिरोनमिन्दिरया लक्ष्म्या ऊनं वर्जितं गतत्रपं निर्लज्जं करोतीति शेषः। यथा वृद्धयवनः—

'श्रियाविहीनं विकृतं गतत्रपं परान्नपुत्रार्थसमीहितं सदा।
करोति भानुः खलु पंचमस्थः प्रपंचशीलं चपलं सुनिष्ठुरम् ॥' इति

जन्म समय यदि सूर्य सात बिन्दुओं से युक्त हो तो मनुष्य छल-प्रपंच करने वाला, रोगों से घिरा हुआ, दूसरों के स्त्री व पुत्रादि का

लालच करने वाला, पर धन का लोभी, निष्ठुर स्वभाव वाला, चंचल, धन से हीन तथा निर्लज्ज होता है।

स्थानेऽष्टमे बिन्दुगतो दिवाकरो
मर्त्यं प्रसूतं बहुलाघचेष्टितम्।
पङ्कात्मकं स्वेष्टजनैर्विवर्जित-
माभीलयुक्तं परभामिनीरतम् ॥४२॥

अथाधुनाऽष्टबिन्दुयुक्तसूर्यफलमिन्द्रवज्रयाह—

स्थान इति। दिवाकरः सूर्योऽष्टमे स्थाने बिन्दुगतोऽष्टभिर्बिन्दुभिः युक्ते राशौ स्थितश्चेत्तदा मर्त्यं मनुष्यं बहुलाघचेष्टितं बहुपापचेष्टितं, पङ्कात्मकं पापात्मकं, स्वेष्टजनैर्निजप्रियजनैर्मित्रैर्विवर्जितं रहितं, आभीलयुक्तं दुःखेन युक्तं सहित-मर्थाद् दुःखितम्। परभामिनीरतं परस्त्रीलम्पटं कुर्यादिति शेषः। यथा च वृद्धयवनः—

'स्थानेऽष्टमे तीक्ष्णमयूखमाली, नरं विधत्ते बहुपापचेष्टम्।
इष्टैर्विमुक्तं परदाररक्तं पापात्मकं दुःखयुतं सदैव ॥' इति

जन्म समय सूर्य यदि आठ बिन्दुओं से युक्त हो तो बहुत अधिक पाप कर्म करने वाला, दुष्ट स्वभाव वाला, प्रिय जनों व मित्रों से रहित, सदा दुःखी रहने वाला, पराई स्त्री में आसक्त अर्थात् निकृष्ट होता है।

चन्द्रमा की रेखाओं का फल :

रेखास्थितः कुमुदिनीदयितो यदाऽऽद्ये
तीर्थाश्रयं हि सकलव्रतकोपसेव्यम्।
भक्तं गुरोः क्षितिसुरस्य करोति जातं
मर्त्यं प्रियं क्षितिभुजां सुभगं सदैव ॥४३॥

अथ साम्प्रतमेकरेखायुक्तचन्द्रफलं वसन्ततिलकयाह—

रेखास्थित इति। यदा कुमुदिनीदयितश्चन्द्रमाः आद्ये रेखास्थितः एक-रेखासहिते राशौ गतः जातं मनुष्यं तीर्थाश्रयं तीर्थेषु गङ्गासागरादि पुण्यक्षेत्रेषु आश्रयं निवासं वासमित्यर्थः। सकलव्रतकोपसेव्यं सम्पूर्णव्रतोपसेव्यं, गुरोराचार्यस्य क्षितिसुरस्य ब्राह्मणस्य च भक्तं सेवकं क्षितिभुजां राज्ञां प्रियमभीष्टं सदैव नित्यमेव सुभगं सज्जनं कुर्यादिति शेषः। तथा च वृद्धयवनः—

'रेखास्थितो हि हिमरश्मिमाली आद्ये विधत्ते सुभगं मनुष्यम्।
प्रियं नृपाणां गुरुविप्रभक्तं तीर्थाश्रयं सर्वव्रतोपसेव्यम् ॥' इति

जन्म समय यदि चन्द्रमा एक रेखा से युक्त हो, अर्थात् एक रेखा से युक्त राशि में स्थित हो तो मनुष्य तीर्थों में निवास करने वाला सब व्रतों को मानने वाला, गुरुओं व ब्राह्मणों का भक्त, राजाओं का प्रिय और स्वभाव से सज्जन होता है।

राजा सदा प्रकुरुते गजवाजिदानै-
र्युक्तं सुसौख्यसहितं द्वितये प्रगल्भम्।
वैडूर्य्यकेण सहितं मणिमौक्तिकैश्च
प्रेम्णा युतं मनुभवं हृदयं प्रशान्तम् ॥४४॥

अथेदानीं रेखाद्वययुक्तचन्द्रफलं वसन्ततिलकेनाह—

राजेति। राजाचन्द्रः द्वितीये रेखाद्वययुक्तर्क्षे स्थितश्चेत्सदा मनुभवं मनुष्यं सदा गजो हस्ती, वाजी घोटकः दानं त्यागः, तैर्युक्तं सहितमित्यर्थः, सुसौख्यं सहितं सुतरां सुखसंयुक्तं, प्रगल्भं प्रतिभान्वितं विदूरे भवो वैडूर्यं मणि-विशेषः तेन मणयो मौक्तिकानि मुक्ताफलानि तैश्च युतं सहितं, प्रेम्णा स्नेहेन युतं प्रशान्तं प्रशमितं हृदयं चित्तं प्रकुरुते। यथा वृद्धयवनः—

'हस्त्यश्वदानैः सहितं द्वितीये वैडूर्य्यमुक्तामणिभिस्तथैव।
नरं सुसौख्यै सहितं प्रगल्भं प्रशान्तचित्तं प्रणयान्वितं च ॥' इति

जन्म के समय यदि चन्द्रमा दो रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य हाथी, घोड़े जैसे मूल्यवान् वाहनों से युक्त तथा दान करने वाला होता है। इसी प्रकार वह अत्यन्त सुखी, भय से रहित, वैडूर्यमणि आदि मूल्यवान् रत्नों तथा मोतियों से युक्त, स्नेहपूर्ण स्वभाव वाला तथा शान्त चित्त होता है।

तृतीयसंस्थो हिमभा भयान्वितं
गुणैः समस्तैः सहितं च मायया।
विनीतकं बान्धववृन्दवन्वितं
भवं विधत्ते बहुपुण्यभाजनम् ॥४५॥

अथ सम्प्रति रेखात्रययुक्तचन्द्रफलं वंशस्थेनाह—

तृतीयसंस्थ इति। हिमभाश्चन्द्रः तृतीयसंस्थो रेखात्रययुक्तः भवं जातं भया लक्ष्म्या अन्वितं सहितम्। समस्तैः गुणैः सत्वादिभिः सहितं युक्तं मायया कपटेनेति यावत्। सहितं विनीतकं विनययुक्तं बान्धवानां सगोत्राणां वृन्दानि

समूहाः तैर्वन्दितं पूजितं बहूनि पुण्यानि धर्मकृत्यानि तेषां भाजनं पात्रं विधत्ते कुरुते। इति

यथाऽऽह वृद्धयवनः—

'चन्द्रस्तृतीये कुरुते सपापं नरं विनीतं बहुधर्मभाजनम्।
श्रियान्वितं सर्वगुणोपपन्नं धत्ते सदा बन्धुजनस्य पूजाम्॥' इति

यदि चन्द्रमा तीन रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य उत्तम लक्ष्मी से युक्त, समस्त गुणों से युक्त, विनीत, बन्धु-बांधवों द्वारा मान्य, बहुत पुण्य वाला, किन्तु जादू टोना, माया आदि को जानने वाला होता है।

दाक्षायणीरमण आत्मजसौख्यमान-
युक्तं महामनुभवं कुरुते चतुर्थे।
ख्यातं नरं विविधवित्तसमन्वितं च
पद्माकरप्रहिमुखाश्रयरक्तचित्तम् ॥४६॥

अथाधुना रेखाचतुष्टययुक्तचन्द्रफलं वसन्ततिलकेनाह:—

दाक्षायणीति दाक्षायण्योऽश्विनीप्रभृतिनक्षत्राणि तेषां रमणः स्वामी चन्द्रः रेखाचतुष्टययुतराशौ स्थितश्चेत् नरमात्मजानां पुत्राणां सौख्यं तेन मानेन च युक्तं महामनुभवं महान्तं मनुष्यं, ख्यातं प्रसिद्धं, विविधवित्तसमन्वितमनेकधनसहितं पद्माकर प्रहिमुखाश्रयरक्तचित्तं तडागकूपाश्रयासक्तहृदयं कुरुते इति। तथा च वृद्धयवनः—

'सोमश्चतुर्थे प्रकरोति मानं नरं प्रसिद्धं विविधार्थयुक्तम्।
तडागकूपाश्रयरक्तचित्तं महामनुष्यं सुतसौख्ययुक्तम्॥' इति

यदि चन्द्रमा चार रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य पुत्रों के सुख से युक्त, मान करने वाला, प्रधान पुरुष, प्रसिद्ध, अनेक प्रकार की सम्पदाओं से युक्त, तालाब, कूएं आदि बनवाने में रुचि लेने वाला होता है।

पञ्चमगो हिमगुर्गतविघ्नं
सर्वसहं बहुभोगसमेतम्।
सज्जनचेतसविवेकमतिज्ञं
देहभृतं दयितातिथिमित्रम् ॥४७॥

अथाधुना पञ्चरेखायुक्तचन्द्रफलं दोधकेनाह—

पचमग इति। हिमगुश्चन्द्रः पंचमगः रेखापंचके राशौ विद्यमानः देहभृतं शरीरिणं गतविद्यं गता समाप्ता विद्या यस्य तथा तम्। विद्याहीनमित्यर्थः। सर्वं सहते सर्वंसहस्तम्। बहुभिर्धनधान्यभोगैः सहितं सहविवेकेन विचारेण वर्तमानः सविवेकस्तम्। अतिज्ञं सुविज्ञं दयितातिथिमतिथिप्रियं सञ्जनयेदिति। यथात्र वृद्धयवनः—

'विद्याविहीनं सुविवेकयुक्तं नरं प्रसूतं बहुभोगभाजनम्।
क्षपाधिनाथः खलु पंचमस्थः प्रियातिथिं सर्वसहं सुविज्ञम्॥' इति

जन्म समय यदि चन्द्रमा पांच रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य विद्या से रहित, खूब सहन शक्ति वाला, बहुत भोग विलास से युक्त होता है। विवेक बुद्धि से सम्पन्न, अति चतुर, अतिथियों का सत्कार करने वाली सन्तान से ऐसा व्यक्ति युक्त होगा। अर्थात् उसकी सन्तान सम्पन्न, चतुर एवं गुणी होगी।

उत्पादयत्यमृतदीधितिरर्थयुक्तं
षष्ठस्थितस्तनयदारयुतं विनीतम्।
कान्तं षडङ्गसहितं सुभगं नरेन्द्र-
पूज्यं च शान्तिसहितं बहुमानभाजम्॥४८॥

अथ साम्प्रतं षड्रेखायुक्तचन्द्रफलं वसन्ततिलकेनाह—

उत्पादयतीति। अमृतदीधितिश्चन्द्रः षष्ठस्थितः षष्ठरेखाभिर्युक्ते राशौ स्थितोऽर्थयुक्तं, तनयैः पुत्रैः दारैः स्त्रीभिर्युतं, विनीतं विनययुक्तं, कान्तं मनोहरं, वेदानां षडङ्गैः शिक्षाकल्पादिभिः सहितमर्थात्साङ्गवेदविदमित्यर्थः। सुभगं सुजनं नरेन्द्राणां राज्ञां, पूज्यं मान्यं शान्तिसहितं कामक्रोधादिरहितं बहुमानभाजमधिक-सम्मानसहितमुत्पादयति जनयति जनमिति शेषः। यथा वृद्धयवनः—

षडंगयुक्तं सुभगं मनोज्ञं करोति चन्द्रः सुतदारयुक्तम्।
धनाश्रयं शान्तियुतं विनीतं नरेन्द्रपूज्यं बहुमानभाजनम्॥' इति

यदि चन्द्रमा छह रेखाओं से युक्त हो तो धन, पुत्र तथा स्त्री से युक्त, विनय से सम्पन्न, मनोहर शरीर वाला, छह अंगों सहित वेदों का जानकार, राजाओं द्वारा सम्मानित, शान्ति से युक्त, काम व क्रोधादि विकारों को नियन्त्रण में रखने वाले तथा सम्मानित पुत्रों का पिता होता है।

सुधाकरः सप्तमगो मनोरमा-
ङ्गनं सुशीलं प्रणतं प्रभान्वितम् ।
तथोपवासव्रतयोर्विधेर्विदं
करोति नित्यं सुमुखं शरीरिणम् ॥४९॥

अथाधुना सप्तरेखायुतचन्द्रफलं वंशस्थेनाह—

सुधाकर इति । सुधाकरश्चन्द्रः सप्तमगः सप्तरेखायुतः शरीरिणं मनुष्यं मनोरमांगनं सुन्दरस्त्रीयुतं सुशीलं सुन्दरस्वभावं, प्रणतं विनम्रं प्रभया दीप्त्या अन्वितं युक्तं, उपवासोऽनाहारः व्रतं नियमः तयोर्विधेर्विधानस्य विदं वेत्तारं नित्यं सुमुखं सुन्दरमुखं करोति विदधातीति ।

यदि चन्द्रमा सात रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य की स्त्री बहुत सुन्दर होती है। वह स्वयं भी सुन्दर स्वभाव वाला, विनम्र, तेजस्वी, व्रतोपवासादि की विधि जानने वाला तथा स्वयं सुन्दर मुख वाला होता है।

स्थानेऽष्टमे शशधरो दयितातिथिं च
विद्यासमेतमवनीसुरवल्लभं च ।
सत्यान्वितं च सुखिनं प्रभया समेतं
गाङ्गेयसौख्यसहितं मनुजं प्रगल्भम् ॥५०॥

अथ साम्प्रतमष्टरेखायुक्तचन्द्रफलं वसन्ततिलकेनाह

स्थाने इति । शशधरश्चन्द्रोऽष्टमे स्थानेऽष्टरेखाभिर्युक्ते राशौ स्थितश्चेत्तदा मनुजं मनुष्यं दयितातिथिमतिथिप्रियं विद्यासमेतम् । अवनीसुरो ब्राह्मणस्तस्य वल्लभं प्रियं सत्यान्वितं सत्यवाचं, सुखिनं सुखभाजं, प्रभया दीप्त्या समेतं युक्तं गांगेयं सुवर्णं तस्य सौख्यं तेन सहितं प्रगल्भं प्रतिभायुतं कुर्यादिति शेषः ।

यथाऽत्र वृद्धयवनः—
स्थानेऽष्टमे सौख्यहिरण्ययुक्तं विद्यान्वितं सत्यपरं प्रगल्भम् ।
करोति चन्द्रः सुखिनं मनुष्यं प्रियातिथिं ब्राह्मणवल्लभं च ॥ इति

यदि चन्द्रमा आठ रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य अतिथियों का खूब सत्कार करने वाला, विद्या से सम्पन्न, ब्राह्मणों का प्रिय, सत्य बोलने वाला, सुखों को भोगने वाला, तेजस्वी, सोने से युक्त व प्रतिभा से सम्पन्न होता है।

चन्द्रमा के बिन्दुओं का फल :

> आद्ये स्थाने दाययुक्तः कलावान्
> जातं जन्तुं सत्यहीनं च दीनम् ।
> अंहोरक्तं स्वीयलोकैर्विमुक्तं
> वक्रं कुर्यात्सोपतापाङ्गमत्र ॥५१॥

'अथ सम्प्रति एकबिन्दुयुक्तचन्द्रफलं शालिन्याह'—

आद्यइति । कलावांश्चन्द्रः, आद्ये स्थाने प्रथमे स्थाने, दाययुक्तो दायेन बिन्दुना युक्तः सहितस्तदा जातमुत्पन्नं जन्तु शरीरिणं मनुष्यमिति यावत् । सत्येन हीनं रहितं, अर्थादसत्यभाषिणम् । दीनं दरिद्रं अंहोरक्तं पापासक्तं स्वीयलोकैर्निजजनैर्विमुक्तं त्यक्तं, वक्रं कृशं, सोपतापाङ्गं रोगिणं कुर्यात् । शालिनीति तथा च वृद्धवचनः—

> स्थानाद्यके बिन्दुगतः शशांकः सरोगदेहं कुरुते मनुष्यम् ।
> पापानुरक्तं स्वजनैर्विमुक्तं दीनं कृशं सत्यविहीनमेव ॥ इति

यदि चन्द्रमा एक बिन्दु से युक्त राशि में स्थित हो तो मनुष्य झूठ बोलने वाला, दरिद्र, पाप कर्मों में लगने वाला, परिवार जनों द्वारा तिरस्कृत, दुर्बल एवं रोगों से युक्त होता है ।

> कलाधरो बान्धवलोकवर्जितं
> कलत्रहीनं जननात्ययान्वितम् ।
> यदा द्वितीये नियतं सुदुर्विधं
> भवं प्रकुर्य्याद्बहुशत्रुमङ्गिनम् ॥५२॥

'अथाधुना बिन्दुद्वययुक्तचन्द्रफलं वंशस्थेनाह'—

कलाधर इति । कला बिम्बस्य षोडशांशस्तं धरति यस्तथा सः 'काले शिल्पे वित्तवृद्धौ चन्द्रांशे कलने कला' इति वैजयन्ती । कलाधरश्चन्द्रः द्वितीये बिन्दुद्वययुक्त इत्यर्थः । चेत्तदा भवं जातं, अंगिनं प्राणिनं मनुजमिति यावत् । कलत्रेण स्त्रिया रहितं, जननं जन्म अत्ययोमरणं ताभ्यामन्वितं युक्तमर्थादल्प जीवितं नियतं निश्चयेन, सुदुर्विधं सुतरां दुर्विधं दरिद्रं बहुशत्रु प्रभूतशत्रुं कुर्यादिति वंशस्थच्छन्दः । तथा च वृद्धवचनः—

> करोति चन्द्रो नियतं द्वितीये नरं सुदीनं मृतजन्मयुक्तम् ।
> प्रभूतशत्रुं प्रमदा विहीनं विवर्जितं बन्धुजनेन नित्यम् ॥ इति

जन्म के समय यदि चन्द्रमा दो बिन्दुओं से युक्त हो तो मनुष्य बन्धुओं से रहित, स्त्री के सुख से वंचित, बहुत अल्प आयु वाला, अति दरिद्र तथा बहुत से शत्रुओं से युक्त होता है।

कुरङ्गलक्ष्मा कफवातपीडितं
 तृतीयसंस्थः कुरुते महाभयैः।
समन्वितं भूविभुनाऽतिपीडित
 मजस्रमुग्रेण गदेन संयुतम् ॥५३॥

'अथाधुना बिन्दुत्रययुक्तचन्द्रफलं वंशस्थेनाह'—

कुरङ्गेति। कुरङ्गलक्ष्मा चन्द्रः, तृतीयसंस्थो त्रिबिन्दुत्रययुक्तश्चेत्तदा, कफः वातो वायुस्ताभ्यां पीडितं, महाभयैः समन्वितं, अजस्रं नित्यं, भूविभुना राज्ञा, अतिपीडितं अतिदुःखितमुग्रेणोत्कटेन, गदेन रोगेण संयुतं कुरुते। आर्तिमिति शेषः। यथाहवृद्धयवनः—

'सुपीडितं भूपतिना सदैव महाभयैः संयुतमुग्ररोगम्।
कफानिलाभ्यां परिपीडितं च चन्द्रस्तृतीये कुरुते मनुष्यम् ॥' इति

यदि चन्द्रमा तीन बिन्दुओं से युक्त हो तो कफ और वायु से सम्बन्धित रोगों को उत्पन्न करता है। ऐसा व्यक्ति भय से युक्त होता है। राजा से दुःखी और उग्र रोगों से पीड़ित होता है।

चतुर्थगः कैरविणीवनेश
 ऋतेन सौख्येन विवर्जितं च।
सुदुर्भगं कुत्सितसङ्गतं स-
 बहूपतापं कुरुतेऽतिदुष्टम् ॥५४॥

'अथेदानीं बिन्दुचतुष्टययुक्तचन्द्रफलमुपेन्द्रवज्रयाह—

चतुर्थग इति। कैरविणीवनेशश्चन्द्रः चतुर्थगो बिन्दुचतुष्टय युक्तः, तदा ऋतेन सत्येन, सौख्यं तेन च विवर्जितं रहितं, सुदुर्भगं सुतरां दुष्टं भगं भाग्यं यस्य तथा तम्। अर्थादल्प भाग्यमित्यर्थः। कुत्सिताः निन्दितास्तैर्गतो संगतं सम्बद्धं, सह बहुना प्रभूतेन उपतापेन रोगेण, वर्तमानो यस्तमतिदुर्जनं कुरुते विधत्ते। यथा वृद्धयवनः—

'कुसंगतं सत्यविहीनमेव सौख्येन हीनं बहुरोगयुक्तम्।
सुदुर्भगं दुष्टतरं सदैव चन्द्रश्चतुर्थे कुरुते मनुष्यम् ॥' इति

जन्म समय यदि चन्द्रमा चार बिन्दुओं से युक्त राशि में स्थित हो तो मनुष्य सुखों से वंचित, सत्य का विरोधी, दुर्भाग्य शाली, दुष्ट पुरुषों के साथ सम्बन्ध रखने वाला, बहुत से रोगों से युक्त और दुर्जन स्वभाव वाला होता है।

चार रेखाओं के साथ चार बिन्दु होते हैं, अतः शुभ व अशुभ फल समान हो जाने से उक्त अशुभ फल को ही प्रधान मानना चाहिए।

चेत्पञ्चमस्थः कुमुदात्मबन्धुः
सर्वंसहानायकमानमुक्तम् ।
निःस्वं विधत्ते व्यसनैरुपेतं
प्राज्यारिपक्षं च विनष्टशीलम् ॥५५॥

'अथेदानीं पञ्चबिन्दुयुक्तचन्द्रफलमिन्द्रवज्रयाह'—

चेत्पञ्चमस्थ इति। चेद्यदि, कुमुदात्मबन्धुश्चन्द्रः पंचमस्थोबिन्दुपंचक-युक्तस्तदा, सर्वंसहा पृथ्वी तस्य नायकः स्वामी राजेत्यर्थः। तेन दत्तं यन्मानं सम्मानं तेन मुक्तं वर्जितं, निःस्वं दरिद्रं, व्यसनैर्विपद्‌भिरुपेतं युक्तं। प्राज्यारिपक्षं बहु-शत्रुयुतं, विनष्टशीलं दुष्टस्वभावं विधत्ते कुरुते। तथा च वृद्धवचनः—

'प्रणष्टशीलं प्रचुरारिपक्षं निशाधिनाथः खलु पंचमस्थः।
करोति दीनं व्यसनैः समेतं विवर्जितं भूपतिमानपूर्वैः॥" इति

जन्म के समय यदि चन्द्रमा पांच बिन्दुओं से युक्त राशि में स्थित हो तो व्यक्ति राज सम्मान से वर्जित, गरीब, मुसीबतों का मारा हुआ, बहुत से शत्रुओं से पराभूत तथा दुष्ट स्वभाव वाला होता है।

मूल ग्रन्थ में चन्द्रमा के छह बिन्दुओं का फल उपलब्ध नहीं है। हम यहां उसका फल ग्रन्थान्तर से दे रहे हैं—

"विदेशसेवाविरतं कृतघ्नं षष्ठेऽरिवर्गैर्विजितं वृतांजनम्।
भवेन्मनुष्यं नृपपीडितं च कलत्रयानादिभिर्विप्रमुक्तम्॥"

'छह बिन्दुओं से युक्त राशि में यदि चन्द्रमा स्थित हो तो व्यक्ति विदेश में रोजगार करने वाला, कृतघ्न, शत्रुओं से पराजित, सम्मान से रहित, राजा से पीड़ित तथा स्त्री-पुत्र वाहनादि के सुख से वर्जित होता है।'

बहूपतापं शठरे सुतीवं
वरान्वितं सप्तमगः सितांशुः।

उग्रं विरोधं बहुलं विधत्ते
पाटच्चरोग्रं च नतं प्रभूतम् ॥५६॥

'अथसाम्प्रतं सप्तबिन्दुयुक्तंचन्द्रफलमुपजात्याह'—

बहूपतापमिति। सितांशुश्चन्द्र सप्तमगः सप्तबिन्दुयुक्तश्चेत्तदा, जठरे उदरे, बहूपतापं बहुरोगं सुतीव्रमतिदूनं दरान्वितं भययुक्तमुग्रं कोपिन, बहुलं प्रभूतं, विरोधं वैर,पाटच्चरेषु चौरेषूग्रं निर्दयं प्रभूतं बहु नत नीचं विधत्ते। यथा च वृद्धयवनः—

भयान्वितं तीव्रतरं विधत्ते, स्यात्सप्तमे वैरमनल्पमुग्रम्।
चन्द्रो नत भूरि मलिम्लुचोग्रं रोगं नराणां जठरं प्रभूतम्॥' इति

यदि चन्द्रमा सात बिन्दुओं से युक्त राशि में स्थित हो तो मनुष्य पेट के बहुत से रोगों से पीड़ित, अत्यन्त डरपोक स्वभाव वाला, बहुत क्रोधी, बहुत वैर-भाव रखने वाला, निर्दयी, चोर एवं निन्दित कार्य करने वाला होता है।

चण्डीशचूडामणिरष्टमस्थो-
ऽरिष्टं फलं वल्लभविप्रयोगम्।
स्वार्त्ति दरिद्रं सुभयं स्वनाशं
सानर्थकं शोकमनेकदुःखम् ॥५७॥

'अथाधुनाष्टबिन्दुयुक्तफलमिन्द्रवज्रयाह'—

चण्डीति। चण्डीशचूडामणिश्चन्द्रोऽष्टमस्थोऽष्टबिन्दुयुक्तोऽरिष्टं फलं कष्टं, वल्लभः प्रियस्तस्य विप्रयोगो वियोगस्तम् स्वार्त्ति धनपीडां दरिद्रं दीनं सुभयं सुतरां भयं दरं स्वनाशं धननाशं सहानर्थेनानिष्टेन वर्तमानः सानर्थकस्तम् शोक-दुःखं विविध दुःखं करोति शेष। तथा च वृद्धयवनः—

धनस्य नाशं प्रियविप्रयोगं चन्द्रोऽष्टमे रिष्टफलं विधत्ते।
शोकं धनार्ति विविधं च दुःखं महाभयं दैन्यमनर्थयुक्तम्॥' इति

जन्म समय में चन्द्रमा आठ बिन्दुओं से युक्त हो तो अत्यन्त अरिष्ट फल करने वाला होता है। ऐसा मनुष्य प्रियजनों से वियुक्त, धन की पीड़ा वाला, दरिद्र, बहुत डरपोक, धन गंवाने वाला, अनिष्ट फल वाला व शोकादि से पीड़ित होता है।

मंगल की रेखाओं का फल :

> रेखास्थितस्तीव्रविलोचनश्चेद्
> वृद्धिं पशूनां सततं सुखानि ।
> आद्ये धरार्थाप्तिमनेकभोगं
> सौख्यं प्रपूर्णं स्वमहाजनोत्थम् ॥५८॥

रेखास्थित इति । तीव्रविलोचनो भौमः आद्ये प्रथम स्थाने रेखास्थितो रेखायुक्तोऽर्थादिकरेखायुक्तस्तदा पशूनां चतुष्पदानां वृद्धिं सततं नित्यम् सुखानि धराभूमिरर्थं धनं तयोराप्तिर्लब्धिस्तासाम्, अनेकभोगं विविधभोगं स्वमहाजनोत्थं स्वमहाजनेभ्यो निजपूर्वजेभ्य उत्थमुत्पन्नं पूर्णं समस्तं सौख्यं करोतीति शेषः । यथाह वृद्धयवनः—

> रेखास्थितो हि क्षितिवित्तलाभं करोति भौमः पशुवृद्धिमाद्ये ।
> सौख्यं च भोगं विविधं च पूर्णं महाजनोत्थं सततं सुखानि ॥' इति

यदि जन्म के समय मंगल एक रेखा से युक्त हो अर्थात् एक रेखा युक्त राशि में स्थित हो तो मनुष्य के यहां पशुधन की वृद्धि होती है। सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करते हुए उसे धन व भूमि आदि का सुख प्राप्त होता है। वह अनेक प्रकार के अन्नपानादि से युक्त भोगों का तथा अपने पूर्वजों से प्राप्त किए गए सुख-साधनों का पूर्ण भोग प्राप्त करता है।

> द्वितीययातो नियतं महीजः
> करोति लोके प्रियतां विकाशम् ।
> मतेर्विपक्षक्षयमात्मजस्त्री-
> चितिं विमान्द्यं च समुन्नतं च ॥५९॥

द्वितीयेति । मह्यां पृथिव्यां जायते इति महीजोभौमो द्वितीययातो रेखाद्वयं-युक्तश्चेत्तदा, नियतं निश्चयेन, लोकेजने, प्रियतां सौहार्दं मते बुद्धेः विकाशं प्रकाशं, विपक्षाः शत्रवस्तेषां क्षयं नाशं आत्मजः पुत्रः स्त्रीकलत्रं तयोश्चितिवृद्धिस्ताम्, विमान्द्यमारोग्यतां समुन्नतंमहान्तं करोति इति । तथा च वृद्धयवनः—

> आरोग्यतां पुत्रकलत्रवृद्धिं मतेर्विकाशं प्रियतां च लोके ।
> समुन्नतं शत्रु विनाशनं च करोति भौमो नियतं द्वितीये ॥' इति

जन्म समय यदि मंगल दो रेखाओं से युक्त राशि में हो तो

मनुष्य बहुत लोकप्रिय होता है। उसकी बुद्धि तीव्र एवं शत्रु पराजित होते हैं। उसके स्त्री पुत्रों की वृद्धि होती है। ऐसा मनुष्य निरोग शरीर वाला व महान् होता है।

तृतीय उर्वीतनयो विभूति
सौख्यानि बालेयमहाङ्गजानि।
अभ्युन्नतं सन्ततमिष्टलाभं
करोति भूयो विविधं प्रतापम् ॥६०॥

तृतीय इति। उर्वीतनयो भौमस्तृतीये रेखात्रययुक्तश्चेत्तदा, बालेया गर्दभाः महांगा उष्ट्रास्तेभ्यो जायन्ते सौख्यानि, अभ्युन्नतं सर्वतः समुन्नतं सन्ततं नित्यं, इष्टलाभमभीप्सितवस्तुप्राप्तिं, भूयो बहु, विविधमनेकं प्रतापं प्रभावं करोति विदधाति। तथा च वृद्धयवनः—

खरोष्ट्रजातानि सुखांख्यकानि नृणां विधत्ते क्षितिजस्तृतीये।
विभूतिमभ्युन्नतमिष्टलाभं भूरिप्रतापं विविधं च नित्यम् ॥' इति

यदि मंगल तीन रेखाओं से युक्त हो तो ऐसे व्यक्ति को गधों व ऊंटों से लाभ होता है। उसे सब तरफ से उन्नति मिलती है। उसे सदा मनवांछित फल मिलते रहते हैं और वह बहुत प्रतापी अर्थात् प्रभावशाली होता है।

अनेकलाभं नरनाथमानं
चतुर्थगोऽसौ दयितं विधिज्ञम्।
भक्तं द्विजव्योमसदां च सौख्य-
सौभाग्यवृद्धि कुरुते प्रतापम् ॥६१॥

अनेकेति। असौभौमश्चतुर्थगो रेखाचतुष्टययुक्तश्चेत्तदा, अनेकानां विविध प्रकाराणां लाभं प्राप्तिं नरनाथैः राजभिर्मानं सम्मानं दयितं प्रियं विधिज्ञं विधिवेत्तारं द्विजा ब्राह्मणा व्योमसदो देवास्तेषां भक्तं सेवकं, सौख्यं च सौभाग्यं, च तयोर्वृद्धिमुपचयं, प्रतापं प्रभावं कुरुते। तथा च वृद्धयवनः—

भौमश्चतुर्थे कुरुते प्रतापं, सौभाग्यसौख्याभ्युदयं नितान्तम्।
प्रियं विधिज्ञं सुरविप्रभक्तं नरेन्द्रमानं विविधं च लाभम् ॥' इति

यदि मंगल चार रेखाओं से युक्त हो तो व्यक्ति को अनेक प्रकार का लाभ होता है। वह राजाओं से सम्मानित तथा राजप्रिय एवं विधिज्ञ

(भाग्य अथवा कानून को जानने वाला) होता है। वह ब्राह्मणों और देवताओं का भक्त, सुखी, धनी एवं सौभाग्यशाली होता है।

लाभं सुवर्णस्य रुजाविनाशं
तनूजवित्ताप्तिमिलातनूजः ।
दद्यान्नराणां प्रचुरांशुसौख्यं
विवर्द्धनं पञ्चमसंस्थितश्चेत् ॥६२॥

इलातनूजो भौमः पंचमसंस्थितः पंचरेखायुक्तश्चेत्सदा, नराणां मनुष्याणां, सुवर्णं प्रसिद्धं तस्य लाभं प्राप्तिं, रुजा रोगस्तस्य विनाशं क्षयं तनूजः पुत्रः वित्तं धनं तयोराप्ति लाभं प्रचुरांशुसौख्यं बहुवस्त्रसौख्यं विवर्धनं वृद्धि दद्यात् यच्छेदिति। तथा च वृद्धयवनः—

सुतार्थलाभं खलु पंचमस्थः क्षोणीसुतो यच्छति मानवानाम्।
हिरण्यलाभं बहुलांसुसौख्यं व्याधेर्विनाशं खलु वर्धनं च ॥' इति

जन्म समय यदि मंगल पांच रेखाओं से युक्त राशि में हो तो मनुष्य को सोने का लाभ होता है। उसके समस्त रोगों का नाश होता है। धन व पुत्रों का लाभ होता है। उसे बहुत से वस्त्र व प्रभूत सुख प्राप्त होता है।

षष्ठाश्रितो वसुमतीतनयाभिधानो
नित्यं करोति किल बान्धवसङ्गमं च।
नृणां सदेह निखिलोत्तमभोजनानि
नाशं द्विषोऽनवरतं सुकृतार्थसिद्धिम् ॥६३॥

षष्ठाश्रित इति। वसुमतीतनयाभिधानो भौमः षष्ठाश्रितः षड्रेखायुक्तस्सदा नृणां मनुष्याणां नित्यं किल निश्चयेन बान्धवानां सगोत्राणां संगमं सम्बन्धं, इहास्मिन्, योगेसदा नित्यं निखिलोत्तमभोजनानि सर्वोत्तमभोजनानि, द्विषः शत्रोर्नाशं क्षयमनवरतं नित्यं सुकृतार्थसिद्धिं धर्मार्थसिद्धिं करोति विदधात्यिर्थः। तथा च वृद्धयवनः—

'षष्ठेऽरिनाशं कुरुते महीजः समागमं बन्धु जनेन नित्यम्।
नित्यं च सर्वोत्तमभोजनानि धर्मार्थसिद्धिं सततं नराणाम् ॥' इति

यदि मंगल छह रेखाओं से युक्त राशि में स्थित हो तो उसके बन्धुओं से उसका सदा मेल रहता है। उसे सर्वोत्तम भोजन प्राप्त होता है। उसके शत्रुओं का नाश और धन व धर्म की खूब वृद्धि होती है।

भौमो विज्ञानविद्याप्तिं सप्तमे चेन्नृपागमम् ।
रतोपलब्धिमिष्टाप्ति सदाच्छादनभोजनम् ।।६४।।

भौम इति । भौमो मंगलः सप्तमे सप्तरेखायुक्तश्चेत्तदा, विज्ञानं शिल्प-विद्या, अष्टादशविद्यास्चतासां प्राप्ति लाभं नृपागम नृपो राजा तस्मादागमं लाभ, रतं मैथुनं तस्योपलब्धि प्राप्ति इष्टाप्तिमभीष्टवस्तुप्राप्ति सदाच्छादनभोजनं उत्तमवस्त्रभोजन कुरुत इति शेषः । तथा च वृद्धवचनः—

'क्षोणीसुतो यच्छति सप्तमस्थो विज्ञानविद्यागममिष्टलाभम् ।
सदासनाच्छादनभोजनानि रतोपलब्धि जगतीशलाभम् ।।' इति

यदि मंगल सात रेखाओं से युक्त राशि में स्थित हो तो मनुष्य शिल्प शास्त्र का ज्ञाता, विद्यावान् और राजाओं के द्वारा सम्मानित व लाभान्वित होता है । उसे सुन्दर स्त्रियों का उत्तम सुख, मनवांछित वस्तुओं की प्राप्ति तथा उत्तम वस्त्र भोजनादि मिलते हैं ।

अङ्गारकः प्रकुरुते कृषिकर्म्मसिद्धि
वाणिज्यलाभमिह विश्वसुखप्रपुष्टम् ।
भूतिं विशां ननु समुन्नतमुन्नतिं च
चेदष्टमेऽनवरतं निजकर्म्मसिद्धिम् ।।६५।।

अंगारक इति । अंगारको मंगलोऽष्टमेऽष्टरेखायुक्तस्तदा विशां नराणां कृषिस्तस्याः कर्म क्रियाः हलप्रवहणमित्यादि तस्यसिद्धि सफलतां प्राप्ति, वाणिज्यं व्यापारस्तस्माल्लाभं, विश्वानि सर्वाणि सुखानि तैः प्रपुष्टं विवर्धनं, भूतिमैश्वर्यं, समुन्नतं महान्तं उन्नतिं वृद्धि अनवरतं नित्यं निजकर्मणां सिद्धि प्रकुरुते विदधाते । यथात्र वृद्धवचनः—

'भौमोऽष्टमेभूमिमथोन्नतिं च नृणां विधत्ते खलु कर्मसिद्धिम् ।
वाणिज्यलाभं कृषिकर्मसिद्धि समुन्नतं सर्वसुखैः प्रपुष्टम् ।।' इति

यदि मंगल आठ रेखाओं से युक्त राशि में स्थित हो तो मनुष्य को कृषि कर्म से खूब लाभ होता है । वह व्यापार में भी वृद्धि को प्राप्त करता है । उसे सम्पूर्ण सुखों की प्राप्ति, ऐश्वर्य, ऊंचाई अर्थात् ऊंची पदवी और उन्नति मिलती है । साथ ही वह व्यक्ति सदा सफलता प्राप्त करता है ।

मंगल के बिन्दुओं का फल :

> स्थाने यदाऽऽद्येऽक्षसमाश्रितो बला-
> जातो दयां यच्छति जन्मिनां ततः।
> हानिं धनानां गुरुलोचनामयं
> सौख्यं न कुर्य्याद् धिषणापरिक्षयम् ॥६६॥

स्थान इतीन्द्रवंशयाऽऽह। बला पृथ्वी तस्यां जातः उत्पन्नो बला जातो भौमो यदा आद्ये प्रथमस्थानेऽक्षसमाश्रितो बिन्दुसमाश्रितोऽर्थादेकबिन्दुयुक्त इत्यर्थः। चेत्तदा, जन्मिनां प्राणिनां मनुजानामिति यावत् दयां कृपां यच्छति ददाति कुरुत इत्यर्थः। ततस्तस्मात् कारणाद् धनानां द्रव्याणां हानिं क्षतिं, गुरु बलवद् लोचनामयं नेत्ररोगं कुर्यात्। सौख्यं न, धिषणाबुद्धिस्तस्याः परिक्षयं नाशं कुर्याद् विदध्यात्। तथा च वृद्धयवनः—

> 'बिन्दुस्थितो भूतनयो यदाऽऽद्ये स्थाने दयां यच्छति मानवानाम्।
> तदर्थहानिं गुरुदृष्टिरोगं मतेर्विनाशं कुरुते न सौख्यम् ॥' इति

जन्म समय यदि मंगल की स्थिति एक बिन्दु वाली राशि में हो तो मनुष्य दूसरों की दया पर जीता है। अतः उसे सदा धन की हानि होती है। उसकी आंखों में बड़ा रोग होता है। सदा सुख का अभाव और बुद्धि का नाश होता है।

> कुर्याद् द्वितीये वसुधातनूजनि-
> र्दाहं मनीषासुहृदां विनाशनम्।
> शीर्षार्त्तिकां चौरकृतं प्रमोषण-
> मुग्रं ज्वरं पित्तकमङ्गनाशुचम् ॥६७॥

कुर्यादिति। वसुधातनूजनिर्भौमो, द्वितीये बिन्दुद्वययुक्तश्चेत्तदा, दाहं तपनं, मनीषा बुद्धिस्तस्याः सुहृदो मित्राणि तेषां च विनाशनं क्षयं शीर्षं शिरस्तस्मिन्नर्तिकां पीडा चौरैः क्रियते चौरकृतं प्रमोषणं हरणमर्थाच्चौरतो धनहानिरित्यर्थः। उग्रमुत्कटं ज्वरं ज्वरं पित्तं मायुमंगनायाः स्त्रियाः शुचं शोकं कुर्यात्। यथाह वृद्धयवनः—

> शिरोऽर्त्तिदाहं ज्वरपित्तमुग्रं प्रमोषणं चौरकृतं सदैव।
> प्रियावियोगं मतिमित्रनाशं भौमो द्वितीये कुरुते नराणाम् ॥' इति

यदि मंगल दो बिन्दुओं वाली राशि में अवस्थित हो तो शरीर में संताप, बुद्धि का नाश व मित्रों की हानि होती है। उसके धन को चोर

चुरा लेते हैं। उसे तीव्र ज्वर सताता है। वह व्यक्ति पित्त विकार व स्त्री शोक से पीड़ित होता है।

विश्वम्भरादेहभवस्तृतीयगो
लौल्यापमानं विषमार्त्तिमङ्गिनाम्।
उग्रं विरोधं सततं पराजितं
लोकैस्तथा कुत्सितबुद्धिसङ्गमम् ॥६८॥

विश्वम्भरेति। विश्वम्भरादेहभवो भौमस्तृतीयगो बिन्दुत्रययुक्तस्तदाऽङ्गिनां प्राणिनां मानवानामिति यावत् लौल्यं चपलतामपमानमवज्ञां निरादरमिति यावत्। विषमां दारुणामार्त्ति पीडां सततं नित्यमुग्रमुत्कटं विरोधं वैरं, लोकैर्जनैः पराजितं पराभूतं, कुत्सिता निन्दिता बुद्धिर्मतिर्येषां तैः सगमः संगस्तम् कुर्यादिति शेषः। यथा वृद्धयवनभणितिरियम्—

'भौमस्तृतीये विषमार्त्तिलौल्यं धत्ते नराणां च तथापमानम्।
कुबुद्धिभिः संगममुग्रवैरं पराजितं प्राणभृतां सदैव॥' इति

जन्म समय यदि मंगल तीन बिन्दुओं से युक्त राशि में स्थित हो तो मनुष्य के स्वभाव में चंचलता आती है। उसे जीवन में अपमान व भयंकर पीड़ा सहनी पड़ती है। उसे शत्रुओं की अधिकता, उत्कट वैर, लोगों से पराजय आदि फल मिलते हैं और वह दुष्ट जनों की संगति में रहने वाला होता है।

पृथग्विधान्वैरविवादसङ्घान्
महीसुतः साध्वसमातनोति।
हानिं महार्त्तं व्यसनं च वार-
वध्वाः पणं प्राणभृतां चतुर्थे ॥६९॥

पृथगिति। महीसुतो भौमश्चतुर्थे बिन्दुचतुष्टययुक्तश्चेत्तदा प्राणिनां नराणां पृथग् विधान् अनेकरूपाणि, वैराणि विद्वेषा विवादाः कलहास्तान्, हानिं क्षतिं, महार्त्तिमतिदुःखं, वारवध्वा वेश्याया व्यसनं सम्भोगमद्यपानादि अनिन्दनीयम्। पणं द्यूतमातनोति विदधाति। यथा वृद्धयवनः—

'विवादवैराणि पृथग्विधानि भौमश्चतुर्थे कुरुते नराणाम्।
द्यूतं च वेश्याव्यसनं महार्त्तं पराजयं साध्वसमेव हानिः॥' इति

जन्म समय मंगल यदि चार बिन्दुओं से युक्त राशि में हो तो

मनुष्यों के साथ अनेक प्रकार की शत्रुता व कलह व होती है। इसी कारण उसे सदा बहुत कष्ट और हानि सहनी पड़ती है। उस व्यक्ति के अन्दर वेश्याओं व जुए के प्रति आकर्षण होता है।

पृथ्वीसुतः पञ्चमसंस्थितो यदा
कुर्याद्वियोगं सुतरामसौख्यकम्।
औपक्षयं सन्ततमिष्टनाशनं
वित्तप्रतापात्मजहानिमङ्गिनाम् ॥७०॥

पृथ्वीसुत इति। पृथ्वीसुतो भौमः पंचमसंस्थितः पंचबिन्दुसंयुक्तश्चेत्तदा अंगिनां शरीरिणां मर्त्यानामिति यावत्। सुतरामतिशयं वियोगं विच्छेदमसौख्यकं सौख्याभावं, औपक्षयं क्षयासन्नरोगं, सन्ततं नित्यमिष्टनाशनमभीप्सितनाशं वित्तं धनं प्रतापः प्रभावः आत्मजः पुत्रस्तेषां हानिः क्षतिस्ताम् कुर्यात्। यथा वृद्धयवनः—

असौख्यमौपक्षयमिष्टनाशं पुत्रार्थहानिं सुतरां वियोगम्।
करोति भौमः खलु पंचमस्थः प्रतापहानिं सततं नराणाम् ॥' इति

यदि मंगल की स्थिति पांच बिन्दुओं वाली राशि में हो तो मनुष्य को बहुत वियोग सहना पड़ता है। उसके जीवन में सुख की कमी और टी० बी० (क्षय) जैसे रोगों की उत्पत्ति होती है। उसे प्रिय वस्तुओं की हानि उठानी पड़ती है तथा साथ ही धन, पुत्र व प्रभाव की भी हानि होती है।

गोत्राकुमारो यदि षष्ठसंस्थितो
लोकैः सदा श्रेष्ठतरैर्विवर्जितम्।
युक्तं विषादेन धनाननस्य न
सौख्यं नरं दुःखितमुग्रदुर्विधम् ॥७१॥

गोत्रेति। गोत्राकुमारोभौमः, षष्ठसंस्थितः षड्बिन्दुयुक्तश्चेत्तदा सदा नित्यं श्रेष्ठतरैरत्युत्तमजनैर्विवर्जितं रहितं धनाननस्य धनप्रभृतेर्विषादेनावसादेन नाशेनेति यावत्। दुःखितं पीडितमुग्रदुर्विधं महद् दरिद्रं सौख्यं न कुर्यादिति शेषः। तथा च वृद्धयवनः—

'षष्ठेस्थितो दुःखितदीनमुग्रं सदैव वित्तादिविषादयुक्तम्।
करोति भौमः पुरुषं विहीनं नित्यं जनैः श्रेष्ठतरैर्न सौख्यम् ॥' इति

यदि मंगल छह बिन्दुओं से युक्त राशि में स्थित हो तो मनुष्य

को उत्तम लोगों की सहायता व संगति नहीं मिलती। वह व्यक्ति धनादि के नाश से सदा दुःखी रहता है। उसे सुखों की कमी और कष्ट होते रहते हैं। अतः वह सदा दरिद्र ही रहता है।

विधत्त आरो जनने सरीसृप-
भीतिं प्रलौल्यं विषये जनुर्भृताम्।
चक्षूरसज्ञाप्रभवं प्रसूतिजं
वित्तस्य हानिं प्रतिरोधिलोकतः॥७२॥

विधत्त इति। आरो भौमः सप्तम इति शेषः। अर्थात् सप्तबिन्दुयुक्त इत्यर्थः। चेत्तदा जनुर्भृतां जन्मिनां नराणामित्यर्थः। सरीसृपाः सर्पास्तेभ्यो भीतिर्भयं तत्। विषये रूपरसगन्धशब्दस्पर्शे प्रलौल्यं चापल्यं, चक्षुर्नेत्रं रसज्ञा जिह्वा तयोः प्रभवो जनितं तत्। प्रसूतिजं दुःखं प्रतिरोधिलोकतश्चौरजनेन वित्तस्य क्षतिं नाशं विधत्ते। तथा च वृद्धवचनः—

'चौरार्थहानिं ससरीसृपोत्थं भयं विधत्ते मनुजस्य भौमः।
जिह्वाक्षिरोगोद्भवमेव दुःखं सदा नराणां विषयं प्रलौल्यम्॥' इति

यदि मंगल सात बिन्दुओं से युक्त राशि में हो तो मनुष्य को ऐसे जीव-जन्तुओं से भय होता है, जो बिलों में निवास करते हैं। वह विषय वासना में आसक्त, नेत्र व जीभ के रोगों से पीड़ित होता है। वह चोरों से हानि प्राप्त करता है अथवा शत्रुओं के कारण अपनी सम्पत्ति गंवा देता है।

विशां विधत्ते विपुलातनूजो
हानिं गृहिण्या मृतितुल्यरोगान्।
विघातमस्त्रैः परतः सुखं चा-
वज्ञां परैर्वञ्चनमष्टमस्थः॥७३॥

विशामिति। विपुलातनूजो भौमोऽष्टमस्थोऽष्ट बिन्दुयुक्तश्चेत्तदा विशां मनुष्याणां, गृहिण्याः स्त्रियाः हानिं क्षतिं मृति तुल्यरोगान् मृत्युसदृशरोगान्, अस्त्रैर्मोहनादिभिर्विघातं प्रहारमवज्ञामनादरं परैः शत्रुभिर्वञ्चनं प्रतारणं परत उत्तरवयसि सुखं विधत्ते। यथा वृद्धवचनः—

'पराभवं मृत्युसमानरोगान् कलत्रहानिं परवञ्चनानि।
भौमोऽष्टमस्थः कुरुते नराणां शस्त्राभिघातं परतः सुखं च॥' इति

यदि मंगल आठ विन्दुओं वाली राशि में स्थित हो तो मनुष्य को स्त्री की हानि होती है और मृत्यु तुल्य कष्ट देने वाले रोग से पीड़ा होती है। उसके शरीर पर अस्त्रादिकों का प्रहार होता है। वह सर्वत्र अपमान को प्राप्त करता है। शत्रु उसे धोखा देते हैं किन्तु उसे अपनी वृद्धावस्था में कुछ सुख शान्ति प्राप्त हो जाती है।

बुध की रेखाओं का फल :

स्थानस्थितश्चान्द्रमसायनो गत-
प्रत्यर्थिपक्षं कुरुते यदाऽऽदिमे।
स्थाने सविद्यं च विवेकसंयुतं
शीलार्थकं स्फारहितं च निर्भरम् ॥७४॥

स्थानस्थित इति। चान्द्रमसायनो बुधो यदा आदिमे स्थाने स्थानस्थितः, एकरेखयायुक्तस्तदा गतप्रत्यर्थिपक्षं विगतशत्रुपक्षं शत्रुरहितमित्यर्थः। सविद्यं विद्यासम्पन्नं, विवेकसंयुतं पृथगात्मतया युक्तं शीलमेवार्थो धनं यस्य तम् निर्भरं नितान्तं स्फारहितं बहुमित्रं कुरुत इति। यथा वृद्धयवनः—

'रेखास्थितः सोमसुतो यदाद्ये, स्थाने तदा शीलधनं विनीतम्।
विद्याविवेकादियुतं नितान्तं प्रभूतमित्रं विगतारिपक्षम्॥' इति

यदि बुध जन्म के समय, एक रेखा से युक्त राशि में स्थित हो तो मनुष्य शत्रुओं से रहित होता है। उसके पास विद्या व विवेक प्रभूत मात्रा में होता है। वह बहुत से मित्रों से युक्त और शील सम्पन्न होता है।

रेखास्थितस्त्रिदिवनाथसमं द्वितीये
स्थाने सितांशुतनयः सुभगं सुरम्यम्।
विज्ञं सुशीलमथ देहभृतं सुरूपं
जातं करोति सततं बहुमानपानम् ॥७५॥

रेखास्थित इति। सितांशुतनयो बुधो द्वितीये स्थाने रेखाद्वययुक्तस्तदा जातं मनुष्यं त्रिदिवनाथसमं देवतासदृशं सुभगं सज्जनं सुरम्यमतिमनोहरं विज्ञं निपुणं, सुशीलं सुन्दरस्वभावं, सुरूपं सुतरां सौन्दर्यं सततं नित्यं बहुमानपानं प्रभूतसम्मान-पानं करोति। यथाऽऽहवृद्धयवनः—

'स्थानस्थितो देवसमं प्रसूतं विज्ञं मृणीलं बहुमानदानम् ।
स्थाने द्वितीये शशिजो विधत्ते नरं सुरूपं सुभगं सुकान्तम् ।।' इति

यदि बुध दो रेखाओं से युक्त राशि में स्थित हो तो मनुष्य देवताओं के समान निर्मल, सज्जन व अति सुन्दर होता है। वह व्यक्ति स्वभाव से निपुण और मृदु, सुरूपवान् तथा बहुत मान-सम्मान पाने वाला होता है।

स्थाने तृतीयक इलापतिलोकपूज्यं
कुर्यात्सुधाकरसुतः सुभगं विधिज्ञम् ।
वाक्यं सदा गतमलं बहुपुण्यराज्यं
कान्तं भवं मनुभवं हृतवैरिपक्षम् ।।७६।।

स्थान इति। सुधाकरसुतो बुधस्तृतीयके स्थानेऽर्थात्त्रिरेखान्वययुक्ते यं भवं जातं मनुभवं मनुष्यं इलापतयो राजानो लोका जनाः, तेषां पूज्योऽर्च्यस्तम्, सुभगं सज्जनं विधिज्ञं विधानविदं सदा गतमलं निर्मलं वाक्यं वचनं बहुपुण्यराज्यं प्रभूतपुण्यराज्यं, कान्तं सुन्दरं वैरिणां शत्रूणां पक्षः समूहो हन्यते येन तथा तम् कुर्यात्। यथा च वृद्धयवनः—

'तृतीयके सोमसुतः करोति, प्रसन्नवाक्यं नृप लोकपूज्यम् ।
नरविधिज्ञं सुभगं मनोज्ञं हृतारिपक्षं बहुधर्मराज्यम् ।।' इति

यदि बुध की स्थिति तीन रेखाओं वाली राशि में हो तो मनुष्य राजसी ठाठ-बाट वाला, राजा व जनता से परम सम्मानित, सज्जन व विधान अर्थात् कानून का ज्ञाता होता है।

ऐसा व्यक्ति निष्कपट वचन बोलने वाला, बहुत पुण्य कार्य करने वाला और बड़े राज्य वाला, मनोहर शरीर वाला और शत्रुहन्ता होता है।

सौम्यः सदा विधिविदं दयितातिथिं च
शास्त्रेरतं यदि करोति चतुर्थसंस्थः ।
मान्यं स्वबान्धवजनेषु भवं सुरूपं
मेधाविनं च निरतं नियमोपवासे ।।७७।।

सौम्य इति। सौम्यो बुधश्चतुर्थसंस्थो रेखाचतुष्टययुक्तश्चेत्सदा भवं जातं विधिविद विधानज्ञं दयितातिथिमतिथिप्रियं, शास्त्रे षड्शास्त्रे वेदाङ्ग इति यावत्।

रतं निरतं, स्वबान्धवजनेषु निजसगोत्रलोकेषु मान्यं पूज्यं सुतरां रूपं सौन्दर्यं मेधाविनं धारणाबुद्धिभाजं नियमोपवासे व्रतोपवासे निरतमासक्तं करोति। तथा च यवनपरिवृढः—

'बुधश्चतुर्थे कुरुते सुरूपं प्रियातिथिं बन्धुजनेषु मान्यम्।
मेधाविनं शास्त्ररतं विधिज्ञं व्रतोपवासादिरतं सदैव॥' इति

यदि बुध चार रेखाओं से युक्त किसी राशि में स्थित हो तो मनुष्य विधिशास्त्र का जानकार, अतिथि सत्कार करने वाला, खूब शास्त्रों का अध्ययन करने वाला, बन्धुजनों द्वारा सम्मानित, सुन्दर रूप वाला, मेधावी व व्रतोपवासादि करने वाला होता है।

दाक्षायणीपतिजनिर्यदि पञ्चमस्थो
देशाधिपत्यमथ देहभृतां प्रतापम्।
कीर्तिं करोति विजयं बहुलान्नपानं
ग्रामाधिपं पुरपतिं च बलाधिनाथम्॥७८॥

दाक्षायणीति। दाक्षायणीपतिजनिर्बुधो यदि पंचमस्थः पंचरेखायुक्तः, तदा देहभृतां शरीरिणां देशो जनपदस्तस्याधिपत्यं स्वामित्वं, प्रतापं प्रभावं, कीर्तिं यशः विजयं जयं बहुलान्नपानं, प्रभूतान्नपानं ग्रामाधिपं ग्रामस्वामिनं, पुरपतिं नगरस्वामिनं, बलाधिनाथं भूमिपतिं सेनापतिं वा करोति। तथा च वृद्धयवनः—

'करोति सौम्यः खलु पंचमस्थो नृणां पुरग्रामपतिं बलानाम्।
देशाधिपत्यं प्रचुरान्नपानयशः प्रतापं विजयं सदैव॥' इति

यदि बुध जन्म के समय पांच रेखाओं से युक्त राशि में स्थित हो तो मनुष्य देशाधिप अर्थात् छोटे प्रदेश जनपदादि का अधिपति, प्रतापी एवं यशस्वी होता है। वह सदा विजयी व अन्नादि की समृद्धि से युक्त होता है। ऐसा व्यक्ति कई ग्रामों, नगरों व भूमि का मालिक होता है। अर्थात् ऐसा व्यक्ति राजतुल्य सम्पत्ति व पदवी वाला होता है।

सद्धर्मविद्याविनयैः समन्वितं
कुर्यात्कृतज्ञं निजलोकसंयुतम्।
जातं नरं नीतिपरायणं जित-
प्रत्यर्थिपक्षं यदि षष्ठगो बुधः॥७९॥

सद्धर्मेति। बुधः षड्भिः षड्रेखायुक्तश्चेत्तदा ज्ञानमुत्पन्नं नरं सत्यमनृतं धर्मः पुण्यं विद्या विद्याऽनुनयस्तैः समन्वितं युक्तं कृतज्ञमुपकारविदं निजलोके स्वीये जनैः संयुतं नीत्यां नये परायणं तत्परं जितप्रत्यर्थिपक्षं जित शत्रुपक्षं कुर्यादि विदधीत। तथा च वृद्धयवन:—

'करोति सौम्यः खलु षष्ठ सस्थो जिताग्रिपक्ष स्वजनै' समेतम्।
विद्यान्वितं नीतिपरं कृतज्ञं सद्धर्मयुक्तं विनयान्वितं च॥' इति

जन्म के समय यदि बुध छह रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य सत्य, धर्म, विद्या और विनय से युक्त होता है। वह किए गए उपकार को मानने वाला, नीतिशास्त्र का जानकार और समस्त शत्रुओं को जीतने वाला होता है।

ज्ञः सप्तमस्थः सुसमृद्धिसौख्य-
समन्वितं तीर्थपरायणं च।
स्त्र्याप्ति सुशीलं कुरुते रतेश्च
भोगस्य सौख्यं विमलं शरीरम्॥८०॥

ज्ञइति। ज्ञो बुधः सप्तमस्थः सप्तरेखायुक्तस्तदा सुसमृद्धिसौख्यसमन्वित-मतीव संपत्सौख्यसयुक्तं तीर्थपरायणं तीर्थेषु गंगद्वारः प्रभृतिश्रेष्ठेषु परायणं नरं स्त्र्याप्ति कलत्रलाभं सुशीलं सुन्दरस्वभावं रतेः सुरतस्य सम्भोगस्य परिमलस्य सौख्यं, शरीरं देहं विमलं मलरहितं स्वच्छमित्यर्थः। कुरुते विधत्त इति। तथा च वृद्धयवन:—

'कलत्रलाभं रतिभोगसौख्यं कलत्रसंस्थः प्रकरोति सौम्यः।
तीर्थाश्रयं सौख्यसमृद्धियुक्तं प्रसन्नमूर्ति मनुजं सुशीलम्॥' इति

यदि बुध सात रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य ज्ञानी, अत्यन्त सम्पत्तिशाली, सुख से युक्त तथा तीर्थ स्थानों का आश्रय लेने वाला होता है। उसे अच्छी स्त्री की प्राप्ति होती है। ऐसे व्यक्ति का स्वभाव सुन्दर होता है तथा उसे स्त्री सुख एवं चन्दनादि सुगन्धित द्रव्यों की प्राप्ति होती है। उसका शरीर सुन्दर व स्वच्छ होता है।

यद्यष्टमस्थोऽमृतरश्मिसम्भवः
साच्छादनं वित्तचतुष्पदान्वितम्।
पूज्यं च सर्वत्र सुताङ्गनोद्भव-
सौख्यप्रयुक्तं महिमाभिधान्वितम्॥८१॥

यदीति। यदि चेदमृतरश्मिसम्भवो बुधोऽष्टमोऽष्टभी रेखाभिर्युक्तो भवेत्तदा सहाच्छादनैः वर्तमानस्तम् सुन्दरवस्त्रयुक्तं, वित्तेन धनैः चतुष्पदैः पशुभिरन्वितं युक्तं, सर्वत्र सर्वस्मिन् स्थाने पूज्यं मान्यं सुतः पुत्रोऽगना स्त्री ताभ्यामुद्भवमुत्पन्नं सौख्यं तेन युक्तं महिम्ना महता भावेनान्वितं युक्तं कुरुत इति शेषः। तथा च वृद्धयवनः—

'चतुष्पदाच्छादनवित्तयुक्तं नरं प्रसूतं शशिजोऽष्टमस्थः।
कलत्रपुत्रोद्भवसौख्ययुक्तं सर्वपूज्यं महिमासमेतम्॥' इति

जन्म समय यदि बुध आठ रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य वस्त्रों से सुसज्जित, धन-धान्य से युक्त तथा चतुष्पदों से युक्त होता है। वह सर्वत्र सम्मान पाने वाला, पुत्रों व स्त्रियों के सुख से युक्त और गौरव वाला होता है।

बुध के बिन्दुओं का फल :

शीतांशुजातः प्रथमे सदायो
मायाप्रयुक्तं विनयोज्झितं च।
कुर्यात्कुशीलं रहितं धनेन
दानेन नित्यं पिशुनं सुपापम्॥८२॥

शीतांशुजात इति। शीतांशुजातो बुधः प्रथमे आद्यस्थाने सह दायेन बिन्दुना वर्तमानस्तदा मायया कपटेन प्रयुक्तं सहितं विनयेनानुनयेनोज्झितं वर्जितं कुशीलं कुत्सितं शीलं स्वभावं नित्यं सदा धनेन द्रव्येण दानेन त्यागेन रहितं वर्जितं पिशुनं खलं सुपापमतिपापं कुर्याद् विदध्यात्। यथा च वृद्धयवनः—

'बिन्दुस्थितः सोमसुतोऽतिपापं करोति मर्त्यं प्रथमे खलं च।
मायान्वितं दानधर्मैर्वियुक्तं सदा कुशीलं विनयेन हीनम्॥' इति

यदि बुध एक बिन्दु से युक्त राशि में स्थित हो तो मनुष्य कपटी, शिक्षा से रहित तथा दुष्ट स्वभाव वाला होता है। वह धन व दान से रहित, दुर्जन तथा अति पापी होता है। वृद्ध यवन के मतानुसार ऐसा व्यक्ति उक्त दुर्गुणों के अतिरिक्त दुश्चरित्र एवं ढोंगी होता है।

वैरं स्वलोकैः सह भूरिदुःखं
रोगैरनेकैः सहितं कृतघ्नम्।

सूते मनुष्यं कठिनं पराभि-
मूतं द्वितीये शिशिरांशुसूनुः ॥८३॥

वैरमिति। शिशिरांशुसूनुर्बुधो द्वितीये रेखाद्वययुक्तश्चेत्तदा मनुष्यं मनुजं स्वलोकैर्निजजनैः सह समं वैरं विरोधं, भूरिदुःखं बहुदुःखमनेकैर्विविधै रोगैः सहितं कृतघ्नमुपकारिजनापकारिणं कठिनं क्रूरं परैः शत्रुभिरभिभूतं किं कर्त्तव्यमर्थात्कर्त्तव्याकर्त्तव्य ज्ञानशून्यमित्यर्थः। सूते जनयतीति। तथा च वृद्धयवन—

'प्रभूतदुःखं स्वजनैर्विरोधं पराभिभूतं कठिनं कृतघ्नम्।
द्वितीयसस्थो हिमरश्मिपुत्रो नरं प्रसूते बहुरोगयुक्तम् ॥' इति

यदि बुध दो बिन्दुओं से युक्त राशि में स्थित हो तो मनुष्य अपने लोगों से वैर भाव रखने वाला, अत्यन्त दुःखी तथा कई प्रकार के रोगों से पीड़ित होता है। वह कृतघ्न, क्रूर स्वभाव वाला तथा अपने शत्रुओं से सदा भयभीत रहने वाला होता है।

कुर्य्यान्नराणां मलदिग्धविग्रहं
तेजोविहीनं नरपालपीडितम्।
नाशं युवत्यङ्गभुवां कुचीवरं
नित्यं तुषारांशुसुतस्तृतीयगः ॥८४॥

कुर्यादिति। तुषारांशुसुतो बुधस्तृतीयगो बिन्दुत्रययुक्तस्तदा नराणां मलं पापं तेन दिग्धो लिप्तो विग्रहः शरीरं यस्य तथोक्तं तम्। तेजसा वीर्येण विहीनं रहितं नरपालेन राज्ञा पीडितं दुःखितं युवतिः स्त्री अंगभुवः पुत्रास्तेषां नाशं क्षयं नित्यं सदा कुचीवरं कुत्सितवस्त्रं कुर्याद् विदध्यात्। तथा च वृद्धयवनः—

'तृतीयगः पुत्रकलत्रनाशं करोति सौम्यः मलतं च दुर्बलम्।
तेजोविहीनं मलदिग्धदेहं सम्पीडितं भूपतिना सदैव ॥' इति

जन्म समय यदि बुध तीन बिन्दुओं से युक्त हो तो मनुष्य मैला-कुचैला रहने वाला, तेज से रहित तथा राजा से पीड़ित होने वाला होता है।

उसके स्त्री पुत्रादिकों का नाश हो जाता है तथा वह सदा गन्दे वस्त्र पहनने वाला होता है।

चतुर्थयातो यदि रौहिणेयः
प्रसूतिजं भूरि करोति मर्त्यम्।

सेवासमेतं गतिशीलसौख्यं
जातं विमुक्तं विनयेन नित्यम् ।।८५।।

चतुर्थेति। यदि रौहिणेयो बुधश्चतुर्थयातो बिन्दुचतुष्टययुक्तस्तदा जातमुत्पन्नं मर्त्यं मनुष्यं भूरि बहु प्रसूतिजं दुःखं सेवासमेतं सेवावृत्यायुक्तं गत-शीलसौख्यं शुद्धचरितेन सौख्येन च रहितं नित्यं सर्वदा विनयेन शिक्षया, विमुक्तं वर्जितं करोति विदधाति। यथाऽस्मिन् वृद्धयवनः—

'चतुर्थगः शीतकरस्य पुत्रः प्रभूतदुःखं कुरुते मनुष्यम्।
शीलेन मुक्तं विनयेन हीनं सेवात्मकं सौख्यविवर्जितं च ।।' इति

यदि बुध चार बिन्दुओं से युक्त हो तो मनुष्य बहुत दुःखी रहने वाला, दूसरों के अधीन रहकर सदा सेवा करने वाला तथा दुश्चरित्र होता है। ऐसा व्यक्ति सुख से रहित जीवन बिताने वाला तथा दुर्विनीत होता है।

सौम्यः पञ्चम आमयाभिभूतं
नष्टार्थं च परैर्जितं कुशीलम्।
सौख्योनं गुरुदेवताविमुक्तं
पुत्रोनं परतर्ककं करोति ।।८६।।

सौम्य इति त्रिष्टुभजात्याह। सौम्यो बुधः पंचमे पंचबिन्दुयुक्तश्चेत्सदा, आमयो रोगस्तेनाभिभूतं पीडितो ग्रस्तम्। नष्टार्थं विनष्टधनं, परैः शत्रुभिर्जितं कुशीलं दुष्टस्वभावं सौख्येनोनं रहितं गुरुराचार्यैः देवतादेवास्तैर्विमुक्तं रहितं पुत्रोनं पुत्ररहितं परतर्ककं परेभ्योऽन्येभ्यो याचनाकुलम् करोति विदधाति। तथा च वृद्धयवनः—

'नष्टात्मजं नष्टधनं कुशीलं रोगाभिभूतं परतर्ककं च।
परैर्जितं शत्रुगुरुप्रमुक्तं करोत्यसौख्यं खलु पंचमस्थः ।।' इति

यदि बुध पांच बिन्दुओं से युक्त हो तो मनुष्य रोग से पीड़ित रहने वाला तथा धन गंवाने वाला होता है। वह सदा शत्रुओं से पराजित होता है। उसका स्वभाव दुष्ट होता है और वह सुख से रहित जीवन व्यतीत करता है। वह गुरुओं व देवताओं से विमुख रहने वाला पुत्रों से रहित तथा सदा दूसरों से याचना करने वाला होता है।

षष्ठस्थोऽरिजनैः पराजितं च
विद्योनं विनयाभिधेन हीनम् ।
शीतांशोस्तनुसम्भवो विहीनं
द्रव्येणाङ्गभृतं करोति नित्यम् ।।८७।।

षष्ठस्थ इति । शीतांशुश्चन्द्रस्तस्य तनुसम्भवोऽङ्गजो बुध इत्यर्थः । षष्ठस्थो षड्बिन्दुयुक्तश्चेत्तदाऽङ्गभृतं देहिनं मनुष्यमिति यावत् । अरिजनैः शत्रुभिः पराजितं पराभूतं विद्योनं विद्यावर्जितं मूर्खमित्यर्थः । विनयेनानुनयेन हीनं रहितं द्रव्येण धनेन विहीनं रहितं करोति विदधाति च वृद्धवचनः—

'षष्ठे स्थितः शीतकरस्य पुत्रो नरं प्रभूतं धनवर्जितं च ।
पराजितं शत्रुजनेन नित्यं विद्याविहीनं विनयेन मुक्तम् ।।' इति

यदि बुध छह बिन्दुओं से युक्त हो तो मनुष्य शत्रुजनों से पराजित होने वाला, मूर्ख तथा दुराग्रही (अविनीत) होता है। ऐसा व्यक्ति सदा धन से रहित तथा विद्या से रहित होता है।

तारायास्तनुजस्तु सप्तमस्थो
भोगोनं परसुन्दरीसुरक्तम् ।
नित्यं दीनतरं कुबुद्धिभाजं
कुर्याच्चेत्सजनापवादमत्र ।।८८।।

ताराया इति । तारायाः रोहिण्यास्तनुजः पुत्रोऽर्थाद् बुधश्चेद्यदि सप्तमस्थः सप्तबिन्दुयुक्तस्तदा भोगेन सुखेनोनं वर्जितं, परस्यान्यस्य सुन्दरी नारी तस्यां सुरक्तमासक्तं नित्यं सर्वदा दीनतरमतिशयदरिद्रं कुबुद्धिभाजं निन्दितबुद्धिमन्तं सजनापवादं लोकापवादसहितं कुर्यात् । तथा च वृद्धवचनः—

कलत्रगः सोमसुतो विधत्ते भोगेन हीनं परदाररक्तम् ।
जनापवादेन युतं सुदीनं कुबुद्धिभाजं सततं मनुष्यम् ।।' इति

यदि बुध सात बिन्दुओं से युक्त हो तो सब सुखों से रहित, दूसरे की स्त्री में आसक्त तथा अत्यन्त दरिद्र होता है। उसकी बुद्धि दुष्ट विचारों से युक्त होती है और वह संसार में सदा बदनाम होता है।

कुर्यादष्टमगो रजःप्रपुष्टं
क्रूरंचेद् गणिकाजनानुरक्तम् ।
निर्मुक्तं प्रभया पणेन सक्तं
हीनं सत्यधनेन सोमजातः ।।८९।।

कुर्यादिति । चेद्यदि सोमजातो बुधोऽष्टमगोऽष्टबिन्दुयुक्तस्तदा रजः प्रपुष्टमधिकरजोयुक्तं क्रूरं कठोरस्वभावं गणिकाजनानुरक्तं वेश्यासक्तं प्रभया दीप्त्या निर्मुक्तं हीनं पणेन द्यूतेन सक्तं लीनं सत्येनर्तेन धनेन द्रव्येण हीनं रहितं कुर्यात् । यथाऽऽह वृद्धयवनः—

'द्यूतप्रसक्तं गणिकानुरक्तं रजोऽधिकं सत्यधनेन हीनम् ।
सौम्योऽष्टमस्थः प्रभया विहीनं करोति मर्त्यं सततं नृशंसम् ॥' इति

यदि बुध आठ बिन्दुओं से युक्त हो तो मनुष्य अधिक रजोगुणी अर्थात् काम क्रोधादि से युक्त तथा कठोर स्वभाव वाला होता है। ऐसे व्यक्ति वेश्याओं में सदा अनुरक्त रहने वाले, शान्ति से रहित तथा जुए में आसक्त होते हैं। इसी कारण ये लोग सत्य और धन से वर्जित होते हैं।

बृहस्पति की रेखाओं का फल :

रेखास्थः प्रथमे गुर्वर्बिधत्ते
वित्ताढ्यं सुकृतप्रियं प्रधानम् ।
संयुक्तं विनयेन विप्रधर्म्मा-
भीष्टं सञ्जनयेत्सुबुद्धिभाजम् ॥६०॥

रेखास्थ इति । गुरुर्बृहस्पतिः प्रथमे भावस्थाने रेखास्थो रेखायुक्तोऽर्थादेक-रेखायुक्त इत्यर्थः । चेत्तदा नरमिति शेषः । वित्तेन धनेनाढ्यं युक्तं सुकृतप्रियं, धर्मप्रियं प्रधानं मुख्यं, विनयेनसंयुक्तं, विप्रधर्माभीष्टं ब्राह्मणधर्मप्रियं सुबुद्धिभाजं सुतरां मतिमन्तं सञ्जनयेदुत्पादयेत् । यथाऽऽह वृद्धयवनः—

'रेखागतो देवगुरुप्रधानं नरं विधत्ते विनयेन युक्तम् ।
आद्ये महाबुद्धिधनान्वितं च धर्मप्रियं ब्राह्मणवल्लभं च ॥' इति

यदि बृहस्पति एक रेखा से युक्त हो तो मनुष्य धनवान् और धर्मप्रिय होता है। वह अपने समाज में प्रधान और विनीत होता है। उसकी धर्म और ब्राह्मणों में प्रीति होती है और उसकी बुद्धि उत्तम होती है।

वागीशः सुभगं नरेशपूज्यं
शेमुष्या सहितं धनात्मजाभ्याम् ।

सौख्याढ्यं प्रथितं जने द्वितीये
कुर्यान्मानवमुद्भवं मनोज्ञम् ।।९१।।

वागीश इति । वागीशो गुरुर्यदि द्वितीये रेखाद्वययुक्तश्चेत्तदोद्भवमुत्पन्नं मानवं मनुष्यं सुभगं सज्जनं, नरेशानां राज्ञां पूज्यं माननीयं, शेमुष्या बुद्ध्या सहितं, धनेनात्मजेन पुत्रेण च युक्तं, सौख्येन च युक्तं जने लोके प्रसिद्धं, मनोज्ञं सुन्दरं कुर्यात् । यथा वृद्धयवनमतम्—

द्वितीयगः सौख्ययुतं प्रसूतं नरं सुरेज्यः सुभगं मनोज्ञम् ।
वित्तेन पुत्रेण धिया समेतं नरेन्द्रपूज्यं प्रथितं च लोके ।।' इति

यदि बृहस्पति दो रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य सज्जन, राजाओं द्वारा सम्मानित होने वाला, बुद्धिमान्, धनी एवं सुखी होता है। ऐसा व्यक्ति लोगों में प्रसिद्ध और सुन्दर शरीर वाला होता है।

सद्रव्यं प्रमुखं तृतीयसंस्थो
भापेशो बहुपुत्रपौत्रभाजम् ।
मुख्यं स्वीयकुले पदेन युक्तं
मर्त्यं प्राणिहितेषु संयुतं च ।।९२।।

सद्रव्यमिति । भापेशो गुरुस्तृतीयसंस्थो रेखात्रययुक्तस्तदा मर्त्यं मनुष्यं सद्रव्यं सह द्रव्येण धनेन प्रमुखं प्रधानं, बहुपौत्रभाजं प्रभूतपुत्रपौत्रयुक्तं स्वीयकुले निजवंशे, मुख्यं प्रधानं पदेन चिन्हेन युक्तं प्राणिहितेषु जीवहितेषु संयुक्तं कुर्यादिति । तथा च वृद्धयवनः—

'तृतीयसंस्थः कुरुते प्रधानं सुरेज्यमंत्री बहुपुत्रपौत्रम् ।
पदान्वितं जन्तुहितेषु युक्तं कुलप्रधानं मनुजं धनाढ्यम् ।।' इति

यदि बृहस्पति तीन रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य खूब धन वाला, अपने समुदाय में प्रधान तथा बहुत से पुत्र-पौत्रादिकों से युक्त होता है। वह अपने कुल में प्रधान, उच्च पद पर आसीन होने वाला तथा जीव मात्र के हित में तत्पर होता है।

प्राज्यद्रव्ययुतं चतुर्थयातो
जीवो बोधवतां सुसम्मतं च ।
कुर्यात्प्राप्यमृतं विवेकिनं चेत्
सुश्रेयोद्रविणादि चित्तयुक्तम् ।।९३।।

प्राज्येति। जीवो गुरुश्चतुर्थयातो रेखाचतुष्टययुक्तश्चेत्तदा प्राणभृतं शरीरिणं मनुष्यमिति यावत्। प्राज्येन बहुना धनेन युक्तं, बोधवतां ज्ञानिनां सुसम्मतं मतिमान्यं विवेकः पृथगात्मता यस्यास्तीति तथोक्तं तम् सुश्रेयसातिपुण्येन द्रविणादिना धनादिना चिता बुद्ध्या च प्रयुक्तं सहितं कुर्यात्। तथा च वृद्धयवनः—

'सुपुण्यवित्तादि सुबुद्धि युक्तं करोति मर्त्यं त्रिदिवेशमंत्री।
चतुर्थसंस्थः प्रचुरं धनान्वितं विवेकिनं बोधवतां च सम्मतम्॥' इति

यदि बृहस्पति चार रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य अत्यन्त धन-सम्पति से युक्त, ज्ञानी लोगों के मध्य सम्मान पाने वाला, अत्यन्त विवेकी, धार्मिक, उत्तम धन एवं उत्तम बुद्धि से युक्त होता है।

नित्यं प्रीतिकरं मनूद्भवानां
युक्तं देहभवेन पञ्चमस्थः।
वागीशः सुमतेरभीप्सितं च
सच्छीलं बहुना वृषेण युक्तम्॥९४॥

नित्यमिति। वागीशो गुरुः पंचमस्थः पंचभी रेखाभिर्युक्तस्तदा मनूद्भवानां मनुष्याणां नित्यं प्रीतिकरं स्नेहकरं देहभवने पुत्रेण युक्तं सुमतेः सुन्दर-बुद्ध्याभीष्टं प्रियं सच्छीलं प्रशस्तस्वभावं बहुना वृषेण धर्मेण युक्तं कुर्यादिति शेषः। तथा च वृद्धयवनः—

'करोति जीवः खलु पंचमस्थो नरं नितान्तं सुमतेरभीष्टम्।
पुत्रान्वितं प्रीतिकरं नराणां सदा सुशीलं बहुधर्मयुक्तम्॥' इति

यदि बृहस्पति पांच रेखाओं से युक्त हो तो व्यक्ति स्नेहिल स्वभाव वाला, पुत्रों से युक्त तथा सुबुद्धि होता है। उसका स्वभाव उत्तम और धर्म में रति रखने वाला होता है।

षष्ठस्थः प्रथितं प्रशान्तवैरं
हृद्यं देवगुरुर्हतारिपक्षम्।
जातञ्चेन्नियतं करोति पूज्यं
शिष्टं सुप्रणतं सदा गुरूणाम्॥९५॥

षष्ठस्थ इति। देवगुरुर्बृहस्पतिः षष्ठस्थः षड्रेखायुक्तस्तदा जातमुत्पन्नं नरमिति यावत् कठिनं प्रशान्तवैरं विरोधरहितं हृद्यं प्रियं नित्यं हतारिपक्षं हतशत्रु

समूहं, पूज्यं मान्यं शिष्टं धीरं, शान्तं वा सदा गुरूणामाचार्याणां सुप्रणतं विनम्रं च करोति। तथा च वृद्धयवनः—

'हतारिपक्षं नियतं प्रसूतेः नरं गुरेज्य ख्यातिपक्षमंस्थ ।
शिष्टं सुपूज्यं प्रणतं गुरूणां, प्रशान्तवैरं प्रथितं प्रियं च ॥' इति

यदि बृहस्पति छह रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य लोगों में खूब प्रसिद्ध अर्थात् लोकप्रिय, वैर भावना से रहित, सब के साथ मित्रता-पूर्ण व्यवहार रखने वाला होता है। वह देवताओं और गुरुजनों का प्रीति पात्र तथा अपने शत्रुओं का नाश करने वाला होता है। ऐसा व्यक्ति सम्मानित जीवन व्यतीत करने वाला, शान्त स्वभाव वाला तथा गुरुजनों का समादर करने वाला विनीत होता है।

पूज्यः सप्तमगः करोत्यभीष्ट-
नारीणां रतिसंप्रहृष्टमत्र ।
हृद्याढ्यं गुरुदानवारिभक्तं
युक्तं स्वीयजनैः सुभाषकं च ॥९६॥

पूज्य इति । पूज्यो गुरुः सप्तमस्थः सप्तरेखायुक्तस्तदाऽभीष्टनारीणां प्रियस्त्रीणां रती सुरते संप्रहृष्टं सम्यक् प्रमुदितं हृद्याढ्यं प्रियजनयुक्तं गुरुराचार्यो दानवारयो देवास्तेषां भक्तं सेवकं स्वीयजनैः निजलोकैर्युक्तं सुभाषकं सुन्दरवचन-भाषिणं करोति विदधाति जातमिति शेषः। यथा च वृद्धयवनः—

'अभीष्टनारीरतिसंप्रहृष्टं करोति मर्त्यं सततं सुरेज्यः ।
प्रियान्वितं देवगुरुप्रभक्तं सुभाषकं च स्वजनैः समेतम् ॥' इति

यदि बृहस्पति सात रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य सदा प्रिय स्त्रियों के सम्पर्क में रहने वाला अतः अत्यन्त प्रसन्न, प्रियजनों से युक्त गुरुओं व देवताओं का भक्त, अपने लोगों से युक्त अर्थात् परिजनों से युक्त और सुन्दर वाक्शक्ति से परिपूर्ण होता है।

वाङ्नाथोऽष्टमगः प्रियातिथिं च
भूपेन्द्रं बहुशास्त्रलब्धमेव ।
दक्षं सर्वकलासु चेद्विदग्धं
संयुक्तं किल वीर्यविक्रमाभ्याम् ॥९७॥

वागिति। वाङ्नाथो गुरुरष्टमस्योऽष्टरेखायुक्तस्तदा मनुष्यमिति शेषः। प्रियातिथिमतिथिजनप्रियं भूपानां नरेशानामिन्द्रो राजा तथोक्तं तम्। सम्राजमित्यर्थः। बहूनि प्रभूतानि शास्त्राणि शिक्षादीनि लब्धं येन तं तथोक्तम्। समस्तासु कलासु पक्षं चतुरं विदग्धं पण्डितं वीर्येण बलेन विक्रमेणातिपराक्रमेण च संयुक्तं कुर्यात्। तथा च वृद्धवचनः—

'जीवोऽष्टमस्थः कुरुते विदग्धं प्रियातिथिं सर्वकलासुदक्षम्।
नरं नृपेन्द्रं बहुशास्त्रलब्धं पराक्रमं प्राणसमन्वितं च॥' इति

यदि बृहस्पति आठ रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य अतीथि सेवा करने वाला, पृथ्वी का शासक अर्थात् सम्राट, बहुत से शास्त्रों का अध्ययन करने वाला तथा उनमें पारंगत होता है। वह अनेक कलाओं का ज्ञाता, पण्डित अर्थात् विद्वान् और बल पराक्रम से युक्त होता है।

बृहस्पति के बिन्दुओं का फल :

अक्षस्थः प्रचुरप्रसूतिजाढ्य-
माद्ये वीतकृपं नरं कृतघ्नम्।
सत्योनं मलिनं सदा स्वभावा-
ल्लुब्धं घातुकमङ्गिरःकुमारः॥६८॥

अक्षस्थ इति। अंगिरः कुमारो बृहस्पतिः प्रथमस्थाने आद्यस्थानेऽक्षस्थो बिन्दुयुक्तस्थदिकबिन्दुयुक्तश्चेत्तदा भवमुत्पन्नं नरं प्रचुरं बहु प्रसूतिजं रोगस्तेनाढ्यं युक्तं, वीतकृपं निर्दयं, कृतघ्नमुपकारिजनापकारकं, सत्योनं सत्यवचनविहीनं करोतीत्यभिप्रायः। मलिनं मलदूषितं, स्वभावान्निसर्गाद् लुब्धमभिलाषुकं घातुकं नृशंसं करोतीति शेषः। यथाऽत्र वृद्धवचनः—

'बिन्दुस्थितो देवगुरुः प्रसूते नरं नृशंसं बहुदुःखयुक्तम्।
लुब्धं कृतघ्नं मलिनं स्वभावाद्विहीनसत्यं कृपया विहीनम्॥ इति

यदि बृहस्पति एक बिन्दु से युक्त राशि में हो तो मनुष्य कई प्रकार के रोगों से पीड़ित, निर्दय तथा अकृतज्ञ होता है। वह सदा झूठ बोलने वाला, गन्दा रहने वाला, स्वभाव से लोभी, तथा अत्यन्त नृशंस स्वभाव वाला होता है। अर्थात् दुःखों से युक्त और दया रहित कुकृत्य करने वाला होता है।

आभीलं वधिरोद्भवं प्रभूतं
त्रासं तस्करभूमिनायकाभ्याम्।

अङ्गेऽरिष्टकमामयं नृसञ्ज्ञा-
न्मर्त्यानां धिषणो द्वितीयसंस्थः ॥९९॥

आमीलमिति। धिषणो गुरुर्द्वितीयसंस्थो बिन्दुद्वययुक्तश्चेत्तदा मर्त्यानां मनुष्याणां प्रभूतं बहु बधिरोद्भवं बधिरजन्यं, आमीलं रोगम्, तस्करश्चौरो भूमिनायको राजा ताभ्यां त्रासं भयं नृसंज्ञात्पुरुषादङ्गे शरीरेऽरिष्टमामयं रोगं कुर्यादिति शेषः। यथाऽऽह वृद्धयवनः—

'द्वितीयगो भूमिपतस्करस्य भयं सुरेज्यः कुरुते नराणाम्।
नृसंज्ञतो रोगमरिष्टमंगे प्रभूतदुःखं बधिरोद्भवं च॥' इति

यदि बृहस्पति दो बिन्दुओं से युक्त हो तो मनुष्य बहरा होता है तथा साथ ही बहरेपन से उत्पन्न होने वाले अनेक दोषों से युक्त होता है। उसका स्वभाव चोरी करने वाला अतः सदा राजपक्ष से भयभीत रहने वाला होता है। पुरुषों द्वारा उसके शरीर को कष्ट पहुंचाया जाता है तथा दूसरे पुरुषों के कारण उसके शरीर में कई रोगों का संक्रमण हो जाया करता है।

गीर्वाणेशगुरुस्तृतीयसंस्थो
दौर्भाग्यप्रयुतं जनं प्रजातम्।
संरक्तं परकान्तया कृतघ्न-
मश्रान्तं कुरुते धनेन हीनम् ॥१००॥

गीर्वाणेति। गीर्वाणाः देवास्तेषामीशः स्वामीन्द्रस्तस्य गुरुर्बृहस्पतिः तृतीयसंस्थो बिन्दुत्रययुक्तश्चेत्तदा, प्रजातं जनं मनुष्यं दौर्भाग्यप्रयुतं भाग्यहीनं दुष्टभाग्यं वा, परकान्तया परस्त्रिया संरक्तमासक्तं कृतघ्नमुपकारिजनापकारकमश्रान्तं नित्यं धनेन द्रव्येण हीनं रहितं कुर्यादिति शेषः। यथाऽऽह वृद्धयवनः—

'तृतीयसंस्थस्त्रिदशेशपूज्यो विहीनवित्तं सततं मनुष्यम्।
भवेत्कुमित्रं परदाररक्तं दौर्भाग्ययुक्तं स्वलसं कृतघ्नम्॥' इति

यदि बृहस्पति तीन बिन्दुओं से युक्त हो तो मनुष्य अत्यन्त भाग्यहीन होता है। उसका मन सदा पराई स्त्री में अनुरक्त होता है और वह कृतघ्न एवं निर्धन होता है।

वृद्धयवन के मतानुसार वह आलसी तथा मित्रता के अयोग्य अर्थात् कुमित्र भी होता है।

वाचामधीशे जनने चतुर्यंगे
प्राज्यारिगम्यः स विखिन्नमानसः।
जन्तोः समाधिः कुटिलोविचर्चिका-
सम्पोड्यमानो विभवैर्विवर्जितः ॥१०१॥

वाचामिति। यस्य जन्तोः शरीरिणो मनुष्यस्येति यावत्। जनने जन्मनि, वाचामधीशे गुरौ, चतुर्यंगे बिन्दुचतुष्टययुक्ते तदा स प्राज्यारिगम्यो बहुशत्रुप्राप्यो बहुशत्रुपक्षइत्यर्थः। विखिन्नमानसः विशेषेण खेदयुक्तं मानसं हृदयं यस्य तथोक्तः सः। समाधिरतिशयमनोव्यथा, कुटिलो वक्रस्वभावो विचर्चिकया पाम्ना दद्रु-प्रभृतिना रोगेण सम्पीड्यमानोऽतिदुःखितो विभवैर्धनैर्विवर्जितो रहितः, स्यादिति शेषः। यथा भणति वृद्धयवनः—

'चतुर्यंगे देवगुरौ प्रसूतौ विखिन्नचित्तो बहुशत्रुगम्यः।
विचर्चिकाद्यैः परिपीडितश्च नरः समाधिः कुटिलोऽधमश्च ॥' इति

यदि बृहस्पति चार बिन्दुओं से युक्त हो तो उसके बहुत से शत्रु होते हैं। उसका मन सदा उद्विग्न रहता है तथा वह मानसिक रोगी होता है। उसका स्वभाव कुटिल और शरीर खुजली जैसे रोगों से पीड़ित रहता है। ऐसे व्यक्ति के पास धनादि वैभवों का अभाव बना रहता है।

चौर्यं सञ्जनयेत्प्रभूतशोक-
संयुक्तं परकामिनीसुरक्तम्।
पाम्ना जूर्तिरुजा प्रपीडितं चे-
त्सूरिः पञ्चमगः सुकष्टयुक्तम्॥१०२॥

चौर्यमिति। सूरिर्गुरुः पंचमगः पंचबिन्दुयुक्तश्चेत्तदा, चौर्यं चौरस्य भावस्तथोक्तं, प्रभूतेन बहुना, शोकेन संयुक्तं, परकामिनीसुरक्तं परदारारक्तं पाम्ना कण्डूदद्रुप्रभृति त्वग्रोगेण, जूर्तिरुजा ज्वरेण च प्रपीडितं दुःखितं, सुकष्टयुक्त-मतिकष्टेनसहितं सञ्जनयेदुत्पादयेत्। यथाऽत्र वृद्धयवनः—

'पामाज्वरार्तं परदाररक्तं नरं प्रसूते सुरराजपूज्यः।
प्रभूतशोकेन युतं सुपापं चौर्यं महाकष्टसमन्वितं च ॥' इति

यदि बृहस्पति पांच बिन्दुओं से युक्त हो तो चोरी करने वाला तथा अनेक प्रकार के शोकों से संतप्त रहने वाला होता है। वह पराई

स्त्री में अनुरक्त और खुजली से पीड़ित होता है। वह कष्टपूर्ण जीवन बिताता है तथा बार-बार बुखार से पीड़ित होता है।

कुर्य्यात्क्षुद्रसमानरूपमार्य्यो
षष्ठेऽनन्तशुचं वृषक्रियोनम्।
पुत्रस्त्रीरहितं प्रवासशीलं
चक्षूरोगनिपीडितं सदैव ॥१०३॥

कुर्यादिति। आर्यो गुरुः षष्ठे षड्बिन्दुयुक्तश्चेत्तदा क्षुद्रोदरिद्र इव रूपं यस्य तथोक्तं तम्। अनन्तशुचमधिकशोकयुक्तं, वृषक्रिया धर्मक्रिया तयोनं रहितं, पुत्राः स्त्री गृहिणी आभीरहितं विहीनं प्रवासशीलं विदेशवासस्वभावं, सदैव नित्यमेव, चक्षूरोगनिपीडितं नेत्ररोगिणं कुर्यात्। तथा च वृद्धयवनः—

'षष्ठे सुरेज्यः कुरुतेऽक्षिरोगसम्पीडितं क्षुद्रसमानरूपम्।
प्रवासशीलं सुतदारहीनं धर्मक्रियाहीनमनन्तशोकम्॥' इति

यदि बृहस्पति छह बिन्दुओं से युक्त हो तो वह आकृति से बहुत दीन हीन दिखने वाला, अत्यन्त शोक से युक्त, धर्म क्रियाओं से रहित, पुत्र व स्त्री से रहित तथा विदेश में जीवन बिताने वाला होता है। अर्थात् वह निश्चिन्त जीवन नहीं बिताता। बार-बार घर से बाहर रहता है तथा चक्षु रोगी होता है।

गीर्वाणनायकगुरुर्यदि सप्तमस्थो
व्यापादगुल्मसहितं जनितं मनुष्यम्।
हिक्काज्वरार्त्तियुतमीश्वरमानमुक्तं
जन्तोर्जनौ कफमुखं प्रचुरं करोति ॥१०४॥

गीर्वाणेति। जन्तोर्जन्मिनो, जनौ जन्मसमये गीर्वाणनायकः गुरुः बृहस्पतिः, सप्तमस्थः सप्तबिन्दुयुक्तश्चेत्तदा, जनितं मनुष्यं व्यापादो द्रोहचिन्तनं गुल्मः प्लीहरोगः आभ्यां सहितं युक्तं, हिक्काज्वरं र्त्तिः आर्त्तिः पीडा, आभिर्युक्तं, ईश्वरेण प्रभुणा स्वामिनेति भावः। दत्तं यन्मानं सम्मानं, तेन मुक्तं रहितं, प्रचुरं बहुकफमुखं श्लेष्मादि करोति विदधाति। यथाऽस्मिन् वृद्धयवनः—

'करोति जीवः खलु पंचमस्थो नरं कफादि प्रचुरं सदैव।
हिक्काज्वरार्तिः प्रभुमानहीनं व्यापादगुल्मस्य परं च कष्टम्॥' इति

यदि बृहस्पति सात बिन्दुओं से युक्त हो तो मनुष्य सदा द्रोह के विषय में विचार करता रहता है। उसे प्लीहा, बुखार तथा हिचकी आदि रोग होते रहते हैं। वह अपने स्वामी से सदा अपमानित होने वाला, कफ की वृद्धि और तज्जनित रोगों से पीड़ित रहता है।

शक्राच्यः कुटिलं सदातिगर्वात्
पृथ्वीनाथभयं गतप्रतापम्।
मध्ये स्वीयकुलस्य चाष्टमस्थो
मर्त्यानां विकृतं करोत्यजस्रम् ॥१०५॥

शक्राच्यं इति। शक्राच्यों गुरुरष्टमस्थोऽष्टबिन्दुयुक्तस्तदा, मर्त्यानां मनुष्याणां सदा नित्यमतिगर्वाभिमानात् कुटिलं वक्रं, पृथ्वीनाथो राजा तस्माद् भयं दरं, स्वीयकुलस्य निजवंशस्य, मध्ये गतप्रतापं प्रतापरहितं, अजस्रं नित्यं विकृतं रोगिणं करोति विदधाति। तथा च वृद्धयवनः—

'स्थानेऽष्टमे देवगुरुः प्रसूते सदातिगर्वात्कुटिलं मनुष्यम्।
भयं नृपाणां स्वकुलस्य मध्ये गतप्रतापं विकृतं सदैव ॥' इति

यदि बृहस्पति आठ बिन्दुओं से युक्त हो तो वह अत्यन्त अभिमान के कारण सदा कुटिलगामी होता है। उसे राजपक्ष से भय होता है तथा वह अपने कुल में अत्यन्त निःसत्त्व होता है। उसे सदा रोग सताते रहते हैं। अतः शरीर व मन दोनों से विकृत होता है।

शुक्र की रेखाओं का फल :

रेखागः सुभगं, जितेन्द्रियं च
सौम्यं दानपरं जनं कृतज्ञम्।
आद्यं दैत्यगुरुर्वृषानुरक्तं
सच्छीलं बहुलान्नपानभाजम् ॥१०६॥

रेखाग इति। दैत्यगुरुः शुक्रः रेखागोऽयादिकरेखायुक्तस्तदा सुभगं सुष्ठु-भगं भाग्यं माहात्म्यादि यस्य सं तथोक्तं जितेन्द्रियं, सौम्यं मनोहरं, दानपरं दान-परायणं, कृतज्ञं कृतोपकारं जानाति यस्तथोक्तस्तम्। वृषानुरक्तं धर्मानुरक्तं, सच्छीलं प्रशस्तस्वभावं, बहुलान्नपानभाजमत्यधिकान्नपानादिभिः समेतं करोतीति भावः। तथा च वृद्धयवनः—

'रेखास्थितो दैत्यगुरुः प्रसूते नरं मनोज्ञं सुभगं सुशीलम् ।
जितेन्द्रियं दानपरं कृतज्ञं धर्मानुरक्तं प्रचुरान्नपानम् ॥' इति

यदि शुक्र एक रेखा से युक्त हो तो मनुष्य ऐश्वर्यों से युक्त, अपनी इन्द्रियों को वश में रखने वाला, सुन्दर शरीर शोभायुक्त तथा दानी होता है। वह स्वभाव से कृतज्ञ, धर्मात्मा, सुशील होता है। साथ ही उसके पास अन्नादिक खाद्य पदार्थों की कभी कमी नहीं होती।

दैत्यस्त्विग् धनधान्यसंयुतं चेद्
लोकानां दयितं सुधर्म्मशीलम् ।
दीप्त्याढ्यं विनयान्वितं विधिज्ञं
कुर्य्याज्जन्मभृतं द्वितीययायी ॥१०७॥

दैत्येति । दैत्यस्त्विक् शुक्रो द्वितीययायी रेखाद्वययुक्तस्तदा जन्मभृतं प्राणिनं मनुष्यमिति यावत् । धनैर्धान्यैश्च संयुतं सहितं, लोकानां जनानां दयितं प्रियं सुधर्मशीलमतिपुण्यस्वभावं, दीप्त्या कान्त्याढ्यं युक्तं, विनयेनानुनयेनान्वितं युक्तं, विधिज्ञं विधानविदं कुर्याद् विदध्यात् । तथा च वृद्धयवनः—

'द्वितीयगः काव्यसुतः प्रसूते नरं विधिज्ञं धनधान्ययुक्तम् ।
सुधर्मशीलं विनयेन युक्तं प्रभासमेतं जनवल्लभं च ॥' इति

यदि शुक्र दो रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य खूब धन धान्य समृद्ध होता है। वह लोकप्रिय, पुण्यात्मा और सुन्दर कान्ति वाला होता है। स्वभाव से विनीत और विधि शास्त्र का जानकार अथवा तर्कपूर्ण दृष्टि वाला होता है।

मेधासंयुतमास्फुजित्तृतीय-
संस्थोऽभ्रविभूषणैरुपेतम् ।
मर्त्यं धर्म्मपरं सदा प्रगल्भं
भूदेवादितिजातिवल्लभं चेत् ॥१०८॥

मेधा संयुतमिति । आस्फुजिच्छुक्रस्तृतीयसंस्थो रेखात्रययुक्तश्चेत्तदा मर्त्यं मनुष्यं मेधया बुद्ध्या संयुतं सहितमभ्रैर्वस्त्रैर्विभूषणैराभूषणैर्युक्तं, सदा धर्मपरं धर्मपरायणं प्रगल्भं प्रतिभायुतं भूदेवा ब्राह्मणा अदितिजा देवास्तेषामतिवल्लभमतिप्रियं कुर्यादिति शेषः । यथाह वृद्धयवनः—

'तृतीयसंस्थो बहुभूषणाढ्यं नरं प्रसूते सततं प्रगल्भम्।
मेधाविनं धर्मपरं नितान्तं देवद्विजानामतिवल्लभं च ॥' इति

यदि शुक्र तीन रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य बहुत मेधावी अर्थात् ग्रहणशक्ति वाला, अनेक आभूषणों से युक्त, धर्म में रति रखने वाला, भयरहित जीवन बिताने वाला, ब्राह्मणों एवं देवताओं का भक्त होता है।

मर्त्यं करोति सुखिनं भृगुजश्चतुर्थे
वैदूर्य्यमौक्तिकफलाभिधकर्म्मलाभैः।
सन्तुष्टमानसमथो धनपानयुक्तं
सम्बोधनेन सहितं हरिचन्दनेन ॥१०९॥

मर्त्यमिति। भृगुजः शुक्रश्चतुर्थे रेखाचतुष्टययुक्तश्चेत्तदा मर्त्यं मानवं सुखिनं सुखमस्यास्तीति तम्। विदूरे भवानि वैदूर्याणि बालवायजानि वा मौक्तिकफलाभिधानानि तेषां कर्मणः क्रियायाः लाभैः प्राप्तिभिः संतुष्टमानसं संतुष्टचित्तं धनैर्द्रव्यैः ज्ञानेन वा हरेरिन्द्रस्य प्रियं चन्दनमिति मलयगिरिजं तेन च सहितं युक्तं करोति विदधाति। यथाऽऽह वृद्धयवनः—

'शुक्रश्चतुर्थे कुरुते धनाढ्यं सम्बोधनाचन्दनपानयुक्तम्।
वैदूर्यमुक्ताफलकर्मलाभैः संतुष्टचित्तं सुखिनं मनुष्यम् ॥' इति

यदि शुक्र चार रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य अत्यन्त सुखी, वैदूर्य मणि केतु का रत्न अर्थात् लहसुनिया (Cats-Eye) और मोती के व्यापार से सुखी होता है। उसके धन तथा पेय पदार्थों की कमी नहीं रहती। वह अत्यन्त ज्ञानवान् और चन्दनादि पदार्थों के सुख को भोगने वाला होता है। अर्थात् विलास सामग्री से युक्त होता है।

दैत्येज्यः परमं प्रियं त्रिलोके
मर्त्यं प्राग्रहरं चतुष्पदाढ्यम्।
सूतो पञ्चमगस्तनूजवित्त-
ज्ञानादिप्रमदाप्तिसंयुतं च ॥११०॥

दैत्येज्य इति। सूतौ जन्मनि दैत्येज्यः शुक्रः, पंचमगः पंचरेखायुक्तस्तदा मनुष्यं लोकत्रये स्वर्गमर्त्यपातालेषु परमुत्कृष्टं प्रियहृद्यं प्राग्रहरं प्रधानं चतुष्पदैः पशुभिराढ्यं तनूजः पुत्रः वित्तं धनं, ज्ञानादि सामान्यविशेषरूपबुद्धिपूर्वं प्रमदा स्त्री,

आसामाप्तिर्लब्धिस्तया संयुतं सहितं कुर्यादिति शेषः । यथा वृद्धयवनवचनमत्र—

'सुतार्थमानादिकलत्रलाभैर्युक्तं नरं दैत्यगुरुर्विधत्ते ।
चतुष्पदाढ्यं खलु पंचमस्थः प्रियं त्रिलोके परम प्रधानम् ॥' इति

यदि शुक्र पांच रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य त्रैलोक्य में विख्यात तथा त्रिलोकप्रिय होता है। वह समाज में प्रधान, पशुओं से युक्त, पुत्र, धन व स्त्रियों से समवेत और उत्कृष्ट ज्ञान वाला होता है।

षष्ठस्थितो दनुजराजगुरुर्मनुष्यं
विद्यासु निष्ठमिह भूरिवयस्यभाजम् ।
जातं करोति निखिलासु कलासु दक्षं
दारार्थलाभसहितं सुधियं सुरूपम् ॥१११॥

षष्ठस्थित इति । दनुजराजगुरुः शुक्रः षष्ठस्थितः षड्रेखायुक्तस्तदा मनुष्यं विद्यास्वष्टादशसु निष्ठं सिद्धं, भूरिवयस्यभाजं बहुमित्रयुक्तं निखिलासु सर्वासु कलासु चतुःषष्टिकलासु द्विसप्ततिमितासु वा शिल्पादिरूपासु वा दक्षं चतुरं, दाराः स्त्रियोऽर्था धनानि तेषां लाभः प्राप्तिस्तया सहितं युक्तं सुधियं पण्डितं, सुन्दरं रूपमस्येति सुरूपं करोति । तथा च वृद्धयवनः—

'शुक्रस्तु षष्ठे कुरुते मनुष्यं विद्यासु निष्ठं बहुमित्रभाजम् ।
स्त्रीवित्तलाभैः सहितं सुरूपं विचक्षणं सर्वकलासु दक्षम् ॥' इति

यदि शुक्र छह रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य को सब विद्याओं में सिद्धि प्राप्त होती है। उसके मित्रों की संख्या विशाल होती है। वह समस्त कलाओं में निष्णात, स्त्री सुख व धन सम्पत्ति से युक्त होता है। वह पण्डित और शरीर शोभ सम्पन्न होता है।

काव्यः सप्तमगः सुकुङ्कुमाद्यैः
संयुक्तं कुरुते सुसौख्यभाजम् ।
अत्यर्थं सुरतप्रगल्भमत्रा-
जस्रं भूपतिपूजया समेतम् ॥११२॥

काव्य इति । काव्यः शुक्रः सप्तमगः सप्तरेखायुक्तश्चेत्तदा सुनरं कुंकुमाद्यैः काश्मीरजन्माद्यैः संयुक्तं सहितं सुसौख्यभाजमतिसुखिनमत्यर्थमतिशयं सुरते

मैथुने प्रगल्भं धृष्टमजस्रं नित्यं भूपतिपूजया राजसम्मानेन समेतं युक्तं कुरुते विदधते। तथा च वृद्धयवनः—

'शुक्रो विधत्ते खलु सप्तमस्थो नरं नितान्तं सुरतप्रगल्भम्।
सुकुङ्कुमाद्यैः सहितं सुसौख्यं नरेन्द्रपूजासहितं सदैव॥' इति

यदि शुक्र सात रेखाओं से युक्त हो तो केशरादि मूल्यवान् द्रव्यों से युक्त, उत्तम सुखों से परिपूर्ण, स्त्री के सम्पर्क में आने पर धृष्ट होता है। वह राजा से खूब सम्मान भी प्राप्त करता है।

कुर्य्यादष्टमगः प्रभूतकीर्ति-
भाजं दैत्यपुरोहितः सदैव।
धर्माढ्यं प्रभया युतं नितान्तं
भूर्य्याप्त्या सहितं सुकर्म्मभाजम्॥११३॥

कुर्यादिति। दैत्यपुरोहितः शुक्रोऽष्टमगोऽष्टरेखायुक्तस्तदा, प्रभूत कीर्तिभाजं बहुकीर्तिमन्तं, सदैव धर्माढ्यं पुण्ययुक्तं प्रभया कान्त्या च युतं, नितान्तं निरन्तरं भूर्य्याप्त्या बहुलब्ध्या सहितं युतं सुकर्मभाजं सत्कर्मवन्तं, कुर्यादिति शेषः। यदा च वृद्धयवनः—

'स्थानेऽष्टमे दैत्यगुरुः प्रसूते नरं नितान्तं बहुलाभयुक्तम्।
प्रभासमेतं बहुकीर्तिभाजं सुकर्मिणं धर्मसमन्वितं च॥ इति

यदि शुक्र आठ रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य बहुत कीर्ति वाला तथा धर्मात्मा होता है। उसके शरीर की कान्ति उत्तम होती है तथा वह अनेक प्रकार के लाभों से युक्त होता है। उसके क्रिया-कलाप भी सदा उत्तम होते हैं।

शुक्र के बिन्दुओं का फल :

दैत्यार्चितः करणगः प्रथमे प्रकुर्य्याद्
भूर्य्यामयेन सहितं जनितं सपापम्।
आत्मीयबान्धवजनैरिह सज्जनैश्च
हीनं सुतार्थरहितं नरपाभिभूतम्॥१४॥

दैत्यार्चित इति। दैत्यार्चितः शुक्रः प्रथमे आद्यस्थाने करणगो बिन्दुयुक्तोऽधिकबिन्दुयुक्तस्तदा जनितमुत्पन्नं भूर्यामयेन बहुरोगेण सहितं युक्तं सपापं पाप॰

सुतमात्मीयबान्धवजनैर्निजबन्धुभिः सज्जनैः सभ्यैश्च हीनं त्यक्तं नरपाभिभूतं राजपीडितं प्रकुर्याद् विदध्यादिति। तथा च वृद्धयवनः—

'बिन्दुस्थितो दैत्यगुरुः प्रसूते नरं सपापं बहुरोगयुक्तम्।
नृपाभिभूतं सुतवित्तहीनं विवर्जितं बान्धवसज्जनैश्च॥' इति

यदि शुक्र एक बिन्दु से युक्त हो तो मनुष्य अनेक रोगों से पीड़ित, पापी स्वभाव वाला तथा सज्जनों से दूर रहने वाला कुसंगति युक्त होता है। वह पुत्रों व धन सम्पत्ति से वर्जित तथा राजा से पीड़ा प्राप्त करने वाला होता है।

काणो यदि प्रकुरुते स्वकुटुम्बवर्गा-
न्नित्यं विरक्तमतिलालसमामयेन।
युक्तं द्वितीयग इहारिजनाभिभूतं
रायां व्ययं तनुभृतं तु शुचाभिभूतम्॥११५॥

काणइति। काणः शुक्रः द्वितीयगो बिन्दुद्वययुक्तो यदि तदा तनुभृतं शरीरिणं मनुष्यमिति यावत्। नित्यं सर्वदा, स्वकुटुम्बवर्गाद् निजपरिजनगणाद् विरक्तं विच्छिन्नमतिलालसमतिशयेच्छायुक्तमामयेन रोगेण युक्तं, अरिजनैः शत्रुजनैरभिभूतं पीडितं रायां धनानां व्ययं शुचा शोकेनाभिभूतं पीडितं प्रकुरुते विदधते। यथाऽत्र वृद्धयवनः—

'शुक्रो द्वितीये सरुजं विधत्ते, धनव्ययं शत्रुजनाभिभूतम्।
सदा विरक्तं स्वकुटुम्बवर्गाच्छोकाभिभूतं त्वतिलालसं च॥' इति

यदि शुक्र दो बिन्दुओं से युक्त हो तो मनुष्य अपने कुटुम्बियों से दूर रहने वाला, अधिक इच्छाओं से युक्त, रोगों व शत्रुओं से पीड़ित व शोक सन्तप्त होता है। साथ ही उसका धन खूब व्यय होता रहता है।

धिष्ण्यश्चेत्कुरुते पराभिभूतं
मर्त्यं मानधनोनितं तृतीये।
प्रेयस्या सहितं कदर्थितं च
क्रूरं ज्ञातिनिपीडितं कुचैलम्॥११६॥

धिष्ण्य इति। धिष्ण्यः शुक्रस्तृतीये बिन्दुत्रययुक्तश्चेत्तदा मर्त्यं मनुष्यं परैःशत्रुभिः पीडितं मानधनोनितं मानधनवर्जितं, प्रेयस्या स्त्रिया सहितं कदर्थितं

कुत्सितधनयुतं क्रूरं कठोरस्वभावं, जूर्त्या ज्वरेण निपीडितं परिपीडितं कुचैलं कुत्सितवस्त्रं कुरुते। यथा वृद्धयवन:—

'तृतीयसंस्थ: कुरुते नृशंसं शुक्र: सकारेण कदर्थितं (त) च।
पराभिभूतं सततं कुचैलं ज्वरादितं मानधनेनहीनम्॥' इति

यदि शुक्र तीन बिन्दुओं से युक्त हो तो मनुष्य शत्रुओं से सदा पीड़ित होने वाला, मान-सम्मान और धन से रहित किन्तु स्त्री से युक्त होता है। वह सदा तिरस्कृत होने वाला, ज्वर से पीड़ित और गन्दे और निन्दित वस्त्र पहनने वाला होता है।

दैत्याचार्य्यश्चेच्चतुर्थे महोपा-
ध्याढ्यं प्रेष्यं सेवने तत्परं च।
जातं निःस्वं तुर्य्यपादार्थहीनं
कुर्य्यान्मर्त्यं मन्युनाम्ना समेतम्॥११७॥

दैत्याचार्य इति। शुक्रश्चतुर्थे बिन्दुचतुष्टययुक्तश्चेत्तदा, जातमुत्पन्नं, मर्त्यं मनुष्यं, महोपाध्याढ्यं विशालकुटुम्बव्यापृतियुक्तम्, प्रेष्यं दासं, सेवने सेवायां तत्परं परायणं, निःस्वं दरिद्रं, तुर्यपादाः पशवोऽर्थो धनं तैर्विहीनं वर्जितं, मन्युनाम्ना शोकाभिधेन समेतं युक्तं कुर्यात्। यथाह वृद्धयवन:—

'चतुर्थगः शोकयुतं प्रसूते नरं महोपाधियुतं दरिद्रम्।
चतुष्पदार्थैर्धनवर्जितं च प्रेष्यं सदा सेवनतत्परं च॥' इति

यदि शुक्र चार बिन्दुओं से युक्त हो तो मनुष्य बड़े कुटुम्ब वाला तथा उसके लालन-पालन की घबराहट से परेशान होता है। वह नौकर होकर दूसरों की सेवा करने वाला तथा दरिद्र होता है। साथ ही धनादि से रहित होने के कारण वह शोक से संतप्त होता है।

भः पञ्चमे यदि भवेत्कुरुते परास्तं
जातं नरं कुहितयोगधनेन हीनम्।
नित्यं स्वबान्धवगणैः सह सज्जनैश्च
हृद्यं कलेरतिसुखेन विवर्जितं च॥११८॥

भइति। भः शुक्रः पंचमे पंचबिन्दुयुक्तश्चेत्तदा, जातं नरं, परास्तं पराजितं कुहितयोगधनेन कुमित्रसंयोगवशतो धनेन हीनं रहितं, स्वबान्धवगणैर्निजबन्धुलोकैः सज्जनैः साधुभिश्च सहकलेः कलहस्य हृद्यं प्रियमतिसुखेन वर्जितमल्पसुखमित्यर्थः। कुरुते विदधते। तथा च वृद्धयवनः—

'शुक्रः प्रसूतेऽतिसुखेन वर्जितं नरं सदा पंचमगः पराक्रमम् ।
कलिप्रियं बान्धवसज्जनैश्च कुमित्रसंयोगधनेन हीनम् ॥' इति

यदि शुक्र पांच बिन्दुओं से युक्त हो तो व्यक्ति पराजित तथा दुष्टों के सम्पर्क से धन खोने वाला होता है। वह सज्जनों व बन्धु-बान्धवों से सदा कलह करता है और सुख से विवर्जित जीवन यापन करता है।

हीनं सत्यसुखेन षष्ठ्यातो
जातं सर्वजनाभिभूतमच्छः ।
स्वान्तं सज्जनयेद्विदेशरक्त-
मश्रान्तं परतर्ककं विहार्दम् ॥११९॥

हीनमिति। अच्छः शुक्रः षष्ठ्यातः षड्विन्दुभिर्युक्तश्चेत्सदा सत्येन सुखेन च हीनं, सर्वजनैः समस्तलोकैरभिभूतं पीडितमश्रान्तं निरन्तरं विदेशरक्तं परदेशानुरक्तं स्वान्तं चित्तं परतर्ककं परेभ्योऽन्येभ्यो याचनाकृतं, विहार्दं प्रेमरहितं, सज्जनयेदुत्पादयेत्। तथा च वृद्धयवनः—

'षष्ठेस्थितः सर्वजनाभिभूतं नरं प्रसूते प्रणयेन हीनम्।
विवर्जितं सत्यसुखेन चित्तं विदेशरक्तं परतर्ककं च ॥' इति

यदि शुक्र छह बिन्दुओं से युक्त हो तो मनुष्य सत्य एवं सुख से वर्जित, सब लोगों से पीड़ा पाने वाला, घर से बाहर रहने वाला होता है। वह जीवन में सदा दूसरों से मांगता रहता है तथा प्रेमभाव से रहित स्वभाव वाला होता है।

दोषैर्वातमुखैर्युतं मनुष्यं
प्रज्ञोनं व्यसनानुरक्तकं चेत् ।
कुर्य्यात्सप्तमगो नृशंसचेष्टं
दैत्यानां सचिवो भवं कृतघ्नम् ॥१२०॥

दोषैरिति। दैत्यानां सचिवः शुक्रः सप्तमगः सप्तबिन्दुयुक्तस्सदा भव मनुष्यं वातमुखैर्वातरोगप्रभृतिभिर्दोषैः कारणैर्युक्तं सहितं प्रज्ञया बुद्ध्योनं रहितं, व्यसनानुरक्तं स्त्रीभोगमद्यपानदोषानुसक्तं नृशंसचेष्टं क्रूरचेष्टं कृतघ्नमकृतज्ञं कुर्यात्। यथा वृद्धयवनो बूते—

'करोति शुक्रः खलु सप्तमस्थो वातादि दोषैः सहितं मनुष्यम्।
नृशंसचेष्टाव्यसनानुरक्तं सदा कृतघ्नं मतिवर्जितं च ॥' इति

यदि शुक्र सात बिन्दुओं से युक्त हो तो मनुष्य वात, कफ आदि दोषों से पीड़ित, बुद्धि से रहित तथा बुरी आदतों में आसक्त होता है। वह सदा क्रूर काम व क्रूर चेष्टाएं करने वाला एवं कृतघ्न होता है।

साध्यानं बहुकल्मषैरुपेतं
भोऽतिव्याधियुतं सपत्नयुक्तम्।
कुर्य्याद्बन्धुभिरुज्झितं कृतघ्नं
दुःशीलं मनुजं सदाऽष्टमस्थः॥१२१॥

साध्यानमिति। भः शुक्रोऽष्टमस्थोऽष्टबिन्दुयुक्तस्तदा मनुजं सहाध्यानेन चिन्तया वर्तमानः साध्यानं, बहुभिः कल्मषैः पापैरुपेतं युक्तमतिव्याधियुक्तं महारोगयुक्तं सपत्न शत्रुसमेतं बन्धुभिरुज्झितं त्यक्तं, कृतघ्नं दुःशीलं दुष्टस्वभावं कुर्यादिति शेषः। यथा च वृद्धयवनः—

'शुक्रोऽष्टमस्थः कुरुते कुशीलं नरं महाव्याधियुतं कृतघ्नम्।
शान्त्या विहीनं बहुपापयुक्तं चिन्तान्वितं वैरियुतं सदैव॥' इति

यदि शुक्र आठ बिन्दुओं से युक्त हो तो मनुष्य सदा चिन्तातुर रहने वाला, बहुत से पाप करने वाला तथा बड़े-बड़े रोगों से पीड़ित होता है। वह शत्रुओं से युक्त, बन्धु बान्धवों द्वारा परित्यक्त, दुष्ट-स्वभाव वाला और कृतघ्न होता है।

शनि की रेखाओं का फल :

रेखास्थः प्रथमे स्थिरस्वभावं
सौरिः सर्वजनप्रधानसञ्ज्ञम्।
अश्रान्तं सुभगं विनीतवेशा-
लङ्कारं दयितातिथिं प्रजातम्॥१२२॥

रेखास्थ इति। सूरस्य सूर्यस्य गोत्रापत्यं सौरिः शनिः प्रथमे आद्यस्थाने रेखास्थ एकरेखायुक्तं इत्यर्थः। तदा प्रजातमुत्पन्नं, स्थिरस्वभावं, कठिनस्वभावं, सर्वजनेषु प्रधानं मुख्यं सुभगं सज्जनमश्रान्तं निरन्तरं, विनीतवेशालंकारं दयितातिथिं प्रियातिथिं कुर्यादिति शेषः। तथा च वृद्धयवनः—

'रेखास्थितः सूर्यसुतः प्रसूते स्थिरस्वभावं सुभगं मनुष्यम्।
प्रियातिथिं सर्वजनप्रधानं विनीतवेशाभरणं सदैव॥' इति

यदि शनि एक रेखा से युक्त हो तो मनुष्य बहुत स्थिर स्वभाव वाला, सब लोगों में सम्मानित स्थान वाला, सज्जन, अथक प्रयत्न करने

वाला, विनीत वेष व आभूषणादिक धारण करने वाला और अतिथि-जनों का सत्कार करने वाला होता है।

सर्वत्र सौख्यमिनदेहभवो द्वितीये
युक्तं सुखेन सहसा सहितं प्रसूते।
जातं नरं विरहितं च महोपतापै-
र्मुक्तं जनौ यदि तदा परिपन्थिरोगैः ॥१२३॥

सर्वत्रेति। जनौ जन्मसमये शनिर्द्वितीये रेखाद्वययुक्तो यदितदा, जात-मुत्पन्नं मनुष्यं सर्वत्र सुखमेव सौख्यं सहसा बलेनयुक्तं महोपतापैर्महाव्याधिभि-र्विरहितं वर्जितं, परिपन्थिनः शत्रवः रोगाव्याधयस्तैर्विमुक्तं रहितं प्रसूते जनयति। यथा च वृद्धवचनः—

'द्वितीयसंस्थो रविजः प्रसूते नरं महाव्याधिविवर्जितं च।
सर्वत्रसौख्यं रिपुरोगहीनं बलेन युक्तं सुखसंयुतं च ॥' इति

यदि शनि दो रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य को सर्वत्र सुख मिलता है। वह बलवान् और बड़े रोगों से रहित होता है तथा साथ ही उसे शत्रुजन या सामान्य रोग भी नहीं सताते। अर्थात् वह शरीर व मन से पूर्ण स्वस्थ रहता है।

आदित्यदेहजनितो जनने तृतीये
स्वल्पात्मजं खरमहाङ्गयुतं सलोहम्।
कुर्य्यात् धनेन सहितं निजधर्म्मविद्या-
युक्तं भवं जनिभृतं श्रुतिशास्त्रलब्धम् ॥१२४॥

आदित्येति। जनने जन्मसमये आदित्यदेहजनितः शनिः, तृतीये रेखात्रय-युक्तस्तदा भव जातं जनिभृतं मनुष्यं स्वल्पात्मजमल्पपुत्रं, खरमहांगयुतं गर्दभोष्ट्रयुक्तं, सलोहं लोहेन सह वर्तते यस्तम्। धनेन द्रव्येण सहितं निजधर्मविद्यायुक्तं कुलधर्म-विद्यासहितं, श्रुतयो वेदाः शास्त्राणि वेदांगानि लब्धं प्राप्तं येन तथोक्तं तम् कुर्यात्। यथा च वृद्धवचनः—

'सौरस्तृतीये कुरुते धनाढ्यं स्वधर्मविद्यागमशास्त्रलब्धम्।
खरोष्ट्रलोहाढ्यमथाल्पपुत्रं नरं सदा शान्तमतिप्रभावम् ॥' इति

जन्म के समय यदि शनि तीन रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य को पुत्र सन्तान कम होती है। वह गधे, ऊंट आदि पशुओं से युक्त अथवा

उनसे लाभ कमाने वाला होता है। उसे लोहे से भी लाभ होता है। साथ ही वह मनुष्य धन से युक्त, धर्म व विद्या से परिपूर्ण और वेद शास्त्रों को जानने वाला होता है।

वृद्ध यवन के मतानुसार उपर्युक्त फल के अतिरिक्त वह व्यक्ति शान्त और प्रभावशाली भी होता है।

भोगैर्युतं सुरुचिरैर्घनसारगन्ध-
पूर्वैस्तनूजसहितं मृदुगश्चतुर्थे।
जातं करोति मनुजं पुरुभोज्यपानं
भूयोवृषार्थसहितं सततं सहर्षम् ॥१२५॥

भोगैरिति। मृदुगः शनिश्चतुर्थे रेखाचतुष्टययुक्तस्तदा जातमुत्पन्नं मनुजं मनुष्यं, सुरुचिरैरतिमनोहरैर्घनसारगन्धपूर्वैः कर्पूरगन्धादिभिः भोगैः सुखदुःखाद्यनुभवरूपैः युतं सहितं तनूजसहितं पुत्रयुतं पुरुभोज्यपानं बहुभोज्यपानमधिकान्नयुतं सततं भूयो बहु वृषार्थयुतं धर्मार्थयुक्तं सह हर्षेण वर्तते यस्तम् करोति विदधाति। तथा च वृद्धयवनः—

चतुर्थगः सूर्यसुतः प्रसूते नरं सुताढ्यं बहुभोज्यपानम्।
कर्पूरगन्धादिकभोगभाजं प्रभूतधर्मार्थसमेतहर्षम् ॥' इति

यदि शनि चार रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य मनोहर कर्पूरादि सुगन्धित द्रव्यों का सेवन करने वाला, पुत्रों से युक्त और खूब खाने-पीने वाला होता है। साथ ही वह व्यक्ति खूब धन, धर्म व हर्ष से युक्त होता है।

पङ्गुः पञ्चमगः श्रिया समेतं
कान्ताया दयितं गतारिपक्षम्।
मर्त्येशाश्रयमुद्भवं कुलीन-
मशान्तं सुखिनं नरं प्रसूते ॥१२६॥

पंगुरिति। पंगुः शनिः पंचमगः पंचरेखायुक्तश्चेत्तदोद्भवमुत्पन्नं, नरं मनुष्यं श्रिया लक्ष्म्या समेतं युक्तम्। कान्तायाः स्त्रियः दयितं प्रियं गतारिपक्षं शत्रुगणरहितं, मर्त्येशाश्रयं राजाश्रयंकुलीनं सम्यगशान्तं नित्यं सुखमस्यास्तीति तं प्रसूते। यथाह वृद्धयवनः—

'करोति सौरिः खलु पंचमस्थो नरं कुलीनं सुखिनं च नित्यम्।
श्रियासमेतं विगतारिपक्षं नृपाश्रयं स्त्रीदयितं सदैव ॥' इति

यदि शनि पांच रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य श्रीमान्, स्त्रियों का प्यारा और शत्रुओं से सर्वथा रहित होता है। वह राजा के आश्रय से उन्नति करने वाला, सज्जन, कुलीन, निरन्तर परिश्रमी तथा सुखी होता है।

षष्ठे शीलधनं यथाप्रतिज्ञं
भास्वद्देहभवोऽयंभूमिलब्धम्।
पृथ्वीभृन्महितं महाप्रभावं
गाङ्गेयार्थसमन्वितं विधिज्ञम् ॥१२७॥

षष्ठ इति। भास्वद्देहभवः शनिः षष्ठे षड्रेखायुक्तस्तदा, शीलमेवधनं यस्य तथोक्तं तम्। प्रतिज्ञामनतिक्रम्य वर्तमान इति यथा प्रतिज्ञम्। अर्थो धन भूमिः पृथ्वी लब्धं प्राप्तं येन तथोक्तं तम्। पृथ्वीभृता राज्ञा, महितं पूजितं महाप्रभाव-मधिकप्रभावशालिनं गांगेयं सुवर्णमर्थो धनं ताभ्यां समन्वितं, विधिज्ञं विधानविदं करोतीति शेषः। यथा च वृद्धयवन वचनम्—

'षष्ठेस्थितः शीलधनं प्रसूते नरं विधिज्ञं वसुभूमिलब्धम्।
यथाप्रतिज्ञं कनकार्थयुक्तं महाप्रभावं नरनाथपूज्यम् ॥' इति

यदि शनि छह रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य अपने वचन का प्राणपण से पालन करने वाला, खूब भूमि व धन को पाने वाला, राजा द्वारा पूजित तथा अत्यन्त प्रभावशाली होता है। वह सोने व रुपये पैसे से पूर्ण समृद्ध और विधिशास्त्र का वेत्ता होता है।

सौरः सप्तमगोऽङ्गनाविधानं
धीरं कीर्त्तिकरं कलाप्रवीणम्।
सद्रव्यं प्रथितं सदा त्रिलोके
कुर्यात्तांङ्गभृतं मनोरमं चेत् ॥१२८॥

सौर इति। सौरः शनिः सप्तमगः सप्तरेखायुक्तस्तदा, देहभृतां मनुष्याणा-मिति यावत्। अंगनास्त्री तस्या विधानं प्रकारस्तम्, धीरं पण्डितं कीर्त्तिकरं यशस्करं, कलासु शिल्परूपासु प्रवीणं निपुणं सद्रव्यंधनिकं, सदा नित्यं त्रिलोके प्रथितं विख्यात मनोरमं सुन्दरं कुर्वीत विदधीत इति। तथा च वृद्धयवनः—

'शनैश्चरः सप्तमगो विधत्ते नरं धनाढ्यं प्रमदाविधानम्।
विचक्षणं कीर्त्तिकरं मनोज्ञं कलासुदक्षं प्रथितं त्रिलोके ॥' इति

यदि शनि सात रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य नायिका भेद के गुप्त रहस्यों को समझने वाला, अत्यन्त धैर्यशाली तथा खूब नाम कमाने वाला होता है। वह कलाओं में निष्णात, धन से युक्त और तीनों लोकों में प्रसिद्ध होता है। साथ ही वह व्यक्ति सुन्दर शरीर का स्वामी होता है।

जातं सञ्ज्ञाजोऽष्टमस्थो विचित्र-
माल्यालङ्कारैः समेतं प्रसूते।
नीत्या युक्तं वेदविद्यासमेतं
सर्वत्र स्त्रीनन्दनाद्यैरुपेतम् ॥१२९॥

जातमिति। संज्ञायां सूर्यपत्न्यां जायते इति संज्ञाजः शनिरष्टमस्थोऽष्टरेखायुक्तस्तदा जातं नरं मालायै हितानि माल्यानि, विचित्राणि च तानि माल्यानि विचित्रमाल्यानि-अलंकारभूषणानि च तैः समेतं युक्तं नीत्या नयेन युक्तं सहितं सर्वत्र वेदाश्चत्वारो विद्याऽष्टादश आभिः समेतं युक्तं, स्त्री गृहिणी, नन्दयन्तीति नन्दनाः पुत्रास्तैरुपेतं युक्तं प्रसूते। यथाह वृद्धयवनः—

'स्थानेऽष्टमे सूर्यसुतः प्रसूते विचित्रमाल्याभरणं मनुष्यम्।
सर्वत्रविद्यागमनीतियुक्तं कलत्रपुत्रादिसमन्वितं च॥' इति

यदि शनि आठ रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य अनेक प्रकार के चित्र-विचित्र माल्याम्बर और अलंकारों से युक्त, नीति में निपुण तथा वेदविद्या विशारद होता है। साथ ही ऐसा व्यक्ति स्त्रीजनों व पुत्रों का सुख प्राप्त करता है।

शनि के बिन्दुओं का फल :

आद्ये बिन्दुगतः करोति मर्त्यं
दीनं भूपतिपीडितं नृशंसम्।
सञ्जातं परिभूतगात्रमार्कि-
स्त्यक्तं बन्धुजनैरनल्पदुःखम् ॥१३०॥

आद्य इति। आर्किः शनिः प्रथमस्थाने बिन्दुगत एकबिन्दुयुक्तस्तदा, संजातमुत्पन्नं मर्त्यं मनुष्यं दीनं दरिद्रं भूपतिना राज्ञा पीडितं दुःखितं नृशंसं क्रूरं, परिभूतं तिरस्कृतं गात्रं शरीरं यस्य तं तथोक्तम्। बन्धुजनैः सगोत्रैस्त्यक्तमुज्झितमनल्पदुःखं बहुदुःखं करोति विदधाति। यथाऽऽहुर्वृद्धयवनाः—

'बिन्दौ स्थितः सूर्यसुतो यदाऽऽद्ये करोति जातं परिभूनदेहम् ।
स्वबान्धवैस्त्यक्तमनल्पदुःखं दीनं नृशंसं नृपपीडितं च ॥' इति

यदि शनि एक बिन्दु से युक्त हो तो मनुष्य दीन-हीन, राजा से पीड़ित और नृशंस होता है। ऐसे व्यक्ति को इसके सगोत्र लोग त्याग देते हैं तथा वह शरीर का कष्ट प्राप्त करता है। इसके दुःखों की कोई सीमा नहीं होती।

भास्वद्भूः सुमहाकदर्य्यसंज्ञं
मर्त्यं पापमुखं चलस्वभावम् ।
कुक्ष्यस्थ्यामयसंनिपीडिताङ्गं
चेत्कुर्य्याद् दुरितात्मकं द्वितीये ॥१३१॥

भास्वद्भूरिति। भास्वद्भूः शनिर्द्वितीये बिन्दुद्वययुक्तश्चेत्तदा मर्त्यं नरं सुमहाकदर्य्यसंज्ञं पापमेवेत्यर्थः तादृशं पापमयमेव मुखं यस्य तं तथोक्तं कटुभाषिणामग्रगण्यं चलस्वभावं चंचलमतिं कुक्षिरुदरमस्थिकीकसं तयोरामयोरोगस्तेन सन्निपीडितमंगं यस्य तं तथोक्तं दुरितात्मकं पापात्मकं कुर्यात्। यथाऽऽह यवनपरिवृढः—

'द्वितीयसंस्थः कुरुतेऽर्कपुत्रः पापात्मकं पापमुखं मनुष्यम् ।
कुक्ष्यस्थिरोगैः परिपीडितांगं चलस्वभावं सुमहाकदर्य्यम् ॥' इति

यदि शनि दो बिन्दुओं से युक्त हो तो मनुष्य पक्का कजूंस, पापपूर्ण वचन वाला, कटुभाषी तथा चंचल स्वभाव वाला होता है। ऐसे व्यक्ति को पेट व हड्डियों में उत्पन्न हुई व्याधि से शारीरिक कष्ट होता है। वह अत्यन्त पापपूर्ण स्वभाव वाला (पापात्मा) भी होता है।

संज्ञाभूरभिभूतकं समस्तै-
र्लोकैश्चौर्य्यबलं दयाविहीनम् ।
सत्योनं वितथक्रियं तृतीये
भूयिष्ठाशनमत्र घातुकं च ॥१३२॥

संज्ञाभूरिति। संज्ञाभूः शनिस्तृतीये बिन्दुत्रययुक्त इत्यर्थः। तदा समस्तैः सर्वैर्लोकैर्जनैरभिभूतकं पीडितं चौरस्वभावश्चौर्यं तदेव बलं यस्य तं तथोक्तम्। दयया विहीनं वर्जितं सत्येन तथ्येनोनं रहितं वितथमसत्यं क्रिया कर्म यस्य तं तथोक्तं भूयिष्ठाशनं बहुभोजनभाजं घातुकं क्रूरं कुर्यादिति शेषः। यथाऽऽहुर्यवनप्राज्ञाः—

'तृतीयसंस्थः कुरुतेऽर्कपुत्रो नरं नृशंसं वितथक्रियं च।
बह्वाशनं सत्यदयाविहीनं चौर्यं बलं सर्वजनाभिभूतम्॥' इति

यदि शनि तीन बिन्दुओं से युक्त हो तो सब लोगों से पीड़ित होने वाला, चोरी करने की आदत वाला, दया से रहित, सत्य से रहित कर्म वाला तथा अधार्मिक होता है। वह भोजन करने में शूर अर्थात् खूब खाने वाला तथा क्रूर स्वभाव वाली सन्तान का पिता होता है।

दुर्बुद्धिमार्किर्मलिनं स्वभावतो
द्वेष्यं विरक्तं पुरतो विवर्जितम्।
धर्म्मेण वंशस्य कुपात्रदानकं
सिद्ध्या चतुर्थे रहितं स्वकर्म्मणः॥१३३॥

दुर्बुद्धिमिति। आर्किः शनिश्चतुर्थे बिन्दुचतुष्टययुक्तश्चेत्तदा स्वभावतो मलिनं मलदूषितं द्वेष्यं विरोधिनं, पुरतो नगरतो विरक्तं विरतं वंशस्य कुलस्य, धर्मेण विवर्जितं रहितं कुपात्रदानकं निन्दितजनदानकरं स्वकर्मणो निजकर्मणः सिद्ध्या निष्पत्त्या रहितं वर्जितं कुर्यादिति। यथात्र वृद्धयवनः—

'चतुर्थगः सूर्यसुतः प्रसूते विरक्तपौरं मलिनं स्वभावात्।
द्वेष्यं कुबुद्धिं हतकर्मसिद्धिं कुपात्रदानं कुलधर्महीनम्॥' इति

यदि शनि चार बिन्दुओं से युक्त हो तो व्यक्ति स्वभाव से अत्यन्त मलिन स्वभाव वाला, वैरभाव रखने वाला, नगर से दूर भागने वाला तथा कुलधर्म और आचार से हीन होता है। वह सदा कुपात्र को दान देने वाला तथा अपने सभी कामों में असफल होता है।

कुर्यात्पंचमगो ज्वरामयार्त्तं
मित्रोन परिभूतगात्रमत्र।
संसक्त परकामिनीषु पुत्रा-
त्यार्त्याढ्य सतत मृदुः प्रजातम्॥१३४॥

कुर्यादिति। मृदुः शनिः पंचमगः पंचबिन्दुयुक्तस्तदा प्रजातमुत्पन्नं नरमिति शेषः। ज्वरामयार्त्तं ज्वररोगेणपीडितं मित्रोनं मित्ररहितं परिभूतगात्रं तिरस्कृत-देहं परकामिनीषु परस्त्रीषु संसक्तमासक्तं मिलितं च, पुत्रात्यार्त्याढ्यं पुत्रादिपीडा-युक्तं कुर्याद् विदध्यात्। यथा वदति वृद्धयवनः—

'शनिर्विधत्ते परदारसक्तं पुत्रादिपीडायुतमानसं च।
ज्वरामयार्त्तं परिभूतमूर्तिं सदा नरं पंचमगो विमित्रम्॥' इति

यदि शनि पांच बिन्दुओं से युक्त हो तो मनुष्य बुखार से पीड़ित रहने वाला, लोगों से तिरस्कार पाने वाला, कम मित्रों वाला या मित्र-रहित और पर स्त्री लोलुप होता है। साथ ही इसके पुत्र भी सदा पीड़ित रहते हैं।

षष्ठस्थोऽघरतं प्रभूतवैरं
शोकाढ्यं परसुन्दरीप्रसक्तम्।
मार्त्तण्डिः प्रियसाध्वस प्रभोनं
रोगैश्चोपहतं दृशोर्गुदायाः ॥१३५॥

षष्ठस्थ इति। मार्त्तण्डिः शनिः षष्ठस्थः षड्विन्दुयुक्तस्तदा, अघरतं पाप-परायणं प्रभूतवैरं बहुविरोधं, शोकाढ्यं शोकयुक्तं, परसुन्दरीप्रसक्तमन्यदारारक्तं, प्रियसाध्वसं भयभीतस्वभावं, प्रभयाकान्त्योनं वर्जितं दृशोर्नेत्रयोर्गुदा पायुरितीन्द्रिय-स्तस्य रोगैर्व्याधिभिरुपहतं मर्दितं कुर्यादिति शेषः। तथा च वृद्धयवनः—

'षष्ठे शनिः पापरतः प्रसूते प्रभाविहीनं परदारकं च।
गुदाक्षिरोगोपहतं सशोकं प्रभूतवैरं प्रियसाध्वसं च ॥' इति

यदि शनि छह बिन्दुओं से युक्त हो तो मनुष्य पाप कर्म में लिप्त रहने वाला, बहुत से शत्रुओं से युक्त तथा शोक से सन्तप्त होता है। ऐसे व्यक्ति का पर स्त्री में अनुराग होता है। यह सदा भयभीत रहता है और कान्तिरहित शरीर वाला होता है। इसके गुदा स्थान व नेत्रों में रोग उत्पन्न होते हैं।

भानूत्थो हतनन्दनं स्वबन्धु-
हीनं भूरिविरोधकं प्रकुर्यात्।
मर्त्यं सप्तमगः क्रियाविहीनं
त्यक्तं बन्धुजनैर्गदेन युक्तम् ॥१३६॥

भानूत्थ इति। भानूत्थः शनिः सप्तमगः सप्तबिन्दुयुतश्चेत्तदा हता विनष्टा नन्दनाः पुत्रा यस्य स तम्। स्वबन्धुभिर्निजगोत्रजैः हीनं रहितं, भूरिविरोधकं प्रभूत वैरं, क्रियया स्वकुलोचितकर्मणा रहितं वर्जितं, बन्धुजनैः सगोत्रैस्त्यक्तं गदेन रोगेण युक्तं प्रकुर्यात्। यथा च वृद्धयवनः—

'सौरो विधत्ते खलु सप्तमस्थो नरं क्रियाहीनमनल्पवैरम्।
सदा सरोगं निजबन्धुहीनं हतात्मजं बन्धुविवर्जितं च ॥' इति

यदि शनि सात बिन्दुओं से युक्त हो तो मनुष्य को मृत सन्तान उत्पन्न होती है। वह बन्धुवर्गों से रहित तथा प्रबल वैरियों से युक्त होता है। वह अपने कुलधर्म से पतित, बन्धुओं द्वारा परित्यक्त एवं रोगों से पीड़ित होता है।

कुर्वीताष्टमगो विदेशभाजं
रुग्युक्तं परतर्ककं दरिद्रम्।
पित्तोत्थैः परिपीडितं च रोगै-
रुग्रैर्भूरिविवर्णरक्तमार्किः ॥१३७॥

कुर्वीत इति। आर्किः शनिरष्टमगोऽष्टबिन्दुयुक्तश्चेत्तदा विदेशभाजं परदेशवासिनं, रुग्युक्तं रोगसहितं, परतर्ककं परेभ्योऽन्येभ्यो याचमाकृतं दरिद्रं निर्धनं, पित्तोत्थैः पित्तजनितैरुग्रैरुत्कटैः रोगैर्व्याधिभिः परिपीडितं दुःखितं भूरिविवर्णरक्तं बहुनीचानुरक्तं, कुर्वीत। जातमिति शेषः। यथाह वृद्धयवनः—

'सौरोऽष्टमस्थो कुरुते दरिद्रं नरं सरोगं बहुनीचरक्तम्।
पित्तोद्भवैः पीडितमुग्ररोगं विदेशभाजं परतर्ककं च॥' इति

यदि शनि आठ बिन्दुओं से युक्त हो तो मनुष्य विदेश में निवास करने वाला, रोगों से पीड़ित तथा सबसे याचना करने वाला एवं दरिद्री होता है। वह पित्तविकार से उत्पन्न भयानक रोगों से पीड़ित और अत्यन्त नीच लोगों की संगति में रहने वाला होता है।

सूर्य का भावगत विशेष फल :

भानौ तनौ निम्नसपत्नभागगे
रामाब्धिरेखासहिते भवो गदी।
स्वोच्चे स्वराशौ किमिने तनौ शरा-
दिस्थानयुक्ते बहुजीवितो नृपः ॥१३८॥

भानाविति। भानौ रवौ, तनौ लग्ने निम्नसपत्नभागगे नीचशत्रुनवांशगे रामाब्धिरेखासहिते त्रिचतूरेखायुते, तदाभवो जनितो गदी रोगी भवेदिति। स्वोच्च इति। किमथवा इने रवौ स्वोच्चे निजतुंगे मेषङ्गत इत्यर्थः। स्वराशौ सिंहराशौ, तनौ लग्ने, पंचप्रभृति रेखासहिते तदा, बहुजीवितश्चिरायुर्नृपो राजा भवेदिति शेषः।

यदि सूर्य नीच या शत्रु राशि के नवांश में लग्न में स्थित हो तथा तीन या चार रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य रोगी होता है।

यदि अपनी उच्चराशि मेष में या अपनी राशि सिंह में सूर्य लग्न-गत हो और पांच या पांच से अधिक रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य दीर्घायु युक्त तथा राजा होता है।

अभी तक रेखा व बिन्दुओं से युक्त ग्रहों का स्वतन्त्र फल बताया गया है। यहां से ग्रहों की रेखाओं के साथ-साथ उनकी अधिष्ठित राशि व स्थान के अनुरोध से विशेष फल बताया जा रहा है। सूर्य के उपर्युक्त फल से वैद्यनाथ अक्षरशः सहमत हैं। इन्होंने अपने ग्रन्थ में बिन्दु को शुभफल का द्योतक माना है। अतः संस्कृत टीका में उल्लिखित सम्बन्धित उद्धरण से भ्रम में नहीं पडना चाहिए। ग्रन्थकार ने संस्कृत टीका में किसी अन्य ग्रन्थ के प्रसंग से सूर्य की रेखाओं का फल इस प्रकार बताया है। यहां पर त्रिकोण शोधन व एकाधिपत्य शोधन के उपरान्त बची हुई रेखाओं का ग्रहण करना चाहिए—

आठ रेखा युक्त सूर्य हो तो राजा से धनागम, सात से कान्ति, सुख व वैभव में वृद्धि, छह से प्रताप में वृद्धि, पांच से धन लाभ, चार से शुभाशुभ मिश्रित फल, तीन से मार्ग में भटकते रहने की थकावट, एक या दो से रोगों का डर तथा शून्य रेखा होने पर मृत्यु होती है।

तर्काश्वगोरगकलासहिते त्रिकोणे
केन्द्रे रवौ करयमेषु शरानलेषु।
शून्यानलेषु रसवह्निषु वत्सरेषु
जातस्य मृत्युरुदितो जनितुः किमस्य ॥१३६॥

तर्केति। रवौ सूर्ये त्रिकोणे पंचनवमयोरन्यतरे, केन्द्रे वा भवति यदा तर्काश्वगोरगकलासहिते षट्पंचसप्ताष्टरेखायुक्ते सति तदा क्रमेण करयमेषु युग्मयुग्म-तुल्येषु, शरानलेषु पंचाग्निप्रमितेषु, शून्यानलेषु त्रिशन्मितेषु, रसवह्निषु षट्त्रिंश-न्मितेषु वत्सरेषु वर्षेषु जातस्य नरस्य मृत्युर्मरणमुदितं कथितम्। किमथवास्य जात-कस्य जनितुः पितुर्मृत्युरुदितः कथितः। बुधैरिति शेषः।

यदि सूर्य केन्द्र या त्रिकोण में स्थित होकर छह रेखाओं से युक्त हो तो बाईसवें वर्ष में, पांच रेखाएं हों तो पैंतीसवें वर्ष में, सात रेखाएं हों तो तीस वर्ष में और आठ रेखाएं हों तो छत्तीस वर्ष में मनुष्य की या उसके पिता की मृत्यु कहनी चाहिए।

वैद्यनाथ ने भी उक्त कथन की पुष्टि की है। हमारे विचार से यदि जातक अन्यथा प्रकारों से अल्पायु सिद्ध होता हो तथा सूर्य की उक्त रेखाएं हों तो तदनुसार उक्त वर्ष में जातक की मृत्यु समझनी चाहिए। यदि बालक मध्यायु या दीर्घायु योग वाला हो तो कदाचित उक्त फल जातक के सम्बन्ध में घटित नहीं होगा। ऐसी स्थिति में पिता के सम्बन्ध में विचार पूर्वक कहना चाहिए। ध्यान रखिए, किसी भी निर्णय पर पहुंचने से पहले सभी ज्ञात और उपलब्ध साधक व बाधक प्रमाणों का विचार करना चाहिए। क्योंकि ज्योतिष के नियम सर्वथा असम्पृक्त होकर काम नहीं करते।

शोध्यावशिष्टकरतुल्यकलान्वितेऽर्के
केन्द्राश्रिते शशधरैन्दवकोणयुक्ते।
दिग्वर्षतः परत एति पितुः समृद्धां
राज्यश्रियं मुनिवरा इति सङ्गिरन्ते ॥१४०॥

शोध्येति। अर्के रवौ, शशधरश्चन्द्र,, ऐन्दवो बुधः, कोणः शनिः, शोध्यावशिष्टकरतुल्यकलान्विते वक्ष्यमाणत्रिकोणैकाधिपत्यशोध्यावशिष्ट रेखाद्वययुक्ते, केन्द्राश्रिते लग्नचतुर्थसप्तमदशमानामाश्रिते गते सति, तदा दिग्वर्षतो दशाब्दात् परतः पश्चात् पितुर्जनकस्य, समृद्धां बहुसम्पदां राज्यश्रियं राजलक्ष्मीमेति प्राप्नोति। इत्येव मुनिवरा मुनीनां मध्येवराः श्रेष्ठाः सांगिरन्ते भाषन्त इति।

त्रिकोण शोधन व एकाधिपत्य शोधन के बाद यदि सूर्य दो रेखाओं से युक्त होकर, चन्द्र, बुध व शनि के साथ किसी केन्द्र स्थान में स्थित हो तो मनुष्य दस वर्ष की अवस्था के बाद बहुत-सी पैतृक सम्पत्ति तथा राज्य लक्ष्मी को प्राप्त करता है, ऐसा मुनियों का वचन है।

त्रिकोण शोधन व एकाधिपत्य शोधन के विषय में उदाहरण सहित विस्तारपूर्वक विचार प्रस्ताराष्टक वर्ग के प्रसंग में आगे किया जाएगा।

सूर्याष्टक वर्ग से दिन का शुभाशुभ ज्ञान :

विरोचनाक्रान्तभतश्चतुर्भ-
रेखैस्त्रयमाद्यः कथितः सभागः।
तथा तदाक्रान्तभतः प्रबन्धा-
च्चतुर्भगस्थानयुतिर्द्वितीयः ॥१४१॥

भागस्तथा तन्नवमात्तुरीय-
निशान्तगस्थानयुतिस्तृतीयः ।
भागो दिनस्य प्रथमोऽथ मध्यो
ऽन्त्योऽशोऽशुभो यत्र कृशं फलैक्यम् ॥१४२॥

विरोचन इति । भाग इति । विरोचनः सूर्यस्तदधिष्ठितराशितः स्थानचतुष्टयस्थानां रेखाणां, यदैक्यं स आद्यः प्रथमो भागोऽंशः कथित उक्तः । तथा तेनैव प्रकारेण, तदाक्रान्तभतः सूर्याधिष्ठितराशितः, प्रबन्धात्पञ्चमस्थानात्, स्थानचतुष्टयस्थानां रेखाणां युतियोगो द्वितीयभागः । तन्नवमात्सूर्याधिष्ठितराशितो यो नवमो राशिस्तस्मात्स्थानचतुष्टयस्थानां रेखाणां योगस्तृतीयो भागो ज्ञेयः । इह तैः क्रमेण दिनस्य, प्रथम आद्यो, मध्यो द्वितीयोऽन्त्यस्तृतीयोऽंशो भागो ज्ञेय इति शेषः । यत्र यस्मिन् भागे, कृश स्वल्पं, फलैक्यं रेखैक्यं, भवति, तस्माद् दिनस्य स भागोऽशुभोऽप्रशस्तो नेष्टफलप्रद इत्यर्थः ।

जन्म के समय सूर्य जिस राशि में हो उससे तीन राशि आगे तक अर्थात् सूर्याधिष्ठित राशि से चौथी राशि तक दिन का प्रथम भाग समझना चाहिए। इसी प्रकार पांचवीं राशि से आठवीं तक दिन का मध्यभाग और नौवीं राशि से बारहवीं राशि तक दिन का अन्तिम भाग कल्पित कर लेना चाहिए। ये तीनों भाग क्रमशः किसी भी दिन के प्रथम, मध्य व अन्तिम भागों का प्रतिनिधित्व करेंगे। अब सूर्याष्टक वर्ग में प्रत्येक उक्त भाग में पड़ने वाली राशियों की रेखाओं का पृथक् योग करना चाहिए। इस प्रकार तीन पृथक् रेखायोग प्राप्त होंगे। इनमें जो योग अधिक है तथा वह दिन के जिस भाग का द्योतक है, उसी भाग में सब शुभकर्म होंगे। अर्थात् सफलता मिलेगी। जिस दिन भाग में कम रेखायोग हो तो वहां पर कर्म सिद्धि कष्टसाध्य होगी।

पूर्वोक्त वास्तविक उदाहरण में सूर्य कन्या राशि में स्थित है। सूर्याष्टक वर्ग में (पूर्वोक्त) कन्या की ६ रेखाएं, तुला की ४, वृश्चिक की ३ तथा धनु की ४ रेखाएं हैं। इनका योग १७ है। यह योग उस (उदाहरणोक्त) व्यक्ति के लिए दिन के प्रथम भाग का द्योतक होगा।

इसी प्रकार मध्यभाग के लिए मकर की रेखाएं ४, कुम्भ की ३, मीन की ७ व मेष की ४ रेखाएं हैं, जिनका योग १८ है।

अब दिन के अन्तिम भाग के लिए वृष की २ रेखाएं, मिथुन की ६, कर्क की ४ तथा सिंह की १ रेखा है, जिनका योग १३ है।

इनके लिए दिन का मध्य भाग सर्वाधिक रेखायोग १८ होने के कारण सब कामों में शुभ व सफलता देने वाला होगा।

पूर्व भाग भी १७ रेखायोग के कारण शुभ ही होगा, किन्तु मध्य-भाग की तुलना में कम शुभ होगा तथा अन्तिम भाग सर्वाल्प रेखायोग १३ होने के कारण अशुभ, वर्जित व असफलता देने वाला होगा।

रविरेखा से कष्टप्रद वर्ष का ज्ञान :

फल विलग्नान्नलिनीप्रियान्तिम-
माकाशरत्नाद्धरिजान्तिमं तथा।
संवत्सरे तत्प्रमिते गदानना
वाप्तिः प्रदिष्टेति बुधैः पुरातनैः॥१४३॥

फलमिति। विलग्नात् तनुतो नलिनी कमलिनी तस्य प्रियः पतिः सूर्यः, तस्यान्तिमवसानं गणयित्वा यावत्फलमर्थाद्यावत्यो रेखा विद्यन्ते, तासां योगं, विधाय स्थानान्तरे स्थापयेत्। एवमाकाशरत्नात् सूर्यात् हरिजान्तिमं लग्नावसानं, यावत्फलं विद्यते, तदपि स्थापयदेकान्ते। तत्प्रमिते रेखायोगमिति तुल्ये संवत्सरे वर्षे, द्वयो-र्योगतुल्ये वर्षे वा, गदाननानां रोगादीनामवाप्तिः स्यादिति शेषः। इत्येवं पुरातनैः पुराणैर्बुधैः पण्डितैः प्रदिष्टा कथिता। तदुक्तं ग्रन्थान्तरे—

'तनुतो रविपर्यन्तं रवितोऽङ्गान्तिकं फलम्।
तत्तुल्ये वत्सरे ज्ञेयो रोगादिप्राप्ति सम्भवः॥' इति

सूर्याष्टक वर्ग में लग्न से सूर्य पर्यन्त जितनी रेखाएं हों उनका योग करके एकत्र स्थापित कर लेना चाहिए। इसी प्रकार सूर्य से लग्न तक की रेखाओं का योग अलग स्थापित कर लेना चाहिए। उक्त दोनों योगों के बराबर आयु वर्षों में अथवा दोनों के योग के तुल्य आयु वर्ष में रोग शोकादि अरिष्टों का कथन कहना चाहिए।

पूर्वोक्त उदाहरण के संदर्भ में इसे समझते हैं। लग्न से सूर्य तक क्रमशः ३, ४, ४, ३, ७ रेखाएं हैं। इनका योग २१ हुआ। अतः २१वें वर्ष में रोगादि जनित कष्ट हो सकता है।

सूर्य से लग्न तक क्रमशः ४, २, ६, १, ६, ४, ४ रेखाएं हैं, जिनका योग २७ है। अतः २७वें वर्ष में भी रोगादि हो सकते हैं। अथवा २७+२१=४८वें वर्ष में भी रोग प्राप्ति हो सकती है।

चन्द्रमा का भावफल :

> शून्यस्थानं सूरसोमाष्टवर्गे
> मासो राशिर्यत्तदीयः समेषु ।
> सत्कार्येषु त्याज्य आहुः कुदोस्त्रि-
> स्थानैर्युक्ते शीतभाःकीर्णकल्पे ॥१४४॥
> यक्ष्मालस्यं द्वित्रिखेटैरुपेते
> मृत्युः सप्तत्रिंशदब्दे कृशेऽब्जे ।
> नीचारिस्थे केन्द्रकोणायगे द्वि-
> त्रिस्थानाढ्ये तस्य भावस्य हानिः ॥१४५॥

शून्यस्थानमिति । यक्ष्मालस्यमिति च । सूरः सूर्यः सोमश्चन्द्रस्तयोरष्टकवर्गे रेखाष्टकवर्गे, यच्छून्यं स्थानं रेखारहितस्थानं, क्रमेण तदीयः मासो राशिः, समेषु सर्वेषु, सत्कार्येषु विवाहादिशुभकार्येषु त्याज्यो वर्ज्यः । आहुर्बुधा इति शेषः । शीतभाश्चन्द्रस्तेन कीर्णं व्याप्तं कल्पं लग्नं यत्तस्मिन् चन्द्राक्रान्तलग्न इत्यर्थः । कुदोस्त्रिस्थानैरेकद्वित्रिरेखाभिर्युक्ते सति तदा यक्ष्मा क्षय आलस्यमिति मन्दः यदि तस्मिन् द्वित्रिखेटैर्द्वाभ्यां त्रिभिर्वा खेटैर्ग्रहैरुपेते युक्ते तदा सप्तत्रिंशद्वर्षे मृत्युर्मरणं स्यादिति शेषः । तदुक्तं ग्रन्थान्तरे—

> 'सूर्याष्टवर्गे यः शून्योमासः संवत्सरं प्रति ।
> विवाहव्यवहारादि तस्मिन्मासि विवर्जयेत् ।
> चन्द्राष्टवर्गे शून्याङ्कगते चन्द्रे परित्यजेत् ।
> शुभकर्मणि सर्वाणि कुर्याच्चेच्छ्रेष्ठराशिगे ॥' इति

कृश इति । कृशे क्षीणेऽब्जेचन्द्रे नीचारिस्थे नीचशत्रुराशिगते, केन्द्रकोणायगे लग्न चतुर्थ पंचम सप्तमनवमदशम लाभानामन्यतमे गते प्राप्ते, द्वित्रिस्थानाढ्ये द्वित्रिरेखायुक्ते सति तदा तस्य भावस्य हानिः क्षतिः कथनीयेति शेषः ।

चन्द्रमा व सूर्य के अष्टक वर्ग में जिस राशि में कोई रेखा न हो अर्थात् वहां पर शून्य हो तो उन राशियों में जब-जब सूर्य व चन्द्रमा का गोचर संक्रमण हो तो उस समय शुभ कार्य नहीं करना चाहिए। अर्थात् सूर्याष्टक वर्ग की शून्य रेखा वाली राशि में जब सूर्य आए तो उस मास में तथा चन्द्रमा के अष्टक वर्ग शून्य रेखा वाली राशि के नक्षत्रों में जब चन्द्रमा आए तो उन दिनों में विवाह आदि शुभ कृत्य नहीं होने चाहिएं।

यदि चन्द्रमा लग्न में स्थित होकर एक, दो या तीन रेखाओं से युक्त हो तो क्षय रोग (T. B.) तथा आलस्य करता है।

यदि लग्नगत चन्द्रमा एक, दो, तीन रेखाओं से युक्त हो तथा साथ में दो या तीन ग्रह भी हों तो ३७वें वर्ष में मृत्युप्रद होता है। यदि क्षीण चन्द्रमा नीच या शत्रुराशि में स्थित होकर दो, तीन रेखाओं से युक्त हो तथा केन्द्र, लाभ या त्रिकोण स्थान में हो तो अधिष्ठित भाव की हानि करता है।

रेखारहित राशि में सूर्य व चन्द्रमा का यथा प्रसंग संक्रमण होने पर विवाह, व्यवहार, शुभ कार्यारम्भ, रोजगार आदि प्रारम्भ नहीं करने चाहिएं। ऐसे समय में सभी कार्य विफल होते हैं। इस विषय में **जातक पारिजात** व अन्य ग्रन्थों की साक्षी दी गई है। **जातकादेश मार्ग** में तो यहां तक कहा गया है कि रेखारहित राशि में जिसके सूर्य व चन्द्रमा (अपने-अपने अष्टक वर्ग में) हों तो ऐसे व्यक्ति के साथ रहना तथा उसका प्रातः दर्शन भी मुसीबत को बुलावा देना है। इसके विपरीत पूर्णरेखा युत राशि में जिसके सूर्य व चन्द्रमा हों तो उनका प्रातःदर्शन उत्तम होता है तथा उन्हें वस्त्रादि का दान करना सम्पत्ति की वृद्धि करता है तथा उक्त परिस्थिति में उत्पन्न व्यक्ति निश्चय से समृद्ध होता है—

"पूर्णाक्षकेन्दु जातानां प्रातर्दर्शनमुत्तमम् ।
तेभ्यो वस्त्रादि दानं च भवेन्नूनं समृद्धये ॥"

(जातकादेश० अष्टक० श्लो० १७)

सारान्वितोऽब्ध्यादिकलायुतः कलेट्
केन्द्रायकोणे यदि भाववृद्धिकृत् ।
केन्द्रे कलेशेऽष्टकलायुते यशो-
विद्यार्थवीर्य्यप्रबला भवा नृपाः ॥१४६॥

सारेति। यदि चेत् कलेट् चन्द्रः, सारेण बलेनान्वितो युक्तोऽब्ध्यादिकलायुतश्चतुः प्रभृति रेखासहितः सन्, केन्द्रायकोणे केन्द्रलाभपंचमनवमे, वर्त्तते तदा, भावस्याधिष्ठित स्थानस्य, वृद्धिमुपचयं करोति। यदि कलेशे चन्द्रेऽष्टकलायुतेऽष्टरेखासहिते, केन्द्रे कण्टके भवति तदा भवाः जाताः पुरुषाः यशः कीर्त्तिः विद्या अर्थो धनं, वीर्यं बलमेभिः प्रबला बलवत्तराः नृपाः राजानः स्युरिति शेषः।

यदि बलवान् चन्द्रमा चार से अधिक रेखाओं से युक्त राशि में स्थित होकर केन्द्र, लाभ या त्रिकोण में स्थित हो तो उस भाव की वृद्धि करता है।

यदि आठ रेखाओं से युक्त चन्द्रमा केन्द्र स्थानों में स्थित हो तो मनुष्य कीर्तिमान्, धनवान्, विद्यावान् व राज पद पर आसीन होता है।

चन्द्र रेखाओं से शुभ वर्ष का परिज्ञान :

विलग्नमारभ्य सुधाकरान्तं
सुधामयूखादुदयावसानम्
वर्षे फलैक्यप्रमिते सुतादि-
सुखोद्भवं ज्यौतिषिका वदन्ति ॥१४७॥

विलग्नमिति। विलग्नं स्पष्टलग्नराशिमारभ्य सुधाकरान्तं चन्द्राक्रान्त राशिपर्यंन्तं, यावत्फलं यावत्योरेखा विद्यन्ते तासां योगं विधाय स्थानान्तरे स्थापयेत्। एवं सुधामयूखाच्चन्द्राक्रान्तराशेः सकाशादुदयावसानं लग्नराशिपर्यंन्तं गणयित्वा यावत्फलं यावत्योरेखा विद्यन्ते तासां योगं विधायैकान्ते स्थापयेत्। प्रथमागतफलैक्यप्रमिते पश्चादागतफलैक्यप्रमिते वा वर्षेऽथवा तयो रेखैक्ययोगतुल्य-वर्षे, सुतादीनां सुखस्योद्भवमुत्पत्तिर्भवेदिति शेषः। ज्यौतिषिका ज्योतिर्विदो वदन्ति। तदुक्तं ग्रन्थान्तरे—

'लग्नमारभ्य चन्द्रान्तं चन्द्राल्लग्नावसानकम्।
फलैकीकृत्य तुल्येऽब्दे तनयादिसुखोद्भवः॥' इति

अन्यत्रापि च—

'शुभग्रहाणां संयोगसमानाब्दे शुभं भवेत्।
पुत्रवित्तसुखादीनि लभते नात्र संशयः॥' इति

चन्द्राष्टक वर्ग में लग्न से चन्द्रमा तक जितनी रेखाएं हों, उनके योगफल के बराबर आयु वर्ष में धन व पुत्रादि की प्राप्ति होती है। चन्द्रराशि से लग्नराशि पर्यन्त रेखा योग के समान वर्ष में धनादि का लाभ होता है। अथवा दोनों योगफलों के योग के तुल्य वर्षों में धन व पुत्र का लाभ होता है। ऐसा ज्योतिष शास्त्र के विद्वान् कहते हैं।

उक्त नियम चन्द्र, गुरु, शुक्र व पापयुति रहित शुभ बुध के विषय में भी समझना चाहिए। उन ग्रहों की राशि से लग्न पर्यन्त व लग्न से ग्रहाधिष्ठित राशि पर्यन्त उसी ग्रह के अष्टक वर्ग में जो रेखा योग हो उसके तुल्य आयु वर्षों में पुत्र, धन व सुख की प्राप्ति होती है—

"शुभग्रहाणां संयोगसमानाब्दे शुभं भवेत्।
पुत्रवित्तसुखादीनि लभते नात्र संशयः॥"

अर्थात् शुभग्रह की रेखा संख्या के योग के समान(पूर्वोक्त प्रकार से) वर्ष में शुभ होता है। उन वर्षों में पुत्र, धन व सुख की प्राप्ति निःसन्देह होती है।

मंगल का भावगत फलः

स्वोच्चे स्वर्क्षेऽस्त्रे ऽङ्गखाङ्काम्बुगेऽष्ट-
रेखायुक्ते कोटिवित्तेश आरे।
साब्धिस्थाने सिंहकौर्प्याजनक्र-
कोदण्डाङ्गे जायते मानवेशः ॥१४८॥

स्वोच्च इति। अस्त्रे भौमे, स्वोच्चे निजोच्चराशौ मकर इत्यर्थः। स्वर्क्षे स्वराशौ मेषे वृश्चिके वा तिष्ठति, अंगखांकाम्बुयाते लग्नदशम नवम चतुर्थानामन्यतमे याते प्राप्तेऽष्टरेखायुक्तेऽष्टाभी रेखाभिः सहिते सति तदा कोटिवित्तेशः कोटिधनस्वामी भवेदिति शेषः। आर इति। आरे भौमे, सिंहः, कौर्प्यौ वृश्चिकोऽजो-मेषो नक्रोमकरः कोदण्डं धनुरेतेषामन्यतमेऽङ्गे लग्ने, साब्धिस्थाने रेखाचतुष्टययुक्ते सति तदा मानवानां मनुष्याणामीशः स्वामी जायते जात इति शेषः।

यदि अपनी उच्च या स्वराशि में स्थित मंगल आठ रेखाओं से युक्त होकर लग्न, चतुर्थ, नवम या दशम स्थान में स्थित हो तो मनुष्य करोड़पति होता है।

यदि चार रेखाओं से युक्त मंगल मेष, सिंह, वृश्चिक, धनु व मकर राशि में लग्न गत हो तो मनुष्य राजा होता है।

कलाष्टकाढ्ये कुटिले कुलस्थे
लघुक्षमेशः पुरगे धरेशः।
राज्ञोऽन्वयोत्थो विषयेट् प्रजात-
स्तुङ्गस्वभाढ्ये नृपचक्रवर्ती ॥१४९॥

कलेति। कुटिले भौमे, कलाष्टकाढ्येऽष्टाभिः कलाभिर्युक्ते, कुलस्थे दशमस्थानगते तदा लघुक्षमेशः स्वल्पभूपतिर्भवेदिति शेषः। यदि भौमेऽष्ट-रेखायुक्ते पुरगे पुरे लग्नं तस्मिन् गते याते तदा धरायाः पृथिव्या ईशः स्वामी। स्यादिति शेषः।

राज्ञ इति। प्रजात उत्पन्नो मनुष्यो राज्ञो नृपस्य विषयेट् विषयो देश स्तस्येट् स्वामी भवेदिति शेषः। यदि तत्र गते भौमे तुंगस्वभावाढ्ये स्वोच्च स्वराशि सहिते, कलाष्टकाढ्ये तदा नृपचक्रवर्ती नृपाणां राज्ञां मध्ये चक्रवर्ती सम्राट् भवेदिति शेषः।

यदि मंगल आठ रेखाओं से युक्त होकर, दशम स्थान में स्थित हो तो मनुष्य थोड़ी-सी भूमि का स्वामी होता है। यदि मंगल आठ रेखाओं से युक्त लग्न में स्थित हो तो भूमिपति होता है। यदि ऐसा व्यक्ति राजकुल में उत्पन्न हो तो देशाधिप होता है।

अपनी राशि या अपनी उच्च राशि में स्थित मंगल आठ रेखाओं से युक्त हो तथा लग्न या दशम स्थान में हो तो वह मनुष्य राजाओं का राजा अर्थात् चक्रवर्ती सम्राट् होता है।

इस विषय में जातकादेशकार ने कुछ विशेष बताया है। उनके मतानुसार मंगल के अष्टक वर्ग में जो राशि सम्पूर्ण रेखाओं से युक्त हो, उसमें जब मंगल का गोचर से संक्रमण होता है तो भूमि, सुवर्ण आदि का लाभ और समृद्धिप्रद कार्य सम्पन्न होते हैं। राजाओं व देवताओं की प्रसन्नता, मांगलिक भूमिकार्य, उस राशि की दिशा में होते हैं। इसके साथ ही पूर्णरेखा युक्त राशि की दिशा में शत्रुओं पर विजय मिलती है। इसके विपरीत कम रेखाओं वाली अथवा रेखा शून्य राशि में गोचर होने पर नेष्ट फल मिलते हैं। (देखें जातकादेशमार्ग, अष्टक० श्लो० २०)

मंगल की रेखाओं से कष्टप्रद वर्षज्ञान :

> कल्पात्कुजान्तं प्रथमान्तमारतः
> स्थानैक्यतुल्येऽनिशमब्दसञ्ज्ञके
> कष्टं भयं शस्त्रभवं समुद्भवं
> सप्तार्चिषो वेति जगुः पुरातनाः ॥१५०॥

कल्पादिति। कल्पात् लग्नात् कुजान्तं भौमाक्रान्तराशिपर्यन्तं गणयित्वा यावत्फलमर्यावत्यो रेखा विद्यन्ते, तासां योगंकृत्वा, स्थानान्तरे स्थापयेत्। तत आरतो भौमात्, प्रथमान्तं लग्नराशिपर्यन्तं, गणयित्वा, यावत्फलमर्यावत्यो रेखा स्तासां योगं पृथक् स्थापयेत्। ततः स्थानैक्यतुल्ये रेखैक्यतुल्येऽब्दसंज्ञके वर्षेऽनिशं नित्यं कष्टं दुःखं, शस्त्रभवं शस्त्रादुत्पन्नं, भयं भीतिः स्यादिति शेषः। वा पक्षान्तरे सप्तार्चिषोऽग्नेः समुद्भवमुत्पन्नभयंकथितेति शेषः। इत्येवं पुरातनाः प्राचीना जगुराहुः। तदुक्तं पाराशरहोरायाम्—

> 'भौमान्तं तनुतः कुजात्तनुलयं योगे फलानां तथा।
> तत्तुल्ये शरदीह कष्टमनिशं शस्त्रानलोत्थं भयम् ॥' इति

मंगल के अष्टक वर्ग में लग्न से मंगल पर्यन्त जितनी रेखाएं हों, उनके योग के समान आयु वर्ष में कष्ट, शस्त्र व अग्नि से भय होता है। मंगल से लग्न तक की रेखाओं के योग तुल्य वर्षों में कष्ट होता है। अथवा दोनों योगफलों के तुल्य वर्षों में कष्टादि, शस्त्राग्नि भय होता है।

मंगल के बिन्दु और कष्टप्रद समय :

एकीकृत्याक्षाणिभौमात्पुरान्तं
सङ्गुण्याश्वैः सप्तयुग्मैर्विभज्य।
लब्धं शेषं तन्मिते वत्सरे वा
पापे खेटे शेषतुल्योडुयाते ॥१५१॥
व्याधेर्मृत्योः साध्वसं हीनभागे
वर्षे भावं तं तदानीं त्यजेत्सन्।
गोष्ठं क्षेत्रं वा कृषिं पुष्टभस्थं
सत्क्षीणर्क्षस्थं धनं नाशमेति ॥१५२॥

एकीकृत्येति। व्याध्येरिति च। महीजाद् भौमात् पुरान्तं लग्नान्तमक्षाणि बिन्दूनेकीकृत्य संहृत्य ततोऽश्वैः सप्तभिः संगुण्य गुणयित्वा, सप्तयुग्मैः सप्तविंशत्या विभज्यविहृत्य तदायल्लब्धं प्राप्तं शेषमवशिष्टं स्यादिति शेषः। तन्मिते तत्तुल्ये लब्धशेषतुल्य इत्यर्थः। वत्सरे वर्षे। वा पक्षान्तरे। पापेऽशुभे खेटे ग्रहे शेषतुल्योडुयाते शेषसंख्यातुल्यनक्षत्रं प्राप्ते गोचरेणेति शेषः।

तदाव्याधे रोगाद्, मृत्योर्मरणात्साध्वसं भयं वाच्यमिति शेषः। हीनभागे कुण्डल्या भागत्रये यस्मिन् भागे स्वल्परेखा विद्यन्ते, तस्मिन् भागे वर्षे वत्सरे तद्-भागसम्बन्धिनि वर्षे इति भावः। तदानीं तत्कालं तं भावं स्वल्परेखायुतं स्थानं सन् पण्डितः त्यजेदुत्सृजेत्। गोष्ठं गोशालां गवां वासस्थानं वा, क्षेत्रं कृषेरुत्पत्ति-स्थानं, कृषिः कर्षकक्रिया, एतत्सर्वं पुष्टभस्थं पुष्टराशौ-अधिकराशौ स्थितं निवेशितं कृतं वा सच्छुभं स्यादिति शेषः। क्षीणर्क्षस्थ क्षीणराशौ-अल्पफलराशौ स्थितं धनं गोष्ठादिकं नाशं क्षयमेति, जातकस्येति शेषः। यथा पाराशरहोरायामपि—

'धरणितनयवर्गे बिन्दुसंजातयोगे तनुलयमिहवर्षे पापगे मृत्युभीतिः।'

भौमाष्टक वर्ग में मंगल से लग्न तक जितने बिन्दु हों उन सबको जोड़ लेना चाहिए। उस योग फल को ७ से गुणाकर २७ से भाग देना चाहिए। इस तरह लब्धि तुल्य व शेष तुल्य वर्षों में रोग तथा मृत्यु-भय होता है। अथवा शेष व लब्धि दोनों के योग तुल्य वर्षों में रोगादि

होते हैं। अथवा शेष की संख्या के तुल्य नक्षत्र में जब पापग्रह का गोचर हो तो रोगोत्पत्ति तथा मृत्यु से भय होता है। अष्टक वर्ग कुण्डली में पूर्वोक्त (सम्बन्धित ग्रह की अधिष्ठित राशि से चार-चार राशि) तीन भागों में से जो हीन रेखा वाला भाग हो तो उस भाग से सम्बन्धित वर्ष में अर्थात् 'जन्मभेन्द्वर्कराशितः' के सुदर्शन सिद्धान्त के आधार पर उस भाग की राशियों के आयु वर्षों में अथवा उस भाग की राशियों पर मंगल का गोचर संक्रमण होने पर कृषि, धन व गोशाला (पशुधन) आदि का नाश होता है। अधिक रेखा वाले भाग के वर्षों में इनकी वृद्धि होती है। अर्थात् उक्त समय शुरू किया गया कृषि कर्म, धन का निवेश अथवा पशुधन का क्रय यथा प्रसंग हानिकर अथवा लाभकर होता है।

शुभग्रहों को रेखा एवं शुभवर्ष :

> एवं तनोः शोभनखेचरान्ते
> योगोऽब्दमाग्नेयदशा यदि स्यात् ।
> तथोत्तमानां सुखदां दशाया-
> मनेकसौभाग्यमवाप्नुयान्ना ॥१५३॥

एवमिति। एवमनेन प्रकारेण, तनोर्लग्नात् शोभनखेचरान्ते शुभग्रहपर्यन्ते, रेखाणां योगं विधाय तत्तुल्ये वर्षे यदि, आग्नेयदशा पापदशा स्यात्तदायं दोष एव बोध्यः। तथाविधानामुत्तमानां शुभानां सुखदां ग्रहाणां दशायां दाये विंशोत्तरी मुखेऽनेकसौभाग्यं विविधभाग्योदयं ना मनुजोऽवाप्नुयाल्लभेत्।

शुभ ग्रहों के अष्टक वर्ग में लग्न से शुभ ग्रह पर्यन्त जितनी रेखाएं हों, उनके योग के तुल्य वर्षों में यदि पाप ग्रह की दशा चल रही हो तो अशुभ फल होता है। यदि उक्त समय में शुभ ग्रहों की दशा अन्तर्दशा चल रही हो तो अनेक प्रकार से भाग्योदय होता है।

यहां पर शुभ व अशुभ ग्रहों का निर्णय स्वाभाविक शुभाशुभत्व, भावों के आधिपत्य से प्राप्त शुभाशुभत्व, कारकत्व से प्राप्त शुभा-शुभत्वादि के आधार पर ही करना चाहिए।

(i) स्वाभाविक पापी ग्रह भी बली होकर शुभ वर्ग में स्थित हों, शुभवर्गस्थ होकर शुभग्रहों से दृष्ट हों तो शुभ होंगे। इसके विपरीत पाप वर्गस्थ निर्बल शुभ ग्रह भी अशुभ माने जाएंगे।

(ii) यदि कोई पापग्रह केन्द्र व त्रिकोण का एक साथ अधिपति है जैसे—कर्क लग्न में मंगल तो वह शुभ ही होगा।

(iii) राहु व केतु त्रिकोण भाव में यदि त्रिकोणेश से सम्बन्ध रख रहे हों तो शुभ माने जाएंगे।

(iv) स्वाभाविक शुभ ग्रहों का केन्द्राधिपत्य होने पर उन्हें अशुभ माना जाएगा तथा अशुभ ग्रहों का केन्द्राधिपत्य शुभ होगा।

(v) यदि कोई शुभ ग्रह दुःस्थानों (६,८,१२) में स्थित हो, अस्त, शत्रुभावगत या निर्बल हो तो अशुभ माना जाएगा।

(देखें, भावमंजरी, अ० ४, श्लोक ७-९)

इस प्रकार शुभ व अशुभ ग्रह का निर्णय करके उनकी दशा में पूर्वोक्त रेखायोग तुल्य वर्षों में इष्ट या अनिष्ट फल का निर्देशन करना चाहिए।

बुध का भावगत फल :

ज्ञे केन्द्रकोणेऽष्टकलासमन्विते
जातीयविद्यापरिपुष्टभोगभाक् ।
तुङ्गादिगे भूगुणदृक्फलान्विते
वृद्धिर्भवेत्तस्य गृहस्य न क्षतिः ॥१५४॥

ज्ञ इति । ज्ञे बुधेऽष्टाभीरेखाभिः समन्विते युक्ते जातीयकुलसम्बन्धिनी विद्या या तां परिपुष्टोऽधिको भोगः सुखदुःखाद्यनुभवस्तस्य तं भजतीति भाक्, यदि तस्मिन् तुंगादिगे सर्वोच्च स्वराशि मूलत्रिकोणराशिगते, भूगुणदृक्फलान्विते एकद्वित्रिरेखासहिते सति, तस्यगृहस्य भावस्य क्षतिर्हानिर्न भवेत् । वृद्धिरेव-भवेत् ।

यदि आठ रेखाओं वाला बुध केन्द्र या त्रिकोण स्थान में हो तो मनुष्य अपने खानदानी व्यापार, कला या विद्या से सुखभोग प्राप्त करता है।

एक, दो या तीन रेखाओं से युक्त हुआ बुध ग्रह यदि केन्द्र या त्रिकोण में हो तथा अपनी उच्चराशि या स्वराशि में हो तो उस भाव की वृद्धि करता है। अर्थात् स्थित भाव की हानि नहीं करता।

बुध के विषय में जातकादेश में विशेष फल बताया गया है। बुध वाणी का कारक है। अतः वाणी से सम्बन्धित विशेष फल प्रस्तुत है—

(i) बुधाष्टक वर्ग में बुधाधिष्ठित राशि से अगली राशि में यदि शून्य अथवा एक रेखा हो तो व्यक्ति गूंगा होता है।

(ii) यदि उक्त द्वितीय राशि में दो या तीन रेखाएं हों तो चचंल वाक् अर्थात् वाचाल होता है।

(iii) यदि चार रेखाएं हों तो व्यक्ति परोक्तशेष अर्थात् दूसरे की बात का समर्थन करने वाला वक्ता होता है।

(iv) पांच-छह रेखाएं होने पर मनुष्य सज्जनों को प्रिय लगने वाली, औचित्य से युक्त व न्यायसंगत वाणी बोलता है। सात रेखाओं से व्यक्ति काव्य का रचयिता होता है।

(v) यदि आठ रेखाओं से युक्त द्वितीय राशि हो तो व्यक्ति की बात का कोई भी उत्तर नहीं दे सकता। अर्थात् वह सर्व-समर्पित, लोक प्रिय एवं लोकसम्मत, तर्कसम्मत बात कहता है कि उसका कोई भी विरोध नहीं कर पाता।

(vi) यदि लग्न से द्वितीय स्थान रेखारहित हो तो व्यक्ति अपनी बात कहने में सदा असमर्थ होता है।

(देखें जातकादेशमार्ग, अष्टक० श्लो० २२-२८)

यद्भं रेखापुष्टकं तस्य मासे
विद्यारम्भो विश्वविद्यासमेतः।
शून्यागारे ह्यस्य गोचारतश्चे-
त्सौरी सम्पज्ज्ञातिबन्धुक्षयः स्यात्॥१५५॥

यद्भमिति। यद्भं यो राशिः, रेखापुष्टकमधिकरेखावान् बुधाष्टकवर्गे शेष। तस्य राशेर्यो मासस्तस्मिन्नर्थात्स राशिर्यदा सूर्याक्रान्तस्तदेत्यर्थः। विद्याया आरम्भः कार्यस्तेन विश्वाभिः सर्वाभिः विद्याभिः समेतो युक्तो भवेदिति शेषः। ह्यस्य बुधाष्टकवर्गे यच्छून्यागारं रेखारहितराशिस्तस्मिन् गोचारतो गोचर-मार्गेण सौरी शनावागच्छीति चेतदा सम्पदैश्वर्यं, ज्ञातयः सगोत्रा बन्धवो मातुल-पुत्रादयस्तेषां क्षयो नाशः स्यात्।

बुधाष्टक वर्ग में जिस राशि में अधिक रेखाएं हों, उस राशि में जब सूर्य आए, उस मास में विद्यारम्भ हो तो व्यक्ति समस्त विद्या को जानने वाला होता है।

बुधाष्टक वर्ग की रेखारहित राशि में जब गोचर से शनि आए तब धन, बन्धु बान्धव, मित्र तथा मामा पक्ष में नाश होता है।

बुध रेखा से शुभवर्ष का ज्ञान :

शाशाङ्किमारभ्य वपुःपर्य्यन्त-
माद्याद्विधूथावधिकं फलानाम्।
योगोन्मिते वत्सरनामधेये
पुत्रार्थपूर्वं शुभमङ्गिनां स्यात् ॥१५६॥

शाशाङ्किमिति। शाशाङ्किं बुधमारभ्य वपुः पर्यन्तं लग्न पर्यन्तं यावत्फल-मर्थाद्यावत्यो रेखा वर्तन्तेतासां योगं कृत्वा स्थानान्तरे स्थापयेत्। एवमाद्याल्लग्नाद् विधूत्थावधिकं बुधपर्यन्तं, यावत्फलं यावत्यो रेखा विद्यन्ते, तासामेकीकुर्यंकान्ते न्यसेत्। ततः फलानां रेखाणां योगोन्मिते योगतुल्ये वत्सरनामधेये वर्षेऽगिनां जन्मिनां पुत्रार्थपूर्वं पुत्रधनादि शुभं प्रशस्तं स्यात्। तथा च ग्रन्थान्तरे—

'बुधमारभ्य लग्नान्तं लग्नाज्ज्ञावधिकं तथा।
रेखाफलैक्यतुल्येऽब्दे धनपुत्रादिकं शुभम् ॥' इति

बुध के अष्टक वर्ग में बुध से लेकर लग्न पर्यन्त जितनी रेखाएं हों, उनके योग के समान वर्ष में पुत्र धनादि का लाभ होता है।

इसी प्रकार लग्न से बुध पर्यन्त रेखायोग के बराबर वर्ष में धन व पुत्र प्राप्ति होती है। अथवा दोनों के योगफल के तुल्य वर्ष में उक्त फल होता है।

बृहस्पति का भावगत फल :

सुरेज्याष्टवर्गेऽधिकस्थानभेऽङ्गे
निषेकं विधत्ते सुतार्थी विभागे।
दिशस्तस्य राशेर्निशान्तस्थितानि
प्रभूतानि गोवित्तयानानि जन्तोः ॥१५७॥

सुरेज्येति। सुरेज्यो गुरु स्तस्याष्टवर्गे रेखाष्टवर्गेऽधिकस्थानभे बहुरेखा-युक्तराशौ, अंगे लग्ने सुतार्थी पुत्रार्थी निषेकमाधानं विधत्ते कुरुते। तथा तस्य राशे-राधिकरेखायुक्तराशेर्या दिक् तस्यां विभागे प्रदेशे जन्तोर्जन्मिनो नरस्येति यावत् प्रभूतानि बहूनि, गोवित्तयानानि, निशान्तं गृहं तस्मिन् स्थितानि निश्चलानि भवेयुरिति।

गुरु के अष्टक वर्ग में जिस राशि में अधिक रेखाएं हों, उस राशि के लग्न में व्यक्ति यदि यथासमय गर्भाधान करे तो पुत्र प्राप्ति होती है।

इसी प्रकार अधिक रेखायुक्त राशि की दिशा में गो, धन तथा वाहन की प्राप्ति होती है तथा घर में भी वे वस्तुएं उसी दिशा में स्थित होती हैं।

पूज्याष्टवर्गाल्पफलर्क्षगेऽर्के
सर्वाणि शस्तानि विनाशितानि।
बाणादिरेखायुतदुष्टगार्ये
दीर्घायुरत्यर्थयुतो जितारिः ॥१५८॥

पूज्येति। पूज्यो गुरुस्तस्याष्टकवर्गेऽल्पफलर्क्षं हीनरेखायुक्तराशिस्तस्मिन् गते प्राप्तेऽर्के रवौ, तदा सर्वाणि शस्तानि शुभानि विनाशितानि विनष्टानि। भवन्तीति शेषः। बाणादिरेखाभिः पंचपूर्वरेखाभिर्युते सहिते दुष्टगे षष्ठाष्टमव्यय-गते, आर्ये गुरौ यदा तदा दीर्घायुरत्यर्थयुक्तो बहुधनयुतः जितारिर्वशीकृतशत्रुश्च भवेत्।

गुरु के अष्टक वर्ग में जिस राशि में कम रेखाएं हों, उसमें जब गोचर से सूर्य आए तब सारे कार्यों में विघ्न होता है।

यदि पांच से आठ रेखाओं से युक्त राशि में गुरु त्रिक् स्थान (६,८,१२) में भी स्थित हो तो दीर्घायु, धन एवं शत्रुनाश को देने वाला होता है।

स्वोच्चे स्वभे साष्टफले दयायां
चतुष्टये वा सुरराजपूज्ये।
विहाय निम्नारिगृहं विमूढ-
गृहे स्वकीर्त्या वसुधाधिनाथः ॥१५९॥

स्वोच्च इति। सुरराजपूज्ये बृहस्पतौ, स्वोच्चे निजोच्चे कर्क इत्यर्थः। स्वभे स्वराशौ धनुर्मीनयोरन्यतरे साष्टफलेऽष्टामी रेखाभिः सहिते दयायां नवमे वा चतुष्टये केन्द्रे निम्नारिगृहं नीचशत्रुराशिं विहाय हित्वा विमूढगृहेऽस्तराशौ भवति, चेत्तदा, स्वकीर्त्या निजयशसा वसुधा पृथ्वी तस्या अधिनाथः स्वामी भवेदिति शेषः।

आठ रेखाओं से युक्त गुरु यदि स्वोच्च या स्वगृही होकर केन्द्र, त्रिकोण में स्थित हो।

अथवा बृहस्पति आठ रेखाओं से युक्त ऐसी राशि में स्थित हो जो उसकी नीच या शत्रुराशि न हो और अस्तगंत न हो तो मनुष्य अपनी कीर्ति से समस्त पृथ्वी पर शासन करता है। अर्थात् ऐसा व्यक्ति समस्त विश्व में अत्यन्त प्रसिद्ध व प्रभावी होता है।

बृहस्पति के विषय में जातकादेशमार्ग में बताया गया है कि बृहस्पति के अष्टक वर्ग में अधिक रेखा युक्त राशि में जब गोचर से गुरु का संक्रमण हो तो मन्त्रों का ग्रहण, पुरश्चरण, अग्निकर्म, यज्ञ, वेदाभ्यास, ब्राह्मण भोजन, पुत्र प्राप्ति के प्रयत्न, धनार्जन, धन-संग्रह आदि सभी क्रियाएं सफल होती हैं तथा कम रेखा युक्त राशि के संक्रमण काल में निष्फल होती हैं।

(देखें जातकादेशमार्ग, अष्टक० श्लो० २९)

वसुन्धरावेदकुलप्रजाता
नरोऽत्रयोगे नरपोपमाः स्युः।
गुणाभिरामा बहुपुण्यभाजः
ख्याताः प्रभावप्रतिपत्समेताः ॥१३०॥

वसुन्धरेति। अत्राऽस्मिन्योगे, वसुन्धरा पृथ्वी तस्या वेदा ब्राह्मणा स्तेषां कुलेषु वंशेषु प्रजाता उत्पन्ना नराः मनुष्याः, नरपाः राजानस्तेषामुपमाः सदृशा गुणा ज्ञान विनय शूरतादयेत्येभिरभिरामाः मनोहराः बहुपुण्यभाजः प्रभूतपुण्यवन्तः ख्याताः प्रसिद्धाः प्रभावः प्रतापः प्रतिपद् बुद्धिराभ्यां समेतायुक्ताः स्युरिति।

यदि पूर्वोक्त योग में ब्राह्मण कुल में जन्म हुआ हो तो मनुष्य राजाओं के समान वैभवशाली, ज्ञानविनयादि सद्गुणों से युक्त पुण्यात्मा विख्यात, प्रतापी तथा बुद्धिमान् होता है।

आशय यह है कि आठ रेखाओं वाला बृहस्पति स्वराशि या उच्च राशि में केन्द्रगत या त्रिकोणगत हो अथवा उक्त स्थानों में नीच शत्रुग्रहों के अतिरिक्त ग्रहों में अस्तंगत दोष रहित होकर स्थित हो तो भी उक्त फल समझना चाहिए।

गुरौ सप्तरेखान्विते साम्रृतांशौ
प्रभूताङ्गनावित्तपुत्रैरुपेतः ।
रसस्थानयुक्ते समेतोऽर्थयानै—
र्मरुत्स्थानयुक्ते जयी शीलवान् स्यात् ॥१६१॥

गुराविति । गुरौ बृहस्पतौ सप्तभी रेखाभिरन्विते युक्ते साम्रृतांशौ चन्द्रे वर्तमानो यः स तस्मिन्, तदा प्रभूताः प्रचुराः अंगनाः स्त्रियो वित्तानि धनानि, पुत्रास्तनयास्तैरुपेतो युक्तः स्यात् । यदि तस्मिन् रसस्थानयुक्ते षड्रेखायुक्ते सति तदार्थ्या धनानि, यानानि वाहनानि तैः समेतो युक्तो भवेदिति शेषः । यदि तस्मिन्मरुत् स्थानयुक्ते पंचरेखायुक्ते सति तदा जयी विजयी शीलवान् स्यात् ।

यदि बृहस्पति सात रेखाओं से युक्त हो तथा चन्द्रमा के साथ हो तो मनुष्य बहुत धनी, सुन्दर स्त्री से युक्त तथा पुत्रवान् होता है। यदि छह रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य धन तथा वाहन से युक्त होता है। पांच रेखाओं से युक्त हो तो व्यक्ति विजयी तथा शुद्ध चरित्र वाला होता है।

गुरु शुक्राष्टक से शुभवर्ष का ज्ञान :

जीवास्फुजिद्भ्यां हरिजावसानं
प्राग्लग्नमारभ्य तपःसितान्तम् ।
ऐक्ये फलानां च तदुन्मितेऽब्दे
वाच्यं सुखं वित्तसुतादिजातम् ॥१६२॥

जीवेति । जीवो गुरुः आस्फुजिच्छुक्रस्ताभ्यां हरिजावसानं लग्नपर्यन्तं, यावत्फलमर्थाद्यावत्यो रेखाविद्यन्तु तासां योगं कृत्वा स्थानान्तरे स्थापयेत् । एवं प्राग्लग्नं लग्नमारभ्य, तपःसितान्तं गुरुशुक्रावसानं, यावन्फलमर्थाद्यावत्यो रेखा विद्यन्ते तासां योगं विधायैकान्ते स्थापयेत्। फलानां रेखाणामैक्ये कृते सति तदुन्मिते तत्तुल्येऽब्दे वर्षे वित्तसुतादिजातं धनपुत्रादिजन्यं सुखं शर्म सुखहेतु वा वाच्यं कथितव्यम् । तदुक्तं ग्रन्थान्तरे—

'एवं च गुरुशुक्राभ्यां विलग्नं तनुतश्च तौ ।
तदन्तसंख्यातुल्येऽब्दे धनपुत्रादिजं सुखम् ॥' इति

गुरु के अष्टक वर्ग में गुरु से और शुक्र के अष्टक वर्ग में शुक्र से लग्न पर्यन्त जितनी रेखाएं हों उनका अलग-अलग योग कर लेना

चाहिए। इसी प्रकार लग्न से गुरु व लग्न से शुक्र तक जितनी रेखाएं हों उनका भी योग कर लेना चाहिए।

इन योग तुल्य वर्षों में धन तथा पुत्रादि का सुख मिलता है।

यहां अन्तिम सीमा रूपी भाव के रेखा योग को नहीं लेना है। अर्थात् जब कहते हैं कि गुरु से लग्न तक तो इसका आशय यह है कि लग्न से पूर्ववर्ती भाव तक अर्थात् लग्नोपान्त्य रेखा-योग। पूर्वोक्त उदाहरण में बृहस्पति के अष्टक वर्ग में गुरु से लग्नोपान्त ५+५+५ ४+३+५+५+=३२ इस योग तुल्य बत्तीसवें वर्ष में धनादि का लाभ होगा। इसी प्रकार लग्न से गुरु तक ४+४+५+७+४=२४ तुल्य वर्ष में भी उक्त फल मिलेगा।

शुक्राष्टक में शुक्र से लग्नोपान्त्य २+५+५+५+५+२= २४ वर्ष, लग्न से शुक्र तक ४+६+५+६+६+१=२८ वर्ष। अतः २४वें या २८वें वर्ष में धनादि का लाभ होगा।

अथवा गुरु से प्राप्त वर्ष ३२+२४=५६वें वर्ष में व शुक्र से प्राप्त वर्ष २८+२४=५२वें वर्ष में धन व पुत्रादि का लाभ होगा।

शुक्र का भावगत फल :

शुक्रेऽष्टरेखासहिते त्रिकोणे
केन्द्रे चमूधोरणयः कलाभिः।
सप्तप्रमाभिः प्रयुतेऽर्थरत्नेड्
भव्यायुरन्तं बहुभोगभोगी ॥१६३॥

शुक्र इति। शुक्रे भृगौ अष्टाभी रेखाभिर्युक्ते त्रिकोणे, केन्द्रे वा स्थिते सति चमूधोरणयः सेना वाहनपतिर्भवेदिति शेषः। यदि तस्मिन् सप्तप्रमाभिः सप्तभिः कलाभिः प्रयुते युते सति जन्तुरर्थरत्नेड् धनरत्नानां स्वामी, आयुरन्तं आयुपर्यन्तं, बहुभोगभोगी प्रभूतभोगभाक् स्यादिति शेषः। अत्रविशेषमाह जातकादेशकारः—

'बह्वक्षे भवने यदा भृगुसुतः स्वीयाष्टवर्गे चरे-
च्छय्याद्याशयनोपकारि सकलं सम्पादनीयं तदा।
संगीताभ्यसनं विवाहकरणं कामोपभोगाय यत्
कर्त्तव्यं तदपि श्रिये पुनरपि क्षौमादिसम्पादनम् ॥' इति

यदि शुक्र आठ रेखाओं से युक्त होकर त्रिकोण या केन्द्र स्थानों में स्थित हो तो मनुष्य सेनानायक तथा अनेक वाहनों का स्वामी होता है। यदि सात रेखाओं से युक्त शुक्र केन्द्र या त्रिकोण में हो तो मनुष्य धन तथा रत्नों का स्वामी होता है और जीवन पर्यन्त सुखों को भोगता है।

काव्येऽधरास्तान्तिमनैधनोपगे
प्रागुक्तपृथ्वीपतियोगनाशनम्
भःस्वल्परेखाढ्यभदिग्विभागके
सन्मन्दिरं स्त्रीजनवश्यकारणात् ॥१६४॥

काव्यइति। काव्ये शुक्रे ऽधरे नीचराशौ, अस्ते अस्तंगतेऽन्तिमे व्यये नैधनेऽष्टमे गते स्थिते सति तदा प्रागुक्तपृथ्वीपतियोगनाशनं पूर्वोक्त राजयोगस्य नाशो भवति। भः शुक्रः स्वल्परेखाढ्यभदिग्विभागेऽल्परेखायुक्तराशेर्दिशि दिग्विभागे स्त्रीजनवश्य कारणात् सन्मन्दिरमुत्तमगृहं भवेदिति शेषः।

यदि शुक्र नीच राशि में या अस्तंगत होकर व्ययस्थान या अष्टम में स्थित हो तो राजयोग का नाश होता है। अर्थात् अन्यथा शुक्र से प्राप्त होने वाले राजयोगों का भंग हो जाएगा।

शुक्राष्टक वर्ग में कम रेखा वाली दिशा के विभाग में अर्थात् उस तरफ पड़ने वाले प्रदेशों में मनुष्य स्त्री जनों के कारण उत्तम मकानों को प्राप्त करता है।

गुरु व शुक्र के रेखाष्टक वर्ग में पूर्वोक्त प्रकार से गुरु शुक्र से लग्न पर्यन्त एवं लग्न से गुरु शुक्र पर्यन्त रेखायोग अथवा दोनों रेखायोगों के तुल्य वर्षों में मनुष्य को धन पुत्रादि की प्राप्ति समझनी चाहिए।

शनि का भावगत फल :

सौरेः खभे गोचरतो यदार्कजे
नुः पंचतारं धननाशनं किमु।
रूपद्विरामाब्धिकलान्विते यमे
भुक्तेऽल्पमायुर्निजतुङ्गकण्टके: ॥१६५॥

सौरेरिति। सौरेः शनेरष्टकवर्गे, खभे शून्यराशौ यदा गोचरतो गोचरे-ऽर्कजेशनौ प्राप्ते सति तदा नुर्मनुष्यस्यारं शीघ्रं पंचता मृत्युर्भवेत्। किमु अथवा

धननाशनं धनस्य क्षयः स्यात् । यदि यमे शनौ निजतुंगकण्टकैर्मुक्ते रहिते रूपद्विरामाब्धिकलान्विते एकद्वित्रिचतूरेखायुक्ते सति तदाऽल्पं स्वल्पमायु स्यादिति शेषः ।

शनि के अष्टक वर्ग में जिस राशि में कोई भी रेखा न हो, उसमें गोचर से जब शनि भ्रमण करता है तो मनुष्य की शीघ्र मृत्यु होती है। यदि अन्य प्रकार से आयुक्षय योग सिद्ध न होता हो तो धन का नाश होता है।

यदि स्वोच्च राशिगत शनि केन्द्र से बाहर हो तो तथा एक, दो, तीन या चार रेखाओं से युक्त हो तो व्यक्ति अल्पायु होता है।

> नाराचाङ्गस्थानयुक्ते सवीर्ये-
> ऽङ्गेजन्मादिप्राज्यदुःखं स्वनाशः ।
> मन्देऽक्षादिस्थानयुक्तेऽरिनीच-
> भे दीर्घायुः सत्खसद्वर्गचन्द्रे ॥१६६॥

नाराचेति । मन्दे शनौ सहवीर्येण बलेन वर्तमानः सवीर्यस्तस्मिन्नङ्गे लग्ने नाराचांगस्थानयुक्ते पंचषड्रेखासहिते सति तदा जन्मादिप्राज्यदुःखं जन्ममरणादि बहुदुःखमल्पायुरित्यर्थः । स्वस्य धनस्य नाशः क्षयः स्यादिति शेषः । यदि तस्मिन् अक्षादिस्थानयुक्ते पंचप्रभृतिरेखायुक्तेऽरिभे शत्रुराशौ, नीचभे स्वनिम्नराशौ वा सत्खसत्सौम्यग्रहस्तस्य वर्गे गृहादिषड्वर्गे, चन्द्रे स्थिते भवति तदा दीर्घायुर्दीर्घजीवी भवेदिति शेषः ।

यदि बलवान् शनि लग्न में स्थित होकर पांच या छह रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य को बार-बार जल्दी जन्म लेना पड़ता है। अर्थात् वह अल्पायु प्राप्त करता है।

यदि शत्रु राशि या नीच राशि में शनि पांच, छह, सात, आठ रेखाओं से युक्त हो और चन्द्रमा शुभग्रह के वर्ग में हो तो मनुष्य की दीर्घायु होती है।

> सम्भोच्चस्थानके मूढनीचा—
> रिस्थे दास्युष्ट्रार्थयुक्तः सुतेऽङ्गे ।
> साङ्कस्थाने ग्रामपुस्तंत्रमंत्र—
> युङ् मन्देऽद्रिस्थानयुग्भे धनाढ्यः ॥१६७॥

साम्भोधीति । मन्दे शनौ सुते पचमेऽगे लग्ने मूढनीचारिस्थेऽस्त नीचशत्रु-राशिस्थिते साम्भोध्यक्षस्थानके चतुर्भिः पंचमी रेखाभिर्वा युक्ते सति तदा दासी प्रसिद्धार्थक, उष्ट्राश्चर्यो धनं तैर्युक्तः सहितः स्यादिति शेषः। यदि तस्मिन् साष्ट-स्थानेऽष्टाभीरेखाभिर्युक्ते तदा ग्रामः, पूः पुरं तत्र तन्त्रशास्त्रं मन्त्रो मन्त्रशास्त्रं तैर्यु-ज्यते। यदि तस्मिन् अद्रिस्थान युग्मे सप्तरेखायुक्तराशौ भवति तदा धनाढ्यो धन-वान् स्यादिति शेषः।

लग्न या पंचम स्थान में शनि यदि नीच, शत्रु राशिगत या अस्तगत हो तथा चार-पांच रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य दासी, ऊंट आदि वाहन तथा धन से युक्त होता है।

यदि शनि उक्त स्थिति में आठ रेखाओं से युक्त हो तो मनुष्य ग्राम तथा नगर का स्वामी और तन्त्र व मन्त्र का विद्वान् होता है।

यदि शनि सात रेखाओं से युक्त हो तो व्यक्ति धनवान् होता है।

शनिरेखा से कष्टप्रद वर्ष का ज्ञान :

पातङ्गिमारभ्य धनावसानं
कल्पादिनोत्यावधिकं कलानाम्।
योगोन्मितेऽब्दे मनुसम्भवस्य
हानिं वदेद्वित्तसुखात्मजानाम् ॥१६८॥

पातंगिमिति। पातङ्गि शनिस्तमारभ्य प्रारभ्य धनं लग्नं, तस्यावसान-मन्तिमं गणयित्वा यावत्फलं यावद्रेखा योगो विद्यते तं स्थानान्तरे स्थापयेत्। एवं कल्पाल्लग्नात् इनोत्थावधिकं मन्दाक्रान्तराशिपर्यन्तं गणयित्वा यावत्फलं यावत्यः रेखाः विद्यन्ते तावतीनां युतिं सविधायैकान्ते न्यसेत्। ततः कलानां रेखाणां योगो-न्मितेऽब्दे वर्षे मनुसम्भवस्य मनुष्यस्य वित्तं धनं सुखं पुत्रस्तेषां हानिः क्षतिं वदेत्। कथयेत्। तदुक्तं ग्रन्थान्तरे—

'लग्नतः शनि पर्यन्तं विलग्नावधिकं शनेः।
रेखाफलैक्य मानाब्दे धनपुत्रसुखक्षतिः॥' इति

शनि के अष्टक वर्ग में शनि से लग्न पर्यन्त जितनी रेखाएं हों, उनके योगफल के तुल्य वर्षों में, लग्न से शनि तक के रेखायोग के तुल्य वर्षों में अथवा दोनों के योग तुल्य वर्षों में धन, पुत्र व सुख की हानि होती है।

शन्यष्टक वर्ग में अन्य ग्रहों से कुफल विचार :

मन्दांशलग्नर्क्षफलैक्यसम्मिते
ऽब्देसौम्यहीने प्रथमे तु शस्त्रभीः ।
अब्देऽर्कभूकल्पकलायुतिप्रमे
भीतिः क्षति स्यात्तमसः सुखक्षतिः ॥१६९॥

मन्देति । मन्दाष्टकवर्गे मन्दांशं लग्नर्क्षफलैक्यसम्मिते गुलिकलग्नभयोः फलानामैक्ये कृते सति तन्मितेऽब्दे वर्षे शस्त्रभीः शस्त्रभयं स्यात् । इह फलानामैक्यमीदृशं कार्यं मन्दाष्टवर्गे गुलिकतो लग्नान्तं फलैक्यं लग्नतो गुलिकान्तं फलैक्यं चेत्तत्तुल्येऽब्दे शस्त्रभयं वाच्यम् । यत्र प्रथमे लग्ने सौम्यहीने शुभग्रहरहितेऽर्थाल्लग्ने कश्चिच्छुभग्रहो न स्यात्तदा तत्फलं वाच्यं नान्यथा । अर्कभूकल्पकलायुतिप्रमे शनिलग्नयोः फलैक्यतुल्येऽब्दे वर्षे भीतिर्भयं क्षतिर्हानिश्च स्यात् । तमसो राहोः सुखस्य शर्मणः क्षतिर्हानिरर्थान्मन्दाष्टकवर्गे राहोर्लग्नान्तं एवं लग्नाद्राहोरन्तं फलैक्यं कार्यमेतत्तुल्ये वर्षे सुखहानिः स्यात् । तथा च पाराशर होरायाम्—

'मन्दांशांगभयोः फलैक्यकमिते सौम्योज्झिते शस्त्रभी-
-र्मन्दाङ्गैक्यमिते फले क्षतिभयं राहोऽसुखानां क्षतिः ॥' इति

शनि के अष्टक वर्ग में गुलिक से लग्न पर्यन्त तथा लग्न से गुलिक पर्यन्त रेखायोग के तुल्य वर्षों में अथवा दोनों योगों के महायोगतुल्य वर्ष में शस्त्र से भय होता है। किन्तु उक्त फल तभी घटित होगा जब लग्न में कोई शुभ ग्रह न हो ।

तमोमहीनन्दनभानुयोगे
पृथक्-पृथक् तत्फलकं क्रमेण ।
भीतिर्विषोत्थाऽस्त्रभवा क्षतोत्था
समानवर्षे नहि संशयोऽत्र ॥१७०॥

तम इति । तमो राहुः महीनन्दनो भौमः भानुः सूर्यः एषां योगे फलयोगे कृते सति समानवर्षे तत्तुल्यवर्षे तत्फलकं तेषां फलं क्रमेण पृथक्-पृथक् विषोत्था विषजन्या भीतिर्भयमस्त्रभवाऽस्त्रजन्या भीतिः क्षतोत्था व्रणजन्या भीतिर्वाच्येति शेषः । अर्थाद्राहुलग्नफलयोगतुल्ये वर्षे विषभीतिः, भौमलग्नफलयोगतुल्ये वर्षे शस्त्रभीतिः, सूर्यलग्नफलयोग तुल्ये वर्षे व्रणभीतिर्भवेदित्यर्थः । अत्रास्मिन् योगे संशयः संदेहो नहि कर्तव्यो बुधैरिति शेषः ।

इसी प्रकार शनि से लग्न व लग्न से शनि तक के वर्षों में भय तथा हानि होती है ।

शनि के अष्टक वर्ग में राहु व लग्न, लग्न व राहु तक के रेखायोग अथवा दोनों योगों के तुल्य वर्ष में सुख का नाश होता है।

इसी प्रकार से शन्यष्टक वर्ग में राहु से लग्न पर्यन्त और लग्न से राहु पर्यन्त रेखायोग तुल्य वर्ष में विष से भय होता है।

मंगल के अष्टक वर्ग में मंगल व लग्न से उक्त प्रकार से रेखा-योग जानकर तत्तुल्य वर्ष में शस्त्र से भय कहना चाहिए।

इसी प्रकार सूर्याष्टक वर्ग में सूर्य से लग्न तक और लग्न से सूर्य तक रेखाओं के योग तुल्य वर्षों में घाव आदि से भय निःसन्दिग्ध रूप से कहना चाहिए।

शनि रेखा व गोचर से कुसमय का ज्ञान :

सञ्ज्ञासूनोरष्टवर्गस्य मध्ये
यद्यद्गेहे स्यात्फलं शून्यसंज्ञम् ।
तत्तद्राशौ गोचरेणार्कसूनौ
सम्प्राप्ते वार्केऽङ्गरुक्पीडनं स्यात् ॥१७१॥

संज्ञासूनोरिति। सञ्ज्ञासूनोः शनेरष्टवर्गस्यमध्ये यद्यद्गेहे यस्मिन् यस्मिन् राशौ शून्य संज्ञं शून्यं फलं रेखाभाव इत्यर्थः। गोचरेण तत्तद्राशौ तस्मिन् तस्मिन् राशौ, अर्कसूनौ शनौ सम्प्राप्ते संगते वा पक्षान्तरेऽर्के रवौ सम्प्राप्ते सति तदा अंगे शरीरे रुग् रोगः पीडनं पीडा च स्यात्। यदुक्तं केनचित्—

मन्दाष्टवर्गे यद्राशौ शून्यं तद्राशिगे खले।
तत्त्रिकोणगते वापि दुष्टपाकोदये तथा।
रसकस्येच्छितो वापि म्रियते तत्र वत्सरे ॥' इति

शनि के अष्टक वर्ग में जिस-जिस राशि म रेखा का अभाव हो, उसमें गोचर से शनि के आने पर अथवा सूर्य के आने पर शरीर में रोग तथा पीड़ा आदि कुफल होते हैं।

इस विषय में विशेष बताया गया है कि शून्य रेखा वाली राशि में जब पापग्रहों का गोचर हो, साथ ही दशान्तर्दशा अशुभ हो, अथवा रेखारहित राशि से त्रिकोण (५,९) राशियों में पापग्रह का गोचर होने पर निश्चय से मृत्यु होती है। यहाँ पर संक्रमण का वर्ष लेना चाहिए।

इति श्रीमत्पण्डित मुकुन्द दैवज्ञ विरचितेऽष्टकवर्गमहानिबन्धे पं० सुरेशमिश्र कृतायां 'मञ्जुलाक्षरायां हिन्दी व्याख्यायां भिन्नाष्टकवर्गाध्यायो द्वितीयोऽध्यायः ॥

३

समुदायाष्टकवर्गाध्यायः

समुदायाष्टक वर्ग चक्र

निःशेषरेखास्थितिभाभिधान-
कोष्ठं विलिख्येह भगोलचक्रम् ।
रेखोपगस्थानफलं क्रियादि-
भानामिनादिद्युसदां प्रवक्ष्ये ॥१॥

निःशेषेति । इहास्मिन्नध्याये, निःशेषरेखास्थितिभाभिधानकोष्ठं सम्पूर्ण-रेखास्थितराशीनां कोष्ठं, भानां राशीनां गोलचक्रं गोलरूपचक्रं, विलिख्य क्रियादि-भानां मेषादिराशीनामिनादिद्युसदां सूर्यादिग्रहाणां च रेखोपगस्थानफलं रेखाणा-मुपगतस्थानानां प्राप्तस्थानानां फलं फलादेशं प्रवक्ष्ये ब्रवीमि । इह वैद्यनाथादीनां कतिपयानामाचार्याणां वचनेषु बिन्दुशब्देन रेखा बोध्येति ।

इस अध्याय में सम्पूर्ण रेखाओं की स्थिति तथा राशियों के कोष्ठकों से युक्त भ-गोल चक्र का निर्माण मैं (ग्रन्थकार) बता रहा हूं। इसके पश्चात् मेषादि बारह राशियों तथा सूर्यादिग्रहों का रेखास्थान जनित फल कथन कहता हूं।

गुणाश्चतुर्धा यमरामवेदा-
श्चाग्नीभगोष्ठाः सवितुर्द्विरामाः ।
बाणाश्विवेदाग्नियमाश्वियुग्म-
रूपगेन्दवोऽब्जस्य ततः कुजस्य ॥२॥
वेदाक्षरामाम्बुधिरामरामा
वेदास्त्रिधा दर्शनशैलयुग्माः ।

शस्याग्निभूबाणयमाङ्कषड्भू-
युग्मास्त्रबाणागगुणा विलोमात् ॥३॥
गुरोर्द्विभूस्वशिवगुणाब्धियुग्म-
वेदाशिववेदागकृताः सितस्य ।
यमौ त्रिधाऽऽज्याशमिता युगाब्धि-
द्विव्यब्धिरामाङ्कगुणा अथार्के ॥४॥
ज्योष्ठास्त्रिधावेदमितास्त्रिरामाः
कृतास्त्रिधाषट् कुरथाश्चरामाः ।
बाणेषुदोःषट्कुयमाशिवतर्का-
ङ्गैके तनोः स्यात्समुदायनामा ॥५॥
अष्टवर्गः क्रमादेष सूर्याद्याक्रान्तयुक्तभात् ।
आरभ्य भद्वादशके निदध्याज्जनने विशाम् ॥६॥

गुणाइति । वेदेति । गुरोरिति । ओष्ठा इति । अष्टवर्ग इति च । गुणा इत्यादीनां चतुर्णां श्लोकानां स्पष्टोऽर्थोऽधोलिखित चक्रे द्रष्टव्यः । समुदाय नामेति । एष समुदायनामाष्टवर्गोरव्यादीनां ग्रहाणां क्रमाज्ज्ञेयः । विशां पुंसां जनने जन्मकाले सूर्यादीनां लग्नान्तानां च आक्रान्तराशयस्तानारभ्य भद्वादशके द्वादशराशौ उक्ताङ्कान् विलोमाद् विपरीतेन विधिनानिदध्यात् । स्थापयेद् दैवज्ञ इति शेषः । तथा च मन्त्रेश्वरः 'बालो बलिष्ठो लवणाङ्गमत्सर' इत्यादिना तीर्थकृदित्यन्तेन च ।

यहां सर्वाष्टक वर्ग या समुदायाष्टक वर्ग निर्माण का प्रकार बताया जा रहा है । सब अष्टक वर्गों का समुदाय अर्थात् योग समुदायाष्टक कहलाता है । लग्न सहित सातों ग्रहों के अष्टक वर्ग चक्र में मेषादि राशियों में कुल कितनी रेखाएं (शुभफल द्योतक) पड़ीं । उन सबका योग करके मेषादि राशियों के नीचे के कोष्ठक में लिख लेना चाहिए । यहां ध्यान रखिए, किन्हीं विद्वानों के मतानुसार लग्न से समुदायाष्टक नहीं बनाया जाता; किन्तु ग्रन्थकार लग्न को समुदायाष्टक में सम्मिलित करते हैं । यहां श्लोक सं० २ से श्लोक सं० ५ तक सब ग्रहों के अष्टक वर्ग के रेखाप्रद स्थानों के आधार पर समुदायाष्ट वर्ग के रेखास्थानों की संख्या बतायी गयी है ।

प्रत्येक ग्रह अपनी अधिष्ठित राशि से सब अष्टक वर्गों में कितनी रेखाएं देता है यह इस चक्र में स्पष्ट है—

समुदायाष्टकवर्गाङ्क (महायोग ३३७)

भाव	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	योग
रवि	३	३	३	३	२	३	४	५	३	५	७	२	४३
चन्द्र	२	३	५	२	२	५	२	२	२	३	७	१	३६
भौम	४	५	३	५	२	३	४	४	४	६	७	२	४९
बुध	३	१	५	२	६	६	१	२	५	५	७	३	४६
गुरु	२	२	१	२	३	४	२	४	२	४	७	३	३६
शुक्र	२	३	३	३	४	४	२	३	४	३	६	३	४०
शनि	३	२	४	४	४	३	३	४	४	४	६	१	४२
लग्न	५	३	५	५	२	६	१	२	२	६	७	१	४५

इस प्रकार कुल योग ३३७ होता है। इसी चक्र का निर्माण राशि क्रम से अथवा सूर्यादि ग्रहों के क्रम से किया जा सकता है। परिणाम समान ही होगें।

इस प्रकार मनुष्य के जन्म समय में लग्न सहित सूर्यादि सातों ग्रहों की अधिष्ठित राशि से उक्त चक्रानुसार स्थानों में रेखांकों को लिखना चाहिए।

इस विषय को अपने पूर्वोक्त वास्तविक उदाहरण के संदर्भ में समझते हैं। मेष लग्न में जन्म हुआ है। उस कुण्डली में सूर्य कन्या राशि में, चन्द्रमा मकर, मंगल मीन, बुध तुला, गुरु कन्या, शुक्र तुला, शनि मीन राशि में स्थित है। अब इसका सर्वाष्टक चक्र बनाना है। सूर्य की अधिष्ठित राशि कन्या से प्रथम द्वितीयादि भावों की कल्पना की। तदनुसार पूर्वोक्त समुदायाष्टक वर्गांकों के अनुसार सूर्य से प्रथम भाव (कन्या) में ३, द्वितीय भाव (तुला) में ३ इत्यादि क्रम से चक्र का निर्माण किया। चक्र पृष्ठ १५१ पर प्रस्तुत है—

अब देखिए, मेष राशि को उदाहरण सर्वाष्टक में २६ अंक मिले हैं। इसे यदि इस तरह से देखें कि आठों भिन्नाष्टक वर्गों में (पूर्वोक्त कुण्डली देखें) मेष राशि को क्रमशः ४, ५, २, ५, ४, ४, २ एवं शून्य (सूर्यादि लग्नान्त) रेखाएं मिलीं थी। इनका योग किया तो २६ है। आशय यह है कि भिन्नाष्टक वर्गों में जिस राशि को जितनी रेखाएं मिलीं हों, उनका योगफल करके उनके नीचे लिख लेने से भी समुदायाष्टक वर्ग बन जाएगा। दोनों प्रकारों में क्रियाभेद होने पर भी परिणाम वही होगा। इसी बात को ग्रन्थकार भी अगले श्लोकों में बता रहे हैं।

समुदायाष्टक वर्ग साधन का दूसरा प्रकार :

> रव्यादीनां स्वस्वभिन्नाष्टवर्गे-
> ऽङ्कोपेतानां यत्फलं यद्गृहे स्यात्।
> तस्मात्सर्वं तत्समुद्धृत्य मेषा-
> दीनां भानां चक्रके विन्निदध्यात् ॥७॥
> कार्यं तदैक्यं समुदायनामा
> स्यादष्टवर्गस्तनुखेचराणाम् ।

बुधैस्ततो गोचरभावजानि
संचिन्तनीयानि फलानि पुंसाम् ॥८॥

रव्यादीनामिति। कार्यमिति च। रव्यादीनां सूर्यादीनां ग्रहाणामंगोयेतानां लग्नसहितानां स्वस्वभिन्नाष्टकवर्गे निजनिजवेधाष्टवर्गे यद्गृहे यस्मिन् राशौ यत्फलं यावन्मितं फलं रेखा स्यात् तस्माद् राशेस्तत्सर्वं समुद्धृत्य मेषादीनां भानां राशीनां मण्डले चक्रे वित्पण्डितो निदध्यात्। तत्तदैक्य तेषामैक्यं योगो कार्यो विधेयस्तदा तनुखेचराणां लग्नग्रहाणां समुदायनामाष्टकवर्गः स्यात्। तस्मात् पुंसां पुरुषाणां गोचरभावजानि फलानि बुधैः पण्डितैः संचिन्तनीयानि। एतत्सर्वं कविना विश्वनाथेन स्पष्टमुक्तम्—

'विलग्नादय द्वादशस्थानजातं, फलं जातकादौ फलं किंचिदुक्तम्।
परं निश्चयान्नोक्तमेवं विदित्वा कविर्विश्वनाथः स्फुटं तत्प्रवक्ये॥

सर्वाष्ट वर्गजफलानि समूह्य योगान्
मूर्त्यादिगण्यमशुभं च शुभं च मिश्रम्।
जन्माधितः फल विशेषवृशा समीक्ष्य
यात्राविवाहसमये बहुवर्गयुक्तः॥
सर्वकर्मफलोपेतमष्टवर्गकमुच्यते।
अन्यथा फलविज्ञानं दुर्ज्ञेयगुणदोषजम्॥' इति

अपि च जीवनाथेन किंचिद् विशेषमुक्तम्—

'यदा पंचात्रिंशन्नवमभवने जन्मसमये,
प्रवर्त्तन्ते रेखाः प्रभवति विशेषादिह जयः।
महत्त्वं धीरत्वं नरपतिकुलादेव भविता
भरातीनामन्तः सपदि परितापः बहुसुखम्॥' इति॥

अर्थाद्यस्य नवमभवने पंचत्रिंशान्मितारेखा स्युस्तदा जयो राजवंशतो महत्त्वं धीरत्वमाशु शत्रुनाशः परितापो बहुसुखं च भवेत्।' इति।

यत्र दशमस्थाने ४० मिताः रेखाः स्युस्तदा हयहस्तिहिरण्यजन्यं सुखं गुण-गणयुतः कीर्त्तिनृपत्वं कविजनविनोदेनाभितः ख्यातिश्च भवेत्। यथा जीवनाथः—

यदा चत्वारिंशज्जननसमये मानभवने,
जनानां जायन्ते जयति गजवाजिद्रविणजम्।
सुखं रेखानित्यं गुणगणयुता कीर्तिपटली,
नृपत्वं विख्यातिः कविजनविनोदेन परितः॥' इति

यत्र त्रिंशतोऽधिका: रेखा: स्युस्तदा व्यापारतो बहुधनलाभोराजकुलादतुलमान सुयानवृद्धि:, भूषाविशेषमणिकाञ्चनमंगलावाप्ति: गायनध्वनि:, उत्तममणिकाविलासो भवेत्। यथात्र जीवनाथ:—

'व्यापारतो बहुधनानि भवन्ति नित्यं भूमीपतेरतुलमानसुयानवृद्धि:।
भूषाविशेषमणिकांचनमंगलानां गीतध्वनि: प्रवरचारवधूविलास'॥' इति

अथेह द्वादशभावस्वामिनो ये शुभा: शुभकारका: ये चाशुभा अशुभकरास्ते स्वांगविशेषे निजफलं विदधते। यथाह जीवनाथ:—

'शिरोदेशे भानुर्मुखपरिसरे शीतगुरलं,
धरासूनु: कण्ठे जनयति बुधो नाभिनिकटे।
गुरोर्नासामध्ये नयनपदयोरेवभृगुज,
शनी राहु: केतु: फलमुदरदेशे जनिमताम्॥' इति

अथ ये त्वष्ट वर्गशालिनो नभश्चरास्ते स्वीय दशाफलं गोचरफलं चाखिलं दिशन्ति, ये चोर्ज्जोनास्ते स्वल्पं फलं दिशन्ति, ये मध्यबलास्ते मिश्रफलं वितरन्ति। यथा कश्चिदाह—

'अष्टवर्गेण ये शुद्धास्ते शुद्धा: सर्वकर्मसु।
अविशुद्धा न शुद्धा: स्युर्वेधनादिभिरीरिता:॥
तावद्गोचरमन्वेष्यं यावन्न प्राप्यतेऽष्टकम्।
अष्टवर्गे तु सम्प्राप्ते गोचरं विफलं भवेत्।
सूक्ष्माष्टवर्ग संशुद्धि: स्थूला शुद्धिश्च गोचरे।
तस्माद् गोचरमुत्सृज्य फलमप्यष्टवर्गत:॥' इति

लग्न सहित सूर्यादि सातों ग्रहों के अपने-अपने भिन्नाष्टक वर्ग में जिस ग्रह में (राशि में) जितनी रेखाएं हों, उन सबको वहां से लेकर उनका योग करके तत्तद् राशियों के नीचे स्थापित कर लेना चाहिए।

यह समुदायाष्टक वर्ग चक्र बनेगा। इस समुदायाष्टक वर्ग से गोचर जनित फल का (सूक्ष्माति सूक्ष्म) विचार विद्वानों को करना चाहिए।

पूर्वोक्त वास्तविक उदाहरण में सूर्याष्टक रेखा में मेष को चार रेखाएं, वृष को २, मिथुन को ६, कर्क को ४, सिंह को १, कन्या को ६, तुला को ४, वृश्चिक को ३, धनु को ४, मकर को ४, कुम्भ को २ और मीन को ७ रेखाएं मिली थीं। इनको यथाक्रम राशियों के नीचे स्थापित किया। इसी प्रकार चन्द्रादि शेष वर्गों से मेषादि राशियों के रेखांकों को लिखा। तब जो चक्र बनेगा वह अगले पृष्ठ पर अंकित है। दोनों प्रकार से योगफल की समानता आप स्वयं देखिए—

समुदायाष्टकवर्ग उदाहरण

राशि	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	योग
रवि	५	३	५	७	२	३	३	३	३	२	३	४	४३
चन्द्र	२	२	५	२	२	२	३	७	१	२	३	५	३६
भौम	५	३	४	३	३	४	४	४	६	७	२	४	४९
बुध	१	२	५	५	७	३	३	१	५	२	६	६	४६
गुरु	४	२	४	७	४	२	१	१	२	३	४	२	३६
शुक्र	२	३	४	३	६	३	२	३	३	३	४	४	४०
शनि	२	४	४	४	३	३	४	४	४	६	१	३	४२
लग्न	५	३	५	५	२	६	१	२	२	६	७	१	४५
योग	२६	२२	३६	३६	२९	२६	२१	२५	२६	३१	३०	२९	३३७

'प्रकारान्तरेण समुदायाष्टकवर्गः' उदाहरण

राशि	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
ग्रह	ल.	०	०	०	०	र.बु.	गु.शु.	०	०	चं.	०	म.श.
सूर्य	४	२	६	४	१	६	४	३	४	४	३	७
चन्द्र	५	३	५	७	५	२	२	३	४	६	४	३
भौम	२	१	६	२	३	४	२	३	३	४	४	५
बुध	५	३	५	४	५	४	५	५	४	५	६	३
गुरु	४	४	५	७	४	५	५	५	४	३	५	५
शुक्र	४	६	५	६	६	१	२	५	५	५	५	२
शनि	२	३	४	६	५	४	१	१	२	४	३	४
योग	२६	२२	३६	३६	२९	२६	२१	२५	२६	३१	३०	२९
लग्न	०	५	६	३	४	२	४	४	६	६	४	५
योग	२६	२७	४२	३९	३३	२८	२५	२९	३२	३७	३४	३४

इस उदाहरण में मेष लग्न है। अतः मेष राशि अर्थात् जन्म लग्न में जितनी समुदाय रेखाएं मिलीं उन्हें कुण्डली में लिखा। इसी प्रकार शेष भावों में स्थित राशियों के अनुसार उनकी समुदाय रेखा संख्या लिखी तो समुदायाष्टक रेखा कुण्डली इस प्रकार बनी—

समुदायाष्टक रेखा कुण्डली
(लिखित संख्या समुदाय रेखाओं का योग है)

समुदायाष्टक रेखाओं से फल जानने के लिए ध्यान रखना चाहिए कि जिस राशि में २८ से अधिक अन्य मतानुसार ३० से अधिक बिन्दु हों तो वह श्रेष्ठ राशि, २५ से ३० तक मध्यम राशि तथा २५ से कम अधम राशि समझनी चाहिए। श्रेष्ठ राशियों में जब शुभ बली ग्रहों का गोचर होगा तो उत्तम फल, मध्यम राशि गोचर में मध्यम फल तथा अधम राशि के गोचर में जब ग्रह आएगा तो अधम फल मिलेगा। हमारे विचार से फल की विशेषता जानने के लिए देखना चाहिए कि ग्रह जन्म कुण्डली में जिन भावों का कारक, अधिपति या सम्बन्धी होगा तो उस भाव से सम्बन्धित उत्तम, मध्यम या अधम फल राशि भ्रमण काल में करेगा।

इससे फल जानने का दूसरा प्रकार यह है कि सुदर्शन पद्धति को अपनाया जाए। जिस भाव में जो आयु वर्ष पड़े, उस वर्ष में, वहां स्थित राशि की रेखा संख्या से ज्ञात उत्तममध्यमाधमत्व के आधार पर उस भाव से सम्बन्धित फल घटेगा।

इसी उदाहरण में देखें तो लग्न में २६ रेखाएं मध्यम हैं। अतः १, १३, २५, ३७, ४६, ६१, ७३ आदि वर्षों में शरीर का सुख तथा लग्न भाव से विचारणीय बातें मध्यम रहेंगी। दूसरे भाव में २२ रेखाएं अधम हैं। अतः २, १४, २६, ३८, ५०, ६२ आदि आयु वर्षों में धन, कुटुम्बादि का सुख कम रहेगा। चतुर्थ भाव में उत्तम ३६ रेखाएं हैं। अतः ४, १६, २८, ४०, ५२, ६४ आदि वर्षों में माता, घर, सम्पत्ति, वाहन, मित्र, सुख आदि की वृद्धि होगी। इसी प्रकार उत्तम, मध्यम व अधम फल का विचार करना चाहिए। प्रसंगानुसार किसी भाव में निश्चित संख्या तुल्य रेखाएं होने का विशेष फल पाठकों को बता रहे हैं—

(i) यदि नवम भाव में ३१ से ३५ तक रेखाएं हों तो उस भाव से सम्बन्धित वर्ष में जय, राजघराने से सम्मान, महत्त्व, धैर्यवृद्धि, शत्रुनाश तथा परम सुख होता है। (जीवनाथ)

(ii) यदि दशम भाव में ४० रेखाएं हों तो उस वर्ष में हाथी, घोड़े तथा प्रभूत धन प्राप्त होता है। गुणवृद्धि, राजपदलाभ, कीर्तिविस्तार, कविजनों द्वारा ख्याति आदि शुभ फल होंगे। (जीवनाथ)

(iii) यदि ग्यारहवें भाव में ३० से अधिक रेखाएं हों तो उस वर्ष में व्यापार में बहुत लाभ, राजा से अतुल सम्मान, सुन्दर वाहन का लाभ, विशेष वस्त्राभूषण व मणियों की प्राप्ति, गानादि का सुख व उत्तम गणिकाओं का विलास होता है। (जीवनाथ)

(iv) द्वादश भावों के स्वामी अपने भावों की उत्तमता, मध्यमता व अधमता के आधार पर अपने-अपने भाव से सम्बन्धित शरीरांगों में तदनुसार सुख या दुःख को उत्पन्न करते हैं।

जीवनाथ के मतानुसार सूर्य शिर प्रदेश में, चन्द्रमा मुख प्रदेश में, मंगल कण्ठ प्रदेश में, बुध नाभिदेश में, गुरु नाक में, शुक्र आंखों व पैरों में, शनि राहु व केतु पेट में शुभाशुभ फल को प्रकट करते हैं। गोचर या दशाकाल में ग्रह के शुभाशुभ फल का अनुपात अष्टक वर्ग शोधन के आधार पर ही करना चाहिए। अष्टक वर्ग से जो ग्रह अधिक रेखायुक्त हो, अधिक रेखा वाली राशि का स्वामी हो या अधिक रेखावाली राशि में स्थित ग्रहों से सम्बन्ध रखता हो तो वही ग्रह अपना पूरा फल देने में

समर्थ होगा। अष्टक वर्ग व दशा का सम्बन्ध आगे विस्तार से यथावसर बताया जा रहा है। कहा गया है—

"अष्टवर्गेण ये शुद्धास्ते शुद्धा : सर्वकर्मसु।
अविशुद्धा न शुद्धाः स्युर्यवनादिभिरीरिताः॥
सूक्ष्माष्टवर्गसंशुद्धिः स्थूला शुद्धिश्चगोचरे।
तस्माद्गोचरमुत्सृज्य फलमप्यष्टवर्गतः॥"

जन्म समय यदि किसी राशि में समुदाय रेखाओं की संख्या ३० से अधिक हो तो वे पण्डितों द्वारा शुभ फल देने वाली बताई गई है।

जहां पर रेखाएं २५ से ३० के अन्तर्गत हों उन्हें मध्यम फल देने वाली समझना चाहिए।

अथो प्रसूत्याः समये शरीरिणां
ये राशयः खानलसम्मिताधिकैः।
फलाभिधानैर्यदि संयुतास्तदा
विचक्षणैस्ते शुभदाः प्रकीर्त्तिता ॥९॥
खाग्निप्रमान्तं शरयुग्मतुल्यतो
मध्याः स्मृताः क्षीणफला हि राशयः।
कष्टप्रदास्ते प्रभवन्ति राशिषु
श्रेष्ठेषु विद्वान्निखिलेषु कारयेत् ॥१०॥
सौम्यानि कार्याणि सदा जनुष्मतां
तद्वन्मुहूर्तेष्वपि सम्प्रयोजयेत्।
श्रेष्ठानि मान्येव ततो विवर्जयेद्
गेहानि कष्टान्यखिलानि तेषु च ॥११॥

अथो इति। खाग्नीति। सौम्यानीति च। अथो आनन्तर्ये। शरीरिणां जन्तूनां नराणामिति यावत्। प्रसूत्याः प्रसवस्य समये ये राशयः खानल सम्मिताधिकैस्त्रिंशदधिकैः फलाभिधानैः रेखाभिः संयुक्ताः सहिताः यदि चेत्तदा ते विचक्षणैः पण्डितैः शुभदाः शुभफलप्रदाः प्रकीर्तिताः कथिताः। ये राशयः क्षीणफलाः कृशफलाः पंचविंशतेरल्पफलास्ते कष्टप्रदा ज्ञेयाः। यथा सिद्धसेनः—

त्रिंशाधिकफला ये स्यू राशयस्ते शुभप्रदा।
त्रिंशान्तं पंचविंशादि राशयो मध्यमाः स्मृताः॥
अतिक्षीणफला ये च राशयः कष्टदुःखदाः॥ इति

विश्वनाथोऽपि—

मेषादिमानां सकलाष्टवर्गउत्पन्नरेखागणमेव कुर्यात्।
मृत्यादितस्त्वान्तफलं कनिष्ठं त्रिंशावसानं किलमध्यवीर्या ।
त्रिंशाधिकं तूत्तमवीर्यदाः स्युः शरीरसौख्यार्थयशोऽभिवृद्धिम्।
स्वस्वाष्टवर्गे यदि वेदहीनाः क्लेशाय सौख्याय च वेदपुष्टाः ॥' इति

राशिष्विति। निखिलेषु समस्तेषु, श्रेष्ठेषु फलाधिकेषु राशिषु जनुष्मतां नराणां सदा सौम्यानि शुभकार्याणि विद्वान् कारयेत्। तथा मुहूर्त्तेषु विवाहव्रत-बन्धादीनां क्षणेषु, श्रेष्ठानि फलाधिकानि भान्येव संप्रयोजयेत्। ततस्तेषुअखिलानि समस्तानि कष्टानि न्यूनफयुक्तानि गेहानि भानि विवर्जयेत्। पण्डित इति शेषः। तथा च ब्रह्मयामले—

श्रेष्ठराशिषुसर्वाणि शुभकार्याणि कारयेत्।
श्रेष्ठान् राशीन् मुहूर्त्तेषु योजयेन्मतिमान्नरः॥
ततस्त्वन्मप्रभावस्तु पुंयस्तैः मार्धमाचरेत्।
कष्टान् राशीन् मुहूर्त्तेषु वर्जयेत्सर्वदा बुधः ॥' इति

जिन राशियों का रेखायोग २५ से कम हो तो वे अशुभ फल देने वाली होती हैं। उत्तम रेखा संख्या (३० से अधिक) वाली राशियों में (उनके मास में, आयु वर्ष में अथवा उनके अधिपति की दिशा में) समस्त शुभकार्य करने चाहिए। विवाह, व्रत, बन्धनादि में भी ३० से अधिक रेखा वाली राशियों को लेना चाहिए तथा कम रेखा वाली (२५ से कम) राशियों को शुभ कार्यों में वर्जित करना चाहिए। मध्यम रेखा वाली राशियों में शुभाशुभ मिश्रित फल मिलेगा, ऐसा समझना चाहिए। इस विषय में ग्रन्थकार ने संस्कृत टीका में ब्रह्मयामल, सिद्धसेन पद्मनाभ सोमाद्रि (जातकादेशकार) आदि के वचनों को प्रमाण स्वरूप उद्धृत किया है।

दशम से लग्न तक रेखाओं की उत्तरोत्तर प्रबलता :

भवे बहुत्वे वियतोऽथ लाभाद्
व्यये लघुत्वे जनने फलानाम्।
यदा विलग्ने व्ययतोऽधिकत्वे
सुखी समशावलक्ष्मिसयुक्तः ॥१२॥

भव इति। यदा जन्मसमये, वियतो दशमात्, भवे लाभे, फलानां रेखाणां बहुत्वे आधिक्ये, अथ शब्दोऽनन्तरवाची, लाभादेकादशस्थानात् व्यये द्वादशे फलानां

रेखाणां लघुत्वेऽल्पत्वे तथा व्ययतो द्वादशतो विलग्ने तनौ, रेखाधिक्ये तदा सुखी, समशा कीर्तिः बलं सारं, वित्तं धनं तैर्युक्तः सहितः स्याद्। इति। तथा च ब्रह्म यामले—

'मध्यात्फलाधिको लाभो मध्यात् क्षीणफलो व्ययः।
लग्नं फलाधिकं यस्य भोगवानर्थवान् हि सः॥' इति

जब जन्म समय दशम स्थान से एकादश स्थान में अधिक रेखाएं हों, तथा एकादश स्थान की अपेक्षा द्वादश में कम और द्वादश की अपेक्षा लग्न में अधिक रेखाएं हों तो मनुष्य सुखी, कीर्ति से युक्त, बलवान्, धनवान् तथा भोगों से युक्त होता है।

उपर्युक्त सिद्धान्त की पुष्टि **ब्रह्मयामल** ग्रन्थ के उद्धरण तथा **सिद्धसेन, वैद्यनाथ** आदि के वचन प्रामाण्य से होती है। यहां ध्यान रखना चाहिए कि रेखाओं के उक्त अल्पाधिक्य के अतिरिक्त प्रकार से यदि रेखाएं न्यून या अधिक हों अर्थात् व्ययभाव में लग्न व एकादश से अधिक रेखाएं हों तो व्यक्ति दुःखी, निर्धन एवं भोग शून्य होगा। जैसा कि उपर्युक्त ग्रन्थान्तर के उद्धरण से प्रकट है—

'विनिमयवशतस्तद्वैपरीत्यं जनस्य।'

यही बात ग्रन्थकार स्वयं अगले श्लोक में भी बता रहे हैं।

दारिद्र्यमुक्तं विपरीततस्तनौ
यावत्फलं ह्यस्ति दशाफलं ततः।
विद्वांस आहुः परिलोक्य विग्रह-
पूर्वंव्ययान्तं च फलानि वेश्मनाम् ॥१३॥
विद्याच्छुभं पुष्टफलेऽथ मृत्यवे
क्षीणेऽल्पके मध्यफलं तु मध्यमे।
समेति भावस्तनुभृत्फलं बुधाः
संचिन्तयेयुस्त्विति भावसम्मतम् ॥१४॥

दारिद्र्यमिति। विद्यादिति च। विपरीततः उक्त प्रकारादन्यथा लग्नेऽल्पफलं भवतीत्यर्थः। तदा दारिद्र्यं उक्तं कथितम्। ततस्तनौ लग्ने यावत्फलमस्ति तावद्दशाफलं ज्ञेयम्। विग्रहपूर्वव्ययान्तं लग्नादि व्ययपर्यन्तं स्थानं परिलोक्य, वेश्मनां स्थानानां फलानि शुभाशुभात्मकानि विद्वांसः पण्डिता आहुः। अत्र भावानां पुष्टफले शुभं शस्तं विद्यात्। क्षीणे फलाभावेऽल्पके कृशे मृत्यवे मरणाय। मध्यमे

फलसाम्ये। मध्यफलं समानं फलं जातं उत्पन्नस्तनुभृच्छरीरी समेति प्राप्नोति ॥ इत्येवं भावसम्मतं फलं बुधाः सञ्चिन्तयेयुः। तथा च ब्रह्मयामले—

'विपरीतेन दारिद्रयं भविष्यति न संशयः।
लग्ने यावत्फलं चास्ति तद्दशायाः फलं वदेत्॥
मूर्त्यादिव्ययपर्यन्तं दृष्ट्वा भावफलानि च।
अधिके शोभनं विद्यात्क्षीणे हीने च मृत्यवे॥
मध्यमे मध्यमं याति विचार्य भावसम्मतम्॥' इति

यदि उक्त प्रकार विपरीत क्रम में रेखाओं की संख्या हो, अर्थात् दशम की अपेक्षा लाभ भाव में कम रेखाएं तथा लाभ की अपेक्षा व्यय भाव में अधिक रेखाएं तथा लग्न में कम रेखाएं हों तो मनुष्य दरिद्र होता है। सामान्यतः लग्न से व्यय भाव तक की समुदाय रेखाओं की गवेषणा करने के उपरान्त फलादेश करना चाहिए। जिस भाव में अधिक रेखाएं हों तो शुभ, रेखारहित या अल्परेखा युक्त भाव की हानि तथा मध्यम रेखायोग होने पर सम्बन्धित भाव का मध्यम फल समझना चाहिए। इस प्रकार भावों के शुभाशुभ का विचार करना अभीष्ट है।

इस प्रसंग में हमारा विचार है कि अधिक रेखाएं यदि मृत्यु, रोग व्यय आदि भावों में अर्थात् दुःस्थानों (६,८,१२) में होंगी तो निश्चय से सम्बन्धित भावों की वृद्धि होगी। लेकिन इन भावों की वृद्धि किसे अभीष्ट है? इनकी वृद्धि का तात्पर्य रोग, मृत्यु व हानि में वृद्धि। अतः इन भावों में कम रेखाएं ही अभीष्ट होनी चाहिएं। यह सिद्धान्त शुभ भावों पर भी लागू होगा। आशय यही है कि अशुभ भावों की कमजोरी और शुभ भावों की बढ़ोतरी इस समीकरण से ही जीवन में खुशहाली व उन्नति होगी। मंत्रेश्वर ने भी ऐसा स्पष्ट कहा है—

'षष्ठाष्टम व्ययांस्त्यक्त्वा शेषेष्वेवं प्रकल्पयेत्।'

स्वोच्चादिगत ग्रहों का रेखावश फल :

ये खेचरा निजगृहोच्चसुहृद्गृहस्था
ये केन्द्रकोणगृहगाश्चितिभाश्रिता वा।
ये सौम्यखेटगणपूर्वबलोपयाता
नाशप्रदाः कृशफलैर्यदि संयुतास्ते ॥१५॥

ये खेचरा इति । ये खेचरा ग्रहाः स्वराशिगताः स्वोच्चमित्रादिराशिगताः ये ग्रहाः केन्द्रगतास्त्रिकोणगताश्चिनिभाश्रिता उपचयभावगता अथवा ये शुभग्रह-वर्गादिबलैः स्थानादिषड्बलैश्चोपयाताः प्राप्ताः सन्तोऽपि चेत्ते कृशफलैरल्परेखाभिः संयुक्ताः सहितास्तदा नाशप्रदाः हानिकराः भवन्तीति ।

जो ग्रह अपने गृह, अपने उच्च या मित्र राशि में हों अथवा केन्द्र, त्रिकोण व उपचय अर्थात् वृद्धि स्थान (३,६,१०,११) में स्थित हों अथवा शुभग्रहों के षड्वर्ग में स्थित हों, अथवा स्थानादि षड्बलों से युक्त हों, किन्तु कम रेखाओं से युक्त हों तो शुभफल की निश्चय से हानि करते हैं ।

यहां बताया गया है कि समस्त सिद्धान्तों की अपेक्षा अकेला अष्टकवर्ग सिद्धान्त परम प्रामाणिक माना जाएगा । यदि प्रचलित बला-बल के सिद्धान्त से कोई ग्रह बलवान् हो; किन्तु अल्परेखा वाला हो तो वास्तव मेंउसके शुभफल का अनुपात घट जाएगा । यदि निर्बल ग्रह अधिक रेखा वाला हो तो उसकी बलवत्ता निर्णीत होगी । आशय यही है कि अन्य सिद्धान्तों की अपेक्षा जब हम अष्टक वर्ग के अनुसार फलादेश करेंगे तो हम अधिक से अधिक सूक्ष्मता की ओर बढ़ चलेंगे । सूक्ष्माति-सूक्ष्म फलादेश करने के लिए अष्टकवर्ग का सहारा लेना ही पड़ेगा । कहा गया है—

'अष्टवर्गदशामार्गः सर्वेषामुत्तमोत्तमः ।
अष्टवर्गस्य माहात्म्यं यो जानाति स ईश्वरः ॥'

(वृद्धयवन)

इसी बात का प्रतिपादन ग्रन्थकार स्पष्ट शब्दों में अगले श्लोक में कर रहे हैं ।

ये खौकसो मन्मथदुष्टसंश्रिता
येऽरातिनीचाशुभखेटवर्गगाः ।
ये बोधका मान्दिभआनिना सह
ते चेद्बहुस्थानयुताः शुभप्रदाः ॥१६॥

य इति । ये खौकसो ग्रहा, मन्मथे सप्तमे, दुष्टे त्रिके संश्रिताः, ये ग्रहा अरातिनीचाशुभखेटवर्गगाः शत्रुनीचपापग्रहाणां वर्गेषु गताः ये ग्रहाः मान्दिभ-

नानिना गुलिकराशिस्वामिना सह योधकाः सहस्थितास्तत्सम्बन्धिनश्च स्युस्ते बहुस्थानयुता बहुरेखायुताः स्युस्तर्हि शुभप्रदाः स्युरिति शेषः ।

जो ग्रह सप्तम, षष्ठ, अष्टम व व्यय स्थान में स्थित हों, अथवा शत्रुराशि नीचराशि, या पापग्रह के वर्ग में स्थित हों अथवा गुलिक राशि के स्वामी के साथ हों; अथवा उससे सम्बन्ध रखते हों; किन्तु अधिक रेखाओं से युक्त हों तो निश्चय से शुभ फल को देने वाले होगें।

समुदयाष्टक में तीन खण्ड और तीन अवस्थाएं :

> **आद्यं खण्डं मीनतो वैणिकान्तं**
> **यावत्कर्कात्तौलिभान्तं द्वितीयम् ।**
> **प्रोक्तं कीटाद् हृद्गदान्तं तृतीयं**
> **रेखाधिक्यं यत्र खण्डे शुभं तत् ।।१७।।**
> **हीनरेखा यत्र तन्नैव भद्रं**
> **पापाक्रुढं क्लेशदं खण्डकं तत् ।**
> **पुष्टं ज्ञेयं तत्फलं यच्छुभाढ्यं**
> **मिश्रैः खेटैर्मिश्रसंज्ञं फलं स्यात् ।।१८।।**

आद्यमिति । हीनेति च । मीनतो मीनराशेः सकाशाद्वैणिकान्तं मिथुनान्तं यावत्, आद्यं प्रथमं खण्डं भागः स्यात् । कर्कात्तौलिभान्तं तुलाराशिपर्यन्तं द्वितीयं खण्डं स्यात् । कीटात् वृश्चिकात् हृद्गदान्तं कुम्भपर्यन्तं तृतीयं खण्डं प्रोक्तम् । यत्र यस्मिन् खण्डे रेखाधिक्यं तत् शुभं ज्ञेयमिति । यत्र खण्डे हीना अल्पा रेखा तत्खण्डं भद्रं शुभं नैव स्यात् । यत्खण्डं पापारूढं तत् क्लेशदं भवेदिति शेषः । यत्खण्डं शुभाढ्यं तस्य फलं पुष्टमधिकं शुभं ज्ञेयम् । मिश्रैः खेटैः शुभाशुभग्रहैः मिश्रसंज्ञं शुभाशुभमिश्रं फलं स्यात् । तथा च देवकालजातके—

> मीनादि मिथुनान्तं च प्रथमं खण्डमिष्यते ।
> कर्कादितौलिकं यावद् द्वितीयं खण्डमिष्यते ।।
> वृश्चिकादिघटान्तं च तृतीयं खण्डमिष्यते ।
> यत्र खण्डेऽधिका रेखा-शुभदं तत्प्रकीर्तितम् ।
> यत्र हीना न तद् भद्रं देवकालः प्रभाषते ।। इति

बह्वायासलेऽपि—

> खण्ड त्रयं विनिक्षिप्य दशानयनवत्तथा ।
> पापग्रहसमारूढं खण्डं क्लेशकरं स्मृतम् ।।

सौम्यैः पुष्टं शुभं ज्ञेयं मिश्रैर्मिश्रफलं वदेत्।
खण्डत्रयफलं ज्ञात्वा दशाफलमुदीरयेत्॥' इति

मीनराशि से मिथुन राशि तक **पहला खण्ड**, कर्क से तुला तक **दूसरा खण्ड** और वृश्चिक से कुम्भ तक **तीसरा खण्ड** ऐसे तीन खण्डों की कल्पना कर लेनी चाहिए।

अब सर्वाष्टक वर्ग में सूर्य आदि सातों ग्रहों की प्रत्येक खण्ड की राशियों की रेखाओं का योग करना चाहिए। अर्थात् मीन से मिथुन तक की रेखाओं का योग 'प्रथम खण्ड' कर्क से तुला तक की रेखाओं का योग 'द्वितीय खण्ड' और वृश्चिक से कुम्भ तक की रेखाओं का योग 'तृतीय खण्ड' का रेखायोग कहलाएगा। यहां समुदायाष्टक वर्ग की रेखाएं लेनी हैं। ये तीनों खण्ड मनुष्य की आयु के क्रमशः आदि, मध्य व चरम भागों का प्रतिनिधित्व करेंगे।

जिस खण्ड में अधिक रेखाएं हों तो वही जीवन भाग शुभ फलों से परिपूर्ण होगा तथा जिस खण्ड में कम रेखाएं हों वही भाग अशुभ फल देने वाला होगा।

जिस खण्ड में पापग्रह हों, वह भाग कष्टप्रद और जहां शुभ ग्रह हों वह सुखप्रद होगा। यदि किसी खण्ड में शुभाशुभ ग्रह साथ ही हों तो मिश्रित फल समझना चाहिए। यह बात उपर्युक्त **देवशालजातक** के उद्धरण से स्पष्ट है।

इस विषय को अपने पर्वोक्त उदाहरण के प्रसंग में समझते हैं। समुदायाष्टक चक्र में रेखाओं के योग से खण्ड इस प्रकार बनेंगे—

मीन मेष वृष मिथुन = प्रथम खण्ड
२९+२६+२२+३६ = ११३ रेखा योग
कर्क सिंह कन्या तुला = द्वितीय खण्ड
३६+२९+२६+२१ = ११२ रेखायोग
वृश्चिक धनु मकर कुम्भ = तृतीय खण्ड
२५+२६+३१+३० = ११२ रेखायोग

यहां प्रथम खण्ड में रेखाधिक्य है। अतः आयु के प्रथम भाग में अधिक सुख तथा शेष जीवन में तदपेक्षया कम सुख होगा।

किन्तु मध्यायु में गुरु, बुध की स्थिति होने के कारण अधिक सुख

होगा। अन्तिमावस्था में चन्द्रमा है। अतः एक शुभग्रह होने के कारण मध्यावस्था की अपेक्षा से कम सुख होगा।

खण्डज्ञान का दूसरा प्रकार :

लोके केचित्प्रान्त्यतः खण्डमाहुः
सन्तः केचित्खण्डमिच्छन्ति शिष्टम्।
हित्वारेखां नैधनस्थां व्ययस्थां
दुःखं मिश्रं सम्पदल्पात् क्रमेण ॥१६॥

लोके इति। लोके जने प्रान्त्यतो द्वादशस्थानात् खण्डं भागं केचित् सन्तः शिष्टाः आहुः। केचिच्च नैधनस्थानमष्टमस्थानगतां व्ययस्थां च रेखां हित्वा शिष्टमवशेषं खण्डं भागमिच्छन्ति। मन्त्रेश्वरस्तु षष्ठाष्टम व्ययस्थां रेखां हित्वा शिष्टं खण्डं प्राह।

दुःखमिति। अल्पात्स्वल्पात्फलात् क्रमेण परिपाट्या दुःखं कष्टं मिश्रं मध्यमं सम्पच्छ्रेष्ठं फलं ज्ञेयमिति शेषः।

कुछ आचार्य व्यय स्थान से भावगणना क्रमानुसार चार-चार भावों का एक-एक खण्ड मानते हैं। अर्थात् द्वादश, लग्न, द्वितीय व तृतीय यह प्रथम खण्ड; चतुर्थ, पंचम, षष्ठ व सप्तम द्वितीय खण्ड तथा अष्टम, नवम, दशम व एकादश भाव तृतीय खण्ड कहलाएंगे।

कुछ अन्य आचार्य अष्टम और व्यय स्थानों को छोड़कर शेष दस भावों की रेखाओं के योग से खण्डत्रय की कल्पना करते हैं।

यहां भी कम रेखाएं अल्पसुख व अधिक रेखाएं अधिक सुख देने वाली होंगी। यदि तीनों में समान संख्या हो तो जातक एक-सा जीवन बिताएगा।

इन मतमतान्तरों का संग्रह वैद्यनाथ ने भी किया है।

(i) प्रथम मतानुसार मीनादि राशियों से खण्डत्रय का विभाग करना चाहिए।
(ii) द्वितीय मतानुसार व्ययभावादि स्थानों से खण्डत्रय की कल्पना करनी चाहिए।
(iii) कुछ लोग चाहते हैं कि भावानुसार खण्ड कल्पना करते समय आठवें व बारहवें स्थान की रेखाओं को छोड़कर रेखा-योग करेंगे। अर्थात् प्रथम भाग में व्ययरहित तीन भावों की

रेखाओं का योग ही प्रथम खण्ड का रेखायोग माना जाएगा। इसी प्रकार अन्तिम भाग में अष्टम भाव गत राशि की रेखाओं को छोड़ दिया जाएगा।

जातकादेशमार्ग में स्पष्ट रूप से मीन राशि वाले पक्ष को लिया गया है।

(iv) किन्तु जातकादेश मार्ग व जातक पारिजात में एक अन्य प्रकार से विभाजन भी किया गया है। केन्द्र स्थानों की रेखाओं का योग 'प्रथम खण्ड', पणफर स्थानों की रेखाओं का योग 'द्वितीय खण्ड' तथा आपोक्लिम स्थानों की रेखाओं का योग तृतीय खण्ड होगा। स्वयं ग्रन्थकार आगे इस केन्द्रादि पक्ष को प्रस्तुत कर रहे हैं।

अब हमें देखना है कि कौन-सा पक्ष लिया जाये। कारण कि प्राचीन आचार्यों ने स्वयं सबका संग्रह भर कर लिया है तथा अपना निर्भ्रान्त मत नहीं बताया।

अब क्या करना चाहिए ? इस विषय में हमारा विचार है कि मीनादि राशियों से ही खण्डों की गणना करनी चाहिए। कारण यह है कि बहुमत मीनादि के पक्ष में है—

"मीनादिमिथुनान्तं च प्रथमं खण्डमिष्यते।
कर्कादितौलिनं यावद् द्वितीयं खण्डमिष्यते।
वृश्चिकादिघटान्तं च तृतीयं खण्डमिष्यते॥" (देवकाल)

इसके अतिरिक्त जातकादेशकार (सोमयाजी या पड़ुमनाड़ चोमाद्रि), ब्रह्मयामल, जातकपारिजातकार तथा स्वयं ग्रन्थकार ने मीनादि पक्ष को माना है। प्रमाण यह है कि ग्रन्थकार ने मीनादि पक्ष के अतिरिक्त पक्षों को 'किसी ने कहा है, कोई मानते हैं' आदि वाक्यों से उपपादित किया है।

खण्डज्ञान का तीसरा प्रकार :

रेखैक्यकैः केन्द्रमुखस्थितैश्चतु-
र्भोस्थैः फलं शैशवयसोऽनुमानतः।
कल्प्यं तथाऽऽद्यो वयसोऽत्र मध्यमे-
ऽन्त्येऽसत्समं श्रेष्ठकमल्पतः क्रमात् ॥२०॥

रेखैक्यकैरिति। केन्द्रमुखस्थितैः केन्द्रपणफरापोक्लिमगतैश्चतुर्भोत्थैः रेखैक्यकैः रेखायोगैर्ज्ञैः पण्डितैर्वयसोऽवस्थाया अनुमानतः फलं कल्प्यम्। अत्राल्पतोऽल्पफलात् क्रमात् वयसोऽवस्थाया आदावसत्फलं, मध्यमे समं मध्यमफलं, अन्त्येऽवसाने श्रेष्ठ फल कल्प्य बुधैरिति।

अपि च केनचिद् भिन्नप्रकारेण खण्डकल्पना कृता। सेत्थम्—

'उदयात्पंचमं यावत् जन्मपत्र्यां शुभग्रहाः।
वयसि प्रथमे सौख्यं प्रकुर्वन्ति नव नवम्॥
पंचमान्नवमं यावत्तत्रसंस्थैः शुभग्रहैः।
मध्यत्वेऽपि हि संप्राप्ते सर्वसौख्यं प्रवर्तते॥
नवमाद्व्ययभं यावत्स्थितैः सर्वशुभग्रहैः।
वृद्धत्वेऽपि हि सम्प्राप्ते सर्वसौख्यं प्रवर्त्तते॥
यस्मिन् वयसि तुंगाश्च मुदिता स्वगृहे स्थिताः।
तत्र राज्यसुखं लक्ष्मीस्तेजो भवति निश्चितम्॥
यस्मिन् वयसि मन्दाश्चेत्क्रूरदृष्टाविरश्मिकाः।
तत्र हानिं रुजं विद्यात्पदभ्रंशः खलागमः॥' इति

मुदितो मित्रराशिगः। मन्द: नीचारिभगः। अन्यत्सुगमम्।

केन्द्र स्थानों की रेखाओं का योग प्रथम खण्ड माना जाता है। द्वितीय, पंचम, अष्टम, एकादश स्थानों का रेखायोग द्वितीय खण्ड माना जाता है तथा षष्ठ, तृतीय, नवम, द्वादश भावों का रेखायोग तृतीय खण्ड माना जाता है।

जिस खण्ड में अधिक रेखाएं हों वहां शुभफल, कम रेखाओं से अशुभ फल तथा समान रेखाओं से मध्यम फल होना है।

किसी आचार्य के मतानुसार एक अन्य प्रकार से विभाजन भी किया जाता है।

(i) लग्न से पंचम तक प्रथम भाग अर्थात् आयु का पहला खण्ड।

(ii) पंचम से नवम तक द्वितीय खण्ड।

(iii) नवम से लग्न तक तृतीय खण्ड।

जिस खण्ड में अधिक रेखाएं हों, जिसमें शुभ ग्रह स्थित हों, उसमें सुख होता है। जिस खण्ड में उच्च स्वमित्रादि की राशि में शुभ ग्रह हों तो उसमें राज्य सुख, लक्ष्मी वृद्धि और तेजो वृद्धि होती है।

जिस खण्ड में नीच शत्रुराशिगत, रश्मिहीन क्रूरग्रह हों तो रोग, शोक तथा हानि होती है। यह मत ग्रन्थकार ने ऊपर टीका में बताया है।

१२० रेखाओं का फल :

रेखैक्यं यस्य खण्डस्य पुष्टं स्यात्खार्कतुल्यतः ।
श्रेष्ठं सुखं परं तस्मिन्वयस्येव वदेत् ध्रुवम् ।।२१।।

रेखैक्यमिति । यस्य खण्डस्य रेखैक्यं खार्कतुल्यतो विशोत्तरशतात् पुष्टमधिकं स्यात्, तस्मिन् वयसि ध्रुवं निश्चयेन परं श्रेष्ठमुत्तमं सुखं वदेत् । दैवज्ञ इति शेषः ।

यदि किसी आयु खण्ड में पूर्वोक्त रेखायोगों के बाद १२० रेखाओं से अधिक रेखा आ रहीं हों तो उस अवस्था में परमातिपरम सुख (प्रसन्नता, लाभ, शरीर, पुत्र, स्त्री आदि का सुख, मानवृद्धि आदि) प्राप्त होगा, ऐसा विद्वान् ज्योतिषी को बताना चाहिए।

इस प्रसंग में रेखाओं से सम्बन्धित कुछ विशेष फल पाठकों के लाभार्थ प्रस्तुत है—

(i) जब प्रथम खण्ड की अपेक्षा द्वितीय खण्ड में और द्वितीय की अपेक्षा तृतीय खण्ड में अधिक रेखाएं हो तो **राहुल योग** बनता है। तब मनुष्य ज्यों-ज्यों बड़ा होता है तो अधिकाधिक सुखी व समृद्ध होता जाता है।

(ii) जब प्रथम व तृतीय खण्ड की अपेक्षा द्वितीय खण्ड अधिक रेखाओं वाला हो तो **मद्दल योग** होता है। तब मनुष्य संगीत, नृत्य, वाद्य आदि का शौकीन और मध्यावस्था में समृद्धि पाता है।

(iii) जब तीनों खण्ड बिल्कुल समान या लगभग समान हों तो **भेरी योग** अथवा **सर्वांग योग** होता है। ऐसा मनुष्य जीवन भर आराम व सुख समृद्धि पाता है।

(iv) जब प्रथम व तृतीय खण्ड की अपेक्षा मध्यखण्ड कम रेखाओं वाला होता है तो **डामर योग** होता है। ऐसा व्यक्ति वृद्धावस्था में अधिक सुख भोगता है।

(v) जब प्रथम खण्ड सबसे बड़ा हो तथा द्वितीय खण्ड सबसे कम रेखायुक्त हो तथा तृतीय खण्ड दोनों के बीच की रेखासंख्या से युक्त हो तो **वीणा योग** होता है।

(vi) जब प्रथम खण्ड सर्वोच्च व तृतीय खण्ड निम्नतम रेखा संख्या से युक्त हो तो **ऐरावत योग** होता है।

(vii) जब प्रथम खण्ड सबसे छोटा और शेष खण्ड समान हों तो वासि योग होता है।

समुदायाष्टक वर्ग की रेखाओं द्वारा कल्पित इन उपर्युक्त योगों का उल्लेख प्राचीन ज्योतिष ग्रन्थों के निरूपण से मेल नहीं खाता। वहां पर ग्रहों की भाव विशेष व राशि विशेष आदि में स्थिति से ही ये योग बनते हैं, ऐसा बताया गया है। उपर्युक्त, योग हमने अष्टकवर्ग नामक पुस्तक के आधार पर लिखे हैं। इनके फल की प्रामाणिकता तो उतनी विचारणीय नहीं है, किन्तु नामकरण विवादास्पद है। विज्ञ पाठक और विद्वान् स्वयं विचार करें।

लग्न स्थान की रेखाएं और शुभ वर्ष :

यावत्फलं तनुगतं यदि तावदीय-
संख्यागतेऽब्द उपयाति नरोऽतिविद्याम्।
जातस्तथा तनुजनि वसुधेशयानं
स्वं सम्पदो भवतु जन्मनि योगशाली॥२२॥

यावदिति। यावत्फलं स्थानं तनुगतं लग्नगतं, तावदीयसंख्यागते तावन्मित संख्यातीतेऽब्दे वर्षे जात उत्पन्नो नरो यदि चेद् जन्मनि जन्मसमये, सम्पद ऐश्वर्यस्य योगशाली भवतु, तदातिविद्या, तनुजनि पुत्रं वसुधेशयानं राजवाहनं, स्वं धनं, उपयाति प्राप्नोति।

यदि किसी व्यक्ति की कुण्डली में अन्य प्रकारों से राजयोग व सम्पत्ति योग बन रहे हों तो उनका फल कब मिलेगा, इस विषय में ध्यान रखना चाहिए कि उसके जन्म लग्न स्थान में जितनी रेखाएं (समुदायाष्टक रेखा) हों, उतने वर्ष की आयु व्यतीत हो जाने पर उसे बहुत-सी विद्या, पुत्र, राजयान तथा धन आदि की प्राप्ति होगी।

शनि रेखाएं और अशुभ वर्ष :

एकीकृत्य स्वालकान्यु द्गमर्क्षा-
च्छायाजान्तं पर्वतैः संनिहत्य।
संहृत्यर्क्षैराप्यते यत्तदब्दे
कोणे वेताब्दे गदार्तिमव्दम्॥२३॥

एकीकृत्येति। समुदायाष्टकवर्गे उद्गमर्क्षाल्लग्नराशेः सकाशाच्छायाजान्तं शनिपर्यन्तं, यानि फलानि तानि सर्वाणि एकीकृत्य, लग्नशन्यन्तर्गतानां रेखाणां पिण्डं विधायेत्यर्थः। पर्वतैः सप्तभिः संनिहत्य संगुण्य तत ऋक्षैः सप्तविंशत्या संहृत्य विभज्य, यदाप्यते, तद्भगे तन्नक्षत्रगतेऽथवा कोणे त्रिकोणनक्षत्रगतेऽब्दे पापग्रहे गोचरवशेनागच्छति तथावा तत्तुल्येगतेऽब्दे गदार्यार्तिमद् रोगपीडाविपुलं स्यात्। ब्रह्मयामले यथा—

लग्नादप्रभृतिमन्दान्तमेकीकृत्य फलानि वै।
सप्तभिर्गुणयेत्पश्चात्सप्तविंशोद्धृतात्फलम् ॥
तत्समानगते पापे दुःखं वा रोगमादिशेत्।
मन्दात्प्रभृतिलग्नान्तमेवमेव प्रकल्पयेत् ॥' इति

समुदायाष्टक वर्ग में लग्न से शनि पर्यन्त जितनी रेखाएं हों, उन सबका योग कर लेना चाहिए। अब योगफल को ७ से गुणाकर गुणन-फल को २७ से भाग देना चाहिए। लब्धि संख्या के तुल्य नक्षत्र में अथवा उससे त्रिकोण नक्षत्र में (उस नक्षत्र से दसवां व उन्नीसवीं नक्षत्र) जब पापग्रह अर्थात् सूर्य, मंगल शनि आदि गोचर गति से भ्रमण करें तो उस समय में मनुष्य को रोग, शोक व कष्टादि होते हैं। अथवा लब्धि तुल्य वर्ष में उक्त फल को कहें।

इस विषय में जातकादेशमार्ग की चन्द्रिका व्याख्या में पं. गोपेश कुमार ओझा लिखते हैं कि लग्न से शनि पर्यन्त तथा शनि से लग्न पर्यन्त रेखाओं को ७ से गुणाकर २७ का भाग देने पर जो शेष बचे उस संख्या के तुल्य वर्ष में रोगशोकादि फल कहना चाहिए।

इस विषय में हमारा विचार है कि यह व्याख्या भ्रामक है। देखिए जातकादेश का मूल श्लोक—

लग्नादारभ्य सूर्यात्मजगतभवनान्तमेकत्र युक्त्वा
 ७ २७
शुघ्ने तस्मिन् सुखाप्ते गतवति फलतुल्याब्दके रोगशोका…।
(अष्टकवर्ग प्रकरण, श्लोक ४२)

यहां पर स्पष्ट कहा गया है कि फल तुल्य वर्ष में रोग और शोक होते हैं। फल का अर्थ लब्धि है शेष नहीं। जिस संख्या को विभाजित किया जाता है वह भाज्य कहलाती है। जिस संख्या से विभाजित किया

जाता है वह भाजक कहलाती है और लब्धि को **भजनफल** कहा जाता है। यदि ४८ ÷ ९ = ५ लब्धि, शेष ३ को देखें तो ४८ भाज्य, ९ भाजक, ५ लब्धि और ३ शेष होगा। लब्धि के पर्याय भजनफल को ही जातकादेश में संक्षेप में फल कहा गया है। लब्धि के पर्यायवाची शब्दों का उल्लेख पं० मुकुन्द दैवज्ञ (प्रस्तुत ग्रन्थकार) ने अपने **ज्योतिषशब्दकोष** में भी किया गया है—

> लब्धिवाचकशब्दा:—लाभ: (पु०) प्राप्ति:, लब्धि:·········स्त्रियाम्
> अवाप्तम्, प्रापणम्, फलम्, भजनफलम्, भागफलम्·········क्लीबे।
>
> (देखें ज्योतिष शब्दकोष, पृ० ६१)

अब इस विषय को अपने पूर्वप्रदत्त उदाहरण के संदर्भ में समझते हैं। मेष लग्न में जन्म है और शनि मीनराशि में है। लग्न से शनि तक की रेखाओं २६ + २२ + ३६ + ३६ + २६ + २६ + २१ + २५ + २६ + ३१ + ३० का योग = ३०८ है। यहां शनि की रेखाएं नहीं ली गई हैं। ३०८ को ७ से गुणा किया तो २१५६ को २७ से भाग दिया। लब्धि ७९ और शेष २३ है। यहां लब्धि २७ से अधिक होने के कारण उसे भी २७ से विभाजित कर शेष २५ का ग्रहण किया। अब अश्विनी से २५वां नक्षत्र पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र, इससे दसवां पुनर्वसु नक्षत्र और उन्नीसवां नक्षत्र विशाखा है। इनमें अब पापग्रह आएगा तो रोग शोक होंगे। अथवा लब्धि तुल्य वर्ष ७९वें में उक्त फल होगा। अथवा २५वें वर्ष में उक्त फल होगा। यही पद्धति शनि से लग्न पर्यन्त गणना करके भी अपनायी जाएगी। इसका उल्लेख अगले श्लोक में किया जा रहा है। ग्रन्थकार लब्धि तुल्य वर्ष के पक्षधर हैं। जातकादेश में भी स्पष्ट रूप से लब्धि ही कहा गया है, किन्तु हम पाठकों को बता देना चाहते हैं कि शेष तुल्य वर्ष में भी पीड़ादि फल मानने वाले लोग हैं। यह बात टीका में 'विलग्न शनिमध्यानि' इत्यादि उद्धरण में स्पष्ट है। लेकिन अभी एक शंका और शेष है। लग्न से शनि या शनि से लग्न तक गिनने में शनि व लग्न की राशि की भी रेखाओं का ग्रहण किया जाएगा या नहीं? इस विषय में तीन पक्ष हैं—

(i) शनि व लग्न दोनों की रेखाओं को भी ग्रहण किया जाय। इसके पक्षधर वैद्यनाथ, मन्त्रेश्वर, जातकादेशमार्गकार

श्री पद्मनाई आदि के टीकाकारों का है। इनके ग्रन्थों के प्राप्त संस्करणों में पं० गोपेश कुमार ओझा तथा प्रश्नमार्ग के टीकाकार द्वय (हिन्दी व अंग्रेजी) ने दोनों की राशियों का ग्रहण करने का स्पष्ट निर्देश दिया है। अष्टकवर्ग नामक प्राचीन प्रकाशित पुस्तक के लेखक द्वय पटेल व अय्यर महोदय ने स्पष्ट रूप से इसी पक्ष का ग्रहण किया है।

(ii) दूसरा पक्ष शनि व लग्न के मध्यवर्ती भावों की रेखाओं को ही ग्रहण किया जाय, ऐसा टीका में उद्धृत उपर्युक्त उद्धरण में स्पष्ट किया गया है।

(iii) तीसरा पक्ष स्वयं ग्रन्थकार पं० मुकुन्द दैवज्ञ का है। उन्होंने माना है कि शनि से लग्न तक गिनने में लग्न की और लग्न से शनि तक की रेखाओं को गिनने में शनि की रेखाओं का उसमें ग्रहण नहीं किया जाएगा। इसीलिए उन्होंने स्वयं प्रदत्त उदाहरण में ऐसा ही किया है।

हमें मुकुन्द दैवज्ञ का पक्ष अधिक तर्क सम्मत लगता है। इसके कारण निम्नलिखित हैं—

(i) भिन्नाष्टक वर्ग प्रकरण (प्रस्तुत ग्रन्थ) में ग्रन्थकार नेजहां-जहां किसी भाव विशेष से ग्रह विशेष तक रेखाएं गिनकर फलादेश करने के लिए सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है, वहीं-वहीं उन्होंने अन्तिम शब्द का अर्थ 'उपान्त्य' अर्थात् पहले वाला भाव लिया है। जैसे श्लोक १४६, १४९, १६६ तथा अन्य बहुत सेश्लोकों की टीका में प्रदत्त उदाहरण में यही परिपाटी अपनाई है। श्लोक १६६ की टीका में वे स्पष्ट लिखते हैं—

'इह सर्वत्रान्त्यशब्देनोपान्त्यं ग्राह्यम्।'

(ii) अब जातकादेश आदि ग्रन्थों के वचनों की सूक्ष्म परीक्षा करें। जातकादेश मार्ग में कहा गया है—

'लग्नादारभ्यसूर्यात्मजगतभवनान्तम्'''।'

इसके टीकाकार ने लग्न सेशनि पर्यन्त का तात्पर्य शनि सहित लिया है। किन्तु इसका अर्थ शनि भवन से पूर्ववर्ती भवन भी

लिया जा सकता है। यही स्थिति अन्य ग्रन्थों के उद्धरणों में भी देखी जा सकती है। सारी निर्भरता 'पर्यन्त' या 'अन्त' शब्द के सही अर्थ पर है।

(iii) पर्यन्त शब्द या अन्त शब्द कहने से साफ प्रकट होता है कि अन्तिम सीमा ग्रहाधिष्ठित राशि ही होगी। किन्तु यहां एक बात ध्यातव्य है कि संस्कृत में जब हम कहेंगे कि समुद्र पर्यन्त उसराजा का राज्य है तो यहां समुद्र के प्रारम्भिक विन्दु तक ही उसके राज्य की अवस्थिति मानी गई है, न कि वहां स्वयं समुद्र को भी उसकी राज्य परिधि के अन्तर्गत रखा गया है। देखिए, कालिदास जब रघुवंश महाकाव्य में रघुवंशी राजाओं को 'आसमुद्रक्षितीश' कहते हैं तो उसका तात्पर्य समुद्र के अतिरिक्त भूमि से ही है।

'परिगतोऽन्तम्'। इस विग्रह से पर्यन्त शब्द में प्रादि समास है, जिसका अर्थ अन्त्य सीमा अर्थात् अन्तिम सीमा है। जब शनि पर्यन्त कहेंगे तो अर्थ होना चाहिए कि शनि है, अन्तिम सीमा जिसको ऐसी गणना। अतः शनि सहित व शनि रहित दोनों ही अर्थ शुद्ध हैं। किन्तु रघुवंश में पर्यन्त का अर्थ आसपास भी लिया गया है—

'पर्यन्त संचारित चामरस्य कपोललोलोभयकाकपक्षात्'''।' (१८, ४३)

अस्तु, इतनी बारीकी से कोई विशेष निर्णायक तथ्य सामने आने वाला नहीं है। अतः ग्रन्थकार के मत को हमने स्वीकार किया है। कारण यह है कि दोनों पक्षों के पक्ष में प्रमाण उपलब्ध है। दूसरी बात यह है कि यह पक्ष नया है तथा विद्वान् पाठक इसकी प्रमाणिकता को परखकर श्रेय पक्ष का स्वयं ग्रहण कर लें। एतदर्थ इसे प्रस्तुत करना आवश्यक है। विद्वान् गुणग्राही पाठक स्वयं नीर क्षीर विवेक में समर्थ हैं।

कृष्णाद्यङ्कान्तं फलं तद्यङ्का-
न्तं भूपुत्रात्लग्नतो लोहितान्तम्।
सत्खेटे सद्योगसंख्यागतर्क्षे
गोचारेणार्या वदन्तीति सौख्यम् ॥२४॥

कृष्णेति । तद्वत् तेनैव प्रकारेण समुदायाष्टवर्गे कृष्णार्कं शान्तं शनिमारभ्य लग्नपर्यन्तं यत्फलं स्यात्, तत् सप्तभिः सगुण्य, सप्तविंशतिहृतलब्धयाते, कोणगे नक्षत्रे वा सूर्यादिपापे गतवति, महती रोगादिपीडा स्यात्। अथवा समुदायाष्टकवर्गे भूपुत्राद् भौमाद् अंगान्तं लग्नावसानं यत्फलं स्यात्, तत्सप्तभिः सगुण्य सप्तविंशत्या विभज्य लब्धितुल्ये नक्षत्रे वा तत् त्रिकोणनक्षत्रे गते पापे रोगादिपीडा वक्तव्या। एवं लग्नतो लोहितान्तं भौमपर्यन्तमपि तद्वदेव चिन्त्यम्। सद्योगेति। समुदायाष्टवर्गे सद्योगसंख्यागतर्क्षे लग्नात् शुभग्रहपर्यन्तं, यत्फलं तत्सप्तभिः संगुण्य पूर्ववत् सप्तविंशतिहृतलब्ध समे नक्षत्रे वा तत् त्रिकोणनक्षत्रे सत्खेटे शुभग्रहे तदा सौख्य स्यादिति शेषः।

इसी पूर्वोक्त प्रकार से शनि से लग्न तक जितनी रेखाएं हों उनका योगकर, उसे ७ से गुणा कर २७ से भाग देना चाहिए। तब जो लब्धि हो उसके तुल्य नक्षत्र में अथवा उससे १०वें १९वें नक्षत्र में जब पापग्रह आए तो दुःख और रोग होगा।

इसी प्रकार मंगल से लग्न तक और लग्न से मंगल तक रेखाओं का योग करके कष्टकारक वर्ष का साधन करना चाहिए।

यही पद्धति बुध, गुरु, शुक्र जैसे शुभग्रहों के विषय में अपनायी जाएगी। शुभग्रह से लग्न तक और लग्न से शुभग्रह तक रेखा-योग को ७ से गुणा कर २७ से भाग देने पर प्राप्त लब्धि तुल्य नक्षत्र में या उससे त्रिकोण नक्षत्र अथवा लब्धि-तुल्य आयु वर्ष में धन, पुत्रादि की प्राप्ति होती है। ऐसा आर्यों का कथन है।

शनि मीन राशि में प्रकृत उदाहरण में है तथा लग्न मेष तक (लग्न रहित) २९ रेखाएं हैं। इन्हें ७ से गुणाकर २७ का भाग दिया २९×७=२०३÷२७=लब्धि ७, शेष १४ है। अतः सातवां नक्षत्र पुनर्वसु और इससे त्रिकोण नक्षत्र विशाखा व पूर्वाभाद्रपद में जब पापग्रह आएगा, तब कष्ट होगा। अथवा ७ वर्ष (लब्धि) की आयु में रोग शोकादि होंगे। यहां मंगल भी मीनराशि में स्थित है। अतः शनि वाला फल मंगल पर भी लागू होगा।

अब शुभग्रह के विषय में देखते हैं—यहां लग्न में मेष राशि है तथा बृहस्पति कन्या राशि में स्थित है। अतः लग्न से सिंह तक रेखाएं क्रमशः २६+२२+३६+३६+२९ का योग १४९ है। इसे सात गुना कर २७ से विभाजित किया। १४९×७=१०४३÷२७=३८ लब्धि, शेष २७ है। ३८ को २७ से विभाजित कर शेष ११ का ग्रहण

किया। अतः अश्विनी से ग्यारहवें नक्षत्र पूर्वाफाल्गुनी, इससे त्रिकोण पूर्वाषाढ़ व कृत्तिका नक्षत्रों में जब शुभग्रह आएगा तो शरीर व सन्तान का सुख होगा। अथवा ३८वें वर्ष में उक्त फल होगा। इसी प्रकार गुरु से लग्न पर्यन्त भी जानना चाहिए। इसी पद्धति से अन्य शुभग्रहों का भी फलदायक समय जाना जा सकता है।

रेखातुल्य आयु योग :

आदित्यभूमोदयगे व्ययेशे
गतौजसौ कालकलेवरेशौ।
फलानि यावन्ति तनुस्थितानि
तदुन्मिताः स्युर्मनुजायुरब्दा ॥२५॥

आदित्येत्याख्यानस्याहायुषो वर्षपरिज्ञानमिति। व्ययेशे द्वादशभावस्वामिनि आदित्यभूमोदयगे शनिराश्युदयगतेऽर्थान्मकरकुम्भान्यतरराशिलग्ने तदा कालकलेवरेशौ अष्टमलग्न स्वामिनौ गतौजसौ षड्बलै रहितौ यदा तदा यावन्ति यदुन्मितानि फलानि स्थानानि तनुस्थितानि तदुन्मिता स्तावन्तो मनुजस्य आयुषो वर्षाणि स्युः। उक्त लक्षणयोगेऽङ्गेयावन्ति फलानि तावन्ति वर्षाणि जातको जीवतीति भावः।

यदि व्यय भाव का स्वामी मकर या कुम्भ राशिमें स्थित होकर लग्न में विद्यमान हो, अष्टमेश तथा लग्नेश दोनों निर्बल हों तब लग्न में जितनी रेखाएं हों मनुष्य की उतने वर्ष की ही आयु होती है।

राजयोग व समुदायाष्टक रेखा :

तोयेशे तनुगे तनूभवनपे पातालगेहोपगे।
राश्योस्तत्खगयुक्तयोर्गुणगुणैस्तुल्याः कलाश्चेद्यदा।
राजश्रीसहिता भवा नृपतयो भावत्रयेषूदय-
प्राप्त्यम्भस्सु फलोपगेषु खगुणाधिक्येषु जातस्तदा ॥२६॥
तेजःश्रीबहुतां समेति मनुजो राज्यं व्ययेशप्रभा-
व्दादूर्ध्वं यदि पंचविंशति मुखादेवान्तसंख्याः फलाः।
भाग्याम्भोगृहगा गवान्तकमिताव्दान्ते परेऽब्दे किमु
संयुक्तो नरवाहनेन जनितो मर्त्यो भवेत्सर्वदा ॥२७॥

तोयेश इति। तेज इति च। तोयेशे चतुर्थ स्वामिनि, तनुगे लग्नगते, तनूभवनपे लग्नेशे पातालगेहोपगे चतुर्थगे तत्त्वयुक्त योः राश्योरथल्लिग्नचतुर्थ योर्गुणगुणैस्तुल्यास्त्रयस्त्रिंशन्मिता कला रेखास्चेत्तदा भवा जाता राजश्रीसहिता राजलक्ष्मीयुक्ता नृपतयो राजानो जायन्त इति शेषः। भावत्रयेष्विति। उदयो लग्नं प्राप्तिरेकादशोम्भचतुर्थस्तेषु भावत्रयेषु खगुणाधिक्येषु त्रिंशनाधिक्येषु फलोपगेषु रेखोपयातेषु यदा तदा जातः खवेदप्रमाब्दाच्चत्वारिंशदब्दादूर्ध्वं राज्यं तेजोमहः श्रीलक्ष्मीस्तयो बहुलतां समेति प्राप्नोति।

यदीति। यदि चेत्पंचविंशतिमुखास्त्रयस्त्रिंशदन्ताः कला रेखा भाग्याम्भोगृहगा नवमचतुर्थस्थान यातास्तदा जनित उत्पन्नो मर्त्यो मनुष्यो गजान्तकमिताब्दान्तेऽष्टाविंशति वर्षान्ते किमु अथवापरे परतोऽब्दे सर्वदा नित्यं नरवाहनेनान्दोलिकादिना संयुक्तः सहितो भवेत्।

यदि चतुर्थ भाव का स्वामी लग्न में हो, लग्न का स्वामी चतुर्थ भाव में हो और दोनों भावों में ३३-३३ रेखाएं हों तो मनुष्य श्रीसम्पन्न राजा होता है।

लग्न, लाभस्थान तथा चतुर्थ स्थान में यदि ३० से अधिक रेखाएं हों तो मनुष्य ४० वर्ष की अवस्था के बाद तेजस्वी होकर राज्य और लक्ष्मी को पाता है।

नवम और चतुर्थ में २५ से अधिक ३३ तक रेखाएं हों तो २८वें वर्ष में या आगे मनुष्य वाहन सुख प्राप्त करता है।

स्वोच्चे गुरौ वाहनराशियाते
वियत्सरस्वत्फलमित्युपेते।
कल्पोपयाते तपनेऽजराशौ
राजा भवेल्लक्षमिताश्वनाथः ॥२८॥

स्वोच्च इति। गुरौ स्वोच्चे कर्कटे सति वाहनराशियाते सुखभावयाते, वियत्सरस्वत्फलमित्युपेते चत्वारिंशद्रेखायुक्ते, तपतीति तपनस्तस्मिन् सूर्येऽजराशौ कल्पोपयाते लग्नगते भवसि चेत्तदा लक्षमिताश्वनाथो स्वामी राजा भवेत्।

यदि बृहस्पति कर्क राशि में चतुर्थ स्थान में स्थित हो तथा वह ४० रेखाओं से युक्त हो तथा मेष राशि का सूर्य लग्न में हो तो मनुष्य राजा होता है तथा वह एक लाख घोड़ों का स्वामी अर्थात् बहुत धनी मानी होता है।

खाब्धिप्रमस्थानसमेत आद्ये
कोदण्ड इज्येऽनिमिषेऽसुरेज्ये ।
भौमे स्वतुङ्गे कलशे कृशाङ्गे
स्यात्सार्वभौमो निखिलेन्दिराभृत् ॥२९॥

खाब्धीति । इज्ये गुरौ, कोदण्डे धनुषि, आद्ये लग्ने खाब्धिप्रमस्थान समेते चत्वारिंशद्रेखायुक्तेऽसुरेज्ये शुक्रेऽनिमिषे मीने, भौमे स्वोच्चे मकरे कृशांगे शनौ कलशे कुम्भे गतवति तदा जातः निखिलेन्दिराभृत् सम्पूर्णलक्ष्मीश्वर सार्वभौमः सम्राड् स्यात् ।

धनु लग्न में जन्म हो, जन्म लग्न में गुरु ४० रेखाओं से युक्त हो, शुक्र व मंगल अपनी उच्च राशियों में हों, शनि कुम्भ राशि में हो तो मनुष्य सारे ऐश्वर्यों से युक्त सार्वभौम चक्रवर्ती सम्राट् होता है।

भावों की बन्धु आदि संज्ञा :

बन्ध्वाख्यं पुरपंचमाङ्कभवनं स्वाभ्रारिमं सेवकं
सोत्थास्तायगृहं तु पोषकमथाम्बायुर्व्ययं घातकम् ।
रेखैक्यं कुरु सन्नमीष्वधिकता चेत्पोषकस्यार्थवान्
हन्तुः पोषकतो भवेदधिकता हन्तुर्नरो निर्धनः ॥३०॥

बन्ध्वाख्यमिति । पुरपंचमाकं भवनं लग्नपंचमनवगृहं बन्ध्वाख्यं बन्धुसंज्ञकमिति । स्वाभ्रारिमं द्वितीय दशमषष्ठमं सेवकम्, सोत्थास्तायगृहं तृतीय-सप्तमैकादशभवनं पोषकम् । अथाम्बायुर्व्ययं चतुर्थाष्टमद्वादशभवनं घातकम् । सन् विद्वन्, अमीषु उक्तस्थानेषु रेखैक्यं रेखाणां योगं कुरु विधेहि । चेद्यदि हन्तुर्घातकात्पोषकस्याधिकता अर्थाद् रेखाणामैक्यमधिकं तर्हि जातोऽर्थवान् धनी भवेत्, यदिपोषकतो हन्तुर्घातकस्याधिकता तदा नरो निर्धनो भवेत् ।

लग्न और त्रिकोण स्थान (५, ९) बन्धु संज्ञक होते हैं। द्वितीय, षष्ठ व दशम सेवक संज्ञक होते हैं।

तृतीय, सप्तम व एकादश पोषक संज्ञक होते हैं और चतुर्थ, अष्टम और द्वादश घातक संज्ञक होते हैं।

इन भावों की रेखाओं का योग कर लेना चाहिए। यदि घातक रेखाओं से पोषक रेखाएं अधिक हों तो व्यक्ति धनी अन्यथा निर्धन होता है।

प्रकृत उदाहरण से विषय को स्पष्ट किया गया है—

लग्न २६, पंचम २६, नवम २६=८१ बन्धु संज्ञक भाव रेखा योग।
द्वितीय २२, षष्ठ २६, दशम ३१=७९ सेवक संज्ञक भाव रेखा योग।
तृतीय ३६, सप्तम २१, लाभ ३०=८७ पोषक संज्ञक भाव रेखा योग।
चतुर्थ ३६, अष्टम २५, द्वादश २९=९० घातक संज्ञक पोषक रेखा योग।

यहां घातक योग से पोषक योग कम है। अतः यह व्यक्ति जीवन में अल्प धनी होगा।बन्धु रेखा सेवक रेखा से अधिक है, अतः यह व्यक्ति जीवन में लोकप्रिय तथा सेवक नहीं होगा।

भावों की अन्तर्भागादि संज्ञा :

अन्तर्भागोऽयं सुतकेन्द्राङ्कफलैक्यं
पुष्टं हृत्तुष्टत्वं ससुकर्मज्ञानकविद्यः।
ऐक्यं रेखाणामितरेषां यदि पुष्टं
दम्भाधिक्यं हृद्व्यथनं बाह्यकभागः॥३१॥

अन्तर्भाग इति मत्तमयूरेण भावानामन्तर्भागादिसंज्ञामाह। सुतः पंचमः केन्द्राणि लग्न चतुर्थसप्तमदशमानि अंको नवमस्तत्र स्थितानां फलानां रेखैक्यं कुर्यात्। यदि तत् पुष्टमधिकं तर्हि हृत्तुष्टत्वं मनस्तोषः, ससुकर्मज्ञानकविद्यः सत्कर्मज्ञानविद्याभिर्युक्तः स्यादिति शेषः। अयमन्तर्भागो ज्ञेयः।

ऐक्यमिति। इतरेषां केन्द्रत्रिकोणभिन्नस्थानां रेखाणामैक्यं योगं कुर्यादिति। यदि तत्पुष्टमधिकं तदा दम्भाधिक्यमभिमानबाहुल्यं हृद्व्यथनं मनःपीडा स्यादिति शेषः। एष बाह्यभागो ज्ञेयः।

केन्द्र स्थान (१, ४, ७, १०) व त्रिकोण स्थान (५, ९) में अन्तःकरण संज्ञक छह स्थान हैं।

शेष छह स्थान (२, ३, ६, ८, ११, १२) बाह्य संज्ञक है।

इन दोनों भागों की रेखाओं का योग कर लेना चाहिए। यदि अन्तर्भाग की रेखाएं अधिक हों तो मनुष्य के हृदय में सन्तोष, ज्ञान, विद्या तथा धैर्य की अधिकता होती है।

यदि बहिर्भाग की रेखाएं अधिक हों तो व्यक्ति अभिमानी, दुःखी, ईर्ष्यालु तथा दिखावे वाला होता है।

धन लाभ की दिशा का ज्ञान :

> क्रमेण मेषादिकमत्रयेताः
> काष्ठाश्चतस्रो हरिदिङ्मुखाः स्युः ।
> पुष्टं फलं यासु हरित्सु तासु
> जातो लभेत द्रविणादिवृद्धिम् ॥३२॥

क्रमेणेति । मेषः प्रसिद्धस्तदादिराशित्रयमुपगताः क्रमेण परिपाट्या हरिदिङ्मुखाः पूर्वाद्याः काष्ठाः दिशः स्युः । चतस्रः दिशः स्युः क्रमेणेत्युक्तं भवति । मेषवृषमिथुनाः पूर्वे, कर्कसिंहकन्याः दक्षिणे, तुलावृश्चिकधनूंषि पश्चिमायां, मकरकुम्भमीनाः उत्तरस्यामवगम्याः प्रयोजनमुच्यते । पुष्टमिति । यासु हरित्सु दिक्षु पुष्टमधिकं फलं भवति तासु द्रविणादिवृद्धिं लभेत् जातः । तस्यामेव दिक्षु गृहादीनां देवस्थानानां च निर्माणं सौख्यकरं भवति ।

मेषादि तीन-तीन राशियों का क्रमशः पूर्वादि दिशाओं में वास समझना चाहिए । मेष, वृष, मिथुन पूर्व दिशा में; कर्क, सिंह, कन्या दक्षिण दिशा में; तुला, वृश्चिक, धनु पश्चिम दिशा में; मकर, कुम्भ, मीन उत्तर दिशा में माननी चाहिएं ।

इन राशियों का दिशा विभाग के अनुसार रेखा-योग करना चाहिए । जिस दिशा का रेखा-योग अधिक हो, उस दिशा में व्यक्ति को धनागम व सुखादि फल होते हैं ।

मतान्तर से दिशाओं का विभाग :

> किं वा पूर्वा प्राक्कुजान्त्याप्तिभेषु
> व्योमाङ्कायुर्भेषु कालस्य काष्ठा ।
> चेतोभूरुग्दारकेषु प्रतीची
> स्यात्कौबेरी सौख्यशौर्यार्थभेषु ॥३३॥

किं वेति । किं वा प्राक्कुजं लग्नमन्त्यो व्ययः आप्तिभं लाभः, तेषु पूर्वादिक् व्योमदशमः, अंको नवमः आयुरष्टमस्तेषु कालस्य यमस्य काष्ठा दिक् । चेतो भूः कामः सप्तम इति यावत्, रुग् रोगः, षष्ठस्थानमिति । दारकः पुत्रः पंचम इति, तेषु पश्चिमा दिक् । सौख्यं चतुर्थः, शौर्यं तृतीयः, अर्थभं द्वितीयस्तेषु कौबेरी दिगुदीची स्यात् । तथा च ग्रन्थान्तरे—

'व्ययाङ्गैकादशे पूर्वा खनवाष्टसु दक्षिणा।
पश्चिमाद्रिरसाक्षेषु द्विचतुस्त्रिषु चोत्तरा ॥' इति

लग्न, द्वादश और एकादश स्थान में पूर्व दिशा; दशम, नवम व अष्टम में दक्षिण दिशा; सप्तम, षष्ठ और पंचम में पश्चिम दिशा; चतुर्थ, तृतीय और द्वितीय में उत्तर दिशा माननी चाहिए।

प्रत्येक दिशा की रेखाओं का योग कर फल जानना चाहिए।

रेखायुतिश्चेद्युगबाणतुल्यतो
व्योमस्वरान्तोनफलाहरित्स्मृता ।
सा मध्यमा याऽभ्रखगोन्मितान्तिमा
संख्या च यस्याहरितोऽभ्रगोऽधिका ॥२४॥

सा शोभनाऽथो शुभदाः स्वभोच्चगा
मूलत्रिकोणोपगता किमूदिताः ।
येऽनन्तपान्थाः किल कार्यसिद्धिदा-
स्तेषां दिशः स्युर्विबुधैरितीरितम् ॥२५॥

रेखेति। सेति च। चेद्यदि यस्यां दिशि रेखायुतिः फलानां युतिर्युगबाणतुल्य-श्चतुः पंचाशतो व्योमस्वरान्ता सप्तत्यन्ता भवति सा हरित् दिशा, ऊनफला स्वल्प-फला स्मृता। या अभ्रखगोन्मितान्तिमा नवत्यन्ता सा मध्यमा समानफला ज्ञेया। यस्या हरितो दिशोऽभ्रगोऽधिका नवत्यधिका संख्या सा शोभना शस्ता ज्ञेया।

अथो इति। आनन्तर्ये। ये शुभदाः सौम्या, अनन्तपान्था ग्रहाः, स्वभोच्चगाः स्वगृहे स्वोच्चे संस्थिता मूलत्रिकोणोपगता किमु उदिता उदयं प्राप्ताः, तेषां ग्रहाणां दिशः किल निश्चयेन कार्यस्याभीष्टस्य सिद्धिप्रदाः स्युः। इत्येवं विबुधै-रीरितं कथितम्। तथा च ग्रन्थान्तरे—

'चतुःपञ्चाशदारभ्य सप्तत्यन्तयुतिस्त्वये।
हीनफलदिशा ज्ञेया नवत्यन्ता च मध्यमा ॥
नवतेरधिका यस्याः संख्या परमशोभना।
सौम्याः स्वोच्चे त्रिकोणे चेत्तदाशा कार्यसिद्धिदा ॥' इति

जिस दिशा में ५४ से ७० तक रेखाएं हों वह हीन फल वाली होती है। ७० से ९० तक रेखाओं का योग होने पर मध्यम फल वाली और ९० से अधिक रेखाओं वाली दिशा उत्तम फल वाली होती है।

जिस दिशा में उदित, स्वराशिगत, उच्चगत या मूलत्रिकोणगत ग्रह हों, उस दिशा में कार्य की सिद्धि होती है।

धनदायिनी व मरण दिशा का विवेक :

> काष्ठाविभागे द्रविणाधिपस्य
> जन्मी प्रजातो द्रविणं लभेत।
> कलालयाधीशककुब्विभागे
> कलेवरः कालगृहं समेति ॥३६॥

काष्ठेति। द्रविणाधिपस्य द्वितीयभावस्वामिनः, काष्ठाविभागे प्रजात उत्पन्नो जन्मी शरीरी मनुष्य इति यावत्। द्रविणं धनं लभेत प्राप्नोति। कलालयोऽष्टमस्तस्याधीशः स्वामी तस्य ककुब् दिक् तस्या विभागः प्रदेशस्तस्मिन् कलेवरः शरीरं कालगृहं यमगृहं समेति प्राप्नोति। यथा च ग्रन्थान्तरे—

> 'वित्तेश्वरस्य दिग्भागे वित्तमाप्नोति मानवः।
> रन्ध्रेश्वरस्य दिग्भागे देहस्तत्र विनश्यति ॥' इति

अन्यत्रापि—

> 'वित्तेशाशासु वित्तं मृतिपतिगतदिग्भागगे देहनाशः।' इति

जिस दिशा में कुण्डली में धनेश स्थित हो, उसी दिशा में मनुष्य को धन प्राप्ति होती है।

अष्टमेश जिस दिशा में स्थित हो, उस दिशा में व्यक्ति का मरण समझना चाहिए।

इति श्रीमत्पण्डितमुकुन्ददैवज्ञविरचितेऽष्टकवर्गमहानिबन्धे पं० सुरेशमिश्रकृतायां 'मञ्जुलाक्षरायां' हिन्दीव्याख्यां समुदायाष्टकवर्गाध्यायस्तृतीयोऽवसितः ॥

४

गोचराष्टकवर्गाध्याय

चक्र निर्माण का प्रकार :

प्राचीःकला नन्दमिता विलिख्य
तिर्यक्कलाः पावकचन्द्रतुल्याः ।
भवन्ति कोष्ठान्यरिगोमितानि
भिन्नाष्टकचक्रमिदं निरुक्तम् ॥१॥

प्राचीरिति । नन्दमिता नवतुल्याः कलाः रेखाः प्राचीः पूर्वा विलिख्य तथा पावक चन्द्रा तुल्यास्त्रयोदशोन्मितास्तिर्यक्कलास्तिरश्चीनाः रेखा विलिख्य, एवमरिगोमितानि षण्णवति तुल्यानि कोष्ठानि भवन्ति जायन्ते । इदं भिन्नाष्टकं चक्रं निरुक्तं कथितं बुधैरिति शेषः । तथा च ब्रह्मयामले—

'नवरेखा लिखेत्प्राचीस्तिर्यग्रेखास्त्रयोदश ।
षण्णवत्येव कोष्ठानि चक्रं भिन्नाष्टकं पुनः ॥' इति

नव्यास्तु भचक्रे त्वष्टवर्गार्थं सलग्नखचरान् न्यसेदित्यूचुः । अत्रप्रकारे स्वरूपमात्रभेदः फलाविशेषात्तुल्यतैवेति ।

नौ रेखाएं पड़ी और तेरह रेखाएं खड़ी खींच कर गोचराष्टक-वर्ग के लिए इस प्रकार छियानवे कोष्ठकों का चक्र बना लेना चाहिए। यह चक्र भिन्नाष्टक चक्र के समान ही होता है।

आशय यह है कि बारह राशियां और आठ सूर्यादि लग्न समेत ग्रहों को स्थापित करना है। यह श्लोक केवल शास्त्र-स्थिति सम्पादन की इच्छा से लिखा गया है। राशि, ग्रह, सूर्यादि अष्टक, रेखायोग व बिन्दुयोग इस प्रकार १२ चीजें बायीं ओर खड़ी रेखाओं में लिखी जाएंगी। इनके सामने पड़ी रेखाएं खींचें। बारह राशियों के तुल्य खाने बनाने चाहिएं। कुछ लोग बिन्दु योग तथा ग्रहों की स्थिति नहीं लिखते।

अतः तदनुसार यथेच्छ रेखा कोष्टकों को कम किया जाएगा। आगे यथावसर चक्र निर्माण करके दिखाया जा रहा है, अतः वहां से समझ लें। सारावली, वशिष्ठ संहिता, जातकादेशमार्ग आदि ग्रन्थों में श्लोकोक्त प्रकार से ही चक्र निर्माण का निर्देश दिया गया है। हमने आधुनिक पद्धति से चक्र निर्माण का प्रकार बताया है। यह नवीन पद्धति समझने की दृष्टि से अधिक उपयोगी सिद्ध होती है।

ग्रहों की स्थापना का क्रम :

मूर्तीन्दुसौम्यास्फुजिदर्कवक्र—
वागीशतेजोनिधिजाः क्रमेण।
पंक्त्यष्टकस्यान्तकदिङ्मुखस्य
भेशाश्च तत्स्थानफलप्रदा स्युः॥२॥

मूर्तीति। मूर्तिर्लग्नं, इन्दुश्चन्द्रः, सौम्योबुधः आस्फुजिच्छुक्रोऽर्कः सूर्यः वक्रोभौमः, वागीशोगुरुः, तेजोनिधिजः शनिः एते क्रमेण अन्तकदिङ्मुखस्य दक्षिणादेः पंक्त्यष्टकस्य भेशा राशिस्वामिनः स्युः। एते तत्स्थानफलप्रदास्तासां रेखाणां फलदायका भवन्तीति शेषः।

लग्न, चन्द्रमा, बुध, शुक्र, सूर्य, मंगल, गुरु और शनि ये क्रम से दक्षिणादि दिशाओं के कोष्ठकों में स्थापित किए जाने चाहिएं। इस प्रकार से रेखाओं के फल देने वाले ग्रहों का क्रम बताया गया है।

पीछे भिन्नाष्टक वर्ग के प्रकरण में हमने ग्रहों को कक्ष्याक्रम से स्थापित करने का विकल्प समझाया था। यहां गोचर या अष्टक वर्ग में नियमतः कक्ष्या क्रम से ही ग्रहों की स्थापना की जाती है। ऊपर श्लोक में जो क्रम बताया गया है वह नीचे से ऊपर की ओर लिखा जाता है। इसी क्रम से आकाश में ग्रहों की कक्ष्या स्थित है। यदि ऊपर से नीचे लिखेंगे तो पहले सबसे ऊपर शनि, तब गुरु, मंगल, सूर्य, शुक्र, बुध, चन्द्र, लग्न इस क्रम से ग्रह लिखे जाएंगे। बात दोनों तरह से समान है। आकाश में सबसे ऊपर शनि है। तत्पश्चात् गुरु की कक्ष्या है। पश्चात् मंगल, सूर्य, शुक्र, बुध व चन्द्र की कक्ष्याएं हैं। इसी कारण इस स्थापना के प्रकार को कक्ष्याक्रम स्थापना प्रकार कहते हैं। यही स्थापना क्रम बहुमत सिद्ध है। ग्रन्थकार ने भी यही क्रम अपनाया है।

भास्करारुणतनूजमंत्रिणो
मार्गवक्षितितनूजबोधनान्
शीतलांशुमुदयं क्रमात्खगान्
गोचराष्टकगणे निवेशयेत् ॥३॥

भास्करेति। भास्करः सूर्यः, अरुणतनूजः शनिः, मंत्री गुरुस्तान् भार्गवः, शुक्रः। क्षितितनूजो भौमः, बोधनो बुधस्तान्, शीतलांशुं चन्द्रं, उदयं लग्नं, एतान् खगान् ग्रहान् क्रमात् परिपाट्या, गोचराष्टकगणे गोचराष्टकवर्गे निवेशयेत्। बुध इति शेषः। तथा च ब्रह्मयामले—

'रविमन्दगुरूणां च शुक्रभौमविदां तथा।
शीतांशुलग्नयोश्चैव गोचराष्टकवर्गकम् ॥' इति

सूर्य, शनि, बृहस्पति, शुक्र, मंगल, बुध, चन्द्र व लग्न इस क्रम से भी गोचराष्टक में ग्रहों की स्थापना बताई गई है।

यह स्थापना क्रम का विकल्प है। ब्रह्मयामल व किसी अन्य ग्रन्थ के हवाले से ग्रन्थकार ने इसे प्रमाणित किया है। परन्तु बहुमत इसे नहीं मानता।

गोचर फल ज्ञान का प्रकार :

मन्दो राशिगजांशपूर्वभाग—
कालाख्ये द्वितयेऽर्चितः फलाय।
कक्षायाः क्रमशोऽन्त्यभागकाले
सम्प्रोक्तं फलदं विलग्नमार्यैः ॥४॥

मन्द इति। फलाय फलप्राप्त्यै राशेर्भस्य गजांशोऽष्टमांशस्तत्तुल्य एव पूर्वभागकालस्तस्मिन् मन्दः शनिः स्यादिति शेषः। द्वितीये राश्यष्टमांशद्वितीय-भागकालेऽर्चितो गुरुः स्यात्। एवं कक्षायाः क्रमतो राशेरष्टमांशस्यान्त्यभागकाले-ऽवसानांशकाले विलग्नं लग्नं फलदं फलदायकमार्यैः सज्जनैः सम्प्रोक्तं सम्यक् प्रकारेण कथितम्। ग्रन्थान्तरे तु कक्ष्याक्रमः स्पष्ट उक्तः—

'मन्दामरेज्यभूपुत्रसूर्य शुक्रेन्दुजेन्दवः।
लग्नं कक्षा क्रमो ज्ञेयः ॥' इति

कोई ग्रह किसी राशि विशेष में कब-कब अपना शुभ या अशुभ फल दिखलाएगा ? इसके लिए प्रत्येक राशि को आठ बराबर भागों में

बांट लिया जाता है। एक राशि के ३० अंशों को आठ से भाग देने पर आठवा हिस्सा ३ अंश ४५ कला के बराबर होता है। इन अष्टमांशों में कक्ष्या क्रम से ही ग्रहों को आधिपत्य दिया गया है तथा वे तदनुसार ही फल देते हैं।

माना किसी व्यक्ति को शनि योगकारक उत्तम फलदायक है। अब शनि जब-जब अधिक रेखायुक्त राशि में गोचर करेगा तो उसे अच्छा फल मिलेगा, यह एक सामान्य नियम है। इस नियम का प्रतिपादन पीछे अनेक स्थलों पर किया जा चुका है। अब शनि एक राशि में २ वर्ष ६ मास तक रहेगा। तो क्या पूरे समय में व्यक्ति को शुभ या अशुभ फल मिलता रहेगा या किसी विशेष भाग में ? इसका निर्भ्रान्त उत्तर हमें गोचराष्टक वर्ग से मिलेगा। आचार्यों ने राशि को आठ बराबर भागों में बांटा है। उन आठों भागों का प्रतिनिधित्व कक्ष्याक्रम से आठों वर्गाधिपति करते हैं।

० से ३ अंश ४५ कला तक—शनि का प्रतिनिधित्व
३°.४५′ से ७°.३०′ तक—गुरु का प्रतिनिधित्व
७°.३०′ से ११°.१५′ तक—मंगल का प्रतिनिधित्व
११°.१५′ से १५° तक—सूर्य का प्रतिनिधित्व
१५° से १८°.४५′ तक—शुक्र का प्रतिनिधित्व
१८°.४५′ से २२°.३०′ तक—बुध का प्रतिनिधित्व
२२°.३०′ से २६.१५ तक—चन्द्र का प्रतिनिधित्व
२६°.१५′ से ३०° तक—लग्न का प्रतिनिधित्व

अब देखना है कि अपने भिन्नाष्टक वर्ग में किस राशि में शनि को किस ग्रह ने रेखाएं दीं थीं। कल्पना कीजिए शनि, मंगल व बुध ने उस राशि में शनि को बिन्दु दिए थे। तो सीधा सा अर्थ यह हुआ कि उस राशि में गोचर करते समय शनि जब-जब शनि मंगल व बुध के अंशों (०—३°.४५′, ७°.३०′ से ११°.१५′ और १८°.४५ से २२°.३०′) में आयेगा तो अपना फल दिखाएगा। शेष समय उसका फल नहीं मिलेगा। इस प्रकार गोचर की पद्धति को अधिक विश्वसनीय और प्रामाणिक बनाने के लिए गोचराष्टक वर्ग का सहारा लिया जाता है। यहां यह ध्यान रखना आवश्यक है कि रेखायुक्त ग्रह भी यदि नीच. शत्रु राशि

में या सूर्य के साथ (अस्त) होता है तो अपना फल देने में असमर्थ ही होगा।

अब इस सारे विषय को हृदयंगम करने के लिए अपने पूर्वोक्त उदाहरण को लेते हैं। भिन्नाष्टक वर्ग में जो ग्रह जहां-जहां रेखाप्रद है वहीं इस प्रसंग में भी रेखाप्रद होगा। अतः पीछे भिन्नाष्टक वर्ग प्रकरण में दिया गया रवि का अष्टक वर्ग चक्र यहां भी काम आएगा। उस चक्र को पीछे देखिए तथा समझिए कि शनि मीन राशि में स्थित है। उस राशि में उसे रेखा देने वाले ग्रह शनि, मंगल, सूर्य, शुक्र, बुध चन्द्र और लग्न हैं। केवल बृहस्पति ने रेखा नहीं दी। अतः कहेंगे कि जब शनि मीन में होगा तो बृहस्पति के भाग (३°.४५′ से ७°.३०′ तक) को छोड़कर शेष सारे गोचर काल में अपना फल दिखाएगा।

इसी पद्धति से जब शीघ्रगामी ग्रहों का फल देने वाला समय निकालेंगे तो काल की सूक्ष्मता बढ़ती जाएगी। जैसे चन्द्रमा मकर में ४ रेखा वाला है। अतः जब-जब अपने रेखादायक ग्रहों की कक्ष्या से गुजरेगा शुभाशुभ फल देगा। इस प्रकार घण्टे मिनटों तक की सूक्ष्म अवधितक फल प्राप्ति का काल बताया जा सकता है।

ग्रहों का राशि भोगकाल :

> **सूर्य्यादिद्युसदां वियद्गुणमिताः सांघ्रिद्वयं सायक-**
> **वेदा भूयमला वियत्खगगुणाः सप्ताश्वितुल्याः क्रमात्।**
> **आकाशाम्बरखेचरा अथवियद्वेदांशुगा वासराः**
> **प्राचीनैर्गणकोत्तमैर्निगदिता एकर्क्षभोगा इमे ॥५॥**

सूर्येति। वियद्गुणमितास्त्रिंशत्तुल्या ३० दिवसाः, सांघ्रिद्वयं सपादद्वयं २¼ दिनं, सायकवेदाः पंचचत्वारिंशत्तुल्या ४५ दिवसाः, भूयमला एकविंशतितुल्या २१ दिवसाः, वियत्खगगुणा नवत्युत्तर शतत्रयतुल्या ३९० दिवसाः, सप्ताश्वितुल्याः सप्तविंशतितुल्याः २७ दिवसाः, आकाशाम्बरखेचरा नवशततुल्या ९०० दिवसाः वियद्वेदांशुगाश्चत्वारिंशदुत्तरपंचशततुल्या ५४० दिवसाः सन्ति। इमे क्रमात् परिपाट्या सूर्यादिद्युसदां सूर्यादिग्रहाणामेकर्क्षभोगाः वासराः दिवसाः प्राचीनैः गणकोत्तमैर्निगदिताः। तथा च करणप्रकाशे—

> 'सौरिः सुन्दरि ! सार्धमब्दयुगलं वर्षं समासे गुरुः;
> राहुर्मासदशाष्टकं तु कथितं मासं सपक्षं कुजः।
> सूर्यः शुक्रबुधौ त्रयोऽपि कथिता मासैकतुल्या ग्रहा-
> श्चन्द्रः पादयुतं दिनद्वयमिति प्रोक्तेतिराशिस्थितिः॥' इति

आदिगौ भगकुजौ भपेनजा—
अन्त्यगौ निगदितौ फलप्रदौ।
मध्यगौ धिषणदानवार्चितौ
सर्वदेह फलदः प्रहर्षुलः ॥६॥

आदिगाविति। भगः सूर्यः, कुजो भौमस्तौ आदिगौ राश्यादिगौ, भपश्चन्द्रः, इनजः शनिस्तौ अन्त्यगौ राश्यन्तगौ, धिषणो गुरुः दानवार्चितः शुक्रस्तौ मध्यगौ राशिमध्यभागगतौ फलप्रदौ फलदायकौ भवत इति शेषः। इहास्मिन् गोचरफले प्रहर्षुलो बुधः सर्वदा आदिमध्यान्त्ये फलदः फलदायको भवतीति शेषः।

सूर्य किसी भी राशि को ३० दिनों में पूरा करता है। चन्द्रमा २ दिन १५ घड़ी (६ घण्टे), मंगल ४५ दिन, बुध २१ दिन, बृहस्पति ३६० दिन, शुक्र २७ दिन, शनि ९०० दिन व राहु केतु ५४० दिन एक राशि में भ्रमण करते हैं। ऐसा प्राचीन गणितज्ञों ने बताया है।

सूर्य और मंगल राशि के प्रवेश काल अर्थात् १०° अंशों तक, चन्द्र व शनि राशि के अन्तिम भाग २०° से ३०° तक, गुरु व शुक्र मध्य भाग में तथा बुध सदा ०°—३०° तक अपना गोचर जनित फल देता है।

गन्तव्य राशि का फल :

आदित्यवित्कुजासिताः क्रमतः समीर-
सप्तेभ सप्तदिवसान् शशभृत् त्रिनाडीः।
मासान् द्विषड्गुणमितान् गुरुपंगुपाता
गन्तव्यभस्य पुरतः फलदा भवन्ति ॥७॥

आदित्येति। आदित्यः सूर्यः, विद्बुधः, कुजोभौमः, सितः शुक्रः, ते क्रमतः परिपाटीतः समीराः वायवः पंच, सप्त प्रसिद्धाः इभा अष्टौ, सप्त दिवसा वासरास्तान् गन्तव्यभस्य गन्तव्यराशेः पुरतः पूर्वं फलदाः फलदायकाः भवन्ति। यथा सूर्यो गन्तव्यराशेः प्राक् पंचदिनानि फलदः, बुधः सप्तदिवसान्, कुजोऽष्ट-दिवसान्, शुक्रः सप्तदिवसान् फलदः स्यात्। शशभृच्चन्द्रस्त्रिनाडी त्रिघटिकाः। द्विषड्गुणमितान् द्विषट्त्रितुल्यान् मासान् क्रमेण गुरुः पंगुः शनिः, पातो राहुस्ते क्रमेण गन्तव्यभस्य गन्तव्यराशेः पुरतः प्राक् फलदाः भवन्ति। ज्योतिः प्रकाशेतु किंचिद्भिन्नमुक्तम्—

'रविर्दिनं पञ्च कुजास्तथाष्टौ बुधोद्वयं त्रीणि दिनानि शुक्रः ।
मासं गुरुर्मासचतुष्कमर्कनिर्गन्तव्यराशौ फलदा भवन्ति ।।' इति

जो ग्रह जिस राशि में स्थित हो उसे अधिष्ठित या आश्रित राशि तथा जिस राशि में ग्रह जाने वाला हो उसे गन्तव्य राशि कहते हैं। अपनी आगामी राशि का फल सूर्य ५ दिन पूर्व, चन्द्रमा ३ घड़ी पूर्व, मंगल ८ दिन पूर्व, बुध ७ दिन पूर्व, शुक्र ७ दिन पूर्व, गुरु २ मास पूर्व, शनि ६ मास पूर्व और राहु ३ मास पूर्व ही देना प्रारम्भ कर देते हैं।

इस विषय में ज्योति सागर और ज्योतिः प्रकाश में कुछ अलग ढंग से इस विषय को बताया गया है—

ज्योति प्रकाश के अनुसार सूर्य ५ दिन, मंगल ८ दिन, शुक्र ३ दिन, गुरु १ मास तथा शनि ४ मास पहले फल देता है।

ज्योतिः सागर के अनुसार चन्द्रमा ३ घड़ी, गुरु १५ दिन, शनि ४ दिन, राहु ६ मास व केतु ३ मास पूर्व फल देते हैं। शेष ग्रहों का काल ज्योति प्रकाश के समान ही माना है।

ग्रहों का एक कोष्ठ-भोग का काल :

प्रत्येककोष्ठं भगभोगकालो
दस्रत्रयं सायकवेदतुल्याः ।
नाड्यो निरुक्तो विबुधैः प्रवीणै—
र्वक्ष्याम्यथो ग्लौमुखभोगकालम् ।।८।।

प्रत्येककोष्ठमिति । दस्रत्रयं त्रीणि दिनानि सायकवेदतुल्याः पंचचत्वारिंशन्मितानाड्यो घट्यः प्रवीणैश्चतुरैः विबुधैः पण्डितैः प्रत्येक कोष्ठं, भगस्य सूर्यस्य भोगकाल एककोष्ठस्थितिसमयः निरुक्तः । अथो आनन्तर्ये । ग्लौमुखभोगकालं चन्द्रादीनामेककोष्ठस्थितिसमयं वक्ष्यामि ।

अष्टक वर्ग के प्रत्येक कोष्ठक में सूर्य ३ दिन ४५ घड़ी तक रहता है। यहां पूर्वोक्त कक्ष्याकाल (अंशात्मक) को मास दिनात्मक बनाकर सुविधार्थ बताया जा रहा है। अब आगे शेष चन्द्रादि ग्रहों का कोष्ठ भोग काल कहता हूं।

शशिनस्तपनोन्मितारच घट्यः
खचराम्भोधिमिता विनाडिकाः स्युः ।

घटिका जलदैर्मिताश्च यद्वा
क्षितिसूनोर्दिनपंचकं तथा च ॥९॥
त्रिमिता घटिकाः पलानि गोऽग्नि-
प्रमितानीह किमक्षवासराख्याः ।
तुरगज्वलनोन्मिताश्च घट्यो-
ऽथ दिनान्यग्निमितानि चात्र घट्यः ॥१०॥
जलदप्रमिता विदो ऽकंवद्वा-
ऽङ्गिरसः शीतकरोन्मितश्च मासः ।
दिवसा धृतिसम्मिताश्च नाड्यो
युगनाराचमिता उताथ मासः ॥११॥
कुमितोऽष्टधरोन्मितान्यहानि
पवनाम्भोधिमिता भवन्ति घट्यः ।
भृगुजस्य दिनत्रयं समीर-
मितघट्यः कुभरत्पलानि किं वा ॥१२॥
रविवद्रविजस्य माससञ्ज्ञा
गुणतुल्या दिवसा द्वियुग्मतुल्याः ।
घटिका द्वियमोन्मिता उताहो
गुणमासा यमदोर्मितान्यहानि ॥१३॥

शशिन इति । त्रिमिता इति । जलदेति । कुमित इति । रविवदिति च । तपनोन्मिता द्वादशतुल्या घट्यो नाड्यः, शबराम्भोधिमिता एकोनपंचाशत्तुल्या विनाडिकाः पलानि यद्वा जलदैर्मिताः सप्तदशभिस्तुल्या घटिकाः शशिनश्चन्द्रस्याष्ट-वर्गस्य प्रत्येककोष्ठं एते घट्याद्याः स्युः । अर्थाच्चन्द्रस्य भोगस्य स्थित्याः प्रत्येककोष्ठं ते घट्याद्या भवन्तीत्यर्थः । दिनपंचकं पंचदिनानि, तथा त्रिमितास्त्रितुल्याघटिकाः, गोऽग्निमितान्येकोनचत्वारिंशत्तुल्यानि पलानि, किमथवाक्षवासराख्याः पंचदिनानि, तुरगज्वलनोन्मिताः सप्तत्रिंशत्तुल्याः घट्यो नाड्यः क्षितिसूनोः भोगस्य स्थित्याः प्रत्येककोष्ठं ते दिनाद्याः स्युः । अग्निमितानि त्रितुल्यानि दिनानि, जलदप्रमिताः सप्तदशतुल्या घट्यो नाड्यः, वा रविवत् दिनत्रयं पंचचत्वारिंशत्तुल्या घट्यः एते दिनाद्याः प्रत्येककोष्ठं विदो बुधस्य भोगस्य ज्ञेयाः । शीतकरोन्मित एकतुल्योमासः, धृतिसम्मिता अष्टादशतुल्या दिवसाः, युगनाराचमिताश्चतुः पंचाशत्तुल्याः नाड्यः, एतेमासाद्याः प्रत्येककोष्ठं, अंगिरसो गुरोर्भोगस्य ज्ञेयाः ।

दिनत्रयं, समीरितघट्य;, पंचतुल्यनाड्य:, कुमरुत्पलानि एकपंचाशत्तुल्यानि पलानि, किमथवा, रविवत् भोगकालो ज्ञेयः। भृगुजस्य शुक्रस्य भोगस्य प्रत्येककोष्ठं ते दिनाद्या भवन्ति। गुणतुल्यास्त्रितुल्या माससंज्ञाः मासाः, द्वियुग्मतुल्या द्वाविंशति- तुल्या दिवसा वासराः, द्वियमोन्मिता द्वाविंशतिमिता घटिका नाडिकाः, उताहो गुणमासास्त्रयो मासाः, यमद्रैमितानि द्वाविंशतितुल्यानि, अहानि दिनानि रविजस्य शनेर्भोगस्य स्थित्याः प्रत्येककोष्ठं ते मासाद्या भवन्ति। सर्वेंख्यादयो ग्रहा गोचरा- वसरे निजनिजपूर्वोक्त मासदिनघटीपलात्मकभोगकालपर्यन्तमेकस्मिन्कोष्ठे तिष्ठन्ति। तद्‌द्विगुणकालपर्यन्तं द्वितीयकोष्ठे तिष्ठन्ति। एवं तृतीयादिषु कोष्ठेषु ग्रहस्थितिकालो बोध्य इति।

चन्द्रमा १२ घड़ी ४१ पल अथवा १७ घड़ी तक एक कोष्ठक को भोगता है। मंगल ५ दिन ३ घड़ी ३१ पल या ५ दिन ३७ घड़ी तक भोगता है।

बुध ३ दिन १७ घड़ी अथवा ३ दिन ४५ घड़ी तक एक कोष्ठक को भोगता है।

बृहस्पति १ मास १८ दिन ५४ घड़ी अथवा १ मास १८ दिन ४५ घड़ी अथवा ५६ दिन तक भोगता है।

शुक्र ३ दिन ५ घड़ी ५१ पल अथवा ३ दिन ४५ घड़ी तक भोगता है।

शनि ३ मास २२ दिन २२ घड़ी अथवा ३ मास २२ दिन एक कोष्ठक में रहता है। इसे नीचे चक्र में स्पष्ट समझाया गया है। मुख्य मत व मतान्तर दोनों वहां प्रदर्शित हैं। यहां ध्यान रखिए कि एक कोष्ठक का मान ३ अंश ४५ कला है। ग्रह अपने राशि भोग काल के अनुसार इस दूरी को जितने समय में पूरा करे वह समय एक कोष्ठक का भोग काल कहलाएगी। ऊपर कई मत दिखाए जाने का कारण यह है कि भौमादि पंच ताराग्रह सूर्य की किरणों में अस्त होकर अपनी स्वाभाविक गति को छोड़कर या तो तेज चलते हैं या धीरे। इसी कारण परिस्थिति वशात् उनका भोगकाल कई विकल्पों में बताया गया है। तथापि मुख्यमत सामान्य परिस्थितियों में प्रायः ठीक उतरता है।

कोष्ठ भोगकाल बोधक चक्र

		रवि	चन्द्र	भौम	बुध	गुरु		शुक्र	शनि
मुख्यमत	मा०	०	०	०	०	१		०	३
	दि०	३	०	५	३	१८		३	२२
	घ०	४५	१२	३	१७	५४		५	२२
	प०	०	४९	३९	०	०		५१	०
मतान्तर	मा०		०	०	०	१	अथवा ४५ दि० ०	०	३
	दि०		०	५	३	१८		३	२२
	घ०	०	१७	३७	४५	४५		४५	०
	प०		०	०	०	०		०	०

सफल विफल कोष्ठक का ज्ञान :

> रेखायुक्तः सकलफलदो
> रेखाहीनो यदि विफलकृत् ।
> नीचास्तारातिभवनगतो
> रेखोपेतोऽप्यशुभफलकृत् ॥१४॥

रेखायुक्त इति । यो ग्रहो रेखया फलेन युक्तः सन् यस्मिन् कोष्ठे वर्तते स सकलफलदो भवति । यदि ग्रहो रेखया फलेन हीनो रेखारहितकोष्ठे भवतीत्यर्थस्तदा स विफलकृत् विफलं निष्फलं करोति । यो ग्रहो रेखया फलेनोपेतो युक्तः सन्नपि नीचराशिगतोऽस्तंगतः शत्रुराशिगतो यदि तदा अशुभफलकृद् अशुभं दुष्टं फलं करोति ।

यदि ग्रह रेखायुक्त कोष्ठक में हो तो अपना सम्पूर्ण फल देता है । यदि रेखा रहित कोष्ठक में हो तो विफल होता है । यदि कोई ग्रह रेखायुक्त होकर भी नीच राशि, शत्रुराशि या अस्तंगत हो तो अशुभ फल को देने वाला होता है ।

ग्रहों का शुभाशुभ बल :

> स्वोच्चेऽखिलं सत्फलमंध्रिहीनं
> कोणे स्वभेऽर्द्धं सखिभेऽङ्घ्रितुल्यम् ।

ज्ञेयो गजांशः समभे खमस्त-

नीचारिगे दुष्टफलं विलोमात् ॥१५॥

स्वोच्च इति । यो ग्रहः स्वोच्चे निजोच्चराशौ वर्तते तस्य सत्फलं शुभफलं सम्पूर्णं भवेदिति शेषः । कोण इति । मूलत्रिकोणराशौ यो ग्रहो वर्तते तस्यांघ्रिहीनं पादोनं (३/४) सत्फलं भवति। स्वभेनिजराशौ अर्धं रूपार्धं (१/२) सत्फलं भवेदिति । सखिभे मित्रराशौ यस्तस्यांघ्रितुल्यं (१/४) पादतुल्यं सत्फलं भवेदिति । ज्ञेय इति । समभे समग्रहराशौ यो ग्रहो वर्तते तस्य गजांशोऽष्टमांशतुल्यः (१/८) सत्फलं भवेत् । योऽस्तंगतः सूर्येण सह वर्तते तस्य, नीचराशिगस्यारिभवनगतस्य च सत् फलं खं शून्यं भवेत् । इह विलोमादशुभं दुष्टं फलं ज्ञेयम् । अर्थात् दुष्टफलं क्रमशः शून्यम्, पादतुल्यं, पादत्रयं, अष्टमांशहीनं, सम्पूर्णं च ज्ञेयम् स्वोच्चकोण-भिन्नसमास्तंगतारिभगस्येति । तथा च गुणाकरो होरामकरन्दे—

'स्वोच्चे रूपं चरणरहितं स्वत्रिकोणे स्वभेऽर्धं,
नागांशानां त्रयमधिसुहृद्भेसुहृद्भाग्निपादः ।
स्याद्वष्टांशः समगृहगते षोडशांशोऽरिराशौ,
द्वात्रिंशांशस्त्वधिरिपुगृहे नीचराशौ न किंचित् ॥'

जो ग्रह अपनी उच्च राशि में स्थित हो उसका शुभ फल पूर्ण, मूल त्रिकोण राशि में होने पर पौना अर्थात् ४५ कला, स्वराशि में होने पर आधा ३० कला, भिन्न राशि में होने पर चौथाई १५ कला, समराशि में होने पर आठवां हिस्सा साढ़े सात कला शुभ फल होता है। शेष अशुभ फल होगा। अर्थात् उच्च राशि में अशुभ फल शून्य, मूलत्रिकोण राशि में १५ कला, स्वराशि में ३० कला, भिन्नराशि में ४५ कला, समराशि में ५२.३० कला अशुभ फल होता है। अस्तंगत, शत्रुगत तथा नीचराशिगत ग्रह का शुभ फल शून्य और अशुभ फल पूर्ण अर्थात् ६० कला होता है।

रेखा व बिन्दुओं का विंशोपक (विस्वा) बनाना :

रेखाश्च बिन्दून्विनिहत्य सायकैः
संहृत्य दोर्भ्यां च फलं यदाप्यते ।
विंशोपकाख्यं क्रमतः शुभाशुभं
वीर्य्यं फलं तद्विग्रमसञ्चारिणाम् ॥१६॥

रेखा इति। ग्रहाणां भिन्नभिन्नराशिस्थानां रेखाणां बिन्दूनां च योगः कार्यः। ततस्ता रेखा बिन्दून् च पृथक् सायकैः पंचभिर्विनिहत्य दोर्भ्यां द्वाभ्यां संहृत्य विभज्य तदा यत्फलमाप्यते लभ्यते तत् क्रमतः शुभाशुभं सदसद् रेखातः शुभफलं बिन्दुनोऽशुभफलमित्यर्थः। विशोपकात्मकं विश्वात्मकं वीर्यं बलम्। तद्विधं अभ्रचारिणां ग्रहाणां फलमपि ज्ञेयम्। तथा च जातकरत्नकोशे—

'गृहेभ्यो ग्रहमाश्रित्य पूर्वं रेखाष्टकं स्मृतम्।
अन्य ग्रहाद् ग्रहान् कृत्वा युक्तिभेदोऽत्र केवलम्॥'
'ग्रहाणां शुभभावेषु रेखादेया क्रमन्यतः।
सार्धद्विगुणिता रेखा ग्रहे विश्वात्मकं फलम्॥' इति

अर्थात् एका रेखा सार्धद्वयविशोपकात्मिका, एवमेको बिन्दुः सार्धद्वयविशोपकात्मको ज्ञेयः। रेखातः शुभफलं बिन्दुतोऽशुभफलं ज्ञेयम्। रेखायोगः सार्धद्वयेन २½ निहता कार्या तदा विशोपकात्मकं शुभबलं भवेत्। एवं बिन्दुयोगोऽपि तद्वत् निहतः कार्यस्तदा विशोपकात्मकमशुभं बलं भवेत्। तत्र शुभबलाधिक्ये शुभफलमशुभबलाधिक्येऽशुभफलं वक्तव्यम्।

अलग अलग राशियों में जितनी रेखाएं हों उन्हें प्रत्येक अष्टक वर्ग के चक्र से उठा लें। उस संख्या में ५ से गुणा कर २ से भाग दें। लब्धि विशोपकात्मक शुभ बल होगी।

इसी प्रकार प्रत्येक ग्रह के अष्टक वर्ग से प्रत्येक राशि के बिन्दु योग को ५ से गुणा कर २ से भाग देना चाहिए। लब्धि विशोपकात्मक अशुभ बल होगी।

यदि किसी राशि में शुभ बल अधिक हो तो उस राशि में गोचर जनित फल शुभ होगा। इसके विपरीत अशुभ बल अधिक होने पर उस राशि का गोचर अशुभ होगा।

एक रेखा का विशोपक मान २½ होता है। अर्थात् एक रेखा में २½ विस्वे होते हैं। इसी प्रकार बिन्दु भी २½ विस्वे का होता है। यदि रेखा योग अथवा बिन्दु योग को ढाई गुणा कर लिया जाय तो विशोपक मान निकल आता है।

इस विषय को उदाहरण से स्पष्ट किया गया है। हमारे पूर्वोक्त उदाहरण में सूर्याष्टक वर्ग में मेष राशि में ४ रेखाएं हैं। इस संख्या को ढाई से गुणा करने के लिए ५ से गुणा कर २ का भाग दिया तो ४×५÷२=१० विशोपकात्मक शुभ बल हुआ। वहां बिन्दु योग भी समान होने के कारण अशुभ बल भी १० विशोपकात्मक ही होगा।

अतः जब सूर्य मेष राशि में गोचर करेगा तब शुभाशुभ बल समान होने के कारण शुभाशुभ मिश्रित फल मिलेगा।

ग्रहों का अंग विभाग :

> शीर्षे मुखेऽर्को हृदये गलेऽब्जः
> पृष्ठोदरेऽस्रो विधुजः करेऽङ्घ्रौ ।
> जीवश्च कट्यां जघनेऽथ गुह्ये
> मुष्के कविर्जानुविभाग आर्किः ॥१७॥
> कुर्यात्प्रभुत्वं जननेऽनुयोगे
> गोचारके यः खचरः प्रसव्यः ।
> तदा निजाङ्गे निजदोषतः स
> पीडां ततस्तं परिपूजयेत्सन् ॥१८॥

शीर्षे इति । कुर्यादिति च । शीर्षे शिरसि मुखे वदनेऽर्कः सूर्यः प्रभुत्वं कुर्यात् । हृदये चित्ते गले कण्ठेऽब्जश्चन्द्रः । पृष्ठे उदरे चास्रो भौमः । करेऽङ्घ्रौ अंघ्रौपादे विधुजो बुधः । कट्यां जघने च जीवः । गुह्ये मुष्केऽण्डकोषे कविः शुक्रः । जानुविभागे आर्किः शनिः प्रभुत्वमधिकारं कुर्यात् । यः खचरो ग्रहो जननेऽनुयोगे प्रश्नकाले, गोचारके गोचरे, प्रसव्यः प्रतिकूलवर्ती स्यादिति शेषः । तदा स निजांगे स्वकीयशरीरविभागे निजदोषतः स्वस्य पित्तादिदोषतः पीडां कुर्यात् । ततस्तं दोषकारकं ग्रहं सन् पण्डितः परिपूजयेत् ।

सूर्य—सिर एवं मुख, चन्द्रमा—हृदय व गल प्रदेश, मंगल—पेट व कमर, बुध—हाथ व पैर, बृहस्पति—कमर तथा जांघ, शुक्र—गुप्तेन्द्रिय व अण्डकोश एवं शनि—जानु (घुटना) प्रदेश में अपना प्रभुत्व रखता है।

जन्मकाल, प्रश्नकाल या गोचर में जो ग्रह प्रतिकूल फल देने वाला होगा वह अपने वातपित्तादि दोषों के आधार पर अपने अपने उक्त अंगों में पीड़ाकारक होगा। अतः उसी ग्रह की शान्ति आदि का विधान करना चाहिए। इस बात को गुणाकर व ढुण्ढिराज के उद्धरणों में पुष्ट किया गया है।

> आरभ्य तत्तद्भवनाभि तत्तद्-
> व्योमौकसामष्टकवर्गकाणाम् ।

प्रस्तार्य्य रेखाः प्रथमोदिता या
ज्ञात्वा फलं दैवविदो वदन्तु ॥१९॥

आरम्येति। तत्तद् व्योमौकसां तेषां तेषां ग्रहाणां तद्‌तद् भवनानि तानि तानि भवनानि गृहाणि आरम्याष्टकवर्गकाणां याः प्रथमोदिता पूर्वोक्ता रेखाः कलास्ताः प्रस्तार्य फलं ज्ञात्वा दैवविदो ज्योतिर्विदः शुभाशुभफलं वदन्तु कथयन्तु। तथा च ब्रह्मयामले—

'तत्तद्राशीन् समारभ्य तत्तद् ग्रहाष्टकस्य च।
यावयोक्तबिन्दून् प्रस्तार्य फलं ज्ञात्वा वदेद् बुधः ॥' इति

जन्म समय में जो ग्रह जिस राशि में स्थित हो, उन-उन राशियों से लेकर आठ-आठ कोष्ठकों में सूर्यादि ग्रहों व लग्न की पूर्वोक्त रेखाओं को प्रस्तारित कर लेना चाहिए। तदनन्तर उन प्रस्तारित रेखाओं से ग्रहों के गोचर जनित शुभ या अशुभ फल को कहना चाहिए।

लग्नादि भावों का फल :

एवं गृहाणां रविसम्मितानां
फलं वशेन खुसदः स्थितेश्च।
यथाफलं यस्य खगस्य यस्मिन्
भावे तथार्यगणकैः प्रवेद्यम् ॥२०॥

एवमिति। एवमनेन प्रकारेण यस्य ग्रहस्य यस्मिन् भावे खुसदो ग्रहस्य स्थितेरासनाया वशेन कारणेन रविसम्मितानां द्वादशतुल्यानां गृहाणां राशीनां यथाफलं भवति आर्यैः पुरातनैः गणकैः तथा तेन प्रकारेण फलं प्रवेद्यम्। तथा च ब्रह्मयामले—

'एवं द्वादशराशीनां ग्रहास्थितिवशाद्बुधैः।
यद्ग्रहयस्य तु यद्भावे फलं ज्ञेयं यथा तथा ॥' इति

इस प्रकार द्वादश राशियों में ग्रहों की स्थिति के आधार पर जिस राशि में जितनी रेखाएं हों उनसे फल को जानना चाहिए।

कोष्ठे कलोने समते जनुष्मान्
दुःखादिकान् शस्त्रविषादिकेन।
नाराचतुल्यादि फलैः प्रपुष्टे
कोष्ठे विहाय त्रिकमं शुभानाम् ॥२१॥

विज्ञाय वृद्धिं तु तथा खलानां
हित्वाऽरिनीचर्क्षघनान्त्य मृत्यून् ।
ज्ञात्वेति रेखाः करणानि धीरः
फलं वदेत्साम्यफलेन साम्यम् ॥२२॥

कोष्ठ इति। विज्ञायेति। सर्वेषां ग्रहाणामष्टकवर्गे यस्यराशेः कोष्ठे कलया रेखयोने रहिते सति तदा तनुष्मान् शरीरी मनुष्य इति यावत्। शस्त्रेण बाणादिकेन विषादिभक्षणेन च दुःखादिकान् कष्टादीन् लभते। नाराचतुल्यादिफलैः पंचप्रभृतिरेखाभिर्यस्य राशेः कोष्ठे प्रपुष्टेऽधिके सति तदा शुभानां सौम्यग्रहाणां त्रिकमं षष्ठाष्टमव्ययभावान् विहाय परित्यज्य, तथा खलानां पापानामरिनीचर्क्षघनान्त्यमृत्यून् शत्रुराशिनीचराशिलग्नव्ययाष्टमान् हित्वा त्यक्त्वा वृद्धिमुपचयं विज्ञाय रेखाः करणानि बिन्दून् चेत्येवं ज्ञात्वा धीरः पण्डितः फलं शुभाशुभात्मकं वदेत्। साम्यफलेन समानफलेन रेखा चतुष्टयेनेत्यर्थः साम्यं समानं फलं वदेत्। तथा च ब्रह्मयामले—

'बिन्दुहीने तु दुःखादीन् विषशस्त्रादिवाक्यतः।
फलाधिक्ये तु कोष्ठे तु पंचमाधिक्य वाक्यतः।
शत्रुनीचगृहं त्यक्त्वा व्ययषष्ठाष्टमं तथा।
पापानामुपचयं ज्ञात्वा शुभानांषट् त्रिकास्तथा।
ज्ञात्वैवं बिन्दुरेखाश्च वदेदेवं फलं बुधः।
मध्यादि वाक्यं संप्रोक्तं फलं चैवं वदेत्तथा॥' इति

सूर्यादि सातों ग्रहों के अष्टक वर्ग में जिस राशि के जिस कोष्ठक में रेखा न हो तो उस राशि के रेखाभाव वाले कोष्ठ गोचर से जब ग्रह आए तब मनुष्य शस्त्र व विषादि से घात प्राप्त करता है।

जिस राशि में ५ से अधिक रेखाएं हों उनमें शुभग्रहों की षष्ठाष्टम द्वादश भाव की रेखाओं को छोड़कर तथा पापग्रहों की शत्रु, नीच राशि, लग्न, द्वादश व अष्टम भाव की रेखाओं को छोड़कर शेष रेखा व बिन्दु से फल कहना चाहिए। यदि रेखा व बिन्दुओं की संख्या समान हो तो समान फल समझना चाहिए।

अधिक रेखावश शुभकृत्य का समय ज्ञान :

स्वजन्मकालाश्रितभाद्विधात्
रेखाविधानं सुखदां विधाय।

प्रभूतरेखावशतः सुकर्म्म
सन्मासभावद्युचरासनासु ॥२३॥

स्वजन्मेति। विधातुः कर्त्तुः स्वजन्मकालाश्रितभाद् निजजन्मकालीनग्रहाधिष्ठितराशेः सकाशात्खुसदां ग्रहाणां रेखाणां फलानां विधानं विधिं विधाय कृत्वा, प्रभूतरेखावशतो बहुरेखायोगवशेन सति शुभे मासिराशौ भावे ग्रहस्थितौ च सुकर्म विवाहादिशुभकर्म कुर्यादिति शेषः। तथा च विद्यामाधवीये—

कर्त्तुः स्वजन्मसमयावसितग्रहाणां
कृत्वाष्टवर्गकथिताक्षविधानमत्र।
बह्वक्षयोगवशतः शुभराशिमास-
भावग्रहस्थितिषु कर्म शुभं विदध्यात्॥ इति

जन्म समय में जो ग्रह जिस राशि में स्थित हो, उस राशि से अष्टक वर्ग का साधन कर, जिस राशि में जिस ग्रह की रेखाओं का योग अधिक हो, उस अधिक रेखा योग के आधार पर शुभ मास, राशि, भाव तथा ग्रहों की स्थिति में शुभ कार्य सम्पन्न करने चाहिएं।

प्रक्षिप्तेष्टगणे समग्रहाणां
तत्कालर्क्षगरेखिकाभिरैक्ये।
रेखा दन्तियमोन्मितप्रभूताः
सौख्यः स्याद् व्यसनं तदूनिताश्चेत्॥२४॥

प्रक्षिप्त इति त्रिष्टुब्जात्या। समग्रहाणां सर्वेषां ग्रहाणामष्टगणेऽष्टवर्गे प्रक्षिप्ते ग्रहिते तत्कालर्क्षगरेखिकाभिरैक्ये तत्कालराशिस्थितिरेखायोगे कृते सति। यदि दन्तियमोन्मितप्रभूता अष्टाविंशतितुल्याधिका रेखाः स्युस्तदा सौख्यं वाच्यम्। यदि तदूनिता अष्टाविंशतितोऽल्पास्तदा व्यसनं विपद् वाच्या।

जन्म के समय सूर्यादि सातों ग्रह जिस राशि में स्थित हों उनकी रेखाओं का योग कर लेना चाहिए। यदि वह रेखा योग २८ से अधिक हो तो शुभ और २८ से कम होने पर अशुभ फल होता।

कल्याण वर्मा ने भी कहा है कि २८ रेखाएं मध्यम होती हैं। १४ रेखाएं अधम और उससे कम रेखाएं होने पर निश्चय से मरण कहना चाहिए। ग्रन्थकार ने रेखाओं के पूर्ण मान के विषय में तीन मत बताए हैं—

(i) जो लोग सूर्यादि सातों ग्रहों की ८-८ रेखाएं अलग-अलग मानते हैं उनके मत में रेखाओं का पूर्ण मान ५६, आधा २८ व चतुर्थांश १४ होता है। ढुण्ढिराज, मंत्रेश्वर व कल्याण शर्मा इसके मानने वाले हैं।

(ii) जो लोग सातों ग्रहों के रेखायोग को मानकर चलते हैं। उनके मतानुसार पूर्ण मान ३३७ व आधा १६७½ होता है। वैद्यनाथ इसी मत को मानते हैं।

(iii) जो एक ग्रह की ही आठ रेखाएं मानते हैं वे पूर्ण मान ८ तथा अर्ध मान ४ कहते हैं। विश्वनाथ इसके पक्षधर हैं। ग्रन्थकार ने प्रथम मत के आधार पर उक्त फल बताया है।

चन्द्र रेखा से शुभाशुभ फल :

सौम्याङ्कसंस्थाः शशिनो यदुन्मिताः
किं शीतगोः सद्भवने यदुन्मिताः।
पुष्टे तवित्थं विदितं ततः शिव-
मापत्परेषामिति सूचितं कृशे ॥२५॥

सौम्येति। शशिनश्चन्द्रस्य, यदुन्मिता यावन्तः सौम्यांकसंस्थाः शुभाकांकस्थिताः, किमथवा शीतगोश्चन्द्रस्य, सद्भवने शुभस्थाने यदुन्मिता यावन्तोऽङ्काः स्युः, इत्यमनेन प्रकारेण तद्विदितं तज्ज्ञातं चेत्तदा पुष्टेऽधिके भवति, ततस्तेभ्यः शिवं कल्याणं, कृशे ऊने आपद् विपद् श्रेयेति शेषः। इत्येवं परेषामन्येषां ग्रहाणां सूचितं विज्ञेयम्।

चन्द्रमा की जितनी शुभ रेखाएं हों, अथवा चन्द्र कुण्डली में ६, ८, १२ स्थानों को छोड़कर शेष स्थानों में जितनी रेखाए हों, यदि वे ४ से अधिक हों (अलग-अलग शुभ स्थानों में) तो शुभ, यदि ४ से कम हों तो अशुभ फल विपत्ति आदि समझना चाहिए।

यहां पर चन्द्रमा से शुभ स्थानों में जहां-जहां ४ से अधिक अंक (रेखाएं) हों उस भाव की वृद्धि कहनी चाहिए। यदि ४ से कम हों तो उस भाव का नाश होगा।

इसी बात को दूसरे ढंग से भी कह सकते हैं यदि सारे शुभ भवनों में (६, ८, १२ रहित शेष भाव) २८ से अधिक रेखाएं हों तो शुभ व कम हों तो अशुभ होगा। मंत्रेश्वर की फलदीपिकामें एक बात और

बताई गई है कि चन्द्रमा से जिन जिन भावों में शुभ ग्रह पड़े हों, उन स्थानों में यदि २८ से अधिक रेखाएं हों तो शुभ व कम होने पर भाव सम्बन्धी अशुभ होगा।

मास व दिवस के फल का ज्ञान :

रेखायोगः सामुदायाष्टवर्गे
ऽर्कनैकाल्पो यत्र मासे दिने वा।
तस्मिन्नेष्टं प्रोक्तसंख्याधिकश्चे-
न्मध्यं श्रेष्ठं तत्त्वदृग्भ्यः प्रपुष्टः ॥२६॥

रेखायोग इति। समुदायाष्टवर्गे यत्र यस्मिन् मासे वा दिने दिवसे रेखाणां फलानां योगः समुदायो ऽर्कनैकाल्पो द्वादशोत्तरशतान्न्यूनस्तस्मिन्मासे दिने वा नेष्टमशुभं फलं ज्ञेयमिति शेषः। चेद्यदि स रेखायोगः प्रोक्तसंख्याधिकः द्वादशोत्तर-शतादधिक इत्यर्थः। तदा मध्यं समानं फलं वाच्यम्, यदि स तत्त्वदृग्भ्यः पंचविंशत्युत्तरशतद्वयात् प्रपुष्टोऽधिकस्तदा तस्मिन् मासे दिने वा श्रेष्ठं शोभनं फलं वाच्यमिति शेषः।

जिस मास अथवा दिन में समुदायाष्टक वर्ग की रेखाओं का योग ११२ से कम हो तो उस मास व दिन में अशुभ फल होता है। जिस मास या दिन में उक्त रेखाओं का योग ११२ से अधिक व २२५ से कम हो तो मध्यम फल उस मास व दिन में होगा। जब रेखाओं का योग २२५ से अधिक हो तो उस मास या दिन में शुभ फल होता है।

शुभाशुभ मास विवेक :

संक्रान्तिघस्रेऽष्टगणेषु खौकसां
रेखैक्यतश्चार वशाद्विचिन्तयेत्।
मासः फलं शस्तमशस्तमत्र सन्
दक्षस्तथा तद्वशतो द्युनः फलम् ॥२७॥

संक्रान्तीति। संक्रान्तिघस्रे रविसंक्रमणदिवसे, खौकसां ग्रहाणामष्टवर्गेषु चारवशात् गोचरवशाद् रेखैक्यतः फलयोगतो मासो मासस्य शस्तं शुभमशस्तमशुभं फलं, दक्षश्चतुरः सन् विद्वान् विचिन्तयेत्। तथा तेन प्रकारेण तद्वशतो गोचररेखा वशतो, द्युनो दिवसस्य शुभमशुभं फलं विचिन्तयेत्। तथा च वृद्धयवनः—

'संक्रमदिने ग्रहाणामष्टवर्गेषु चारवशात्।
रेखैक्याच्छुभमशुभं मासफलं तद्वशाद् दिनफलं च ॥' इति

जन्मकालीन ग्रहों का अष्टक वर्ग साधन करके रख लेना चाहिए। अब जिस संक्रान्ति मास का शुभाशुभ फल जानना हो, उस संक्रान्ति के प्रवेश के दिन प्रत्येक ग्रह जिस राशि में स्थित हो, उस राशि का रेखायोग पूर्वसाधित अष्टक वर्ग से ले लें। अब सातों ग्रहों की तत्काल अधिष्ठित राशि की रेखाओं का योग कर लें। उसी योग के आधार पर पिछले श्लोक में बताए गए प्रकार से मासादि का शुभाशुभ फल जानना चाहिए।

इसी प्रकार जिस दिन का शुभाशुभ फल जानना अभीष्ट हो, उस दिन सातों ग्रहों की गोचर राशि की रेखाओं का योग करके शुभाशुभ फल जानना चाहिए।

पूर्वोक्त उदाहरण के संदर्भ में इस बात को स्पष्ट किया जा रहा है। उदाहरण में वर्णित व्यक्ति के लिए कन्या संक्रान्ति मास सं० २००१ में कैसा रहेगा? यह जानना है। कन्या संक्रान्ति के दिन ग्रह स्थिति इस प्रकार है—

सूर्य, चन्द्र व बुध कन्या में; मंगल व शुक्र तुला में, गुरु सिंह में एवं शनि मिथुन में है।

जन्म समय सूर्याष्टक वर्ग में कन्या की रेखाएं ६, चन्द्राष्टक वर्ग में कन्या की रेखा २, मंगलाष्टक वर्ग में तुला में रेखाएं २, बुधाष्टक वर्ग में कन्या में रेखा ४, गुर्वष्टक में सिंह में रेखा ४, शुक्राष्टक में तुला में रेखाएं २ और शन्यष्टक वर्ग में मिथुन की रेखाएं ४ हैं। इन सब का योग २४ हुआ। २५ से कम रेखाएं अशुभ होती हैं। अतः यह मास अशुभ फल देने वाला होगा।

इसी बात को समुदायाष्टक से देखते हैं। कन्या संक्रान्ति के दिन अधिष्ठित राशियों की रेखा संख्या इस प्रकार है—

कन्या—२६, कन्या—२६, तुला—२१, कन्या—२६, सिंह—२६, तुला—२१, मिथुन—३६। इनका योगफल १८५ है।

अतः यह मास मध्यम फलप्रद हुआ। वास्तव में मध्यम व अशुभ फल के कारण इसे अशुभ ही समझना चाहिए।

अब इसी विषय को दिन के संदर्भ में समझते हैं।

सं० २००१ में आश्विन शुक्ल दशमी बुधवार का फल जानना है। उस दिन ग्रह स्थिति इस प्रकार है—

सूर्य—कन्या, चन्द्र—मकर, मंगल—कन्या, बुध—सिंह, गुरु—सिंह, शुक्र—तुला, शनि—मिथुन।

जन्म समय प्रत्येक ग्रह के अष्टक वर्ग में उक्त अधिष्ठित राशियों की रेखा संख्या इस प्रकार है—६+६+४+५+४+२+३=३०। योगफल २८ से थोड़ा अधिक है। अतः थोड़ा शुभ फल ही होगा, अशुभ फल नहीं होगा।

इसी विषय को समुदायाष्टक से देखें तो वहां उक्त राशियों में रेखा संख्या क्रमशः इस प्रकार है—२६+३१—२६+२९+२९+२१+३६=१९८ योग हुआ। २२५ से कम होने के कारण यह दिन मध्यम रहेगा। दोनों प्रकार से मध्यम आने के कारण यह दिन मध्यम ही समझना चाहिए।

रेखाभिरश्वप्रमिताभिरन्विते
मासे नराणां मरणं प्रजल्पितम्।
यच्छेत्सते द्वौ तिलपर्वतावप-
मृत्युप्रणाशाय नखोन्मितं पलम् ॥२८॥
स्वर्णं तदर्द्धं निजशक्तितोऽथवा
मास्यन्वितेऽष्टप्रमितैः फलाभिधैः।
सञ्जातिहीनोऽसुवशं गतो ध्रुवं
विप्राय कर्पूरतुलां प्रयच्छतु ॥२९॥
तन्मूल्यनेमं हरियुग्मितं पलं
स्वर्णं प्रदद्यात्किमु तद्दलं विधोः।
तोषाय तद्दोषत एव मुच्यते
प्राप्नोति सद्यः किल वाञ्छितं फलम् ॥३०॥

रेखाभिरिति। स्वर्णमिति। तन्मूल्येति च। अश्वप्रमिताभिः सप्तभी रेखाभिरन्विते युक्ते मासे नराणां मनुष्याणां मरणं मृत्युः प्रजल्पितः कथितः। तदाप मृत्युनाशाय सते विदुषे द्वौ तिलपर्वतौ यच्छेद् दद्यात्। वा अथवा नखोन्मितं विंशति-तुल्यं पलं स्वर्णमथवा निजशक्तितस्तदर्धं दशपलं सुवर्णं यच्छेत् दद्यात्। तथा च जगन्मोहने—

रेखाभिः सप्तभिर्युक्ते मासे मृत्युर्नृणां भवेत्।
सुवर्णं विंशतिपलं दद्याद् द्वौ तिलपर्वतौ ॥' इति

अस्य दानस्य विशेषविधिर्दानचन्द्रिका प्रयोगरत्नमत्स्यपुराणादौ द्रष्टव्य:। अष्टेति। अष्टप्रमितैरष्टतुल्यैः कलाभिधैः रेखाभिरन्विते युक्ते मासि तदा नरो जातिहीनो जातिच्युत: सन् द्रुतं मृत्युवशं प्राप्तस्तस्माद् विधोश्चन्द्रस्य तोषाय, विप्राय कर्पूरतुलां तस्य मूल्येनेमं तस्या: मूल्यार्धं वा हरिदुन्मितं दशतुल्य पल स्वर्णं किमु अथवा तद्दलं तस्यार्धं पंचपलं स्वर्णं प्रदद्यात्। तदा तद्दोषतो मुच्यते। तत: किल निश्चयेन सद्यस्तत्क्षणे वाञ्छितं फलं प्राप्नोति। यथा जगन्मोहने—

'वसुभिर्जातिहीन: सन् शीघ्रं मृत्युवशो नर:।
असत्फलविनाशाय दद्यात्कर्पूरजां तुलाम्॥' इति

उपर्युक्त प्रकार से देखने पर जिस मास में ७ रेखायोग हो तो उस मास में मृत्यु समझनी चाहिए। तब इस अपमृत्यु का निराकरण करने के लिए तिलों के दो पर्वत अथवा २० पल सोना अथवा १० पल अथवा यथाशक्ति सोना दान करना चाहिए।

जिस मास में आठ रेखाएं हों तो उस मास में मनुष्य जातिच्युत होता है तथा शीघ्र ही मृत्यु को प्राप्त होता है।

अत: इस दोष का निवारण करने के लिए कपूर से तुलादान कराना चाहिए अथवा कपूर के मूल्य से आधा मूल्य या १० पल सोना तथा अशक्तावस्था में ५ पल सोना दान करना चाहिए।

इस फल और दान की मात्रा के विषय में **जगमोहन, गर्ग व पराशर** के वाक्यों को प्रमाण रूप में उद्धृत किया गया है। पर्वत का मान कितना हो ? इस विषय में ध्यातव्य है कि १००० द्रोण धान्यादिक का पर्वत (ढ़ेर) उत्तम, ५०० द्रोण का मध्यम व ३०० द्रोण का पर्वत कनिष्ठ होता है। द्रोण का मान **अमर सिंह** तथा **भावमिश्र** ने अपने भाव प्रकाश में ४ आढ़क बताया है। आढ़क ४ सेर के बराबर होता था। इस प्रकार १६ सेर का १ द्रोण हुआ। इसी द्रोणमान से पर्वत का निर्माण करना चाहिए।

पल के विषय में भी **भाव प्रकाश** में बताया गया है कि १६ माशे का १ कर्ष व ४ कर्ष का १ पल होता है। इस प्रकार ६४ माशे का एक पल हुआ। किन्तु **तिथि तत्त्व** में इसका मान अन्य प्रकार से बताया गया है। तदनुसार पल के तीन भेद हैं—शास्त्र पल, वैद्यक पल व लौकिक पल। लौकिक पल—तीन तोले, दो माशे व आठ रत्ती का होता है। शास्त्र पल—चार तोले व वैद्यक पल—आठ तोले का होता है। किन्तु

ज्योतिष के संदर्भ में लौकिक पल का ग्रहण करना चाहिए। मत्स्य पुराण में दस पर्वतों का दान विभिन्न अवसरों पर अरिष्ट निवारणार्थ बताया गया है—धान्य पर्वत, लवण पर्वत, गुड़ पर्वत, सुवर्ण पर्वत, तिल पर्वत, कपास पर्वत, घृत पर्वत, रत्न पर्वत, चांदी का पर्वत और शर्करा पर्वत। इन सबके दान की सम्पूर्ण विधि दान चन्द्रिका या प्रयोग रत्न आदि ग्रन्थों में देख लेनी चाहिए। तिल पर्वत का मान १० द्रोण उत्तम, ५ द्रोण मध्यम व ३ द्रोण कनिष्ठ होता है।

विभिन्न रेखा संख्यक मासों का फल :

कलाभिराढ्ये नवभिर्भुजङ्गतो
ध्रुवं मनुष्यो म्रियते शुभाप्तये।
चतुर्भिरश्वैः सहितं रथं दिशे-
त्खगेशतोषाय दशप्रमैः फलैः ॥३१॥
मासे युतेऽस्त्राग्मनुजस्त्यजेदसून्—
त्कल्याणलब्ध्यै कवचं सहीरकम्।
दद्याद् द्विजायेशमितैः फलैर्युते
प्राप्याभिशापं रहितोऽसुभिस्तदा ॥३२॥
भयोऽत्र रौप्यस्य पलैर्दशोन्मितं-
विनिर्मितां त्वीप्रतिमां स्वशक्तितः।
दिशेद् द्विजायानल होरिणे रवि—
प्रमैर्मृतिं नुर्जलदोषतो वदेत् ॥३३॥
धरां दिशेद्विप्रवराय भोजये-
त्कुटुम्बिभिः साकमतः परं शुभम् ॥३३½॥

कलाभिरिति। मास इति। भय इति। धरामिति च। नवभिः कलाभी रेखाभिः आढ्ये युक्ते मासे यदा तदा ध्रुवं मनुष्यो भुजंगतः सर्पेण म्रियते। तदा शुभाप्तये सत्फलप्राप्तये, खगेशो गरुडस्तस्य तोषाय सन्तुष्ट्यै, चतुर्भिरश्वैर्घोटकैः सहितं युक्तं रथं दिशेत् दद्यात्। ब्राह्मणायेति शेषः। तथा च जगन्मोहने—

'रेखाभिर्नवभिः सर्पान्म्रियते मनुजो ध्रुवम्।
अश्वैश्चतुर्भिः संयुक्तं रथं दद्याच्छुभाप्तये ॥' इति

दशप्रमैरिति। दशप्रमैर्दशतुल्यैः फलैः रेखाभिर्युक्ते मासे यदा तदा मनुजोऽस्त्राग्मोहनादितः शस्त्राद्वा असून् प्राणान् त्यजेदुत्सृजेत्। अतः कल्याण लब्ध्यै सहीरकं वज्रसहितं कवचं द्विजाय ब्राह्मणाय दद्यात्।

ईशेति। ईशमितैरेकादशमितैः फलैर्युते मासे भवो जातोऽभिशापं मिथ्याभिशंसनं प्राप्यासुभिः प्राणैः रहितो भवेदिति। अतः स्वशक्तितो रौप्यस्य रजतस्य दशोन्मितैर्दशतुल्यैः पलैर्विनिर्मितां ग्लौश्चन्द्रस्तस्य प्रतिमामनलहोत्रिणे-ऽग्निहोत्रिणे द्विजाय दिशेद् दद्यात्।

रविरिति। रविप्रमैर्द्वादशतुल्यैः फलैर्युक्ते मासे जलदोषतो नुर्मनुष्यस्यमृति वदेत्। अतो विप्रवराय धरां भूमिं दिशेत् तथा कुटुम्बिभिः साकं भोजयेत्। अतः परं शुभं वदेदिति। यथा च जगन्मोहने—

'रेखाभिर्दशभिः शस्त्रात्प्राणांस्त्यजति मानवः।
दद्याच्छुभफलप्राप्त्यै कवचं वज्रसंयुतम्॥
रुद्रैः प्राप्याभिशापं च प्राणैर्युक्तो भवेन्नरः।
दिक्पलैः स्वर्णघटितां प्रदद्यात्प्रतिमां विधो॥' इति

यदि कोई मास ९ रेखाओं से युक्त हो तो उस मास में निश्चय से सांप के कारण मृत्यु होती है। अतः गरुड़ की प्रसन्नता के लिए चार घोड़ों से युक्त रथ का दान कर देना चाहिए।

१० रेखाओं वाले मास में मनुष्य की शस्त्र से मृत्यु सम्भावित होती है। अतः अछिद्र हीरों से जटित कवच का दान करना चाहिए। ११ रेखाओं वाले मास में मदिरा पानादि या अभिशाप के दोष के कारण मृत्यु होती है। अतः दस पल चांदी की मूर्ति बनाकर किसी अग्निहोत्री ब्राह्मण को दान कर देनी चाहिए।

१२ रेखाओं से युक्त मास में जल दोष से मनुष्य की मृत्यु हो सकती है। अतः भूमि का दान व अपने कुटुम्बी जनों के साथ ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिए। तब शुभ फल की प्राप्ति होती है।

त्रिकुप्रमैर्व्याघ्रत एति पञ्चतां
हिरण्यगर्भस्य हरेः सदाप्तये॥३४॥
दानं प्रकुर्य्यात्सुरपैस्तु भक्षितः
कालेन जह्याद्विचिरेण जीवनम्।
मूर्त्तिं वराहस्य सुवर्णनिर्मितां
विप्राय यच्छेद् दिवसैः कुभुद्भयम्॥३५॥
सलेभदानं किमु दीयते करी
स्वर्णस्य यद्वा तिलगर्भदानकम्।

प्रोक्तं बुधैः षोडशभिः समन्विते
मासे तदारिष्टमवाप्नुयाज्जनः ॥३६॥
कल्पाभिधं तत्र तरुं प्रयच्छतु
दोषेण तेनेह विमुच्यते दश ।
स्वर्णानि किं तच्छकलं प्रदापये-
न्मासेऽगचन्द्रैः सहिते गदार्दितः ॥३७॥
स्थानान्तरः सञ्चलितः प्रभूय
दिने दिने तत्र मिताशनो स्यात् ।
दानेन धेन्वाश्च गुडस्य तेन
दोषेण सर्वः परिमुच्यते सः ॥३८॥
पापग्रहाणां यदि चेद्दृशा भवे-
न्नूनं महादानमिह प्रदापयेत् ॥३८॥

त्रिकिवति । दानमिति । तत्रेति । कल्पेति स्थानादिति । पातेति च । त्रिकु-प्रमैस्त्रयोदशतुल्यैः फलैर्युक्ते मासे यदा तदा व्याघ्रतः शार्दूलात् पंचतां मृत्युमेति प्राप्नोति । अतः सदाप्तये शुभफललाभाय हरेर्विष्णोः हिरण्यगर्भस्यशालिग्रामस्य दानं प्रकुर्यात् ।

सुरपैरिति । सुरपैश्चतुर्दशभिः फलैर्युक्ते मासे कालेन मृत्युना भक्षितः खादितोऽचिरेण जीवनं अहाद्दुत्सृजेत् । अतो वराहस्य भगवतो मूर्ति सुवर्णनिर्मितां विप्राय यच्छेत् ।

दिवसैरिति । दिवसैः पंचदशभिः फलैर्युक्ते मासे कुभृद् राजा तस्मात् भयं स्यात् । तत्र इभो हस्ती तस्य दानं वितरणं कार्यम् । अथवा सुवर्णस्य करी हस्ती दीयते । यद्वा तिलगर्भदानकं बुधैः प्रोक्तम् ।

षोडशभिरिति । षोडशभिः फलैः समन्विते मासे जनोऽरिष्टं कष्टम-वाप्नुयात् । तत्र कल्पाभिधं तरुं कल्पवृक्षं प्रयच्छतु विप्राय । किमथवा दशपलानि स्वर्णानि वा तच्छकलं तदर्धं पंच पलं स्वर्णं प्रदापयेत् । तेन दोषेण मुच्यते । यच्च ग्रन्थान्तरे प्रोक्तम्—

'षोडशभिरंगपीडा भवति शरीरे महाव्याधिः ।' इति

मास इति । अगचन्द्रैः सप्तदशभिः फलैर्युक्ते मासे नरो गदेन रोगेण अर्दितः पीडितो भूत्वा स्थानान्निजाधिष्ठितस्थानात् संचलितो भूत्वा तत्र स दिने दिने प्रतिदिनं मिताशनो मिताहारी मन्दाग्निभाग् भवति । अतो गुडस्य धेन्वाः सुरभ्या दानेन मर्त्यो मनुष्यस्तेन दोषेण परिमुच्यते । यदि चेत्तदा पापग्रहाणाम-

शुभग्रहाणां दशा भवेत् तर्हि नूनं महादानं तुलापुरुषदानं प्रदापयेत्। तथा च जगन्मोहने—

ऋषि चन्द्रैर्व्याधिभयं गुडधेनुं निवेदयेत्।

१३ रेखाओं से युक्त मास में बाघ के कारण मृत्यु होती है। तब शुभफल की प्राप्ति के लिए शालग्राम का दान करना चाहिए।

१४ रेखाओं वाले मास में काल के कारण मृत्यु होती है। अतः भगवान् वराह की मूर्ति बनवा कर दान करनी चाहिए।

१५ रेखाओं वाले मास में व्यक्ति को राजा से भय होता है। अतः हाथी का दान या सोने के हाथी या तिलगर्भ का दान करना चाहिए।

-१६ रेखाओं से युक्त मास में अरिष्ट होता है। अतः कल्पवृक्ष का दान, अथवा १० या ५ पल सोने का दान करना चाहिए।

१७ रेखाओं से युक्त मास में रोगपीड़ा, स्थानभ्रंश तथा मन्दाग्नि आदि होते हैं। अतः गुड़ धेनु का दान करना चाहिए। यदि उस समय पापग्रहों की दशा चल रही हो तो तुलादान करना चाहिए।

पुराणों में दस धेनुओं का दान बताया गया है। वे इस प्रकार हैं—गुड़धेनु, घृतधेनु, तिलधेनु, जलधेनु, क्षीरधेनु, मधुधेनु शर्कराधेनु, दधिधेनु, रसधेनु, वास्तविक धेनु।

इनमें अलग-अलग धेनुओं का प्रमाण अलग-अलग बताया गया है। यहां हम पाठकों के लाभार्थ गुड़धेनु का विवरण दे रहे हैं—

एक हजार पल का एक भार होता है। इसी से गुड़धेनु का प्रमाण करते हैं।

उत्तम गुड़धेनु—४ भार गुड़ (धेनु निमित्त) १ भार (वत्स निमित्त)
मध्यम गुड़धेनु—२ भार गुड़ (धेनु निमित्त) १/२ भार (वत्स निमित्त)
कनिष्ठ गुड़धेनु—१ भार गुड़ (धेनु निमित्त) १/४ भार (वत्स निमित्त)

आशय यह है कि उक्त मात्रा में गुड़ लेकर अलग अलग रखकर उस ढेर में गौ व वत्स की कल्पना करके दान करना चाहिए।

मासे भुजङ्गेन्दुमिते कलिप्रियो
वा सत्यवादीतवयो गतार्थवान् ॥३६॥

रिष्टेन नूनं परिभूयते तदा
रत्नक्षमागोकनकानि दीयते ।
सख्येप्सुभिर्गोकुमितेऽत्र नीवृत-
स्त्यागो मृतिर्वेभरथं गजं हयम् ॥४०॥
तत्र प्रयच्छेत्कुसुराय मुच्यते
तद्दोषतोऽथो गगनाश्विसम्मिते ।
क्षुध्या विमुक्तः किमु नीचकर्म्मणि
सक्तोऽत्र दानं सितघोटकस्य गोः ॥४१॥
किं दीयते ब्राह्मणभोजनं भवो
लक्षायुतं वाथ सहस्रमङ्कभृत् ।
कुर्यात्कुयुग्मेश्वतापपीडिता
उद्योगहीना उत कृष्णमानसाः ॥४२॥
ऐश्वर्य्यमुक्ता इह धान्यपर्वत-
दानं किमु स्थापनकं स्वयं भुवः ।
भक्त्या विधानेन नरः करोतु त-
द्दोषच्छिदे युग्मकरैः कृशोऽहितः ॥४३॥
क्षीणैस्तथा बन्धुजनैः प्रसूतिज-
मेव [प्रविन्देद्भयामनी तदा ।
देयोत दानानि दश प्रयच्छतु
भद्रेच्छुरग्निद्विमितैः प्रपद्यते ॥४४॥
क्लेशाननेकान् [प्रतिमां विनिर्मितां
तीक्ष्णद्युतेर्हेममयीं स्वशक्तितः ।
शैलैः पलाख्यैः किमु तद्दलेन वा
सत्खण्डखण्डेन पुनर्द्विजातये ॥४५॥
ददातु दोषक्षयकाम्यया जनो
मासे चतुर्विंशतिसम्मिते सदा ।
स्त्रीशेमुषीमोहित उद्भवी तदा-
ऽगम्यासु कुर्याद्गमनं किमन्विते ॥४६॥

पापप्रहाणां दशया स्वबन्धुभिः
प्राणो निरस्तो धनसंक्षयोऽथवा ।
भ्रष्टो निजस्थानकतः प्रदीयते
यद्वा सहस्रं च गवां गवां शतम् ॥४७॥

किं वा प्रदद्यादृश गा द्विजाय त-
द्दोषस्य शान्त्यै दशया युतेऽस्ततः ।
मासे प्रकुर्याज्जनितो यथोचितं
मर्त्यो यथाशक्ति विधीयते ततः ॥४८॥

खेटस्य दायेऽथ फलैः समन्विते
तस्यप्रमेर्मासि खगस्य पीडया ।
वातामयाद्यैरथ वातिसारतो
मन्दाग्निमान्द्यं चिरकालिकं तदा ॥४९॥

तद्व्याधिशान्त्यै द्विजतर्पणं त्वतु-
र्होमादि कुर्यात्सपनादितुष्टये ॥४६॥

मास इति । रिष्टेनेति । तदेति । किमिति । ऐश्वर्येति । क्षीणैरिति । क्लेशैरिति । ददात्विति । पाप्मेति । किंवेति । खेटस्येति । तद्व्याधि इति च । भुजंगेन्द्रमिते एकोनविंशोन्मिते मासे । तदा ना मनुष्यः कलिप्रियः कलहप्रियोऽसत्य-वादी, इतदयो निर्दयः, गतार्थवान् निर्धनः, नूनं रिष्टेन कष्टेन परिभूयते । पीडित इत्यर्थः । तदा भवेत्सुभिः शुभेच्छुभिः रत्नं माणिक्यादि, क्षमाभूमिः, गौः, कनकं सुवर्णं एतानि वस्तूनि दीयते ।

गोचिवति । गोकुमिते एकोनविंशतिमिते मासे तदा नीवृतो देशस्य त्यागो वा मृतिर्मरणं भवेत् । तदेभानां हस्तिनां रथं स्यन्दनं गजं हयं कुसुराय ब्राह्मणाय प्रयच्छेत् । तदा तद्दोषतो मुच्यते । तथा च जगन्मोहने—

देशत्यागोऽक चन्द्रैः स्याच्छान्तिं कुर्याद्विधानतः ।

अथो इति । गगनाश्विसम्मिते विंशति तुल्ये—मासे तदा बुद्ध्या मत्या विमुक्तो रहितोऽथवा नीचकर्मणि अधन्यक्रियायां सक्तः, अतोऽत्र सितघोटकस्य श्वेतहयस्य गोर्धेन्वा दानं दीयते यत उत्पन्नोऽबभृत्प्राणी लक्षं शतसहस्रमयुतं दशसहस्रं सहस्रं वा ब्राह्मणभोजनं कुर्यात् । तथा च जगन्मोहने—

विंशत्या बुद्धिनाशः स्यात्कुर्याल्लक्षमितं जपम् ॥ इति

कुयुग्मैरिति । कुयुग्मैरेकविंशत्या युते मासे तदोपतापो रोगस्तेन पीडिता दुःखिताः, उद्योगहीना निरुद्यमा उताथवा कृष्णमानसाः, कपटहृदयाः, ऐश्वर्यं

विभूतिस्तया मुक्ता रहिता अतो धान्यपर्वतदानं दीयते, किमु तद्दोषाच्छिदे तद्दोष-परिहाराय भक्त्या श्रद्धया विधानेन स्वयंभुवो ब्रह्मणः स्थापनं करोतु। तथा च जगन्मोहने—

भूमिपक्षे रोगपीडा दद्यात् धान्यस्य पर्वतम्। इति

युग्मेति युग्मकरैर्द्वाविंशत्या युते मासे तदा कृशो दुर्बलः क्षीणैर्दुर्बलैर्बन्धुजनैरर्दितः पीडितः प्रसूतिजं दुःखमेव प्रविन्देत्प्राप्नुयात्। तदोभयाननी प्रसववती गौर्देया, उताथवा भवेच्छुर्दशदानानि प्रयच्छतु। यथा ग्रन्थान्तरे—

'कुमतिर्द्वाविंशद्भिर्दैन्यं च पराभवो विकलम्।' इति

गर्गपराशरादयोऽपि—

'आकृत्या च परिक्षीणः क्षीणैर्बन्धुभिरर्दितः।
दुःखमेव सदा विन्देद्द्वयोभयमुखी ततः॥
अथवा दशदानानि प्रदद्याच्छान्तिकाम्यया॥' इति

अग्नीति। अग्निद्विमितैस्त्रयोविंशतिभिर्तैर्युक्ते मासे तदानेकान् विविधान् क्लेशान् प्रपद्यते। अतएव जनो दोषक्षयकाम्यया, स्वशक्तितो निजसामर्थ्यात्, तीक्ष्णयुते रवेः, गैलैः सप्तभिः पलाद्यैः सौवर्णी प्रतिमां मूर्ति विनिर्मितां घटितां किमु अथवा तद्दलेन तदर्धेन वा तत्खण्डखण्डेन तदर्धार्धेन पुनर्द्विजातये ब्राह्मणाय दद्यात्। तथा च जगन्मोहने—

'रामपक्षयुते मासे नानाक्लेशान् प्रपद्यते।
सौवर्णीं प्रतिमां दद्याद् रवेः सप्तपलैः क्रमात्॥' इति

मास इति। चतुर्विंशति सम्मिते मासे तदा उद्भवो जन्मी मनुष्य इति यावत्। स्त्रियाः धीमुषी बुद्धिस्तया मोहितोऽगम्यासु स्त्रीषु गमनं कुर्यात्। किमथवा पाप्मग्रहाणां खलखेचराणां, दशयान्विते सति प्राणी स्वबन्धुभिर्निरस्तः तिरस्कृतोऽथवा धनस्य संक्षयो वा निजस्थानतो भ्रष्टश्च्युतोऽतएव गवां सहस्रं वा गवां शतं दीयते। किं वा तस्यदोषस्य शान्त्यै दशगाः ब्राह्मणाय प्रदद्यात्। असतोऽशुभस्य दशया युते मासे जनित उत्पन्नो नून निश्चयेन यथोदितं यथोक्तं विधानं प्रकुर्यात्। ततः शुभस्य खेटस्यदाये यथाशक्ति शान्तिः शमो विधीयते।

अथेति। अथेत्यानन्तर्ये। तत्त्वप्रमैः पंचविंशतिमितैः फलै रेखाभिः समन्विते युक्ते मासि तदा खगस्य ग्रहस्य पीडयाऽथवा वातामयार्वैर्वायुरोगादिभिरथवा अतिसारतोऽथवा चिरकालिकं मन्दाग्निमान्द्यं भवेदिति शेषः। व्याधी रोगस्तस्य शान्त्ये शमाय द्विजानां ब्राह्मणानां तर्पणं तृप्तिं कुर्यात्। अथवा तपनादितुष्टये सूर्यादीनां प्रीतये क्रतुहोमादि यज्ञहोमादि कुर्यात्। यथाऽन्यत्रप्रोक्तम्—

'करतलगतमपि वित्तं नश्यति पुंसां तु पंचविंशत्या।' इति

१८ रेखाओं से युक्त मास में कलह करने में मन लगना, मिथ्या भाषण, निर्दयता, धन की हानि एवं कष्ट प्राप्ति होती है। अतः शुभ फल की प्राप्ति के लिए माणिक्य, सुवर्ण, भूमि या गौ का दान करें।

१९ रेखाओं से युक्त मास में देश का त्याग या मृत्यु होती है। अतः हाथी, घोड़ा या इनसे युक्त रथ का दान करना चाहिए।

२० रेखाओं से युक्त मास में बुद्धि का नाश या नीच कर्म में आसक्ति होती है। अतः सफेद घोड़ा या गाय का दान करना चाहिए। अथवा एक लाख, दस हजार या एक हजार ब्राह्मणों को यथाशक्ति भोजन करावें।

२१ रेखाओं वाले मास में रोग, उद्योग में हानि या कार्य का अभाव, पापात्मता या धनधान्य की हानि के कारण कष्ट होता है। अतः धान्य पर्वत का दान या श्रद्धापूर्वक ब्रह्मा जी की मूर्ति स्थापित करनी चाहिए।

२२ रेखाओं वाले मास में दुर्बलता, दरिद्रता, बन्धुओं से पीड़ा तथा कष्ट होता है। अतः प्रसूता गाय का दान करना चाहिए। अथवा दस महादान (पूर्वोक्त) करना चाहिए।

२३ रेखाओं से युक्त मास में मनुष्य को अनेक प्रकार के क्लेश होते हैं। अतः सात पल सोने की सूर्य-प्रतिमा दान करनी चाहिए। अशान्ति में ३½ पल या इसका आधा १¾ पल सोने की सूर्य की प्रतिमा देनी चाहिए।

२४ रेखाओं वाले मास में स्त्रियों के मोह में पड़कर कुस्त्री गमन होता है। यदि तब पापग्रह की दशा भी चल रही हो तो बन्धुओं से तिरस्कार, धन का नाश या स्थानभ्रंश होता है। अतः एक हजार या एक सौ या दस गायें दान में देनी चाहिएं। यदि पापग्रह की दशा हो, पूर्ण शान्ति तथा शुभग्रह की दशा न हो तो यथाशक्ति शान्ति करनी चाहिए।

२५ रेखाओं से युक्त मास में ग्रहजन्य अरिष्ट, वात रोग का प्रकोप या लम्बे समय तक चलने वाली मन्दाग्नि होती है। अतः ब्राह्मणों को भोजन व अन्न पानादिक से तृप्त करना चाहिए। साथ ही सूर्यादि ग्रहों को हवनादि से संतुष्ट करना चाहिए।

युक्ते यत्र मासि रसद्विसम्मितैः
स्याज्जाड्यमत्राप्यसकृत्प्रजल्पितम् ॥५०॥

ना विस्मरेत्तत्क्षणकेऽतिचञ्चलः
सम्पूजनं तस्य च दोषशान्तये।
वाग्देवताया द्विजसत्तमैः सह
कुर्यात्तदा पायसशर्करादिभिः ॥५१॥
संहोमयेत्क्षौद्रयुतैर्विमुच्यते
दोषाभिधैर्जाड्यमुखैश्च संविदः।
नैर्मल्यमाप्नोतु भसम्मितैर्युते
मासे व्ययो भूरिधनस्य चिन्तया ॥५२॥
ग्रस्तः शरीरे मलिनश्चिदल्पः
श्रीसूक्तपूर्वस्य विधाननाम्ना।
सम्पत्प्रदां क्षीरसमुद्रजातां
देवीं महामां परिपूजयेत्ताम् ॥५३॥
कुर्याज्जयं होममुखं प्रसादतः
पद्मालयायाः धनधान्यसंयुतः।
सम्पन्न आशीविषयुग्म संयुते
मासे न लाभोऽव्ययो भवेत्तदा ॥५४॥
प्रयाति यत्नं विफलं जनुष्मतः
क्वचित्तदानीं द्रविणं न लभ्यते।
अतो विदध्याद्धवनं विभावसो-
र्जातो विमुक्तोऽखिलदोषतो नरः ॥५५॥

युक्त इति। नेति। संहोमयेति। ग्रस्त इति। कुर्यादिति। प्रयातीति च। रसद्विभम्मितैः षड्विंशतितुल्यैः फलैः युक्ते मासि यदा तदा, जाड्यं शीतलता, भसकृद्वारं वारं, प्रजल्पितं कथितमपि तत्क्षणके सद्यो, विस्मरेत् तथाऽतिचंचलो भवेत्, तदा तस्य दोषशान्तये दोषपरिहाराय, वाग्देवताया वागीश्वर्याः सम्पूजनं कुर्यात्। तथा द्विजसत्तमैर्ब्राह्मणपुंगवैः सह क्षौद्रयुतैर्मधुयुतैः, पायसशर्करादिभिः सम्यग्होमयेत् जुहुयात्। तदा जाड्यमुखैः शैत्यप्रभृतिभिर्दोषाभिधैर्विमुच्यते। अतः संविदो बुद्धेर्नैर्मल्यमाप्नोतु लभताम्। तथा च जगन्मोहने—

'ऋतुपक्षैर्बुद्धिहीनः पूज्या वागीश्वरी तथा।' इति

भसम्मितैरिति। भसम्मितैः सप्तविंशति तुल्यैः फलैर्युक्ते मासि तदा, भूरिधनस्य बहुधनस्य, व्ययोऽपायः, चिन्तया स्मृत्या ग्रस्तः, मलिनो मलदूषितः, चिदल्पो

बुद्धिमन्दो भवेदिति शेषः। अतः श्रीसूक्तपूर्वस्य लक्ष्मीसूक्तादिविधान नाम्ना विधिना, सम्पत्प्रदां क्षीरसमुद्रजातां दुग्धसागरसमुद्भवां महामां महालक्ष्मीं परि-पूजयेत्। जपं होममुखं हवनादि च कुर्यात्। तदा पद्मालयाया लक्ष्म्याः प्रसादतः प्रसन्नतया, धनैर्द्रविणैर्धान्यैः सस्यैः संयुतो युक्तः सम्पन्नश्च भवेदिति शेषः। तथा च जगमोहने—

'धनक्षयः स्यान्नक्षत्रैः श्रीसूक्तं तत्र संजपेत्।" इति

आशीति। आशीविषयुग्म संयुतेऽष्टाविंशति युते मासे तदा लाभो न भवेदव्ययो भवेत्। जनुष्मतो जनिमतो, यत्नं प्रयासं विफलं निष्फलं प्रयात्याप्नोति। तदानीं क्वचिद् द्रविणं धनं न लभ्यते न प्राप्यते। अतो विभावसोरवेः होमं हवनं होमं प्रकुर्यात्। यतो जातो नरोऽखिलदोषतः समस्तदोषतो विमुक्तो रहितो भवेदिति शेषः। तथा च जन्मोहने—

'वसुपक्षयुते मासे न लाभो हानिरेव च।
सूर्यहोमं च विधिना कर्तव्यं शुभकांक्षिभिः॥' इति

ग्रन्थान्तरे तु सत्फलमुक्तं तद्यथा—

अष्टाविंशतिभिरपि द्रव्यागमनं तथा सुखाधिक्यम्।' इति

२६ रेखाओं से युक्त मास में जड़ता, बार-बार याद करने पर भी भूल जाने की प्रवृत्ति तथा अति चंचल स्वभाव जैसे फल होते हैं। इस दोष के परिहार के लिए वागीश्वरी देवी की आराधना, पूजा आदि करनी चाहिए। साथ ही मधु (शहद) और शर्करा से मिश्रित द्रव्य पदार्थ से श्रेष्ठ ब्राह्मणों की उपस्थिति में हवन करना चाहिए। ऐसा करने से मनुष्य की बुद्धि जड़ता को छोड़कर निर्मलता को प्राप्त करती है।

२७ रेखाओं से युक्त मास में धन का अत्यधिक व्यय, चिन्ता से आतुर होना, मलिनता व बुद्धि की जड़ता जैसे फल होते हैं। इस स्थिति में श्रीसूक्तादि विधान से महालक्ष्मी का जप, पूजा व होम आदि करना चाहिए। ऐसा करने से व्यक्ति महालक्ष्मी के प्रसाद से धनधान्य व सम्पदा से युक्त हो जाता है।

२८ रेखाओं वाले मास में लाभ न होना, खर्च अधिक होना, परिश्रम की सफलता का अभाव तथा धन न मिलना जैसे फल होते हैं। अतः श्रीसूर्य के मंत्र से हवन करें। तब समस्त दोषों का परिहार होता है।

मासेऽङ्कगुर्णैवस्थलसम्मितैः फलै-
र्युक्ते स्मृतिव्याकुलता भवेद्वतः।

द्विजातये वेदविदे कुटुम्बिने
चामीकरं तस्य दलं ददातु किम् ॥५६॥
श्रीसूर्यतुष्ट्यै चिरमत्र जीवते
रोगैर्विमुक्तः सहितः सुतेजसा।
अश्रान्तमानन्दयुतः खलग्रह-
दशासमेते फलमेतदीर्यते ॥५७॥

मास इति। श्रीति च। अंकवैवस्वतसम्मितैरेकोनत्रिंशत्तुल्यैः फलै रेखाभिर्युक्ते सहितेमासे स्मृतिश्चिन्ता तया व्याकुलता भवेत्। अतः श्रीसूर्यतुष्ट्यै तोषाय, कुटुम्बिने स्त्रीपुत्रादियुक्ताय, वेदविदे वेदविज्ञाय, ब्राह्मणाय चामीकरं सुवर्णं किमु तस्य दलमर्धं ददातु। तेन रोगैर्विमुक्तः सुतेजसा सहितोऽश्रान्तं नित्यं, आनन्दो हर्षस्तेन युतः सहितः खलग्रहः पापग्रहस्तस्य, दशया समेते युक्ते मासि एतत्फलं उदीर्य्यते कथ्यते। दैवज्ञैरिति शेषः। तथा च जगन्मोहने—

एकोनत्रिंशता चापि चिन्तया व्याकुलो भवेत्।
पुत्रवस्त्रसुवर्णानि तत्रदद्याद् विचक्षणः॥' इति

ग्रन्थान्तरे च—एकोनत्रिंशादिभर्लोके लोकस्तु पूज्यतामेति इति॥ इति

२९ रेखाओं से युक्त मास में मनुष्य चिन्ता से व्याकुल होता है। अतः श्री सूर्य भगवान् की प्रसन्नता के लिए सपरिवार वेदवेत्ता ब्राह्मण को सुवर्ण का दान करना चाहिए। अथवा सुवर्ण का आधा मूल्य प्रदान करना चाहिए। ऐसा करने से मनुष्य रोगों से मुक्त होकर तेजस्वी, सदा प्रसन्न रहने वाला और दीर्घायु होता है। उक्त अशुभ फल तभी कहना चाहिए जब मास में पापग्रह की दशा चल रही हो।

आशय यह है कि उक्त मास में यदि शुभ ग्रह की दशा चल रही हो तो अशुभ फल नहीं होगा। यद्यपि जगन्मोहन नामक ग्रन्थ में तथा गर्ग पराशर आदि महर्षियों ने अशुभ फल को ही रेखांकित किया है, किन्तु किसी अन्य ग्रन्थ के हवाले से ग्रन्थकार ने बताया है कि २९ रेखाओं वाले मास में व्यक्ति सम्मान पाता है। निष्कर्ष यह है कि अशुभ दशा में अशुभ फल तथा शुभ दशा में सम्मानादि शुभ फल कहना चाहिए।

विद्याद्बुधः सत्फलमप्रपावक-
पूर्वैः फलैर्जातकनिर्णयस्त्विति।

रेखाभिरग्निमिताभिरन्विते
व्यापारतो वित्तमवाप्नुयान्नरः ।।५८।।

विद्यादिति । अभ्रपावकपूर्वैस्त्रिंशत्प्रभृति फलै रेखाभिः सत्फलं शुभफलं बुधः, पण्डितो विद्याद् जानीयात् । इत्येवं जातकानां जातकसम्बन्धिग्रन्थानां निर्णयो निश्चयो ज्ञेय इति शेषः । अभ्राग्निमिताभिस्त्रिंशत्तुल्याभी रेखाभिरन्विते युक्ते मासि, नरो मनुष्यो, व्यापारतो वित्तं धनमवाप्नुयाल्लभेत । तथा च जगन्मोहने—

त्रिंशता धनधान्याप्तिरिति जातक निर्णयः ।' इति

ग्रन्थान्तरेऽपि—

मानं सुकृतावाप्तिस्त्रिंशद्भिर्नास्ति कोऽपि सन्देहः ।
सौख्यं द्रव्यागमनं पुंसामेकाधिकाभी रेखाभिः ।।
रेखाधिक्ये शस्तं शून्याधिक्ये ततोऽधमं कथितम् ।।' इति

३० से अधिक रेखाओं वाले मास में शुभ फल होता है । ऐसा जातक शास्त्रों के आधार पर कहा जा रहा है ।

३० रेखाओं वाले मास में व्यक्ति व्यापार में खूब धन प्राप्त करता है ।

युक्ते कुरामैर्द्रविणान्वितो महो-
द्योगोऽथमासे यमवह्निमियुते ।
देहोत्थसम्पद् हुतानलोन्मिते—
युंक्ते महीशैरपि मान्यते भवी ।।५९।।
उद्योगसिद्धिः समवाप्नुयाद् धनं
व्यापारतोऽब्धोदधिरामसम्मिते ।
लाभः सुवर्णस्य तथांशुकस्य च
विद्यात्समर्घां महतीं बुधान्वितः ।।६०।।
तीर्थस्य भक्त्या सहितोऽथपावकैः
श्रीमान्भवेत्षड्वहनोन्मितैर्युते ।
प्राप्तिं सुपुत्रस्य वदेन्नगानलै-
र्लाभोऽङ्गनाया गजपावकान्विते ।।६१।।
मासे मनुष्यः परिचिन्तितं फलं
प्राप्नोति मासेऽङ्कगुणोन्मितैर्युते ।

द्रव्याणि रत्नानि समेति सम्भवः
शून्याब्धितुल्यैः सहिते यशोऽन्वितः ॥६२॥
युक्तो धनेनाथ धराब्धिसम्मिते।
लाभं प्रभूतं जनितः प्रपद्यते ॥६३॥

युक्त इति। उद्योगपति। तीर्थस्येति। भाग इति। युक्त इति च। कुरामै-रेकत्रिंशत्तुल्यैः फलैर्युक्ते मासेतदा द्रविणेन धनेनान्वितो युक्तो महोद्योगो विशालो-द्यमो भवेदिति शेषः।

अथेति। यमवह्निभिर्द्वात्रिंशत्तुल्यैः फलैर्युते सहिते मासे तदादेहः शरीरं तस्मादुत्पन्ना सम्पत्ति पुत्र इत्यर्थः भवेदिति शेषः।

दहनेति। दहनानलोन्मितैस्त्रयस्त्रिंशत्तुल्यं, फलैर्युक्ते मासे तदा भवी जन्मी, महीपै राजभिर्मान्यते पूज्यते, उद्योगो यत्नश्चेष्टेति यावत्। तस्यसिद्धिः प्राप्तिः, व्यापारतो धनं द्रव्यं समवाप्नुयाल्लभेत। तथा च गर्गपराशरादयः—

रामवह्नियुते मासे व्यापाराद् धनमाप्नुयात्।
उद्योगसिद्धिश्च भवेन्मान्यते च नृपैरपि ॥' इति

जगन्मोहनेत्वेरफलं मोक्तं तदित्थम्—
'पुत्रसम्पद् गुणाग्निभिः' इति। चिन्त्यमेतत्।

अथेति। अथेत्यानन्तर्ये। उदधिरामसम्मिते चतुस्त्रिंशत्तुल्ये मासे तदा सुवर्णस्य अंशुकस्य वस्त्रस्य लाभो वाच्येति शेषः। महतीं समग्रां कीर्ति विख्यातिमा-भीयात्। ततो वृषेण धर्मेणान्वितो युतः। तीर्थस्य पुण्यस्थलस्य भक्त्या सहितो युक्तः स्यादिति शेषः। तथा च जगन्मोहने—

सहेमवस्त्रलाभश्च चतुस्त्रिंशत्समन्विते।' इति

अक्षेति। अक्षपावकैः पंचत्रिंशत्तुल्यैः फलैर्युक्ते मासे तदा श्रीमान् लक्ष्मीवान् भवेदिति शेषः।

षडिति। षड्दहनोन्मितैः षट्त्रिंशत्तुल्यैः फलैर्युक्ते मासि सुष्ठु शोभनः पुत्र स्तनयस्तस्य प्राप्ति लाभं वदेत्कथयेद्दैवज्ञ इति शेषः।

नगेति। नगानलैः सप्तत्रिंशत्तुल्यैः फलैर्युक्ते मासे तदाऽङ्गजायाः कन्याया लाभः प्राप्तिर्वाच्येति शेषः। इह जगन्मोहने तु धनाप्तिरुक्ता सा च यथा—

'सप्तत्रिंशद्धनस्याप्तिः''''''।' इति

गजेति। गजपावकान्वितेऽष्टात्रिंशत्तुल्यैः फलैर्युक्ते मासि मनुष्यः तदा परि-चिन्तितं मनोवाञ्छितं फलं प्राप्नोति।

मास इति। अंकगुणोन्मितैरेकोनचत्वारिंशत्तुल्यैः फलैर्युते मासे तदासम्भवो नरः द्रव्याणि धनानि, रत्नानि समेति प्राप्नोति।

शून्येति। शून्याब्धितुल्यैश्चत्वारिंशत्तुल्यैः फलैः सहिते मासे, यशसा कीर्त्यान्वितो युक्तो धनेन युक्तश्च भवेदिति शेषः तथा च जगन्मोहने—

धनवान् कीर्तिमांश्चैव चत्वारिंशति वर्धते।
अत ऊर्ध्वं यशोऽर्थाप्तिः पुण्यश्रीरुपचीयते॥' इति

अथेति। अथेत्यानन्तर्ये। धराब्धिसम्मिते एकचत्वारिंशत्तुल्ये मासे तदा जनितो जातः प्रभूतं विविधं लाभं प्राप्तिं प्रपद्यते प्राप्नोति। गर्गपराशराद्योऽपि—

'भूवेदबिन्दुसंयुक्ते नानालाभं प्रपद्यते।' इति

३१ रेखाओं से युक्त मास में धन का लाभ होता है तथा व्यक्ति बड़े प्रयत्न सापेक्ष कार्य करता है।

३२ रेखाओं से युक्त मास में पुत्र सम्पत्ति का लाभ होता है।

३३ रेखाओं वाले मास में राजा से सम्मान, प्रयत्न में सफलता तथा व्यापार में धन लाभ होता है।

३४ रेखा युक्त मास में सोने व वस्त्र का लाभ होता है। व्यक्ति विपुल ख्याति अर्जित करता है तथा पुण्य से युक्त होकर तीर्थों की यात्राएं करता है।

३५ रेखाओं वाले मास में मनुष्य की शोभा बढ़ती है।

३६ रेखाओं से युक्त मास में उत्तम पुत्र की प्राप्ति होती है।

३७ रेखाओं वाले महीने में कन्या सन्तान की प्राप्ति होती है।

३८ रेखाओं वाले मास में मनोवाञ्छित फल की प्राप्ति होती है।

३९ रेखाओं से युक्त मास में धन तथा रत्नों की प्राप्ति व ४० रेखाओं वाले मास में बहुत से धन की प्राप्ति होती है तथा अन्य अनेक प्रकार के लाभों को प्राप्त करता है। ४१ रेखा वाले मास में बहुत धन की प्राप्ति होती है।

समन्विते मासि यमागमप्रमैः
श्रीमानुदारो बहुलोकसेवितः।
आर्त्तो महाभोगयुतो महाधनो
ना मेदिनीमण्डलसंस्थितो भवेत्॥६४॥

समन्वित इति। यमागमप्रमैर्द्विचत्वारिंशत्तुल्यैः फलैः समन्विते युक्ते मासि तदा, जातः समुत्पन्नो ना मनुष्यः श्रीः (शो.भा) अस्ति अस्य श्रीमान् शोभावानित्यर्थः। उदारो दाता, बहुभिः प्रचुरैर्लोकैर्जनैः सेवित आश्रितः महाभोगा विपुल

भोगास्तैर्युतः महद् धनं यस्य महाधनः । मेदिन्याः पृथिव्या मण्डलं तस्मिन् संस्थित आश्रितो भवेत् । तथा च गर्गपराशरादयः—

'पक्षवेदैः पुनः श्रीमानुदारो बहुसेवितः ।
महाधनो महाभोगो महीमण्डलसंस्थितः ॥' इति

४२ रेखाओं से युक्त मास में मनुष्य समस्त भूमण्डल में शोभायमान होता है। वह बड़ा दानी, बहुत से लोगों का सहारा, बहुत से भोगों को भोगने वाला और बड़ा धनवान् होता है।

मास्यग्निपाथोधियुते समन्ततः
सम्पत्सुखं सागरसागरप्रमैः ॥६५॥
स्थानैर्युते मासि धराधिनायक-
मान्यः समीरोदधि सम्मितैः फलैः ।
युक्ते धनी ज्ञानयुतः स्वयं पर-
मात्मा मनुष्यो वृषसागरान्वितः ॥६६॥

मासीति । स्थानैरिति च । अग्निपाथोधियुते त्रिचत्वारिंशत्सहिते मासि तथा समन्ततः सर्वतः सम्पद् विभवं, सुखं स्यादिति शेषः ।

सागरेति । सागर सागरप्रमैश्चतुश्चत्वारिंशत्तुल्यैः स्थानैः फलैर्युतं मासि तथा धरा तस्याधिनायकः स्वामी तस्य मान्यः पूज्यः राजपूज्य इत्यर्थः ।

समीरेति । समीरोदधिसम्मितैः पंचचत्वरिंशत्तुल्यैः फलैः रेखाभिर्युक्ते मासे तथा मनुष्यो धनी धनवान्, ज्ञानयुतो वृषसागरान्वित, पुण्यसमुद्रयुतोऽतीव पुण्यात्मेत्यर्थः । स्वयमात्मना परमात्मा परब्रह्म भवेदिति शेषः । तथा च गर्गपराशरादयः—

'पंचवेदमिते मासे ज्ञानवान् धनिको भवेत् ।
पुण्यसागरसंयुक्तः परमात्मा स्वयं भवेत् ॥' इति

४३ रेखाओं से युक्त मास में सब ओर से सम्पत्ति का लाभ तथा सुख मिलता है। ४४ रेखाओं से युक्त मास में व्यक्ति राज सम्मान को पाता है।

४५ रेखाओं से युक्त मास में व्यक्ति को धन तथा सम्मान की प्राप्ति, बहुत से पुण्यफलों का लाभ तथा ब्रह्म तुल्यत्व प्राप्त होता है।

मास्यङ्गपाथोधिमितैर्युते शुभं
समन्ततः सप्तसमुद्रसंयुते ।

अनुत्तमैः सर्वगुणैः समन्वितो
मासीभवेदैः सहिते दयापरः ॥६७॥
सर्वेषु जीवेषु सराजलक्षणः
श्रीपुण्यवृद्धिः सुकृताध्वगामिनाम्।
मध्ये धनिज्ञानवतां सुशोभन-
स्तारान्तराले रजनीश्वरो यथा ॥६८॥

मासीति। सर्वेष्विति च। अंगपाथोधिमितैः षट्चत्वारिंशत्तुल्यैः फलैर्युक्ते मासि समन्ततः शुभं स्यादिति। सप्तेति। सप्तसमुद्रयुते सप्तचत्वारिंशद्युते मासे तदा अनुत्तमैः श्रेष्ठैः सर्वगुणैः समगुणैः समन्वितो युक्तः स्यादिति।

मासीति। इभवेदैरष्टचत्वारिंशत्तुल्यैः फलैः सहिते युक्ते मासि सर्वेषु सम्पूर्णेषु जीवेषु प्राणिषु दयापरो दयालुः राज्ञां यानि लक्षणानि चिह्नानि तैः सहितः, श्रीः शोभा पुण्यं धर्मस्तयोर्वृद्धिः, सुकृतं पुण्यं तस्याध्वा मार्गस्तद्गामिनस्तेषां यथा तारान्तरा तारागणानां मध्ये रजनीश्वरश्चन्द्रः तथा धनिनो वित्तवन्तो ज्ञानिनस्तेषां मध्ये सुशोभनो भवेदिति शेषः।

४६ रेखाओं से युक्त मास में मनुष्य सब ओर से कल्याण पाता है।

४७ रेखाओं से युक्त मास में मनुष्य समस्त गुणों से युक्त होता है।

४८ रेखाओं वाले मास में सब जीवों पर दया करने वाला, राजोचित लक्षणों से युक्त, शोभावान् धर्म में रति वाला पुण्यात्मा, धनी तथा ज्ञानियों के बीच में उसी प्रकार शोभा प्राप्त करता है जैसे तारागण के मध्य चन्द्रमा सुशोभित होता है।

रेखाओं से दिनफल का ज्ञान :

कुर्यादिष्टदिने समाम्बरसदामैक्यं कलानां ततः
शस्ताशस्तफलं वदेद्वसुयमैस्तुल्ये कलैक्ये फलम्।
मध्यं स्यादधिके शुभं त्वथ कृशेऽसत्स्यात्कलानां युति-
र्धिष्ण्ये यत्र मनून्मिता यदि तदा पुंसां त्रिवर्गक्षतिः ॥६९॥

कुर्यादिति। इष्टदिनेऽभीष्टदिवसे समाम्बरसदां सर्वग्रहाणां कलानां रेखाणामैक्यं योगं कुर्यात्। ततस्तस्माद्रेखायोगाद् शस्ताशस्तफलं शुभाशुभफलं वदेत्। यदा कलैक्ये वसुयमैस्तुल्येऽष्टाविंशतितुल्ये सति तदा मध्यं समानं फलं ज्ञेयमिति।

अधिकेऽष्टाविंशत्याधिके शुभं स्यात्। अथ कुशेत्वल्पेऽमदशुभं फलं स्यात्। यत्र यस्मिन् यस्मे दिने कलानां रेखाणां युतिर्मनून्मिता चतुर्दशतुल्या यदि स्यात्तदा पुंसां पुरुषाणां त्रिवर्गाणां धर्मार्थकामानां क्षतिः स्यात्। तथा च ब्रह्मयामले—

सर्वग्रहाणां रेखैक्यं कुर्यादिष्ट दिने तत।
अष्टविंशे फलं मध्यमधिकोने शुभाशुभम्॥
फलं शुभाशुभं ब्रूयात्तत्प्रकारोऽभिधीयते।
सर्वग्रहाणां रेखैक्यं शक्रतुल्यं भवेत्तदा॥' इति

जन्मकालीन ग्रहों का भिन्नाष्टक वर्गादि बनाकर तैयार कर लेना चाहिए। तदनन्तर जिस दिन का फल जानना अभीष्ट हो, उस दिन ग्रहों की गोचर राशि के रेखांकों को (मास की तरह) युक्त कर लेना चाहिए।

यदि उक्त रेखा योग, अभीष्ट दिन में २८ हो तो मध्यम फल तथा २८ से अधिक हो तो शुभ फल होता है।

२८ से कम रेखाएं होने पर अशुभ फल तथा १४ से कम रेखाएं होने पर धर्म, धन व सुखोपभोगादि (त्रिवर्ग) की हानि होती है। यह विषय पहले मास फल जानने के प्रसंग में सोदाहरण समझाया जा चुका है।

महापदो मारुतरूपसम्मिते
नृपप्रमे भूपभयं घनोन्मिते।
क्षयः पुराणप्रमितेऽर्थसंक्षयो
विहङ्गमोर्वीप्रमिते कुशेमुषी॥७०॥
स्याद्बान्धवार्त्तिर्नखरोन्मिते कलि-
र्ज्ञेयो व्ययः स्वर्गमिते हृदि व्यथा।
मासत्यनासत्यमिते पराभवो
वैन्यं तथा निष्फलता तदोदिता॥७१॥

महापद इति। स्यादिति च। मारुत रूपसम्मिते पंचदशतुल्ये फलैक्ये दिने महत्यो विपुला आपदो विपत्तयः स्युरिति। नृपप्रमे षोडश तुल्ये फलैक्ये दिवसे भूपो राजा तस्माद् भयं दरं स्यात्। घनोन्मिते सप्तदशतुल्ये फलैक्ये तदा क्षयो नाशः स्यात्। पुराणमितेऽष्टादशतुल्ये फलैक्ये दिनेऽर्थस्य धनस्य संक्षयो नाशः स्यात्। विहंगमोर्वीप्रमिति एकोनविंशतितुल्ये फलैक्ये दिने कुशेमुषी निन्दितबुद्धि

बान्धवेषु पीडा स्यात् । नखरोन्मिते विंशतितुल्ये फलैक्ये दिने कलिः कलहो व्ययोऽपायो ज्ञेयः स्मृतः । स्वर्गमिति एकविंशतितुल्ये फलैक्ये दिने हृदि मनसि व्यथा पीडा स्यात् । नासत्यनासत्यमिते द्वाविंशतितुल्ये दिने पराभवस्तिरस्कारः दैन्य दीनता निर्धनतेति यावत् । निष्फलता विफलता उदिता कथिता । तथा च ब्रह्मयामले—

'..................तिथितुल्ये महापदः ।
भूपतुल्ये भूपभयं नाशः सप्तदशे स्मृतः ॥
अष्टादशे तु रेखैक्ये धनहानिश्च जायते ।
कुमतिर्बन्धुपीडा स्यात्तदा चैकोनविंशतौ ॥
रेखैक्ये नखतुल्ये तु व्ययश्च कलहः स्मृतः ।
एकविंशति सख्यैक्ये हृदिदुःखं प्रजायते ॥
पराभवस्त्वफलता दैन्यं चाकृति संख्यके ॥' इति

जिस दिन का रेखायोग १५ हो उस दिन बड़ी विपत्ति का सामना करना पड़ता है।

१६ रेखाओं से युक्त दिन में राजा से भय होता है। १७ रेखा वाले दिन में नाश, १८ रेखा युक्त दिन में धन की हानि, १६ रेखा युक्त दिन में दुर्बुद्धि, २० रेखा युक्त दिन में कलहागम तथा व्यय, २१ रेखाओं से युक्त दिन में हृदय में दुःख तथा २२ रेखाओं वाले दिन में अपमान, विफलता व दरिद्रता होती है।

ग्रामाक्षितुल्ये धनधर्म्मनाशन-
मर्हत्समाने सहसा धनक्षतिः ।
हानिः करस्थस्य धनस्य मारुत-
नासत्यतुल्येऽङ्गयमोन्मिते कलिः ॥७२॥

ग्रामेति । ग्रामाक्षितुल्ये त्रयोविंशतितुल्ये रेखैक्ये दिने धनं, धर्मः तयोर्नाशनं क्षयः स्यादिति । अर्हत्समाने चतुर्विंशतितुल्ये फलैक्ये दिने सहसा धनस्य द्रव्यस्य क्षतिः स्यात् । मारुतनासत्यतुल्ये पंचविंशति तुल्ये फलैक्ये दिने करस्थस्य हस्तगतस्य धनस्य हानिः; अंगयमोन्मिते षड्विंशतितुल्ये दिने कलिः कलहः स्यात् । तथा च ब्रह्मयामले—

'त्रयोविंशतिमिते प्रोक्ता हानिर्धर्मार्थयोरपि ।
अकस्माद्धनहानिः स्याच्चतुर्विंशन्मिते तथा ॥
करस्थस्यापि द्रव्यस्य हानिः स्यात् पंचविंशके ।
षड्विंशके तु कलहः...... ॥ इति

सम्मितैश्चतुस्त्रिंशत्तुल्यैः फलैः सहिते दिवसे सम्पूर्णा सम्पत्सम्पत्तिः कथितोक्ता। अत उर्ध्वमेकवृद्धया सर्वेषामर्थानां सिद्धिः प्राप्तिर्वाच्येति शेषः। एवं रससायकान्तं षट्पंचाशदन्तमष्टक वर्ग जातं फलं वदेत्। अनेन विधिना पुंसां पुरुषाणां वासरजं दिन जनितं शुभाशुभ फलाख्यं विचक्षणैः विचार्यं विचिन्त्यम्। दायफलस्य दशा-फलस्य अह्लोदिनस्य फलस्य च बोधाय यामलनामशास्त्राद् ब्रह्मयामलग्रन्थान्मया महाष्टवर्गोऽदितः कथितः। तथा च ब्रह्मयामले—

......................समता धिष्ण्यसंख्यके।
पिण्डे द्रव्यागमश्चैकोनत्रिंशे जनपूजितः॥
त्रिंशन् मिते राजपूजा सुकृतं सुखसंयुतम्।
एकत्रिंशन्मिते द्रव्यं सन्मानं च विशेषतः।
दन्ततुल्ये. सर्वसिद्धिर्महालाभोऽमरैः समैः॥
चतुरधिकत्रिंशद्भी रेखाभिरभिसंमता।
सर्वसम्पत्सिद्धिश्च सर्वार्थानामेकाभिवृद्धितो ज्ञेया।
रसशररेखा यावत्फलयुक्तं त्वष्ट वर्गजं मुनिभिः॥
दिनजं फलं विचार्यं त्वनेन विधिना शुभाशुभं पुंसाम्।
दशाफलस्य बोधाय तथादिनफलस्य च।
प्रोक्तो महाष्टकोवर्गः शास्त्राच्च ब्रह्मयामलात्॥ इति

जिस दिन २७ रेखाएं हों तो उस दिन मध्यम फल अर्थात् शुभा-शुभ मिश्रित फल होता है।

२८ रेखाओं वाले दिन में धन का लाभ, २६ रेखा वाले दिन में लोगों से सम्मान, ३० रेखा वाले दिन में राजा से सम्मान, सुख व धर्म लाभ होता है।

३१ रेखाओं वाले दिन में सब कार्य सिद्ध होते हैं।

३२ रेखाओं वाले दिन में सब कार्य सिद्ध होते हैं।

३३ रेखाओं वाले दिन में खूब लाभ, ३४ रेखा वाले दिन में समस्त सम्पत्तियों का लाभ होता है।

३४ से आगे ५६ रेखाओं तक उत्तरोत्तर धनवृद्धि का फल मिलता है। इस प्रकार मनुष्यों के दैनिक शुभ व अशुभ फल का विचार करना चाहिए। मैंने (ग्रन्थकार ने) यह फल ब्रह्मयामल नामक शास्त्र के आधार पर बताया है।

विवाहादि कृत्यों मेंअष्टक वर्ग का उपयोग :

अन्वेष्यं ग्रहगोचरं हि ताव-
यावन्नाष्टकमाप्यते ग्रहाणाम् ।
सम्प्राप्तेऽष्टगणे यदा नराणां
गोचारं विफलं भवेत्तदानीम् ॥७७॥

अन्वेष्यमिति। नराणां मनुष्याणां ग्रहाणां जन्मकालीनग्रहाणां यावदष्टकमष्टवर्गं नाप्यते न लभ्यते तावद्ग्रहगोचरमन्वेष्यं द्रष्टव्यम्। यदाष्टगणेऽष्टवर्गे सम्प्राप्ते तदानीं गोचर ग्रहगोचरं विफलं भवेत्। तथा च श्रीवराहः—

विफलं गोचरगणितं स्वष्टकवर्गेण निर्दिशेत्पुसाम्।
रेखाधिक्ये शुभदं बिन्द्वधिके नैव शोभनं प्रायः ॥ इति

विवाह, यज्ञोपवीत, विद्यारम्भ, गृहनिर्माणादि शुभ कार्यों में भी अष्टक वर्ग का विचार करना चाहिए। जब तक अष्टक वर्ग शुद्धि प्राप्त न हो अर्थात् अष्टक वर्ग के आधार पर अनुकूल समय न आए तब तक गोचर से ही शुभाशुभ फल का विचार करना चाहिए; किन्तु अष्टक वर्ग के अनुसार अनुकूल समय होने पर गोचर की प्रामाणिकता इन कार्यों में नहीं देखनी चाहिए। अर्थात् तब गोचर जनित फल को निर्णायक न मानकर अष्टक वर्ग जनित फल का ही अधिकार मानना चाहिए।

शुभकृत्यों में अष्टक वर्ग शुद्धि अनिवार्य :

सूक्ष्मा शुद्धिर्याष्टवर्गोद्भवा सा
स्थूला शुद्धिर्गोचरोत्था प्रदिष्टा।
तस्मादादावष्टवर्गस्य शुद्धि-
श्चिन्त्या नृणां दारग्रहे मौञ्जिबन्धे ॥७८॥

सूक्ष्मेति। या अष्टवर्गोद्भवा अष्टकवर्गजनिता शुद्धिः पंचाधिकरेखायुक्तरूपा सा सूक्ष्मा कृशा प्रदिष्टा कथिता। या गोचरोत्था गोचरजनिता शुद्धिर्जन्मराशितो त्रिचतुर्थाष्टमव्ययगतरविगुरुचन्द्र रूपा सा स्थूला प्रदिष्टाकथिता बुधैरिति शेषः। तस्माद्धेतोर्नृणां मनुष्याणां दारग्रहे पाणिग्रहणे मौञ्जिबन्धने उपनयने आदौ प्रागष्टवर्गस्य शुद्धिः चिन्त्या विचारणीया। तथा च राजमार्त्तण्डे—

'सूक्ष्माष्टवर्गसंशुद्धिः स्थूला शुद्धिस्तु गोचरे।' इति

मुहूर्तगणपतावपि—

'स्वाष्टवर्गे यदा खेटोऽधिकरेखस्तु राशितः ।
तदा गोचरदुष्टोऽपि श्रेष्ठो नाल्पकरेखिकः ॥' इति

श्रीमरीचिरपि—

आदावष्टकवर्गः शोध्यो विज्ञैस्तदप्राप्तौ ।
गोचरबलं विचिन्त्यं तदभावे वामवेधजं वीर्यम् ॥' इति

मनुष्यों के विवाह व्रत बन्धादि शुभ कृत्यों में अष्टक वर्ग की शुद्धि सूक्ष्म होती है। इसके विपरीत गोचर शुद्धि तदपेक्षया स्थूल ही मानी जाएगी।

इस विषय में ग्रन्थकार ने **राजमार्तण्ड, ज्योतिः सार, मुहूर्त-गणपति योगयात्रा, संहिता सार** व **मरीचिकृत** ग्रन्थ का हवाला दिया है। ये सब उक्त मत से सहमत हैं।

आदित्येन्दुसुरेशपूजितेषु
शुद्धेष्वष्टगणेषु दोर्ग्रहादि।
कर्त्तव्यं न कदापि गोचराख्ये
प्राचीनैरिति कीर्त्तितं मुनीन्द्रैः ॥७१॥

आदित्येति। अष्टगणेषु आदित्यः सूर्यः, इन्दुश्चन्द्रः, सुरेशपूजितोगुरु-स्तेषु शुद्धेषु पंचाधिकरेखायुक्तेषु दोर्ग्रहादि विवाहादि सत्कर्मेति यावत् कर्त्तव्यं करणीयं, गोचराख्ये गोचरशुद्धौ चतुर्थाष्टमद्वादशशुद्धौ तु कदापि दोर्ग्रहादि न कर्त्तव्यम्। इति प्राचीनैः मुनीन्द्रैः कीर्तितं कथितम्। तथा च राजमार्तण्डे—

अष्टवर्गविशुद्धेषु गुरुशीतांशुभानुषु।
व्रतोद्वाहौ च कर्त्तव्यौ गोचरे न कदाचन ॥'

विवाहवृन्दावने तु गोचरशुद्धिरेव मुख्योक्ता, सा च—

'योषितां गुरुपतंगगोचरैः शोभनो निगदितः करग्रहे।
अष्टवर्गविधिना तदक्षये सूर्ये शुद्धिरपरे नृणां जगुः ॥
यथोदये चन्द्रमसः प्रकाशो, दिगंगनानां मुखकैरवस्य।
तथाष्टवर्गे ग्रहलग्नशुद्धौ कार्यस्य पुंसां भवतीह शुद्धिः ॥
अभावतो गोचर शोभनानां शुद्धिं वदेद्भागुरिरष्टवर्गात्।
वैधव्यकन्याक्षयः हेतुयोगो जीवोऽष्टवर्गस्य वदेन्न शुद्धिम् ॥' इति

सूर्य, चन्द्र तथा गुरु की शुद्धि विवाहादि कृत्यों में देखनी परमावश्यक मानी गई है। किन्तु जब ये अष्ट वर्ग से शुद्ध हों अर्थात्

पांच रेखाओं से अधिक रेखाओं वाली राशि में स्थित हों तब विवाहादि कृत्य करना शुभ होता है। सूर्यादि की केवल गोचर शुद्धि में विवाहादि कार्य करना ठीक नहीं है। यह प्राचीन महर्षियों का कथन है।

अभी तक भिन्नाष्टक व समुदायाष्टक द्वारा गोचर फल जानने के विषय में विस्तार से बताया गया है। किन्तु प्रस्ताराष्टक वर्ग का निर्माण भी इस प्रक्रिया का आवश्यक अंग है। चक्र निर्माण व रेखा बिन्दुओं का न्यास पूर्वोक्त प्रकार से होता है। प्रस्ताराष्टक वर्ग में ९६ कोष्ठक बनाकर ग्रहाधिष्ठित राशि से रेखाओं का न्यास किया जाता है। समुदायाष्टक वर्ग के प्रसंग में पीछे दिए गए चक्र यथावत् यहां भी काम आ जाएंगे। केवल रेखास्थापन में भेद होगा। साथ ही त्रिकोण शोधन व एकाधिपत्य शोधन तथा पिण्ड निर्माण भी आवश्यक है। इसी विषय में ग्रन्थकार आगे बता रहे हैं।

प्रस्ताराष्टक चक्र का निर्माण :

आलिख्याकुंमिताश्च पूर्वरेखा
याम्योदक्प्रगता दश त्रिरेखाः।
प्रस्तारं रसनन्दतुल्यकोष्ठं
पंक्तिभोन्मितमष्टवर्गजातम् ॥८०॥

आलिख्येति। अकंमिता नवतुल्याः पूर्वरेखाः पूर्वस्यां दिशिरेखाः कला आलिख्य, तथा दशत्रिरेखा त्रयोदशरेखा याम्योदक्प्रगता आलिख्य इति रसनन्दतुल्यकोष्ठं षण्णवतितुल्यकोष्ठं प्रस्तारं पंक्तीभोन्मितं पंक्त्यष्टकमष्टकवर्गजातं चक्रमिति शेषः।

नौ रेखाएं पड़ी व तेरह रेखाएं खड़ी खींचें। इस प्रकार ९६ कोष्ठकों का प्रस्तार चक्र बन जाता है।

इस कोष्ठकों में ग्रह स्थापना राशि नाम व योगादि के लिए प्रयुक्त होने वाले कोष्ठकों का ग्रहण नहीं है। सरल शब्दों में कहें तो पीछे बताए गए भिन्न या समुदायाष्टक वर्ग के चक्र के समान कोष्ठकों वाला चक्र यहां भी बना लेना चाहिए। इस चक्र में जिस राशि में ग्रह अधिष्ठित हो, उसी राशि से राशियों की स्थापना क्रमशः की जाएगी। ग्रहों की स्थापना का क्रम कक्ष्यानुसार (शनि, गुरु, मंगल, सूर्य, शुक्र,

बुध, चन्द्र व लग्न होगा। शेष ग्रहों को भी अपनी-अपनी अधिष्ठित राशि के कोष्ठक में स्थापित किया जाएगा। प्रस्तार से तात्पर्य होता है विस्तार अर्थात् भिन्नाष्टक का विस्तृत उपबृंहित रूप। रेखाओं की स्थापना पूर्वोक्त प्रकार से ही की जाएगी।

इस विषय को अपने पूर्वोक्त उदाहरण के संदर्भ में समझते हैं। भिन्नाष्टक वर्ग के प्रकरण में हम सूर्य का भिन्नाष्टक वर्ग प्रदर्शित कर चुके हैं। अब हमने एक चक्र बना रखा है तथा साथ ही पूर्वोक्त भिन्नाष्टक (सूर्य) को भी सामने रखे हुए हैं। अब हमें सूर्य का प्रस्ताराष्टक बनाना है। सूर्य कन्या राशि में स्थित है। अतः कन्या, तुला आदि क्रम से राशियों को स्थापित किया। ग्रहों को कक्ष्याक्रम से स्थापित कर लिया। भिन्नाष्टक वर्ग में कन्या में जहां जहां रेखाएं थीं, तदनुसार यहां भी रेखाएं स्थापित कर लीं। भिन्नाष्टक में रेखा योग निम्नोक्त प्रकार से है तथा प्रस्तार में केवल उसका क्रम ही परिवर्तित होगा। हमने देखा कि सूर्य के प्रस्ताराष्टक में भिन्नाष्टक की तरह ही कन्या-६, तुला-४, वृश्चिक-३, धनु-४, मकर-४, कुम्भ-३, मीन-७, मेष-४, वृष-२, मिथुन-६, कर्क-४ व सिंह-१ रेखाएं प्राप्त हुई हैं।

आशय यही है कि भिन्नाष्टक वर्ग की रेखाओं को सूर्य के प्रस्तार में उसकी अधिष्ठित राशि से, चन्द्रमा के प्रस्तार में चन्द्राधिष्ठित राशि से अर्थात् सब ग्रहों की अपनी अपनी अधिष्ठित राशि से प्रारम्भ कर सब रेखाओं व योग को यथावत् रख लेंगे। भिन्नाष्टक व प्रस्ताराष्टक में केवल राशि क्रम का भेद है, अन्यथा सब रेखाएं आदि भिन्नाष्टक की तरह ही होती हैं।

त्रिकोण शोधन का प्रकार :

क्षिप्तेष्विहाष्टद्युचरेषु राशि-
चक्रे यथामार्गमथो विदध्यात्।
आदौ त्रिकोणस्य विशोधनाख्यं
सर्वेषु राशिष्वनिशं सुधीन्द्रः ॥८१॥

क्षिप्तेष्विति। राशिचक्रे पूर्वप्रस्तारित चक्रे यथा मार्गमष्टद्युचरेषु सलग्नेषु रव्यादिसप्तग्रहेषु क्षिप्तेषु स्थापितेषु सत्सु। अथो आदौ प्राग् अनिशं नित्यं सर्वेषु राशिषु मेषादिषु द्वादससु सुधीन्द्रः पण्डितेन्द्रः त्रिकोणस्य मेषसिंहधनूरूपस्य विशोधनाख्यं संशोधनं विदध्यात् कुर्यात्। तथा च देशपाल जातके—

राशिचक्रे यथामार्गं क्षिप्तेष्वष्टग्रहेषु च।
त्रिकोणशोधनं कुर्यादादौ सर्वेषु राशिषु।। इति

इस प्रकार प्रस्तारित चक्र में लग्न सहित आठों वर्गाधिपों को स्थापित कर ग्रहाधिष्ठित राशि क्रम से रेखाओं को स्थापित करके रेखायोग कर लिख लेना चाहिए (देखिए श्लोक ७७ व्याख्या)। तदनन्तर राशियों के रेखायोग का विद्वान् ज्योतिषी को त्रिकोण शोधन करना चाहिए।

त्रिकोण से तात्पर्य १, ५, ९, राशियों से है। प्रत्येक राशि से पांचवीं व नवीं राशि त्रिकोण होती है। जैसे मेष राशि से पांचवीं सिंह राशि व नवीं धनु राशि त्रिकोण हुई। मेष, सिंह व धनु तीनों त्रिकोण राशियां हैं। इसी प्रकार वृष, कन्या व मकर तीनों त्रिकोण हैं। मिथुन, तुला व कुम्भ एवं कर्क, वृश्चिक, मीन परस्पर त्रिकोण राशियां हैं। इनका शोधन करने का प्रकार आगे श्लोकों में बताया जा रहा है।

कोदण्डमेषहरयो मृगगोकुमार्य्यः
कर्काटकालयनिमिषा घटतौलियुग्माः।
ते स्युः परस्परमिह क्रमतस्त्रिकोणा-
स्त्वेष्वेषु शोधयतु तत्सममल्पकं यत् ।।८२।।
शून्यं यदैकभवने बुध, तत्त्रिकोणं
नो शोधयाखिलगृहेषु यदा समानम्।
सर्वं विशोधय विशोध्यमिति त्रिकोण-
मेकाधिपस्य भवनद्वयकस्य पश्चात् ।।८३।।

कोदण्डेति। शून्यमिति। सुर इति। संस्थाप्येति। साम्यमिति। भयो-रिति। सिंहस्येति च। कोदण्डं धनुः, मेषः, हरिः सिंहः, एते मृगोमकरः गौर्वृषः कुमारी-कन्या, एते, कर्काटकः, कर्कः, अलिर्वृश्चिकः अनिमिषो मीनः एते घटः कुम्भः, तौली तुला, युग्मो मिथुनः, एते राशयः क्रमतः परस्परमन्योन्यंत्रिकोणा स्युरिति।

एष्विति। एषु पूर्वोक्तेषु त्रिषु राशिमध्येषु यदल्पं तस्य समं तुल्यं शोधयतु। यदा एकभवने एकराशौ शून्यं खं फलं रेखाभाव इत्यर्थः तदाहेबुध। तेषां राशीनां त्रिकोणं न शोधय मा त्यज। यदाखिलगृहेषु समानं तुल्यं फलं भवति तदा सर्वं समस्तं फलं विशोधय। इति त्रिकोणराशीनां मिथः शोध्यम्। तथा च देवशालजातके—

मंत्रेश्वरेण तु किंचिद् विशेषमुक्तम्—'भवनद्वयशून्ये सति तदाऽन्य-मन्दिरं सफलभवनं शोधयेत्। अर्थात्तस्य सफलभवनस्याधोऽपि शून्यं निवेशयेत्।

त्रिकोणेषु च यन्न्यूनं तत्तुल्यं त्रिषु शोधयेत्।
एकस्मिन् भवने शून्यं तत्त्रिकोणं न शोधयेत्॥
समत्वं त्रिषु गेहेषु सर्वं संशोधयेद् बुधः॥' इति

मेष, सिंह व धनु परस्पर त्रिकोण राशियां हैं। वृष, कन्या व मकर; मिथुन, तुला व कुम्भ; कर्क वृश्चिक, मीन; परस्पर त्रिकोण राशियां हैं।

इन त्रिकोण राशियों में जिस राशि का रेखायोग सबसे कम हो, उस योग को शेष दोनों अधिक फल वाली राशियों के योग में से घटा लेना चाहिए।

अब जो शेष बचे वह संख्या अधिक फल वाली दोनों राशियों के नीचे लिखें तथा जिस राशि का योग कम था उसके नीचे शून्य स्थापित कर लेना चाहिए।

यदि त्रिकोण राशियों में से किसी राशि का फल पहले से ही शून्य हो तो उनका त्रिकोण शोधन नहीं किया जाएगा। अर्थात् जिस राशि का जो रेखायोग हो उसे ही यथावत् लिख लेना चाहिए। यही योग उनका त्रिकोण शुद्ध योग माना जाएगा।

यदि तीनों राशियों का रेखायोग समान हो तो उन तीनों के नीचे शून्य स्थापित कर लेना चाहिए।

इस प्रकार त्रिकोण शोधन के उपरान्त एकाधिपत्य शोधन करना चाहिए।

एकाधिपत्य शोधन :

सूरे, फलानि परिशोधय सद्युसद्मे
स्वल्पे फले खगवियुक्तगृहे फलेन।
पुष्टे यदा कृशफलं त्यज तत्र पुष्टा-
च्छेषं तु तत्फलमधो विविहङ्गमस्य॥८४॥

संस्थापय ग्रहवियुक्तगृहे फलाल्पे
पुष्टे फलेन खगसंयुतसद्मे तदाल्पम्।
सर्वं त्यजाथ विविधत्सहितं समुग्मं
नो शोधयार्यं, गृहयोरुभयोः फलानि॥८५॥

साम्यं खसद्ग्रहितयोर्गृहयोः फलानां
सर्वाणि सन्त्यज फलानि तयोस्तु राश्योः ।
खेटोनयोर्भवनयोः फलयोरसाम्यं
संशोधयाधिकफलात्फलमल्पकं यत् ॥८६॥
भयोर्ग्रहोपेतवियुक्तयोश्चे-
त्फलस्य साम्यं खगवर्जितस्य ।
फलं गृहस्य त्यज तत्र सर्वं
खमेकभे शोधय नेह विद्वन् ॥८७॥
सिंहस्य कर्कस्य पृथग् गृहं फलं-
मेषा न कार्या प्रथमोदिता क्रिया ।
प्रागत्र शोध्योर्वरितं यदागतं
राशेरधस्तस्य तु तन्निवेशयेत् ॥८८॥

सूर इति । संस्थापयेति । साम्यमिति । भयोरिति । सिंहस्येति च । एकाधिपस्येति पूर्वत्रान्वयः ।

पंचासत्परतस्त्रिकोणशोधमानन्तरं भवनद्वयकस्य राशिद्वयस्य एकाधिपस्य एक एव स्वामी तस्य यथा—मेषवृश्चिकयोर्भौमस्तस्य राशिद्वयस्य यानि फलानि त्रिकोणशोध्यावशिष्टानि हे सूरे ! तानि परिशोधय । यत्र सद्युसद्भे ग्रहयुक्तराशौ त्रिकोणशोध्यावशिष्टे स्वल्पे न्यूने फले खगवियुक्तगृहे ग्रहरहितराशौ फलेन त्रिकोणशोध्यावशिष्टेन पुष्टेऽधिके सति तदा तत्र पुष्टादधिकफलात् कृशफलं न्यूनफलं त्यजशोधय । शेषमवशिष्टं यत्फलं तद् विविहंगमभस्याधो ग्रहरहितराशेरधः संस्थापय । ग्रहयुक्तराशेरधस्तु तस्य फलं त्रिकोण शोध्यावशिष्टं निवेशय ।

ग्रहवियुक्तगृहे ग्रहरहितराशौ, फलेन त्रिकोणशोध्यावशिष्टेनाल्पे न्यूने खगसंयुतभे ग्रहसंयुतराशौ फलेन त्रिकोणशोध्यावशिष्टेन पुष्टेऽधिके सति तदाल्पं फलं सर्वं त्यज, ग्रहरहितराशेरधः शून्यं स्थाप्यं ग्रहयुक्तराशेरधस्तु तस्यफलं स्थाप्यमित्यर्थः । अथ भयुग्मं राशिद्वयं विविधदा ग्रहेण सहितं युक्तं तदा उभयोर्द्वयो ग्रहयोराश्योः यानि फलानि त्रिकोणशोध्यावशिष्टानि तानि नो शोधय, द्वयो राश्योर्यस्त्रिकोणशोध्यावशिष्टं फलं तदेव तयोरधः स्थाप्यमित्यर्थः । खसद्ग्रहितयोः ग्रहरहितराश्योः फलानां त्रिकोणशोध्यावशिष्टानां साम्यं स्याद्यदि तदा तयो राश्योर्यानि त्रिकोणशोध्यावशिष्टानि फलानि तानि सर्वाणि सन्त्यजोत्सृज, द्वयोराश्योरधः शून्यमेव स्थाप्यम् । खेटोनयोर्ग्रहरहितयोः भवनयोः राश्योः फलयोस्त्रिकोणशोध्यावशिष्टयोरसाम्यं एकस्याल्पमन्यस्याधिकमित्यर्थः । यदि तदा

यदल्पकं फलं तदधिकफलात्पुष्टफलात् संशोध्य यच्छेषं तदधिकफलराशेरधः स्थाप्यं न्यूनफलाराशेरधस्तु शून्यमेव स्थाप्यम्। यदा द्वयोर्ग्रहोपेतवियुक्तयोर्ग्रहयुक्तरहितयोर्भयो राश्योः फलस्य त्रिकोणशोध्यावशिष्टस्य साम्ये समत्वे सति तदा खगवर्जितस्य ग्रहरहितस्य गृहस्य राशेः फलं त्रिकोणशोध्यावशिष्टं तत्र सर्वं समस्तं त्यज, ग्रहरहितराशेरधः शून्यं स्थाप्यं ग्रहयुक्तराशेरधस्तत्फलमेव स्थाप्यमित्यर्थः।

यदैकभे एकराशौ खं शून्यं भवति तदा इहास्मिन् स्थले द्वयोराश्योस्त्रिकोणशोध्यावशिष्टानि फलानि न शोधय, स्वस्य स्वस्य च यत्फलं तत्सर्वं स्वस्य स्वस्य चाधो निवेशये दित्याशयः। सिंहस्य कर्कस्य च पृथग्गृहं पृथक् फलं यात एवैषा प्रथमोदिता पूर्वोक्ता क्रिया रीतिस्तत्र न कार्या। तयोर्यत्प्राक् समानीतं शोध्योर्वरितं त्रिकोणशोध्यावशिष्टं तत्सर्वं तदधो निवेशयेत्। उभयोरेकाधिपत्यस्वादेकाधिपत्य शोधनं भवेन्नेति भावः। तथा च श्रीदेवकालः—

एवं त्रिकोणं संशोध्य पश्चादेकाधिपत्यताम्।
शेषद्वयेफलानि स्युस्तदा संशोध्य बुद्धिमान्॥
क्षीणेन सह तान्यस्मिन् शोधयेद् ग्रहवर्जिते।
ग्रहयुक्ते फलं न्यूनं ग्रहाभावे फलाधिकम्॥
उभयोस्तत्र संशोध्यं फलं हीनं विनिश्चितम्।
फलहीने तथा राशौ गगनेचरवर्जिते॥
फलाधिके ग्रहयुते चान्यास्मिन् सर्वमुत्सृजेत्।
उभयेग्रहसंयुक्ते न संशोध्यं कदाचन॥
उभाभ्यां ग्रहहीनाभ्यां समत्वे सकलं त्यजेत्।
सग्रहाग्रहसाम्ये च तत्सर्वं शोध्यमग्रहे।
कुलीरसिंहयो राश्योः पृथक् क्षेत्रं पृथक् फलम्॥ इति

सूर्य व चन्द्रमा को छोड़कर शेष पांच भौमादि ग्रहों को दो-दो राशियों का आधिपत्य मिला है। जैसे मंगल—मेष व वृश्चिक, बुध—मिथुन व कन्या, गुरु—धनु व मीन, शुक्र—वृषभ व तुला और शनि—मकर व कुम्भ का अधिपति है। इस प्रकार इन दस राशियों का ही एकाधिपत्य शोधन होता है। एतदर्थ यह प्रक्रिया अपनायी जाती है।

(i) यदि दोनों एकाधिपत्य राशियों में से किसी एक में ग्रह हो तथा दूसरी राशि ग्रह रहित हो, और त्रिकोण शोधन के उपरान्त ग्रह युक्त राशि का फल कम हो तो कम फल को अधिक में से घटाकर शेष फल ग्रह रहित राशि के

नीचे लिखें तथा ग्रह युक्त राशि के नीचे उसका सम्पूर्ण त्रिकोण शुद्ध फल लिखें।

(ii) यदि ग्रह रहित राशि का फल कम हो तो ग्रह रहित राशि के समस्त फल को त्याग दिया जाता है तथा वहां शून्य लिखा जाता है। ग्रह युक्त राशि का फल यथावत् रहेगा।

(iii) यदि दोनों राशियों में ग्रह हों तो उनका एकाधिपत्य शोधन नहीं होगा अर्थात् उनका त्रिकोण शुद्ध फल ही वहां लिखा जाएगा।

(iv) यदि दोनों एकाधिपत्य राशियों में कोई ग्रह न हो और दोनों राशियों का त्रिकोण शुद्ध फल समान हो तो दोनों के नीचे शून्य स्थापित करना चाहिए।

(v) यदि दोनों एकाधिपत्य राशियां ग्रह शून्य हों और दोनों का फल असमान हो तो अल्पफल को अधिक फल में से घटाना चाहिए। शेष को अधिक फल वाली राशि के नीचे स्थापित करें और अल्प फल वाली राशि के नीचे शून्य स्थापित करें।

(vi) यदि दोनों राशियों में से एक में ग्रह हो तथा दोनों का त्रिकोण शुद्ध फल बराबर हो तो ग्रह युक्त राशि का त्रिकोण शुद्ध फल लिखें और ग्रह रहित राशि के नीचे शून्य स्थापित कर दें।

(vii) यदि दोनों में से किसी राशि में शून्य त्रिकोण शुद्ध फल हो तथा दूसरी राशि में कुछ फल हो तो उनका फल यथावत् रहने दें अर्थात् वहां एकाधिपत्य शोधन न करें।

(viii) सिंह व कर्क का एकाधिपत्य शोधन नहीं होगा। उनका त्रिकोण शुद्ध फल ही वहां लिखा जाएगा।

इस समस्त विषय को अब अपने पूर्वोक्त उदाहरण के संदर्भ में समझते हैं।

त्रिकोण शोधन का उदाहरण—सूर्य के अष्टक वर्ग में त्रिकोण राशियों में रेखाएं इस प्रकार हैं—

मेष, सिंह, धनु का फल क्रमशः ४, १, ४ है। यहां अल्प फल

१ को सर्वत्र घटाने से उक्त राशियों का त्रिकोण शुद्ध फल क्रमशः ३, ०, ३ हुआ।

वृष, कन्या, मकर क्रमशः २, ६, ४ फल वाली हैं। यहां भी अल्प फल २ को सर्वत्र घटाया तो क्रमशः ०, ४, २ त्रिकोण शुद्ध फल हुआ।

मिथुन, तुला, कुम्भ के क्रमशः ६, ४, ३ फल में से न्यूनतम ३ को घटाया तो क्रमशः ३, १, ०, त्रिकोण शुद्ध फल बचा।

कर्क, वृश्चिक, मीन के क्रमिक फल ४, ३, ७ में से न्यूनतम ३ को सर्वत्र घटाया तो क्रमशः १, ०, ४ त्रिकोण शुद्ध फल हुआ।

इसी पद्धति से चन्द्रादिक के अष्टक वर्गों में भी त्रिकोण शोधन किया जाएगा।

यदि किसी राशि में पहले से ही शून्य होगा तो वहां त्रिकोण शोधन नहीं होगा, इस नियम के अनुसार लग्न मेष, सिंह व धनु का फल लग्नाष्टक में क्रमशः ०, ४, ६, है। अतः यहां ०, ४, ६ फल को ही त्रिकोण शुद्ध फल मान लिया जाएगा।

यदि तीनों राशियों में समान फल हो तो समस्त फल त्याग कर शून्य ग्रहण करें। यह स्थिति गुरु के अष्टक वर्ग में है। वहां मेषादि त्रिकोण राशियों का फल ४, ४, ४ ही है। अतः वहां ० माना जाएगा। शेष स्थानों पर तीनों में से अल्प फल को घटाकर शेष का ही ग्रहण किया जाएगा।

रवि त्रिकोण शोधन

रा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
रे.यो.	४	२	६	४	१	६	४	३	४	४	३	७
त्रि.शो.	३	०	३	१	०	४	१	०	३	२	०	४

चन्द्र त्रिकोण शोधन

रा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
रे.यो.	५	३	५	७	५	२	२	३	४	६	४	३
त्रि.शो.	१	१	३	४	१	०	०	०	०	४	२	०

भौम त्रिकोण शोधन

रा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
रे.यो.	२	१	६	२	३	४	२	३	३	४	४	५
त्रि.शो.	०	०	४	०	१	३	०	१	१	३	२	३

बुध त्रिकोण शोधन

रा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
रे.यो.	५	३	५	४	५	४	५	५	४	५	६	३
त्रि.शो.	१	०	०	१	१	१	०	२	०	२	१	०

गुरु त्रिकोण शोधन

रा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
रे.यो.	४	४	५	७	४	५	५	५	४	१	५	५
त्रि.शो.	०	१	०	२	०	२	०	०	०	०	०	०

शुक्र त्रिकोण शोधन

रा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
रे.यो.	४	६	५	६	६	१	२	५	५	५	५	२
त्रि.शो.	०	५	३	४	२	०	०	३	१	४	३	०

शनि त्रिकोण शोधन

रा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
रे.यो.	२	३	४	६	५	४	१	१	२	४	३	४
त्रि.शो.	०	०	३	५	३	१	०	०	०	१	२	३

लग्न त्रिकोण शोधन

रा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
रे.यो.	०	५	६	३	४	२	४	४	६	६	४	५
त्रि.शो.	०	३	२	०	४	०	०	१	६	४	०	२

एकाधिपत्य शोधन का उदाहरण—त्रिकोण शोधन हो जाने के बाद ही एकाधिपत्य शोधन किया जाता है। एकाधिपत्य शोधन के ८ नियम बताए जा चुके हैं। एकाधिपत्य शोधन जहां नियमतः होता हो तभी किया जाएगा।

भौमाष्टक वर्ग में कन्या राशि ग्रह युक्त है और मिथुन ग्रह रहित है। दोनों का फल त्रिकोण शोधन के उपरान्त क्रमशः ३, ४ है। अल्प को अधिक में से घटाने पर शेष १ मिथुन के नीचे स्थापित किया तथा कन्या का फल ३ यथावत् रहा। (नियम सं० २)

सूर्य के अष्टक वर्ग में कन्या ग्रह युक्त राशि का फल ४ व ग्रह रहित मिथुन का फल ३ है। अतः मिथुन के समस्त फल को त्याग कर वहां ० रक्खा। कन्या का फल यथावत् ४ ही रहा। (नियम सं० २)

इसी प्रकार अन्यत्र समझना चाहिए। सुविधा के लिए इस उदाहरण का एकाधिपत्य शोधन नीचे दिया जा रहा है।

सूर्यैकाधिपत्य शोधन

रा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
ग्र.	ल.	.	.	.	.	र.बु.	बु.शु.	.	.	चं.	.	मं.श.
त्रि.शो.रे.	३	०	३	१	०	४	१	०	३	२	०	४
ए.शो.रे.	३	०	०	१	०	४	१	०	०	२	०	४

चन्द्रैकाधिपत्यशोधन

रा.	मे	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
ग्र.	ल.	.	.	.	.	र.बु.	बु.शु.	.	.	चं.	.	मं.श.
त्रि.शो.रे.	१	१	३	४	१	०	०	०	०	४	२	०
ए.शो.रे.	१	१	३	४	१	०	०	०	०	४	०	०

भौमैकाधिपत्यशोधन

रा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
ग्र.	ल.	.	.	.	.	र.बु.	बु.शु.	.	.	चं.	.	मं.श.
त्रि.शो.रे.	०	०	४	०	१	३	०	१	१	३	२	३
ए.शो.रे.	०	०	१	०	१	३	०	१	०	३	०	३

बुधैकाधिपत्यशोधन

रा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
प्र.	ल.	.	.	.	.	र.बु.	बु.शु.	.	.	चं.	.	मं.श.
त्रि.शो.रे.	१	०	०	१	१	१	०	२	०	२	१	०
ए.शो.रे.	०	०	०	१	१	१	०	१	०	२	०	०

जीवैकाधिपत्यशोधन

रा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
प्र.	ल.	.	.	.	.	र.बु.	बु.शु.	.	.	चं.	.	मं.श.
त्रि.शो.रे.	०	१	०	२	०	२	०	०	०	०	०	०
ए.शो.रे.	०	१	०	२	०	२	०	०	०	०	०	०

शुक्रैकाधिपत्यशोधन

रा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
प्र.	ल.	.	.	.	.	र.बु.	बु.शु.	.	.	चं.	.	मं.श.
त्रि.शो.रे.	०	५	३	४	२	०	०	३	१	४	३	०
ए.शो.रे.	०	५	३	४	२	०	०	३	१	४	०	०

मन्दैकाधिपत्यशोधन

रा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
प्र.	ल.	.	.	.	.	र.बु.	बु.शु.	.	.	चं.	.	मं.श.
त्रि.शो.रे.	०	०	३	५	३	१	०	०	०	१	२	३
ए.शो.रे.	०	०	२	५	३	१	०	०	०	१	१	३

लग्नैकाधिपत्यशोधन

रा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
प्र.	ल.	.	.	.	.	र.बु.	बु.शु.	.	.	चं.	.	मं.श.
त्रि.शो.रे.	०	३	२	०	४	०	०	१	६	४	०	२
ए.शो.रे.	०	३	२	०	४	०	०	१	४	४	०	२

राशि ग्रह गुणक एवं पिण्ड साधन :

> **नगाशेभाब्ध्याशेष्वगगजखगेष्वीशतपना**
> **गुणा मेषाद् बाणेष्विभविषयकाष्ठामुनिशराः।**
> **गुणा भानोः शुद्धं फलमिह पृथग्भाम्बरसदां**
> **गुणैर्गुण्यं पिण्डं कथयति तदैक्यं भखगयोः ॥८६॥**

नगेति। नगाः सप्त, आशा दश, इभा अष्टौ, अब्धयश्चत्वारः आशाः दश, इषवः पंच, अगाः सप्त, गजा अष्टौ, खगा नव, इषवः पंच, ईशा एकादश, तपना द्वादश एते क्रमान्मेषाद् मेषमारभ्य मीनान्तानां गुणा गुणकाः स्युः। बाणाः पंच, इषवः पंच, इभा अष्टौ, विषया पंच, काष्ठा दश, मुनयः सप्त, शरा पंच, एते भानोः सूर्याद् रविमारभ्य शन्यन्तानां सप्तानां ग्रहाणां क्रमशो गुणाः स्युः। इह राशीनां शुद्धं एकाधिपत्यशोध्यावशिष्टं फलं पृथक् पृथक् भानि राशयः, अम्बरसदोग्रहास्तेषां स्वैः स्वैर्गुणैर्गुण्यं, ततस्तेषां गुणनफलानामैक्यं योगः कार्यः। तं भखगयोः राशिग्रहयोः पिण्डं गुणनफलसमूहं कथयति निगदति। श्रीदेवशालोऽत्र—

> 'शोध्यावशिष्टं संस्थाप्य राशिमानेन ताडयेत्।
> ग्रहयुक्तेऽपितद्राशौ ग्रहमानेन वर्धयेत् ॥ १ ॥
> गोसिंहौ दशगुणितौ, वसुभिर्मिथुनालिनौ वणिङ्मेषौ।
> मुनिभिः कन्यामकरौ शरैः शेषाः स्वमानगुणिताः स्युः ॥ २ ॥
> जीवारशुक्रसौम्यानां दशवसुसप्तेन्द्रियैः क्रमाद् गुणयेत्।
> बुधसंख्यैः शेषाणां राशिग्रहवर्गणाः पृथक् कार्याः ॥ ३ ॥
> राशिग्रहगुणकारैः फलानि गुणयेत् पृथक् तैस्तैः।
> बक्रग्रहैर्युक्ते स्याद् गुणयेद् ग्रहसंख्या नित्यम् ॥ ४ ॥
> एवं गुणित्वा संयोज्य, ... ॥ इति

राशियों के गुणक इस प्रकार हैं—

मेष-७, वृष-१०, मिथुन-८, कर्क-४, सिंह-१०, कन्या-५, तुला-७, वृश्चिक-८, धनु-९, मकर-५, कुम्भ-११, मीन-१२।

ग्रहों के गुणक इस प्रकार हैं—

सूर्य-५, चन्द्र-५, मंगल-८, बुध-५, गुरु-१०, शुक्र-७, शनि-५।

पिण्ड साधन के लिए निम्नलिखित क्रियाएं करें—

(i) प्रत्येक ग्रह के अष्टक वर्ग में प्रत्येक राशि के एकाधिपत्य शुद्ध फल को उसी राशि के गुणक से गुणाकर सब का योग करने से 'राशिपिण्ड' होता है।

(ii) जिन राशियों में ग्रह स्थित हों, उन राशियों के फल को ग्रहों के गुणकों से गुणा कर योग करने से 'ग्रह पिण्ड' होता है।

(iii) यदि एक राशि में एक से अधिक ग्रह स्थित हों तो उस राशि के शुद्ध फल को उन ग्रहों के अलग-अलग गुणकों से बारी-बारी से गुणा कर योग फल में सम्मिलित करना चाहिए।

(iv) सूर्यादि ग्रह के राशि पिण्ड व ग्रह पिण्ड को जोड़ने से 'योग-पिण्ड' होगा।

उदाहरण से इसे समझते हैं। सर्व प्रथम राशियों को लिखा। उनके नीचे एकाधिपत्य शुद्ध फल लिखा। उस शुद्ध फल के नीचे तत्तद् राशियों के गुणकों को लिखा। इसके नीचे फल×गुणक का यथास्थान गुणनफल लिखा।

अब इसी चक्र में यथास्थान राशियों के नीचे ग्रहों को स्थापित कर लिया। ग्रहों के नीचे (जहां-जहां वे हैं) के स्थानों में ग्रह गुणक लिखकर पूर्ववत् गुणा कर लिया। प्रस्तुत उदाहरण का सूर्य पिण्ड बना कर देखते हैं—

यहां पर राशि गुणक से एकाधिपत्य शुद्ध रेखा को गुणा करने से राशि पिण्ड और ग्रह गुणक से एकाधिपत्य शुद्ध रेखा को गुणा करने से ग्रह पिण्ड बना है। जिन राशियों में दो ग्रह हैं वहां पर उन दोनों के गुणकों से बारी-बारी से रेखा को गुणित किया गया है। अब सब राशियों के पिण्ड का योग करने से **राशिपिण्ड योग** व ग्रहों के पिण्डों का योग करने से **ग्रहपिण्ड योग** बन जाएगा। इन दोनों योगों का योग करने से सूर्य का योग पिण्ड बनेगा।

राशि पिण्ड—२१+४+२०+७+१०+४८=११० राशिपिण्डयोग
ग्रह पिण्ड—२०+४०+५+७+१०+३२+२०=१३४ ग्रह पिण्ड योग

दोनों का योग—११०+१३४=२४४ सूर्य का योग पिण्ड हुआ।

अब इसी प्रकार शेष चन्द्रादि ग्रहों के अष्टक वर्ग की त्रिकोणैकाधिपत्य शुद्ध रेखाओं को बारी-बारी से ग्रह गुणक व राशि गुणक से गुणाकर पूर्ववत् पिण्ड बनाया तो ये निम्नोक्त पिण्ड बने—

सूर्य पिण्ड का उदाहरण

राशि	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
ए० शो० रेखा	३	०	०	१	०	४	१	०	०	२	०	४
राशि गुणक	७	१०	८	४	१०	५	७	८	६	५	११	१२
राशि पिण्ड	२१	०	०	४	०	२०	७	०	०	१०	०	४८
ग्रह	ल०	—	—	—	—	र० बु०	बु० शु०	—	—	चं०	—	मं० शं०
ग्रह गुणक	—	—	—	—	—	५	५	—	—	५	—	८
						१०	७					५
ग्रह पिण्ड	—	—	—	—	—	२[illegible]	५	—	—	१०	—	३२
						४०	७					२०

चन्द्रमा का राशि पिण्ड ८७ ग्रह पिण्ड २० व योग पिण्ड १०७ है। मंगल का राशि पिण्ड ९२, ग्रह पिण्ड ९९ व याग पिण्ड १९१ हुआ।

बुध का राशिपिण्ड ३७, ग्रहपिण्ड २५ व योगपिण्ड ६२ है।

गुरु का राशिपिण्ड २८, ग्रहपिण्ड ३० व योगपिण्ड ५८ है।

शुक्र का राशिपिण्ड १६३, ग्रहपिण्ड २० व योगपिण्ड १८३ है।

शनि का राशिपिण्ड १२३, ग्रहपिण्ड ५९ व योगपिण्ड १८२ है।

लग्न का राशिपिण्ड १७४, ग्रहपिण्ड ४६, व योगपिण्ड २२० है।

प्रक्रिया को समझाने के लिए यहां पिण्डसाधन के चक्र प्रस्तुत उदाहरण में दिए जा रहे हैं। इनकी सहायता से न्यास प्रकारादि को समझने में काफी सुविधा होगी।

चन्द्रपिण्डसाधन

रा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु.	मीं.
ए.शो.रे.	१	१	३	४	१	०	०	०	०	४	०	०
रा.गु.	७	१०	८	४	१०	५	७	८	९	५	११	१२
रा.पि.	७	१०	२४	१६	१०	२०	.	.	.	.	.	.
ग्र.	ल.	.	.	.	.	र.बु.	बु.शु.	.	.	चं.	.	मं.श.
ग्र.रा.	.	.	.	.	.	५।१०	५।१५	.	.	५	.	८।५
ग्र. पि.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	२०	.	.

राशिपिण्ड=८७, ग्रहपिण्ड=२०, योग : १६८ चन्द्रयोग पिण्ड।

भौमपिण्डसाधन

रा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
त्रि.गो.	०	०	१	०	१	३	०	१	०	३	०	१
रा.गु.	७	१०	८	४	१०	५	७	८	९	५	११	१२
रा.पि.	.	.	८	.	१०	१५	.	९	.	१५	.	३६
ग्र.	ल.	.	.	.	.	र.बु.	बु.शु.	.	.	चं.	.	मं.श.
ग्र. गु.	.	.	.	.	.	४।१०	५।१५	.	.	५	.	८।५
ग्र.पि.	.	.	.	.	.	१५।३०	.	.	.	१५	.	२४।१५

राशिपिण्ड=९२, ग्रहपिण्ड=९९, योग : ९१ भौमयोगपिण्ड।

बुधपिण्डसाधन

रा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु.	मी.
त्रि.शो.	०	०	०	१	१	१	०	१	०	२	०	०
रा.गु.	७	१०	८	४	१०	५	७	८	९	५	११	१२
रा.पि.	.	.	.	४	१०	५	.	८	.	१०	.	.
ग्र. स.		.	.	.	.	र.बु.	बु.शु.	.	.	च.	.	म.श.
ग्र. गु.	.	.	.	.	.	४।१०	५।५	.	.	५	.	८।५
ग्र.पि.	.	.	.	.	.	५।३०	.	.	.	१०	.	.

राशिपिण्ड = ३७, ग्रहपिण्ड = २५, योग = ६२ बुधयोगपिण्ड।

गुरुपिण्डसाधन

रा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
त्रि.शो.	०	१	०	२	०	२	०	०	०	०	०	०
रा.गु.	७	१०	८	४	१०	५	७	८	९	५	११	१२
रा.पि.	.	१०	.	८	.	१०	.	.	.	.	.	.
ग्र. स.		.	.	.	.	र.बु.	बु.शु.	.	.	चं.	.	म.श.
ग्र.गु.	.	.	.	.	.	५।१०	५।५	.	.	५	.	८।५
ग्र.पि.	.	.	.	.	.	१०।२०	.	.	.	.	.	.

राशिपिण्ड = २८, ग्रहपिण्ड = ३०, योग = ५८ गुरुयोगपिण्ड।

शुक्रपिण्डसाधन

रा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
त्रि.शो.	०	५	३	४	२	०	०	३	१	४	०	०
रा.गु.	७	१०	८	४	१०	५	७	८	९	५	११	१२
रा.पि.	.	५०	२४	१६	२०	.	.	२४	९	२०	.	.
ग्र. स.		.	.	.	.	र.बु.	बु.शु.	.	.	चं.	.	म.श.
ग्र.गु.	.	.	.	.	.	५।१०	५।५	.	.	५	.	८।५
ग्र.पि.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	२०	.	.

राशिपिण्ड = १६३ ग्रहपिण्ड = २०, योग = १८३ शुक्रयोगपिण्ड।

शनिपिण्डसाधन

रा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
त्रि.शो.	०	०	२	५	३	१	०	०	०	१	१	३
रा.गु.	७	१०	८	४	१०	५	७	८	९	५	११	१२
रा.पि.	.	.	१६	२०	३०	५	.	.	.	५	११	३६
ग्र.	ल.	.	.	.	.	र.बु.	बृ.शु.	.	.	चं.	.	मं.श.
ग्र.गु.	.	.	.	.	.	५।१०	५।५	.	.	५	.	८।५
ग्र.पि.	.	.	.	.	.	५।१०	.	.	.	५	.	२४।१५

राशिपिण्ड=१२३, ग्रहपिण्ड=५९, योग=१८२ शनियोगपिण्ड।

लग्नपिण्डसाधन

रा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
त्रि.शो.	०	१	२	०	४	०	०	१	४	४	०	२
रा.गु.	७	१०	८	४	१०	५	७	८	९	५	११	१२
रा.पि.	.	३०	१६	.	४०	.	.	८	३६	२०	.	२४
ग्र.	ल.	.	.	.	.	र.बु.	बृ.शु.	.	.	चं.	.	मं.श.
ग्र.गु.	.	.	.	.	.	५।१०	५।५	.	.	५	.	८।५
ग्र.पि.	.	.	.	.	.	.	.	.	.	२०	.	१६।१०

राशिपिण्ड=१७४, ग्रहपिण्ड ४६ योग=२२० लग्नयोगपिण्ड।

पिण्ड साधन से शुभाशुभ फल का विवेक किस प्रकार किया जाएगा इसका निरूपण आगामी अध्यायों में किया जा रहा है।

[इति श्रीमत्पण्डितमुकुन्ददैवज्ञविरचितेऽष्टकवर्गमहानिबन्धे पं०सुरेशमिश्रकृतायां 'मञ्जुलाक्षरा'यां हिन्दी व्याख्यायां गोचराष्टकवर्गाध्यायश्चतुर्थोऽवसितः॥]

५

ग्रहजन्याष्टकवर्गफलाध्याय

सूर्याष्टक वर्ग व पितृकष्ट विचार :

आत्मा प्रभावो जनकस्य चिन्ता
शक्तिः फलं पङ्कजिनीधवस्य ।
हंसाष्टवर्गे गगनाटनेषु
निक्षिप्य राशिर्नवमोऽर्कगस्य ॥१॥
गेहं पितुस्तद्भफलैर्निहन्या-
च्छोध्यपिण्डं भहृतावशेषम् ।
धिष्ण्यं कृशाङ्गो यदि याति तस्मिन्
कालेऽम्बक क्लेशमुदीरयन्ति ॥२॥
तत्कोणगे वा जनितोत तत्सम-
च्छिद्रेषु तातस्य तदत्ययं भवेत् ।
हेलेर्हितेऽह्नावसितेऽथवाऽसृजि
मेज्येक्षणोने पितृहा भवेन्नरः ॥३॥

आत्मेति । गेहमिति । तदिति च । आत्मा शरीरं, प्रभावः प्रतापः; जनकस्य पितुश्चिन्ता स्मृतिः शक्तिः सामर्थ्यं, पंकजिनी कमलिनी तस्या धवः पतिस्तस्यैतत्सर्वं फलं ज्ञेयमिति शेषः । तथा च देवशालः—

'आत्माप्रभावः शक्तिश्च पितृचिन्तारवेर्फलम् ।' इति

गगनेति । गगनाटनेषु सूर्यादिग्रहेषु सलग्नेषु हंसः सूर्यस्तस्याष्टवर्गमष्ट-वर्गांकान् निक्षिप्याऽष्टकवर्गं विरच्येत्यर्थः । ततोऽर्कगस्य राशयो नवमो राशिः स पितुर्जनकस्य गेहं स्थानं ज्ञेयमिति । यथाऽऽह देवशालः—

'आदित्यस्याष्टवर्गाणि निक्षिप्याकाशचारिषु ।
अर्कस्थितस्य नवमो राशिः पितृगृहं स्मृतम् ॥' इति

अथवा शेष तुल्य नक्षत्र से त्रिकोण नक्षत्रों (दसवां व उन्नीसवां) में जब गोचर से शनि आए और साथ मारकेश की दशा हो तो उस समय पिता या पितृ तुल्य किसी अन्य व्यक्ति की मृत्यु होती है। यदि सूर्य से चतुर्थ स्थान में शनि राहु या मंगल स्थित हों और उन पर गुरु, शुक्र की दृष्टि न हो तो मनुष्य स्वयं ही पिता का नाश करने वाला होता है। अर्थात् यह योग पितृघाती या पितृहन्ता योग होता है।

सूर्य से विचारणीय विषयों के संदर्भ में टीकोक्त उद्धरणों के प्रामाण्य पर **देवशाल** व **मंत्रेश्वर** व ग्रन्थकार की एक वाक्यता है। सामान्यतः पितृस्थान दशम स्थान माना गया है किन्तु यहां नवम स्थान मानने में क्या तर्क है? सर्व प्रथम तो प्राचीन ग्रन्थकार सूर्य से नवम स्थान को पितृ स्थान मान रहे हैं। यह बात उक्त उद्धरणों से स्पष्ट है। अष्टक वर्ग प्रकरण को छोड़कर सामान्य फलित विचार करते समय भी हमारे विचार से पिता के सम्बन्ध में नवम भाव की उपेक्षा नहीं की जा सकती है।

लग्न से पंचम स्थान पुत्र का है। अतः पंचम से नवम स्थान आत्म का है। आशय यह है कि पितृभाव व पुत्र भाव में नवम पंचम सम्बन्ध होना चाहिए। इस दृष्टि से देखें तो भाग्य स्थान से पंचम अर्थात् लग्न विचारणीय जातक का आत्म भाव है। तथा आत्म से नवम जातक के पिता का है।

आत्म से सप्तम पति या पत्नी का स्थान होता है तथा इस दृष्टि से दशम स्थान पितृ स्थान होता है किन्तु पति पत्नी सम्बन्ध के अतिरिक्त यदि आत्म सम्बन्ध से पिता का विचार करें तो नवम ही युक्ति संगत प्रतीत होता है। इस विषय में पराशर शास्त्र में क्वचित् अन्तर्विरोध भी झलकता है। सामान्यतः राज्य, आकाश वृत्ति, मान व पिता आदि का विचार दशम भाव से किया जाना चाहिए, यह स्पष्ट निर्देश महर्षि **पराशर** का है; किन्तु साथ ही वे एक स्थान पर लिखते हैं कि भाग्य स्थान से द्वितीय अथवा चतुर्थ स्थान में मंगल हो व नवमेश नीचराशिस्थ बैठ जाए तो पिता निर्धन होता है। (देखें, पराशर होरा अ० २१ श्लोक ४) इस सम्पूर्ण अध्याय में पिता का विचार नवम भाव को केन्द्र बिन्दु बनाकर ही किया गया है। तथापि उत्तर भारतीय परम्परा दशम को

व दक्षिण भारतीय परम्परा नवम को पितृ स्थान मानती आयी है। इस विषय में 'देवकेरलम्' ग्रन्थ के कुछ प्रमाण प्रस्तुत हैं—

'नवमेन तदीशेन स्वपिता जन्मभं विदुः।
'कुग्रामवासी स्वपिता नीचांशे भाग्यनायके।'

इसके अतिरिक्त उक्त ग्रन्थ में तृतीय स्थान को श्वसुर स्थान (पत्नी का पिता) माना गया है। इससे भी आत्म स्थान से नवम पितृ स्थान सिद्ध होता है। इस विषय में प्रकृत ग्रन्थकार का स्पष्ट मत है कि मुख्यतः नवम स्थान व सूर्य से नवम स्थान से पिता का विचार करना चाहिए। वे भावमंजरी ग्रन्थ में नवम भाव के कारकत्व में तो पिता का उल्लेख करते हैं। जबकि दशम भाव के संदर्भ में पिता का नाम भी नहीं लेते।

स्वामीगुरुर्मातुलभाग्यताताःश्च मे विचिन्त्या॥
(भाव मंजरी, कारक प्रकरण, श्लोक २४)

साथ ही इसी प्रकरण का श्लोक २७ भी देखें। इससे उत्तर कालामृतकार भी सर्वथा सहमत है (देखें, कारक खण्ड)।

अब प्रकृत विषय पर आ जाएं। उक्त विषय को अपने पूर्वोक्त उदाहरण के संदर्भ में समझते हैं। वहां जन्म समय मेष लग्न है व सूर्य कन्या राशि में स्थित है। कन्या से नवम भाव में वृष राशि है। सूर्याष्टक वर्ग में वृष राशि को २ रेखाएं मिली हैं। सूर्य का योग पिण्ड २४४ है। इन्हें परस्पर गुणा किया तो गुणनफल २४४×२=४८८ हुआ। इसे २७ से भाग दिया तो ४८८÷२७=लब्धि १८, शेष २। यहां शेष ही उपयोगी है। अश्विनी से गिनने पर दूसरा (शेष तुल्य) नक्षत्र भरणी हुआ। निष्कर्ष यह निकला कि भरणी नक्षत्र में जब गोचर से शनि जाएगा तो पिता को कष्ट होगा। इसके त्रिकोण नक्षत्र पूर्वा फाल्गुनी व पूर्वाषाढ़ नक्षत्र में भी शनि का गोचर पिता या पिता समान व्यक्ति को कष्टकारक होगा। त्रिकोण नक्षत्र के विषय में बता चुके हैं कि प्रत्येक नक्षत्र से दसवां व उन्नीसवां नक्षत्र त्रिकोण होता है। सुविधा के लिए यहां नक्षत्रों के त्रिकोण लिख रहे हैं—

नक्षत्र	त्रिकोण नक्षत्र	नक्षत्र	त्रिकोण नक्षत्र
अश्विनी	मघा/मूल	स्वाती	शत०/आर्द्रा
भरणी	पू० फा०/पू० षा०	विशाखा	पू० भा०/पुन०
कृत्तिका	उ० फा०/उ० षा०	अनुराधा	उ० भा०/पुष्य
रोहिणी	हस्त/श्रवण	ज्येष्ठा	रेवती/आश्लेषा
मृगशिरा	चित्रा/धनि०	मूल	अश्विनी/मघा
आर्द्रा	स्वाती/शत०	पू० षा०	भरणी/पू० फा०
पुनर्वसु	विशाखा/पू० भा०	उ० षा०	कृत्तिका/उ० फा०
पुष्य	अनु०/उ० भा०	श्रवण	रोहिणी/हस्त
आश्लेषा	ज्येष्ठा/रेवती	धनिष्ठा	मृगशिरा/चित्रा
मघा	मूल/अश्विनी	शतभिषा	आर्द्रा/स्वाती
पू० फा०	पू० षा०/भरणी	पू० भा०	पुनर्वसु/विशाखा
उ० फा०	उ० षा०/कृत्तिका	उ० भा०	पुष्य/अनु०
हस्त	श्रवण/रोहिणी	रेवती	आश्लेषा/ज्येष्ठा
चित्रा	धनिष्ठा/मृगशिरा		

पिता का अन्य विचार :

मूर्त्तेर्मृगाङ्कान्नवमालयाचिते
मार्त्तण्डजे यद्यवलोकितान्विते।
काले तदा तज्जनकाम्बिकात्ययं
दायानुकूलेन सुधीः प्रयोजयेत् ॥४॥

अनेहसा बोधयतः कपांशभे-
शिशुर्दशायां जनकक्षयः स्मृतः।
यदेदृशायां हिबुकालयेशितुः
पितुः समानस्य नुरत्ययं किमु ॥५॥

मूर्त्तेरिति। अनेहसि च। मूर्त्तेर्लग्नाद् मृगाङ्काच्चन्द्राद् वा, नवमालयाचिते नवमस्थानगते मार्त्तण्डजे शनौ, अथ पापैर्लोकितान्विते दृष्टयुक्ते यदि चेत्तदा काले दायानुकूलेन दशानुकूलेनानेहसा कालेन च सुधीः पण्डितः तस्य जातस्य जनकाम्बिकयोर्मातापित्रोरत्ययं मृत्युं प्रयोजयेत् कथयेत् तथा च देवशालः—

लग्नाच्चन्द्राद् गुरुस्थानं याते सूर्यसुते यदि ।
पित्रोर्नाशं तदा काले वीक्षिते पापसंयुते ।।
दशानुकूलकालेन योजयेत्कालवित्तमः ।।' इति

वेति । वा, उदयतो लग्नात् कपश्चतुर्थेशस्तस्यांशभे नवांशराशी तयोरीशितुः स्वामिनो दशायां दाये जनकस्य पितुः क्षयो नाशः स्मृतो ज्ञेय । किमु अथवा हिबुकालयेशितुश्चतुर्थस्वामिनो दशायां दाये नुर्मनुष्यस्य पितुर्जनकस्य पितुः समानस्य पुरुषस्य वा अत्यय मृत्यु वदेत् । तथा च देवशालः—

'लग्नात्सुखेशराशीशदशायां च पितृक्षयः ।
सुखनाथदशायां च बहुप्राप्तेश्च संशयः ।।' इति

लग्न एवं चन्द्रमा इन दोनों में जो अधिक बली हो, उससे नवम स्थान में शनि स्थित हो और उस पर पाप ग्रह की दृष्टि हो या पाप ग्रह से उसकी युति हो तो साथ में मारकेश की दशा आदि (पिता की) का विचार कर उक्त परिस्थिति में माता पिता की मृत्यु कहनी चाहिए।

लग्न से चतुर्थ स्थान का स्वामी जिस राशि या जिस नवांश में हो उस राशीश व नवांशेश की दशा में या चतुर्थेश की दशा में पिता या पितृतुल्य व्यक्ति का मरण होता है।

पिता का काम पुत्र द्वारा पूर्ण होने का योग :

जातो नरो योऽम्बकसम्भवाष्टमे
किं वा तदीशेऽपि कलेवरोपगे।
कार्याणि तेनैव पितुः प्रकारये-
न्नो संशयोऽत्राम्बुप आयलग्नगे ।।६।।
शीतांशुलग्नाच्च विशेषतोऽम्बक-
निकेतयुक्ते सवितुर्वंशानुगः ।
तातस्य कार्यस्य हि कर्म्मशेषकं
समाप्यते तेन शरीरजन्मना ।।७।।

जात इति । शीतांश्विति । यो नरो मनुष्योऽम्बकसम्भवाष्टमे पितृजन्माष्टमे पितुर्जन्मराशेर्लग्नराशेर्वाऽष्टमे राशौ लग्ने वा जात इत्यर्थः। अथवा तदीशे पितुर्जन्मलग्नराशीशे लग्नेशे वा तस्य जातस्य कलेवरोपगे लग्नस्थिते सत्यपि तेनैव पितुर्यानि कार्याणि अवशिष्टानि तानि प्रकारयेद्विदध्यात्। अत्र संशयो न कर्त्तव्यः। तथा च देवशालः—

'पितुर्जन्माष्टमे जातस्तदीशे लग्नगेऽपि वा ।
तेनैव पितृकार्याणि कारयेन्नात्र संशयः ॥' इति

अथेति । अत्रास्मिन् प्रकरणेऽम्बुपश्चतुर्थेश आयलग्नगे लग्नादेकादश-स्थानगते विशेषतः शीतांशुलग्नाच्चन्द्रराशेरम्बकनिकेतयुक्ते दशमस्थानस्थिते । चतुर्थेश इति शेषः । तदा जातः सवितुःपितुर्वशानुगो वश्योऽनुचरश्च । तेन शरीर-जन्मना पुत्रेण तातस्य पितुः कार्यस्य कर्तव्यस्य कर्मशेषकं कर्मावशिष्ट समाप्यते । तथा च देवशास्त्रः—

'सुखेशे लाभलग्नस्थे चन्द्र लग्नाद्विशेषतः ।
पितृगृहसमायुक्ते जातः पितृवशानुगः ॥' इति

पिता के जन्म समय चन्द्रमा जिस राशि में हो अर्थात् पिता की जन्म राशि या पिता के जन्म लग्न से अष्टम राशि या अष्टम लग्न में किसी का जन्म हो, अर्थात् जिसकी जन्मराशि पिता की जन्मराशि से अष्टम हो व जिसका जन्म लग्न पिता के जन्म लग्न से अष्टम हो तो वह पिता द्वारा प्रारम्भ किए गए असमापित कार्यों को पिता के बाद स्वयं पूरा करता है।

अथवा पिता की जन्म राशि का स्वामी या पिता का जन्म लग्नेश जब पुत्र के जन्म लग्न में हो तो भी वह पिता के शेष कर्त्तव्यों को पूरा करता है ।

यदि चतुर्थेश लाभ स्थान में हो विशेषतया चन्द्रराशि से दशम स्थान में चतुर्थेश हो तो वह व्यक्ति पिता के वश में रहता है। तथा वह पिता के शेष कामों को उनका अनुगामी बनकर पूरा करता है।

पिता से धन प्राप्ति के योग :

जातः पितुर्जन्मतृतीयराशौ
स्वकीयतातस्य धनाश्रितः सः ।
पितुर्वियद्भे पितृतुल्यकर्म-
गुणान्वितस्तद्भवनेऽङ्गगे चेत् ॥८॥
श्रेष्ठस्तनूजो जनकात्तदानीं
यः शून्यमासो मिहिराष्टवर्गे ।
संवत्सराख्यं प्रति तत्र मासे
त्यजेद्विवाहं व्यवहारपूर्वम् ॥९॥

जात इति। श्रेष्ठ इति च। पितुर्जनकस्य जन्मनो राशेर्जन्मलग्नाद् वा यस्तृतीयराशिस्तस्मिन् यो नरो जात उत्पन्नः स स्वकीय तातस्य धनाश्रितो धन-भोक्ता भवेदिति शेषः। पितुस्तातस्य वियद्भे दशमराशौ यस्य बालस्य जन्म भवेत्; सः पितृतुल्यकर्मगुणान्वितो भवेत्। तथा च देवशालः—

'पितृजन्मतृतीयर्क्षे जातः पितृधनाश्रयः।
पितृकर्मगृहे जातः पितृकर्मगुणान्वितः॥' इति

तद्भवण इति। तद्भवणे पितुर्जन्मराशीशे लग्नेशे वा तस्यजातस्यांगगे लग्नगे चेद्यदि तदानीं जातस्तनूजः पुत्रो जनकात्पितुः श्रेष्ठो भवेदिति शेषः। तथा च देवशालः—

तदीशे लग्नसंस्थेऽपि पितृश्रेष्ठो भवेत्सुतः॥ इति

य इति। मिहिराष्टवर्गे सूर्याष्टवर्गे यः शून्यमासो रेखाभावमासोऽर्थात् सूर्याष्टकवर्गे यस्मिन्राशौ रेखाभावस्तद्राशितुल्यमास इत्यर्थः। संवत्सराब्दं प्रति प्रतिवर्षं तत्र तस्मिन् मासे विवाहं व्यवहारपूर्वं विवाहादि त्यजेद् वर्जयेत्। तथा च देवशालः—

'सूर्याष्टवर्गे यः शून्यो मासः सवंत्सरं प्रति।
विवाहव्यवहारादि तस्मिन्मासि विवर्जयेत्॥' इति

जिस व्यक्ति का जन्म अपने पिता की जन्म राशि या जन्म लग्न से तृतीय राशि या लग्न में हुआ हो तो वह अपने पिता के धन का भोग करता है।

पिता की राशि (या लग्न) से दशम राशि में जिसका जन्म हो वह अपने पिता के समान कार्य करता है।

पिता का जन्म राशीश जब जन्म लग्न में हो तो व्यक्ति अपने पिता से श्रेष्ठ होता है।

सूर्याष्टक वर्ग में जिस राशि में शून्य हो प्रति वर्ष उस मास में विवाहादि शुभकृत्य नहीं करने चाहिएं।

सूर्याष्टक वर्ग व शरीर कष्ट विचार :

खे भास्यकायासविधायकं फलं
शान्त्यैवमादि प्रतिमासमाचरेत्।
संशोध्यपिण्डं तपनस्य विन्दुक-
मानेन हन्याद्रविभिर्विभाज्येत्॥१०॥

शेषक्षंमाप्ते मिहिरेऽथवा ततः
कोणोपगे तातमृतिं विनिर्दिशेत्।
एवं समेषां गगनाधिवासिनां
फलं मनुष्यो मतिमान्विचिन्तयेत् ॥११॥

ख इति। शेषेति च। खे शून्ये मासि रेखाभावसंख्याके मास इत्यर्थः। अर्क दुःखमायासः परिश्रमः, विवादः कलह एवमादि फलं ज्ञात्वा प्रतिमासं मासंमासं प्रति, आचरेत् कुर्यात्। तथा च देवशालः—

कलहायासदुःखानि शून्यमासे भवन्ति च।
एवमादि फलं ज्ञात्वा मासं प्रति समाचरेत्।

संशोध्येति। तपनस्य सूर्यस्य यत्संशोध्यपिण्डं स्पष्टपिण्डं बिन्दुकमानेन सूर्याष्टवर्गे यन्नवमं स्थानं तत्र यावान्बिन्दुयोगस्तेनहन्यात् गुण्येत्। ततो रविभि-र्द्वादशभिर्विभाजयेद् हरेत्। शेषर्क्षं शेषतुल्यराशिमाप्ते मिहिरेरवौ, अथवा ततस्तस्माच्छेषराशितः कोणोपगेरवौ सति तदा तातस्य पितुर्मृतिं मृत्युं विनिर्दिशेत्। एवं पूर्वोक्तप्रकारेण समेषां सर्वेषां गगनाधिवासिनां ग्रहाणां मतिमान् मनुष्यः फलं विचिन्तयेत् तथा च देवशालः—

संशोध्यपिण्डं सूर्यस्त रन्ध्रमानेन वर्धयेत्।
द्वादशादिहृताच्छेषं मेषादि गणयेत्पुनः॥
तस्मिन्मासे मृतिं विद्यात्त्रिकोणगतेऽपि वः।
सूर्यादिकल्पयेत्वन्ये परतो भास्करे मृतिः॥
विशेषं भावसूत्रेऽद्ये पितुर्यायादिकं दिशेत्॥ इति

सूर्याष्टक वर्ग में जिस राशि में ० फल हो, उस राशि के मास में, अर्थात् उस राशि के संक्रान्ति मास में दुःख, परिश्रम व कलह होती है। इस प्रकार मासिक फलादेश के शुभाशुभ का विवेक कर लेना चाहिए।

सूर्याष्टक वर्ग में सूर्य की अधिष्ठित राशि से जो अष्टम राशि हो, उस राशि के बिन्दु योग (अशुभ फल) से सूर्य के शुद्ध योग पिण्ड को गुणा करना चाहिए। इस गुणनफल को १२ से भाग देकर जो शेष बचे, उस शेष तुल्य मेषादि राशि के संक्रान्ति मास में अथवा उस राशि से नवम व पंचम राशि के मास में मनुष्य की मृत्यु हो जाती है। इसी प्रकार अन्य ग्रहों से भी विचार करना चाहिए।

सूर्याष्टक वर्ग के अष्टमराशिस्थ बिन्दुमान से फल जानने का प्रकार देवशाल ने भी बताया है। जैसा कि टीकोक्त उद्धरण में स्पष्ट है। यही बात मंत्रेश्वर भी अपनी फलदीपिका में कहते हैं—

"संशोध्यपिण्डं सूर्यस्य रन्ध्रमानेन वर्धयेत्'''।"

(अष्टकवर्गफलाध्याय श्लोक ५-६)

यहां एक शंका है। सीधा अर्थ है कि सूर्य के शोध्यपिण्ड को अष्टम के मान से गुणा करना चाहिए। अर्थात् सूर्याधिष्ठित राशि से अष्टमराशि के मान से वर्धित करना चाहिए इत्यादि।

फलदीपिका के टीकाकार प० गोपेश कुमार ओझा ने इसका अर्थ लिखा है कि शोध्य पिण्ड में ८ जोड़कर आगे की क्रिया करनी चाहिए। यह अर्थ भ्रामक है।

वृद्धि शब्द का गणितीय अर्थ गुणा ही होता है। यही अर्थ उक्त उद्धरण से पूर्ववर्ती श्लोकों में आए 'वर्धयेत्' पद का पं० ओझा ने भी किया है। मूल ग्रन्थकार पं० मुकुन्द कृत व शिक्षा मंत्रालय भारत सरकार द्वारा प्रकाशित **ज्योतिष शब्द कोष** में भी वृद्धि का अर्थ गुणा किया गया है। देखें (**गणनादि वर्ग पृ० ६०**) किन्तु इस श्लोक का अर्थ करने में पं० ओझा के भ्रम का कारण समझ में नहीं आता है। अस्तु अष्टमभावस्थ मान से गुणा करना चाहिए, यही अर्थ प्रशस्त है।

दूसरी शंका यह है कि सूर्य से अष्टम भाव के मान का अर्थ तत्रस्थ रेखाएं माना जाए या तत्रस्थ बिन्दुयोग। यह विषय फलदीपिका या देवशाल जातक के मूल उद्धरण से स्पष्ट प्रतिभासित नहीं होता। किन्तु ग्रन्थकार ने अपने मूल श्लोक में स्पष्ट रूप से बिन्दु शब्द का ही प्रयोग किया है। यहां बिन्दु के ही ग्रहण का हेतु स्पष्ट नहीं है। अपने पूर्व प्रसक्त उदाहरण से इसे समझते हैं—

कन्या राशिस्थ सूर्य से नवम राशि वृषभ में रेखाएं २ व बिन्दु ६ हैं। सूर्य का शोध्य पिण्ड २४४ है। इसे बिन्दुमान से गुणा किया २४४ × ६ = १४६४ गुणनफल को १२ से भाग दिया— १४६४ ÷ १२ = लब्धि १२२, शेष ०। यहां शून्य मीन राशि मानी। मीन राशि में या इससे त्रिकोण कर्क व वृश्चिक राशियों में जब शनि आएगा तो उदाहरण से सम्बद्ध जातक के पिता को कष्ट होगा। यदि पिता न हों तो पितृ तुल्य व्यक्ति को कष्ट होगा।

इसी प्रकार चन्द्रमा से माता का, मंगल से भाई का, बुध से बन्धु बान्धव, बृहस्पति से पुत्र, शुक्र से पत्नी व शनि से आजीविका का विचार इसी प्रकार से करना चाहिए। किस ग्रह से क्या विशेष विचार

किया जाता है इसका विस्तृत विवेचन आगे यथा प्रसंग किया जा रहा है।

चन्द्राष्टक वर्ग के विचारणीय विषय :

> **प्रसादधीग्राममनांसि माते-**
> **न्दुनेन्दुतोऽम्बाभवनेऽम्बिकायाः ।**
> **स्मृतिर्विधेया शशिनोऽष्टवर्गं**
> **ग्रहेषु निक्षिप्य वियद्भगेऽब्जे ॥१२॥**
> **सन्त्यज्य तद्भं शुभकर्म्म कारये-**
> **च्चन्द्राष्टमेड्भक्षितये विशेषतः ।**
> **आयासमाभीलमुतोपतापकं**
> **लभेत मर्त्योऽत्र न विभ्रमो भवेत् ॥१३॥**

प्रसादेति । सन्त्यज्येति च । प्रसादः प्रसन्नता, धीर्बुद्धिः, ग्रामः प्रसिद्धः, मनश्चित्तं, माता एतत्सर्वं इन्दुना चन्द्रेण चिन्तयेदिति । इन्दुतश्चन्द्रादम्बाभवने चतुर्थे मातुः स्मृतिश्चिन्ता विधेया कार्या । तथा च देवशालजातके—

'मनोबुद्धिप्रसादं च मातृचिन्ता मृगांकतः ।' इति

शशिन इति । ग्रहेषु सूर्यादिषु सलग्नेषु शशिनश्चन्द्रस्याष्टकवर्गं निक्षिप्य, अब्जे चन्द्रे वियद्भगते शून्यराशिगते सति तदा तद्भं तं राशिं तद्राशिनक्षत्रं वा संत्यज्य वर्जयित्वा शुभकर्म विवाहादिशुभकृत्यं कारयेत् । विशेषतश्चन्द्रराशितो योऽष्टमराशिस्तस्यस्वामिनो भक्षितये नक्षत्रत्रये यदि शुभकर्म कुर्यात्तदा मर्त्यो मनुष्यः, आयासं परिश्रमं आभीलं दुःखं, उतायवा उपतापं रोगं, लभेत् । अत्र विभ्रमः सन्देहो न भवेत् । तथा च देवशालः—

> 'चन्द्राष्टवर्गं निक्षिप्य शून्यराशिगते विधौ ।
> तन्नक्षत्रं परित्यज्य शुभकर्माणि कारयेत् ॥
> चन्द्राष्टमेश नक्षत्रत्रितयेषु विशेषतः ।
> आयास व्याधिदुःखादि लभते नात्र संशयः ॥' इति

प्रसन्नता, बुद्धि, ग्राम, मन, माता ये सब विषय चन्द्रमा से देखे जाते हैं।

चन्द्राधिष्ठित राशि से चतुर्थ स्थान से माता का विचार किया जाता है।

लग्नसहित सूर्यादि ग्रहों में चन्द्राष्टक वर्ग के अंकों का प्रस्ताराष्टक बनाकर देखना चाहिए कि किस राशि में शून्य है अर्थात् किस राशि में रेखाओं का अभाव है। उसी रेखा रहित राशि में जब गोचर से चन्द्रमा आएगा तब तक अथवा उस राशि से सम्बद्ध नक्षत्रों में विवाहादि कृत्य नहीं करने चाहिएं।

विशेषत: चन्द्रमा की अधिष्ठित राशि से अष्टम जो राशि है उस राशि के स्वामी को जो एक या दो राशियां हों, उन राशियों के नक्षत्रों में यदि शुभ कार्य किए जाएंगे तो परिश्रम, दु:ख व रोगादि कुफल होते हैं। इस विषय में संदेह नहीं करना चाहिए।

यहां ये निर्देश दिए गए हैं—

(i) शून्यफल वाली राशि में चन्द्रमा आए तो उस समय शुभ कृत्यों को वर्जित करे।
अथवा उस राशि से सम्बन्धित तीनों नक्षत्रों को पूर्ण वर्जित करे, चाहे चन्द्रमा उस रेखा रहित राशि को छोड़ भी क्यों न दे।
यथा माना मेष राशि रेखा रहित है। अत: आप चाहें तो मेष राशि में चन्द्रमा के सम्पूर्ण भोगकाल को वर्जित करें अथवा अश्विनी, भरणी व कृत्तिका इन तीनों सम्पूर्ण नक्षत्रों को ही वर्जित करें।

(ii) चन्द्रमा की अधिष्ठित राशि से अष्टम राशि का जो ग्रह स्वामी हो उस स्वामी ग्रह के नक्षत्रों को शुभ कृत्यों में वर्जित करना चाहिए। यथा किसी का मंगल चन्द्रमा से अष्टमेश यदि है तो मेष व वृश्चिक इन दोनों राशियों से सम्बन्धित नक्षत्रों (अश्विनी, भरणी, व कृत्तिका, विशाखा, अनुराधा व ज्येष्ठा) को सम्पूर्ण वर्जित करें।

मातृ कष्टकारक समय का ज्ञान :

शीतांशुत: सौख्यफलैर्विनिघ्न :
पिण्डो भभक्ते परिशेषमृक्षम्।
प्राप्ते पतङ्गात्मभवे जनित्री-
हानिं तत: कोणगते वदेहा ॥१४॥

शीतांशुत इति । शीतांशुतश्चन्द्राधिष्ठितराशितो यत्सौख्यं चतुर्थं भवनं तस्य फलै रेखाभिः पिण्डश्चन्द्रस्य शोध्यपिण्डो विनिघ्नो गुणितः कार्यः । ततोभः सप्तविंशत्या भक्ते सति तदा यत्परिशेषं तद्दसं नक्षत्रं प्राप्ते वा ततः शेषतुल्यनक्षत्रात् कोणगते वयमेकोनविंशति नक्षत्रं प्राप्ते पतंगात्मभवे शनौ तदा जनित्री माता तस्या हानिं क्षतिं वदेत् । तथा च देवलाल:—

'चन्द्रात्सुखफलैः पिण्डं वर्धयेच्छोध्यपूर्ववत् ।
शेषमृक्षं शनौ याते मातृहानिं विनिर्दिशेत् ॥
तत्त्रिकोणेषु वा ।' इति

जन्म समय में चन्द्रमा जिस राशि में हो, उस राशि से अर्थात् मनुष्य की जन्म राशि से चतुर्थ राशि के रेखायोग को ले लीजिए। उस रेखा योग को चन्द्रमा के शुद्ध पिण्ड से गुणा कीजिए।

इस गुणनफल में २७ से भाग देकर शेष संख्यक नक्षत्र में अथवा उस नक्षत्र से त्रिकोण नक्षत्र में जब गोचर से शनि आए तो माता की मृत्यु का समय जानना चाहिए।

आशय यह है कि माता की दशा आदि अशुभ हो और आयु खण्ड पूर्ण होने वाला हो तथा साथ में उक्त स्थिति भी बन रही हो तो निश्चय से मृत्यु जाननी चाहिए अन्यथा रोगादि जन्य कष्ट ही होंगे। अपने पूर्वोक्त उदाहरण में चन्द्रमा मकर राशि में स्थित है। इससे चतुर्थ राशि मेष है। चन्द्राष्टक वर्ग में वहां फल ५ है। चन्द्रमा के शुद्ध पिण्ड १०७×५=५३५ गुणनफल को २७ से भाग दिया तो ५३५÷२७= लब्ध १९ व शेष २२ है। अश्विनी से गिनने पर २२वां नक्षत्र श्रवण है। अतः श्रवण नक्षत्र में या श्रवण से त्रिकोण रेवती व हस्त नक्षत्रों में शनि का गोचर होने पर माता को कष्ट होगा।

दूसरा प्रकार :

किं कल्पयेत्कश्चन सन् दशाया-
च्छिद्रेषु मातुर्मरणं नराणाम् ।
ग्लौलग्नतः केऽसुजि भास्करौ वा
तत्स्थानभाभ्यां परिदृश्यते वा ॥१५॥
अनेहसं प्राक्कथितं समादिशे-
द्वसत्कमवे तस्य मृतिर्मता स्वयम् ।

उतेह देशान्तरकेतिरीरिते-
न्दुतोऽम्बुरंध्रेशलवत्रिकोणभे ॥१६॥
प्राप्ते यदा भास्वति तत्रमासे-
ऽम्बाया वियोगं निगदेत्कृतीन्द्रः ।
तद्वद्विलग्नात्सवितुर्वियोगं
मातुःस्मृतो तातवदर्कपूर्वम् ॥१७॥

किमिति । अनेहसमिति । प्राप्त इति च । किमथवा दशायादायस्य मारकेशदशाया इत्यर्थः । छिद्रेषु दोषेषु कश्चन सन् पण्डितो नराणां मातुः, मरणं कल्पयेत् । ग्लौलग्नतश्चन्द्रलग्नराशितः के चतुर्थस्थानेऽसृजिभौमे वा भास्करी शनी, वा तत्स्थानं चन्द्राच्चतुर्थस्थानमान्यां मंगलमन्दाभ्यां, परिदृश्यते वीक्ष्यते तदा प्राक् कथितं पूर्वोक्त मनेहसं कालं समादिशेत्कथयेत् । तस्य मातृमरणस्यासम्भवेऽभावे तस्य स्वयमात्मना मृतिर्मृत्युर्मतोज्ञेयः । उतायवा देशान्तरकेतिविषयान्तरे गतिर्गमनं कथितम् । तथा च देवशालः—

'...............कश्चिद्दशाच्छिद्रेषु कल्पयेत् ।
चन्द्राल्लग्नात्सुखस्थाने भौमे वा भास्करात्मजे ।
दृश्यते वा तयोःस्थानं पूर्वोक्ते कालसंगते ।
तदभावे स्वयं मृत्युर्देशान्तरगतिश्च वा ॥' इति

इन्दुतइति । इन्दुतश्चन्द्रात् अम्बु चतुर्थो रन्ध्रमष्टमं तयोरीशौ स्वामिनौ यस्मिन्नवांशे वर्तते ताभ्यां त्रिकोणभे पंचमनवमगृहे यदा भास्वति सूर्ये प्राप्ते तत्र तस्मिन्मासेऽम्बायाः मातुर्वियोगं विच्छेदं मरणमित्यर्थः । कृतीन्द्रः पण्डितवरः निगदेत्कथयेत् । तद्वतादृश एवं विलग्नाज्जन्मलग्नात्सुखाष्टमेशांशत्रिकोणे प्राप्ते सूर्ये पितुर्वियोगं वदेत् । मातुर्जनन्याः स्मृतौ चिन्तायां तातवत् पितृवद् अर्कपूर्वं सूर्यादि प्रकल्पयेत् । तथा च देवशालः—

'चन्द्रात्सुखाष्टमेशांशे त्रिकोणे दिवसाधिपे ।
मात्रा वियोगमस्तीति निर्दिशेल्लग्नतः पितुः ॥
पितृवन्मातृचिन्तायां भास्करादि प्रकल्पयेत् ॥' इति

अथवा कुछ विद्वान् दशा के दोषों से अर्थात् मारकेशादि ग्रहों की दशा में माता का निधन बताते हैं ।

यदि चन्द्र लग्न में या जन्म लग्न में चतुर्थ स्थान में मंगल या शनि हो या इस स्थान पर शनि व मंगल की दृष्टि हो तो भी पूर्वोक्त समय में माता की मृत्यु कहनी चाहिए ।

यदि उक्त समय में माता का मरण असम्भव हो अर्थात् माता न हो तो स्वयं उस व्यक्ति की मृत्यु होती है या उसका विदेश गमन होता है।

चन्द्रमा की अधिष्ठित राशि से चतुर्थ तथा अष्टम स्थान का स्वामी जिस राशि के नवांश में हो, उस नवांश राशि से त्रिकोण राशियों में जब गोचर से सूर्य आए तब उस मास में माता का वियोग कहना चाहिए।

लग्न से चतुर्थ व अष्टम स्थान के स्वामी की नवांश राशि से त्रिकोण राशियों में जब गोचर से सूर्य आए तो पिता का वियोग कहना चाहिए।

माता का विचार करने में पिता के विचार की तरह सूर्यादि ग्रहों से विचार करना चाहिए। किस ग्रह से किस सम्बन्धी का विचार किया जाएगा, इस विषय में श्लोक ११ की व्याख्या में हम पीछे बता चुके हैं।

भौमाष्टकवर्ग के विचारणीय विषय :

सञ्चिन्तयेत्सोदरसत्त्वधैर्य्य-
पराक्रमक्षोणिगुणान् कुजेन।
ततस्तृतीयेऽपि सहोत्थचिन्ता
खगेषु निक्षिप्य कुजाष्टवर्गम् ॥१८॥
पृथ्वीसुतस्थस्य सहोत्थराशि-
र्यो भ्रातृभावः स मतः सुधीन्द्रैः।
पिण्डं फलैस्तत्रगतैर्निहत्य
विभज्यधिष्ण्यं रवशेषधिष्ण्ये ॥१९॥
याते यदा सत्ततुरङ्गसूनौ
सहोत्थहानिं कथयेत्कुलीन्द्रः।
कृत्वा त्रिकोणर्क्षविशोधनाख्यं
यस्मिन्नरघाणि फलानि तत्र ॥२०॥
विचिन्तयेद्भूभवनार्यमार्या
व्ययासतस्तत्क्षतिमाहुराद्याः।
चेन्मुक्तवीर्य्योऽङ्गभवो धरित्र्याः
सोत्थास्तदानीं बहुजीविनः स्युः ॥२१॥

मंगल के शोध्यपिण्ड को मंगल से तृतीय स्थान (भ्रातृ स्थान) की रेखाओं से गुणाकर २७ से भाग देना चाहिए। तब जो शेष बचे उसकी संख्या के तुल्य नक्षत्र में जब गोचर से शनि आए वह भ्राता की मृत्यु का समय जानना चाहिए।

मंगल के अष्टक वर्ग में एकाधिपत्य शोधन से रहित केवल त्रिकोण शुद्ध रेखाओं के आधार पर देखना चाहिए कि किस राशि में त्रिकोण शुद्ध रेखाएं अधिक हैं। उन अधिक त्रिकोण शुद्ध रेखा युक्त राशियों में जब-जब मंगल का गोचर हो तब भूमि, घर, स्त्री आदि का अधिक सुख कहना चाहिए। जिस जिस राशि में कम रेखाएं हों उनमें मंगल का गोचर होने पर भूमि, स्त्री व घर आदि की हानि कहनी चाहिए। जिसके जन्म समय मंगल निर्बल हो, उसके भाई प्रायः सुखी व दीर्घायु होते हैं।

यहां मंगल की केवल त्रिकोण शुद्ध रेखाओं से फल कहने का निर्देश दिया गया है। एकाधिपत्य शोधन युक्त रेखाओं से किस प्रकार हानि लाभ का विचार करना है यह आगे के श्लोकों में बताया जा रहा है।

वैद्यनाथ ने मंगल के अष्टक वर्ग से भाइयों की संख्या जानने का प्रकार भी बताया है।

> भूमिजे सहजस्थाने यावतां विद्यते फलम्।
> शत्रुनीचगृहं त्यक्त्वा तावन्तः सहजाः स्मृताः॥

(जातक पारिजात, अ० १२, श्लोक २०)

'मंगल के अष्टक वर्ग में मंगल से तृतीय स्थान में जितने ग्रह शुभ रेखा देने वाले हों, उतनी ही संख्या भाई बहिनों की समझनी चाहिए। किन्तु कोई ग्रह रेखाप्रद होने पर भी शत्रुराशि या नीचराशि में है तो उसको छोड़कर शेष रेखाप्रद ग्रहों से उक्त प्रकार से भ्रातृ संख्या का विचार करना चाहिए।

इस विषय में यह कहना आवश्यक है कि जहां वैद्यनाथ ने यह बताया है उसी प्रसंग में कई अन्य प्रकार भी बताए गए हैं। आजकल तो यह प्रकार ठीक हो सकता है किन्तु प्राचीन काल में जहां आठ से अधिक भाई बहन होते थे तब अष्टक वर्ग से कैसे विचार किया जा सकता था कि उनकी सही संख्या क्या होगी। कारण यह है कि अष्टक वर्ग में

अधिकाधिक आठ ग्रहों का ग्रहण है। अतः निश्चित रूप से भ्रातृ संख्या की चरम सीमा आठ ही माननी होगी।

अस्तु, प्रकृत विषय पर आते हैं। मंगल के अष्टक वर्ग से फल जानने के लिए पूर्वप्रदत्त उदाहरण को लेते हैं। वहां मंगल मीन राशि में स्थित है। मीन से तृतीय स्थान अर्थात् वृषराशि भ्रातृ स्थानगत हुई। वृष का फल १ है। इससे मंगल के शोध्य पिण्ड १६१ को गुणा किया तथा २७ से भाग दिया—

१ × १६१ = १६१ ÷ २७ = ७ लब्धि, शेष २

अश्विनी से गिनने पर शेष तुल्य नक्षत्र भरणी हुआ। अतः भरणी नक्षत्र में जब शनि का गोचर होगा तब भ्रातृ मरण योग होगा। अथवा इससे त्रिकोण नक्षत्र पूर्वाषाढ़ा या पूर्वाफाल्गुनी में शनि का चार होने पर उक्त फल होगा।

कई भाइयों में से किस पर उक्त फल घटित होगा, इस विषय में भाइयों की दशा व अन्तर्दशादि का विचार हमारे विचार से करना चाहिए।

मंगल की एकाधिपत्य शुद्ध रेखाओं से फल ज्ञान :

एकाधिपत्यं परिशोध्य यत्र
कुजाष्टवर्गे फलमाप्यते नो।
तत्र क्षयः स्याद्वसुधादिकाना-
मितीरयेत्पण्डितदेवशालः ॥२२॥

एकाधिपत्यमिति। कुजाष्टवर्गे भौमाष्टवर्गे त्रिकोणशोधनानन्तरं एकाधिपत्यं परिशोध्य यत्र यस्मिन् राशौ एकाधिपत्यशोध्यावशिष्टंफलं नो आप्यते लभ्यते, तत्र राशौ गोचरेण भौमे आगच्छति तदा वसुधादिकानां भूम्यादीनां क्षयोनाशः स्यात्। इत्येवं पण्डितदेवशाल ईरयेत्कथयेत्। तथा च देवशालः—

'एकाधिपत्यं संशोध्य फलं यत्र न लभ्यते।
तत्र भूम्यादिनाशः स्याद्देवशालः प्रभाषते॥
फलानि यत्रभूयांसि सर्वेभ्यस्तत्र तत्र च॥' इति

भौमाष्टक वर्ग में त्रिकोण शोधन के पश्चात् एकाधिपत्य शोधन कर लेना चाहिए। अब जो राशि रेखा रहित हो उसमें मंगल का गोचर होने पर भूमि, स्त्री व गृह का नाश होता है। ऐसा पण्डित देवशाल

(दिवशाल जातककार) ने कहा है। जहां फल हो उन रेखाओं में मंगल के गोचर समय इन-इन वस्तुओं का लाभ होगा यह बात अन्यथोपपत्ति से सिद्ध है।

हमारे प्रकृत उदाहरण में मंगल के अष्टक वर्ग में एकाधिपत्य शोधन करने के पश्चात् मेष, वृष, कर्क, तुला, धनु व कुम्भ राशियों में फल नहीं है। अतः इन राशियों में जब मंगल का संक्रमण होगा तब उक्त कष्ट होगा।

बुधाष्टक वर्ग के विचारणीय विषय :

ज्ञात्के सुहृद्बन्धुकुटुम्बमातुल-
वाणिज्यकर्मोक्तिहिरण्यजीवनम् ।
तच्चेतनावेश्मनि चिन्तयेल्लिपि-
धीमंत्रविद्याः कुशलो विचक्षणः ॥२३॥

ज्ञादिति। ज्ञाद्बुधात् के चतुर्थे सुहृन्मित्रं बन्धुः सगोत्रः, कुटुम्बं परिजनं, मातुलो वाणिज्यकर्म व्यापारः, उक्तिर्वाक् हिरण्यं द्रव्यं, जीवनं वृत्तिरेतत्सर्वं कुशलश्चतुरो विचक्षणः पण्डितः चिन्तयेत्।

तदिति। लिपिर्लेखन क्रिया, धीर्बुद्धिः, मन्त्रविद्या इन्द्रजालगारुडीशाबरी-प्रभृति विद्यैतत्सर्वं तस्माद् बुधाद् चेतना वेश्मनि पंचमस्थाने चिन्तयेत्। तदुक्तं देवशालजातके—

'तत्पंचमे मंत्रविद्यालिपिबुध्यादिचिन्तयेत्।' इति

बुध से चतुर्थ स्थान में मित्र, बान्धव, कुटुम्ब, मामापक्ष, व्यापार, वचन, धन और आजीविका का विचार करना चाहिए। इसी प्रकार बुध से पांचवें स्थान में लेखन, बुद्धि, मंत्र शक्ति आदि का विचार किया जाना चाहिए।

यहां पर बुध की रेखाओं का विचार त्रिकोण व एकाधिपत्य शोधन के बाद ही पूर्ववत् करना चाहिए। केवल मंगल के लिए ही उक्त पृथक् व्यवस्था थी। शुभाशुभ का विचार कैसे किया जाएगा, यह प्रकार आगे के श्लोक में बताया जा रहा है।

धुसत्सु निक्षिप्य बुधाष्टवर्गं
फलैर्विदो बन्धवर्गैर्निहत्य।

पिण्डं भमस्तोर्हरितोऽनीते
मृदौ वदेन्मातुलमित्रहानिम् ॥२४॥

सुतस्त्विति । सुतस्तु ग्रहेषु बुधस्य पूर्वोक्ताष्टकवर्गांकान् निक्षिप्य ततः पिण्डं विधाय विदो विद्वान् बान्धवर्गेश्चतुर्थगैः फलैः पिण्डं बुधस्य शुद्धपिण्डं निहत्य संगुण्य भमस्तो हरितोऽनि सप्तविंशत्या भाजयित्वा शेषतुल्यनक्षत्रे इते गते मृदौ शनौ तदा मातुला मातुर्भ्रातरो मित्राणि सुहृदस्तेषां हानिं क्षतिं वदेत् । तथा च देवशाल—

'बुधाष्टवर्गं संशोध्य शेषमृक्षं गते शनौ ।
बन्धुमित्रविनाशादींल्लभते नात्र संशयः ॥' इति

पूर्वोक्त प्रकार से बुध का अष्टकवर्ग बनाकर उसका त्रिकोण व एकाधिपत्य शोधन कर लेना चाहिए । उन शोधित रेखाओं से ही फल कहा जाएगा ।

बुध से चतुर्थ स्थान में जो राशि स्थित हो उसकी रेखा संख्या से मंगल के शोध्य पिण्ड को गुणा कर २७ से भाग देना चाहिए । जो शेष बचे उसके तुल्य अश्विन्यादि नक्षत्र में जब गोचर से शनि आए अथवा उस नक्षत्र से त्रिकोण नक्षत्रों में जब शनि आए तो मामा व मित्रों आदि की हानि कहनी चाहिए ।

पूर्वोक्त उदाहरण में बुध तुला राशि में स्थित है । उससे चतुर्थ राशि मकर है । मकर में ५ रेखाएं हैं । इनसे बुध के शोध्यपिण्ड को गुणाकर २७ का भाग दिया तथा शेष का ग्रहण किया—

५×६२=३१०÷२७=लब्धि ११, शेष १३ ।

अश्विनी से गिनने पर तेरहवां नक्षत्र हस्त है । अतः हस्त में शनि आने पर अथवा हस्त से त्रिकोण नक्षत्रों श्रवण व रोहिणी में शनि आने पर मामा व मित्रादि की हानि समझी जाएगी ।

जीवाष्टक वर्ग के विचारणीय विषय :

वर्णानि वासांसि बहूनि चिन्तये-
च्छत्रं यशोयानसुतार्थसम्पदः ।
पुष्टिं तनोः संविदमिज्यतस्ततो
विद्यासुतज्ञानलिपीर्नृपं सुते॥२५॥

वर्णानीति। बहूनि विविधानि, वर्णानि श्वेतपीतादीनि, वासांसिवस्त्राणि, छत्रं, यशः, यानं, सुतीअर्थो धनं, सम्पत्सम्पत्तिस्तनोः शरीरस्य पुष्टिः वृद्धिः, संविद् बुद्धिः। एतानि सर्वाणि इज्यतो गुरोश्चिन्तयेत्। ततस्तस्माद् गुरोः सुते पंचम-स्थाने विद्या, सुतः, ज्ञानं, लिपिः, नृपोधर्मः, एतत्सर्वं विचारयेत्। तथा च देवशालः—

'छत्रवाहनकीर्तिश्च बहुवर्णाम्बराणि च।
गुरुणा देहपुष्टिं च बुद्धिपुत्रार्थसम्पदः॥
गुरोरष्टकवर्गेषु सन्तानमपि कल्पयेत्।
जीवात्पंचमतो ज्ञानं पुत्रधर्मधनादिकम्॥' इति

भिन्न-भिन्न रंगों के वस्त्र, छत्र, कीर्ति, वाहन, पुत्र, धन, सम्पत्ति, शरीर की शक्ति तथा बुद्धि इन सबका विचार बृहस्पति से किया जाता है।

गुरु की अधिष्ठित राशि से पंचम राशि में विद्या, पुत्र, बुद्धि, धर्म व लेखन क्रिया आदि का विचार करना चाहिए।

सन्तान संख्या का विचार :

गीष्पतिस्थितसुतालये फलं
यावतां दिविषदां प्रवर्तते।
शत्रुनीचमपहाय शेषिता
नन्दना निगदिता मनीषिणा॥२६॥

गीष्पतीति। गीष्पतिर्गुरुस्तदधिष्ठितराशेर्यत्सुतालयं पंचमस्थानं तस्मिन् यावतां यदुन्मितानां दिविषदां ग्रहाणां, फलं प्रवर्तते विद्यते तेषु शत्रुनीचं शत्रु-ग्रहदत्तरेखां नीचराशिगत ग्रहदत्तरेखां च, अपहाय विहाय शेषा अवशिष्टाः मनीषिणा पण्डितेन, नन्दयन्तीतिनन्दनाः पुत्रा निगदिताः कथिता इति। तथा च देवशालः—

'गुरुस्थितसुतस्थाने यावतां विद्यते फलम्।
शत्रुनीचग्रहं त्यक्त्वा तावन्तश्चसुताः स्मृताः॥' इति

शेषास्तस्यात्मजाः स्मृता इति वा पाठः। गुरोः स्थित शुभस्थाने यावतां विद्यते फलम्, इति वा पाठान्तरः।

जन्म समय बृहस्पति जिस राशि में स्थित हो उससे पंचम स्थान-गत राशि में जितने ग्रह रेखाप्रद हों उनमें से शत्रुगत व नीचराशिगत

ग्रहों को छोड़ देना चाहिए। तदनन्तर जितने ग्रह रेखाप्रद बचें उनकी रेखाओं के तुल्य पुत्र पुत्रियों की संख्या जाननी चाहिए।

गुरु के अष्टवर्ग में गुरु से पंचम स्थान में जो ग्रह रेखाप्रद हों उन्हें एकत्र लिख लीजिए। अब उनमें से जो-जो ग्रह अपने शत्रु की राशि या अपनी नीच राशि में स्थित हों उन्हें निकाल लीजिए। शेष ग्रहों की जितनी रेखाएं हों उनकी संख्या के तुल्य ही सन्तान संख्या होगी।

जातकादेशमार्ग में अस्तगत ग्रह को भी छोड़ने के लिए कहा गया है। इसके साथ ही यहां कहा गया है कि यदि कोई रेखाप्रद ग्रह उच्च-राशि या स्वराशि या मित्रराशि में स्थित हो तो उसकी रेखाओं को क्रमशः तीन गुना व दुगुना करके ही ग्रहण करना चाहिए।

तीसरी विशेष बात यहां यह बताई है कि रेखाप्रद ग्रहों में जो ग्रह पुरुष हैं उनको रेखाओं के तुल्य पुत्र और जितने स्त्रीग्रह हैं उनकी रेखाओं के तुल्य पुत्रियां होंगी।

> निक्षिप्याष्टकवर्गकं सुरगुरोस्तत्पंचमे यावता,
> मूढ्वाक्षाणि विहाय वैरिगृहगान् मूढांश्च नीचस्थितान्।
> तावन्तस्तनया भवन्ति गुणना कार्या च तुंगादिषु,
> प्रोक्ताः पुंवनिताः कृतस्वपुरुषस्त्री खेचराः कीर्तिताः॥"

(देखें जातकादेश, सन्तानचिन्ता०, श्लोक १७)

सन्तान संख्या ज्ञान का द्वितीय प्रकार :

> **बृहस्पतिस्तुङ्गसुतालये यदि**
> **सदा तनूजास्त्रिगुणा मता बुधैः।**
> **त्रिकोणराशौ किमु नैजमन्दिरे**
> **स तत्र पुत्रा द्विगुणाः सवीक्षिते॥२७॥**
> **तत्रैव वृद्धिः कथितावपि स्मृता**
> **यावन्मिता ओजगृहांशका विशः।**
> **तावन्मिताः स्युर्यदि युग्मभांशका**
> **ज्ञेया वशाः प्राणभृतां तदुन्मिताः॥२८॥**

बृहस्पतिरिति। तत्रेति च। यदि बृहस्पतिस्तुंगसुतालये उच्चगतः सन् पंचमस्थाने तिष्ठति तदा त्रिगुणास्तनूजाः पुत्रा बुधैर्मतः। किमु स गुरुस्तत्र पंचमस्थाने त्रिकोणराशौ मूल त्रिकोणराशौ धनुषीत्यर्थः। नैजमन्दिरे स्वगृहे तिष्ठति

तदा द्विगुणाः पुत्रा वाच्या। यत्र सुतालये पंचमस्थाने सगुरौसदीक्षिते शुभग्रहदृष्टे तत्रैव कथितादपि वृद्धिः स्मृता ज्ञेया।

तत्र सुतालये यावन् मिता यावन्त ओजगृहांशका विषमराशिनवांशाः स्युस्तावन्मितावेशः पुरुषाः स्युः। यदि तत्र युग्मभांशकाः स्युस्तदा प्राणभृतां तदुन्मितास्तावत्यो वशाः कन्या ज्ञेयाः। तथा च देवकाल:—

'गुरुस्तुंगसुतस्थाने यदि स्याद् त्रिगुण तदा।
स्वर्क्षमूलत्रिकोणे वा यदिस्याददृद्विगुणं तदा॥
शुभदृष्टे च तत्रैव वृद्धिः स्यात्कथितादपि।
यावदोजर्क्षभागाश्च तावन्तःपुरुषा मताः॥
यावत्यो युग्मभागाश्च तावत्यस्तत्रकन्यकाः॥' इति

यदि जन्म लग्न से पंचम स्थान में बृहस्पति अपनी उच्च राशि कर्क में स्थित हो तो पूर्वोक्त प्रकार से आई सन्तान संख्या को तीन गुना कर लेना चाहिए।

यदि बृहस्पति पंचम स्थान में मूलत्रिकोण राशि अथवा स्वराशि में स्थित हो तो पूर्वागत संख्या को दुगुना कर लेना चाहिए। यदि उच्च-स्वमूल त्रिकोणादिगत गुरु पंचम स्थान में स्थित होकर शुभग्रहों से दृष्ट हो तो कही गई संख्या से भी अधिक सन्तान होने की सम्भावना होती है।

पंचम स्थान में जितने विषम राशि के नवांश हों उतने पुत्र व जितने समराशि के नवांश हों उतनी कन्याएं जाननी चाहिएं।

तृतीय प्रकार :

संख्याङ्कभागप्रमिता तदीशितुः
स्थानप्रमाणाः सुतभेड्युतस्य वा।
पूज्याष्टवर्गे सुतराशिसंस्थित-
रेखाप्रमाणास्तनया उदाहृताः॥२६॥

संख्येति। सुतस्थानस्यांकभागप्रमिता नवांशतुल्या सन्ततेः संख्या स्यादिति शेषः। अथवा तदीशितुः पंचम स्वामिनोऽकभागप्रमिता नवांशतुल्या सन्ततेः संख्या स्यात्। अथवा सुतभेड्युतस्य पंचमेशयुक्तस्य स्थानप्रमाणाः रेखातुल्यतनयाः उदाहृताः। अथवा पूज्याष्टकवर्गे गुरोरष्टवर्गे सुतराशिसंस्थितरेखा प्रमाणाः पंचम स्थानस्थरेखातुल्यास्तनयाः पुत्रा उदाहृताः कथिताः। इत्यत्र प्रमाणशब्दोऽजहल्लिगं

तेन न नपुंसकलिंगैक वचनमस्ति वेदाः मनुयो वा प्रमाणमिति ज्ञापकात् । तथा च देवशालः—

'संख्या नवांशतुल्या स्यात्तदीशस्याथवा पुनः ।
सुतभेशनवांशैश्च समानावधि कल्पयेत् ।।' इति

पंचम स्थान में स्थित नवांश संख्या के तुल्य सन्तान होती है। अथवा पंचमेश की नवांश संख्या के तुल्य सन्तान होती है। अथवा पंचमेश जिस राशि में स्थित हो उस राशि में जितनी रेखाएं हों उनके तुल्य ही सन्तान होती है।

अथवा गुरु के अष्टक वर्ग में लग्न से पंचम स्थान में जितनी रेखाएं हों उतनी ही संख्या सन्तान की समझनी चाहिए।

चतुर्थ प्रकार :

शोध्यावशिष्टानि फलानि वासव-
वन्द्याष्टवर्गेषु भवन्तु तेषु च ।
रेखा विहायाशुभखेचराश्रिताः
शेषाः स्मृतास्तस्य शरीरसम्भवाः ।।३०।।

शोध्येति। वासव इन्द्रस्तस्य वन्द्यो वन्दनीयो गुरुस्तस्याष्टकवर्गेषु यावन्ति शोध्यावशिष्टफलानि भवन्तु तेषु, अशुभखेचराश्रिताः पापग्रहसहिता रेखाः फलानि विहाय हित्वासेषास्तस्य शरीरसम्भवाः पुत्राः स्मृता ज्ञेया बुधैरितिशेषः। तथा च देवशालः—

गुरोरष्टकवर्गेषु शोध्यशेषफलानि च ।
क्रूराश्रितफलं त्यक्त्वा शेषास्तस्यात्मजाः स्मृताः ।। इति

मतान्तरे तु शोधनं विनैव गुरोः केवलाष्टकवर्गज फलं कथयितव्यम् ।

गुरु के अष्टक वर्ग में त्रिकोण शोधन कर बाद में एकाधिपत्य शोधन भी कर लें। अब पापग्रहों की रेखाओं का त्याग कर दें। शेष रेखा संख्या जाननी चाहिएं।

पूर्वोक्त उदाहरण में त्रिकोणैकाधिपत्य शोधन के पश्चात् वृष में १, कर्क में ४, कन्या में २ रेखाएं बची हैं। वृष व कर्क ग्रह रहित हैं तथा कन्या में सूर्य क्रूरग्रह स्थित है। अतः १+४+२=७ योग में कन्या राशि का फल २ घटाया तो शेष ५ संख्या सन्तान संख्या हुई।

अल्प सन्तान का योग :

अंहोविहङ्गैर्व्ययवित्तबुद्धिगै-
जातस्य जन्तोस्तनुसन्ततिर्भवेत् ।
सूरौ सुतस्थेऽपि कृशात्मजस्तदा
तत्पेक्षिताढ्ये तनयं समादिशेत् ॥३१॥

अंहो विहगैरिति । यदा जातस्य जन्तोः जन्मसमयेऽहोविहगैः पापग्रहैः, व्ययवित्तबुद्धिगैर्द्वादशद्वितीयपंचमस्थितैः सद्भिस्तदा तनु सन्ततिरल्पसन्ततिर्भवेत् । तथा च देवशाल:—

'व्ययार्थसुतसंस्थैश्च पापैः स्यात्क्षीणसन्ततिः ।' इति
व्ययाष्टमगतैः पापैः क्षीणार्थो हीनसन्ततिः । इत्यपि पाठः ।

सूराविति । सूरौ गुरौ सुतस्थे पंचमस्थे सत्यपि तदा कृशात्मजः स्वल्पपुत्रः स्यात् । यथा देवशालः—

गुरोरष्टकवर्गेषु सुतराशिस्थितः समः ।
अल्पात्मजः स विज्ञेयो गुरौ पंचमगेऽपि वा ॥ इति

तदिति । यदि तत्र गुरौ तत्पेक्षिताढ्ये पंचमेशेन युतेदृष्टे वा तदा तनयं पुत्रं समादिशेत् । तथा च देवशालः—

'तदीशयोगदृष्टे तु तदा पुत्रं समादिशेत् ।
एतैर्बहुप्रकारैश्च कल्पयेत्कालवित्तमः ॥
बहुलक्षणसंयोगे दशास्तस्मिन् समादिशेत् ।
वशक्षयादियोगाश्च पुरस्ताद्वक्ष्यते मया ॥
पूर्वोक्तलक्षणेनात्र वंशभर्तुः समादिशेत् ॥' इति

यदि जन्म समय बारहवें, दूसरे व पांचवें स्थान में पापग्रह विद्यमान हों तो कम सन्तान होती है।

यदि बृहस्पति स्वयं पंचम स्थान में हो तो भी कम सन्तान होती है। यदि पंचम स्थानगत बृहस्पति पंचमेश से युत या दृष्ट हो तो कम सन्तान तो होगी, किन्तु पुत्र सन्तति कहनी चाहिए।

बृहस्पति सन्तान का कारक होने के कारण जब स्वयं पंचम सन्तान स्थान में स्थित होगा तो उस भाव का नाश करेगा। सामान्यतः कारक ग्रह यदि उसी भाव में स्थित हो जिसका कि वह कारक है तो उस भाव की हानि होती है। किन्तु शुभ ग्रहों की युति व दृष्टि अवश्य ही कुफल का निवारण करेगी।

देवशालजातक के उपर्युक्त उद्धरण के पाठान्तर में बताया गया है कि अष्टम व द्वादश स्थान में यदि पापग्रह स्थित हों तो मनुष्य धन रहित व अल्प सन्तति वाला होता है। कारण अष्टम ग्रह का केन्द्रीय प्रभाव पंचम पर पड़ेगा और साथ ही अष्टम भाव नवम का हानि स्थान है। नवम से सन्तति का विचार 'भावाद्भावम्' के सिद्धान्त से किया जाएगा। द्वादशस्थ पापग्रह पंचम स्थान से षडष्टक योग बनाएगा।

यदि कई प्रकार से भिन्न निष्कर्ष निकल रहे हों तो पिता की कुण्डली में वंशक्षयादि योग, क्लीवत्व योगादि भी आवश्यक रूप से करके बहुमतपक्ष का ग्रहण करना चाहिए।

यदाऽष्टवर्गेषु निलिम्पमंत्रिण-
त्रिकं फलं नन्दनमन्दिरे भवेत्।
कृशात्मजो यस्य विशो जनाविति
समीरयेत्कोविददेवशालकः ॥३२॥

यदेति। यस्य विशः पुरुषस्य जनौ जन्मनि निलिम्पमंत्रिणो गुरोरष्टवर्गेषु यदा नन्दनमन्दिरे पंचमे त्रिकं फलं फलत्रयं भवेत्। तदा स नरः कृशात्मजोऽल्पपुत्रो भवेत्। इत्येवं कोविददेवशालः समीरयेत्कथयेत्। तद्वचनं यथा—

गुरोष्टकवर्गेषु सुतराशौ त्रिकं फलम्।
यस्याल्पतनयः स स्याद् देवशालः प्रभाषते ॥ इति

सन्ततिसम्भवसमयमाह जातकादेशकारः—

पुत्रेशाश्रितभे तदंशकगृहे मान्द्याश्रितर्क्षे तदी-
यांशर्क्षे च तथा त्रिकोणभवनेष्वेषां च बह्वक्षके।
राशौ स्वाष्टकवर्गके च विचरन् जीवो भवेत्पुत्रदः।
पुत्रेशोऽत्रविचिन्त्यतां हिमकरा लग्नाच्च जीवादपि।' इत्यादीति।

यदि गुरु के अष्टक वर्ग में गुरु की अधिष्ठित राशि से पंचम राशि में तीन ही रेखाएं हों तो वह अल्प सन्तान वाला होगा। ऐसा पण्डित देवशाल ने कहा है।

उक्त स्थिति म सन्तान का अभाव नहीं होगा। अर्थात् सन्तान तो अवश्य होगी, किन्तु कम। कम की सीमा क्या हो सकती है? एक या दो सन्तान। यह संख्या प्राचीन काल में तो कम अवश्य मानी जाती

रही होगी, किन्तु आज कल तो यह सर्वथा उपयुक्त है। अतः हमारे विचार से कालज्ञ ज्योतिषी को आधुनिक परिप्रेक्ष्य में ही अल्पता व अधिकता की व्याख्या करनी चाहिए।

अस्तु, सन्तान कब होगी? इस विषय में जातकादेशमार्ग में बताया गया है—

१. पंचमेश जिस राशि में हो।

२. पंचमेश जिस नवांश राशि में हो।

३. मान्दि जिस राशि में हो।

४. मान्दि जिस नवांश राशि में हो।

उक्त चारों राशियों के स्वामी ग्रहों के अष्टकवर्ग में देखिए कि किन राशियों में अधिक रेखाएं हैं। सबसे अधिक रेखा वाली राशि में जब बृहस्पति गोचर से आएगा तब पुत्र उत्पन्न होगा। पंचमेश का विचार लग्न, चन्द्र लग्न व गुरु इन तीनों से करना चाहिए।

साथ ही उक्त राशियों से त्रिकोण राशियों को भी देखना चाहिए।

एक अन्य प्रकार भी बताया गया है—

१. जन्म समय बृहस्पति जिस राशि में स्थित हो, उसमें जब लग्नेश, पंचमेश व गुरु आएं अथवा उस राशि से त्रिकोण राशि में आएं तो सन्तान होती है।

२. जब पंचमेश, सप्तमेश व लग्नेश तीन एक साथ किसी राशि में हों तो सन्तानोत्पत्ति होती है।

(देखें, जातकादेश, सन्तान चिन्ता. श्लोक २४-२५)

सन्तान के कष्टकारक समय का ज्ञान :

फलेन सूरेः सुतसद्मगेन
शोध्यावशिष्टं फलमर्चितस्य।
संगुण्य तारोद्धृतशेषभत्ये
तत्कोण आर्को तनयस्य कष्टम् ॥३३॥

फलेनेति। अर्चितस्य गुरोर्यच्छोध्यावशिष्टं फलं शोध्यशेषाणां योगं सूरेर्गुरुतः सुतसद्मगेन पंचमस्थेन फलेन संगुण्य निहत्य तारोद्धृत शेषभत्ये सप्तविंशत्या विभक्ते सति तदा यदवशिष्टं तत्तुल्यभं प्राप्ते वा तत्कोणे (१०.१९) नक्षत्रे आर्को शनौ भवति तदा तनयस्य पुत्रस्य कष्टं दुःखं वाच्यमिति शेषः।

गुरु के अष्टक वर्ग में बृहस्पति से पंचम स्थान में जितनी रेखाएं हों, उनसे बृहस्पति के शोध्य पिण्ड को गुणा कर लेना चाहिए।

उक्त गुणनफल में २७ का भाग देने से जो शेष बचे उसके तुल्य संख्यक नक्षत्र में जब गोचर से शनि आता है तो पुत्र सन्तान को कष्ट होता है। अथवा उससे त्रिकोण नक्षत्रों में शनि हो तो कष्ट होता है।

पूर्वोक्त उदाहरण में बृहस्पति का शोध्य पिण्ड ५८ है। बृहस्पति से पंचम भावस्थ राशि का फल ३ है। इन्हें परस्पर गुणा कर २७ से भाग दिया—

५८ × ३ = १७४ ÷ २७ = लब्धि ६ शेष १२।

अश्विनी से गणना करने पर बारहवां नक्षत्र उत्तरा फाल्गुनी है। इससे त्रिकोण नक्षत्र उत्तराषाढ़ व कृत्तिका है। अत: उक्त नक्षत्रों में शनि का गोचर होने पर पुत्र को कष्ट होगा।

शुक्राष्टक वर्ग के विचारणीय विषय :

वीर्य्यं तथा भोगपदं वशाविशो-
गात्राणि पाणिग्रहणं च धोरणम्।
दैतेयवन्द्यात्परिचिन्तयेत्ततो-
ऽनङ्गस्थले चन्दनस्रक्सुखाबला: ॥३४॥

वीर्यमिति। वीर्यं बीजं तथा तेनप्रकारेण भोगस्य पदं गुप्तेन्द्रियम्। विशावशो:स्त्रीपुरुषयोर्गात्राणि शरीरावयवानि पाणिग्रहणं धोरणं वाहनं दैतेय वन्द्याच्छुक्रात् परिचिन्तयेत्। ततस्तस्माच्छुक्रादनगस्थले सप्तमस्थाने चन्दनं मलयागिरिजं स्रङ्माला, सुखं, अवला स्त्री, एतत्सर्वं चिन्तयेत्। तथा च देवमाल:—

शुक्रं विवाहकर्माणि भोगस्थानं च वाहनम्।
विहृस्त्रीजनगात्राणि शुक्रेणैव निरीक्षयेत् ॥
शुक्रात्सप्तमतो नारी स्रक् चन्दनसुखादिकम् ॥' इति

वीर्य, गुप्तेन्द्रिय, स्त्री व पुरुष का शरीर सौन्दर्य, विवाह, वाहन व सन्तानोत्पादन की क्षमता आदि का विचार शुक्र से करना चाहिए।

शुक्र से सप्तम स्थान में स्त्रीजनों, कामिनी स्त्रियों का सुख,

शरीर सौन्दर्य बढ़ाने वाले प्रसाधनों का उपयोग व उनकी प्रभावशीलता आदि का विचार करना चाहिए।

> खसत्सु निक्षिप्य सिताष्टवर्गं
> विद्वांस्त्रिकोणं परिशोधयादौ।
> एकाधिपत्यं तु विशोधयान्
> फलानि भूयांसि च येषु येषु ॥३५॥
> तेषु तेषु निकेतेषु धनं नीरजलोचनाम्।
> सर्वंसहां तद्वशतः कथयेन्मतिमान्नृणाम् ॥३६॥

खसत्स्विति। तेष्विति च खसत्सु सूर्यादिग्रहेषु सलग्नेषु सिताष्टवर्गं शुक्राष्टवर्गं पूर्वोक्तशुक्राष्टक वर्गांकानित्यर्थः। निक्षिप्यप्रक्षिप्य शुक्राष्टकवर्गं विरच्य, आदौ पूर्वं त्रिकोणं परिशोधय, अनुपश्चात् एकाधिपत्यं विशोधय तथा येषु येषु निकेतेषु भवनेषु राशिषु इति यावत्। भूयांसि बहूनि फलानि रेखाः स्युस्तेषु तद्वशतः एकाधिपत्यशोध्यावशिष्टरेखावशतः मतिमान् पण्डितः नृणां मनुष्याणां धनं द्रव्यं, नीरजलोचना स्त्रीं, सर्वंसहां भूमिं कथयेद् विनिर्दिशेत्। तथा च देवशालः—

> 'भृगोरष्टकवर्गं च निक्षिप्याकाशचारिषु।
> त्रिकोणशोधनं कृत्वा पश्चादेकाधिपत्यताम्।
> येषु येषु फलानि स्युर्विशेषाणि च तत्र हि।
> भूमिं कलत्रं वित्तं च तद्वशान्निर्दिशेन्नृणाम् ॥' इति

शुक्र के अष्टक वर्ग का निर्माण कर लेना चाहिए। तदनन्तर त्रिकोण शोधन व एकाधिपत्य शोधन कर लेना चाहिए। जिन-जिन राशियों में अधिक रेखाएं हों, उनमें जब गोचर से शुक्र आए तब धन, स्त्री तथा भूमि आदि की वृद्धि कहनी चाहिए।

स्त्रियों की संख्या का ज्ञान :

> काव्याङ्गनानायकयुक्तराशि-
> रेखासमानाः प्रमदा वदन्ति।
> क्षेत्रैणचक्षुर्ग्रहणं च साम्यं
> पृथ्वीपतीनां द्विगुणं निरुक्तम् ॥३७॥

काव्येति। काव्यः शुक्रः अंगनानायकः सप्तमे शस्ताभ्यां युक्तौ यौ राशी तयो रेखा समाना रेखातुल्याः प्रमदाः स्त्री वदन्ति। क्षेत्रं कृषिस्थान स्त्री वा एणचक्षुर्ग्रहणं विवाहः, उभयोः साम्यं तुल्यता वाच्येति शेषः एतत्सर्वं पृथ्वीपतीनां राज्ञां द्विगुण निरूक्तं कथितम्। तथा च देवशास्त्रः—

भृगुदारेशयुक्तर्क्षफलसंख्यास्त्रियो विदुः।
क्षेत्रस्त्रीग्रहणं साम्यं नृपस्य द्विगुणं तथा॥' इति

शुक्र और सप्तमेश जिस राशि में स्थित हों उनमें जितनी रेखाएं हों उतनी ही संख्या स्त्रियों की जाननी चाहिए। क्षेत्रादि भूमि व विवाह की संख्या तो राजाओं व साधारण लोगों की पूर्वोक्त प्रकार से जाननी चाहिए किन्तु राजाओं के विषय में भोग्या स्त्रियों की संख्या दुगुनी समझनी चाहिए। स्त्री संख्या के विषय में **जातकादेशमार्ग** में एक अन्य पद्धति बताई गई है—

१. शुक्र से सप्तम व नवम स्थान के स्वामी जहां स्थित हों और लग्न व चन्द्रमा से नवम भाव के स्वामी जहां हों वहां एकाधिपत्य शोधन के पश्चात जितनी रेखाएं शेष हों, उतनी ही स्त्रियां होती हैं।

२. सप्तमेश ग्रह के अष्टक वर्ग में शोधन के उपरान्त जितनी रेखाएं सप्तमेश की उच्च व नीच राशियों में हों उतनी स्त्रियां होंगी।

३. यदि सप्तमेश निर्बल हो तो उक्त प्रकारों से आई भिन्न संख्या में से कम संख्या को स्त्री संख्यक मानना चाहिए, यदि सप्तमेश बली हो तो अधिक संख्या लेनी चाहिए।

(देखें, भार्या विचार प्रकरण, श्लोक १७)

हमारे विचार से आजकल बहु विवाह प्रथा नहीं है। दो विवाह करना भी कानूनी अपराध है, तब दो से अधिक विवाह का तो प्रश्न ही क्या? अतः इस प्रकरण में या तो भोग्यास्त्रियों की संख्या का ग्रहण करना चाहिए अथवा सम्भावित परिस्थितियों में अन्य विवाह की स्थिति में स्त्री संख्या का विचार करना चाहिए। वैसे आजकल इतने अधिक विवाह तो दुष्कर ही हैं। अतः ऐसी स्थिति में सुविज्ञ दैवज्ञों को सादृक स्थलों की समयानुकूल व्याख्या कर लेनी चाहिए।

प्रकारान्तर से स्त्री संख्या व स्वभाव का विचार :

अङ्गना भृगुजभागसम्मिताः
सद्गुणाः स्मरलयोन्मिताः किम्।

स्वीयनाथसमसद्‌गुणाः स्त्रियो
जन्मिनामिति वदन्ति सूरयः ॥३८॥

अंगना इति। भृगुजः शुक्रस्तस्य ये भागा नवांशास्तैः सम्मितास्तुल्या र्थाच्छुक्रो यस्मिन्नवांशे तिष्ठति तस्य या संख्यास्ततुल्याः सद्‌गुणा उत्तम गुणा जन्मिनां प्राणिनामंगना स्त्रियः स्युरिति। किमु अथवा स्मरलवोन्मिता सप्तम-भावस्थनवांशसंख्यातुल्याः स्वीयनाथसमसद्‌गुणाः सप्तमस्य नवांशस्वामि-समानोत्तमगुणाः स्त्रियः स्युः इत्येवं सूरयः पण्डिता वदन्ति। तथा च ग्रन्थान्तरे—

सितांशक प्रमाणिकाः स्त्रियो भवन्ति सद्‌गुणाः।
उतस्मरांससम्मिताः स्वनाथतुल्यसद्‌गुणाः॥' इति

शुक्र जिस नवांश में हों, उतनी ही संख्या गुणवती स्त्रियों की समझनी चाहिए।

अथवा सप्तम भाव में जो नवांश हो, उसकी संख्या के तुल्य स्त्रियों की संख्या जानें। वे स्त्रियां पति की मनोनुकूल प्रकृति वाली होती हैं। इस प्रकार पण्डितों को विचार करना चाहिए।

विवाह की दिशा का ज्ञान :

लब्धिः स्त्रियाः काव्यकलत्रगेहाद्
दारेशसंयुक्तदिगुद्‌भवायाः।
आहो ततो नन्दनदैवराशे-
र्दिग्देशजायाः प्रमदाभिधायाः॥३९॥

लब्धिरिति। काव्यः शुक्रस्तस्माद्यत्कलत्रगेहं तस्य य ईशोऽर्थात् शुक्रात् सप्तमेशस्तेन संयुता या दिक् दिशा तस्यानुद्‌भवाया उत्पन्नायाः स्त्रियाः कलत्रस्य लब्धिः प्राप्तिर्वाच्या। आहोऽथवा ततस्तस्मात्सप्तमराशेर्नन्दनदैवराशेः पंचम-नवमराशेर्दिग्देशजाया दिशि देशे चोत्पन्नायाः प्रमदायाः लब्धि स्यात्। तथा च ग्रन्थान्तरे—

शुक्राद्यामित्रतो लब्धिर्दारेशान्वितदिग्भवा।
शुक्रजामित्रतो लब्धिस्त्रिकोणाद्देशदिक् स्त्रियः॥' इति

शुक्र से सप्तम स्थान में जो राशि हो, उसका स्वामी अर्थात् शुक्र से सप्तमेश जिस दिशा में कुण्डली में स्थित हो उस दिशा से स्त्री की प्राप्ति होती है।

अथवा सप्तम स्थान से (शुक्र से सप्तम) त्रिकोण स्थानों (५,९) में स्थित राशि की दिशा से अथवा उस दिशा के देश में उत्पन्न स्त्री की प्राप्ति होती है।

यहां सर्वत्र शुक्र से सप्तम स्थान का ही ग्रहण है। राशियों का दिशा विभाग इस प्रकार है—

पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर
मेष	वृष	मिथुन	कर्क
सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक
धनु	मकर	कुम्भ	मीन

जातकादेशमार्ग में स्त्री प्राप्ति की दिशा का एक अन्य प्रकार भी बताया गया है।

१. सप्तम स्थान (लग्न से) में जो ग्रह स्थित हो या जो ग्रह सप्तम भाव पर दृष्टि डाल रहा हो उसकी दिशा से स्त्री की प्राप्ति होती है।

२. सप्तमेश स्पष्ट व शुक्र स्पष्ट जोड़ने से जो राशि आए उसकी दिशा से स्त्री मिलती है।

३. सप्तमेश व शुक्र के स्पष्ट राश्यंशों के योग से जो नवांश आए, वह यदि स्थिर राशि नवांश हो तो पास से, द्विस्वभाव राशि हो तो न दूर से और न बहुत पास से और चर राशि हो तो दूर से स्त्री की प्राप्ति होती है। (देखें भार्या विचार, श्लोक १३)

वहीं पर एक और विशेष बात बताई गई है—

'दारेशे बलसम्पूर्णे विवाहो धनिनां कुलात्।
बलहीने दरिद्राणां न स्याद् रूपवती च सा॥'

(वही, श्लोक १४)

'सप्तमेश यदि बलवान् हो तो विवाह धनी घराने से होता है। यदि सप्तमेश बलहीन हो तो विवाह निर्धन कुल से होता है और स्त्री भी रूपवती नहीं होती।'

यहीं पर प्रसंगवशात् विवाह का काल जानने का प्रकार भी उक्त ग्रन्थ से बता रहे हैं—

१. निम्नलिखित ग्रहों की दशा या अन्तर्दशा में विवाह हो जाता है—

(अ) सप्तम भावस्थ ग्रह, (आ) सप्तम भाव को देखने वाला ग्रह, (इ) उक्त दोनों ग्रहों से सप्तम भाव में स्थित ग्रह, (ई) उक्त ग्रहों के अधिष्ठित राशीश या अधिष्ठित नवांशेश, (उ) शुक्र जिस नक्षत्र में हो उसका स्वामी (ऊ) लग्नेश का नवांशेश।

२. कुछ लोगों के मत से राहु की दशा या अन्तर्दशा में भी विवाह हो जाता है।

३. जब शुक्र, लग्नेश व सप्तमेश सप्तमभावस्थ राशि में जाएं या सप्तमेश की अधिष्ठित राशि या इन दोनों राशियों से सप्तम राशि या नवम पंचम स्थानों में जाएं तो विवाह हो जाता है।

४. बृहस्पति का जब निम्नलिखित राशियों में गोचर हो तो विवाह हो जाता है—सप्तम भावस्थ राशि, सप्तम भावगत नवांश राशि या इन दोनों से त्रिकोण राशि।

इस प्रसंग में उक्त विचार चन्द्र लग्न व जन्म लग्न दोनों से करना चाहिए। (देखें वही, श्लोक, १०-१२)

स्त्री की जन्मराशि का ज्ञान :

> योषिद्गृहे तत्पतिपुत्रभे वा
> तत्पस्थराश्यात्मजबीक्षणे वा।
> नीचोच्चभे तस्य वदन्ति केचि-
> त्कि वा तदंशात्मजपुण्यराशौ ॥४०॥
> शरीरजैवातृकयोस्तपोभे
> समागमर्क्षे च तयोस्तताहो।
> राशिः कलत्रस्य तनूजशाली
> तदन्यराशिर्यदि पुत्रहीनः ॥४१॥

योषिदिति। शरीरेति। योषिद् गृहे सप्तम भावे पुंजन्मलग्नादिति शेषः। यो राशिर्विद्यते स एव कलत्रस्य स्त्रियो जन्मनो राशिर्ज्ञेयः। वा तत्पति पुत्रभे तस्मात् सप्तमराशेः पंचमनवमराशौ स्त्रिया जननं वाच्यम्। वा तत्पस्थ राश्यात्मजभाग्यभे सप्तमेशो यस्मिन् राशौ तिष्ठति वा सप्तमेश स्थितराशे पंचम-

नवमराशौ जननं वाच्यम् । अथवा तस्य सप्तमेशस्य नीचोच्चभे जन्मवाच्यम् । इति केचित् वदन्ति । किं वा तदंशात्मजपुण्यराशौ सप्तमेशो यस्मिन्नंशे तिष्ठति पंचमनवमराशौ जन्म वाच्यम् । तथा च देवज्ञाल:

'दाराधिपस्थं तल्लेदं दारजन्मर्क्षकं विदुः ।
तस्योच्चनीचराशौ वा केचिदिच्छन्ति तद्विदः ॥
तस्यांशकस्त्रिकोणे वा भार्यायाजन्मभं वदेत् ॥' इति

शरीरेति । शरीरं लग्नं जैवातृकश्चन्द्रस्तयोर्मध्ये यो बलवान् तस्मात्तपोभे नवमराशौ, उताहो तयोर्लग्नचन्द्रयोः समागमर्क्षे लग्नचन्द्राधिष्ठित राशाविस्यर्थः । यदि कलत्रस्य स्त्रिया जन्मनो राशिर्भवेत्तदा तनूजशाली पुत्रवान् भवेत् । जात इति शेषः । यदि स्त्रियास्तदन्य राशिः प्रोक्तेतरराशिः स्यात्तदा पुत्रेणौरसेन, हीनो रहितो भवेदिति शेषः । यथा च देवज्ञाल:—

'लग्नेन्द्वोर्भाग्यभं जन्मलग्नभं परिकीर्तितम् ।
तयो समागमर्क्षं च कल्पयेत्तत्र बुद्धिमान् ॥ इति
उक्तप्रकारमार्गेण भार्याया जन्म लग्नभम् ।
प्रोक्तराशिर्यदा दारजन्मर्क्षं सन्ततिस्तदा ।
अनुक्तराशिजन्मर्क्षमस्ति चेन्नास्ति सन्ततिः ॥' इति

मनुष्य के जन्म लग्न से सप्तम स्थान में जो राशि हो वह स्त्री की जन्म राशि होती है।

सप्तम स्थान से त्रिकोण स्थानों में स्थित राशि स्त्री की जन्म राशि होती है।

सप्तमेश जिस राशि में स्थित हो, वह राशि भी उसकी जन्म राशि हो सकती है।

अथवा सप्तमेश की अधिष्ठित राशि से नवम पंचम राशि अथवा सप्तमेश की उच्च या नीच राशि अथवा सप्तमेश जिस नवांश में हो उससे त्रिकोण राशि में स्त्री का जन्म होता है। अथवा लग्न व चन्द्रमा में से जो अपेक्षाकृत अधिक बली हो उससे नवम भावस्थ राशि या लग्न राशि या चन्द्र राशि ही स्त्री की जन्मराशि हो तो वह मनुष्य पुत्रों वाला होता है। यदि उक्त राशियों में से किसी भी राशि में स्त्री का जन्म न हो तो वह मनुष्य पुत्रहीन होता है।

जातकादेशमार्ग में स्त्री की जन्म राशि ज्ञान का अलग प्रकार बताया गया है—

(१) सप्तमेश की अधिष्ठित राशि, (२) सप्तमेश के अधिष्ठित नवांश की राशि, (३) सप्तमेश की उच्च राशि, (४) सप्तमेश की नीच राशि, (५) शुक्र की अधिष्ठित राशि, (६) शुक्र की अधिष्ठित राशि से सप्तम राशि, (७) चन्द्रमा के द्वादशांश की राशि, (८) चन्द्रमा की द्वादशांश राशि से नवम पंचम राशि, (९) चन्द्राष्टक वर्ग में सर्वाधिक रेखा वाली राशि, (१०) समुदायाष्टक में सर्वाधिक रेखा वाली राशि। (११) लग्नेश की अधिष्ठित राशि या नवांश राशि, (१२) चन्द्राष्टक वर्ग में, चन्द्रराशि में जिस कक्ष्या में कक्ष्यापति के द्वारा रेखा दी गई हो, उस कक्ष्यापति की राशि।

उक्त राशियों में किसी एक राशि में मनुष्य की स्त्री का जन्म-होता है। यदि उक्त राशियों में स्त्री का जन्म हो तो वह सुख व समृद्धि देने वाली होती है। इसी प्रकार कन्या की राशि से पुरुष की राशि हो तो शुभ होती है। (देखें, भार्या विचार, श्लोक १५-१६)

इसी ग्रन्थ के आनुकूल्य प्रकरण, श्लोक ३७-३८ में एक और विशेष बात बताई गई है।

१. कन्या के चन्द्राष्टक वर्ग में, उस राशि में जो वर की जन्म-चन्द्र राशि हो, स्वयं चन्द्र अपनी कक्ष्या (२२°.३०' से २६°.१५') तक में रेखाप्रद हो तो दोनों एक दूसरे के लिए परम अनुकूल होते हैं।

२. कन्या के चन्द्र नवांश से वर का चन्द्र नवांश यदि ८८वां हो तो घोर कष्टकारक सम्बन्ध होता है।

एक नवांश का मान ३ अंश २० कला होता है तथा नक्षत्र के एक चरण का नवांश भी ३° २०' होता है। अतः सरल शब्दों में कहें तो देखिए कि कन्या का जन्म जिस नक्षत्र के जिस चरण में हुआ हो उससे ८८वें चरण में यदि वर का जन्म हो तो अशुभ सम्बन्ध होता है। माना किसी का जन्म आर्द्रा के द्वितीय चरण में हुआ तो अश्विनी के द्वितीय चरण (८८वां) में वर का जन्म हो तो सम्बन्ध अशुभ होगा।

स्त्री जन्म राशि ज्ञान का अन्य प्रकार :

स्यान्नाधिकं यत्र गुरोः सुरारे-
स्त्वेस्त्र जायाजननं नराणाम्।
वंशाभिवृद्धिं प्रवदन्ति तस्यां
स्यात्क्षीणसन्तानधनं फलेऽल्पे ॥४२॥

स्थानाधिकमिति। यत्र यस्मिन् राशौ सुरारेर्गुरोः शुक्रस्याष्टकवर्गे स्थानाधिकं फलाधिकं भवति चेत्तत्र नराणां मनुष्याणां जायायाः स्त्रिया जननं जन्म स्यादिति शेषः। तस्यां भार्यायां वंशाभिवृद्धि कुलवृद्धि प्रवदन्ति कथयन्ति (दैवज्ञाः)। अल्पे फले न्यूनफले राशौ यदि स्त्रिया जननं स्यात्तदा क्षीणं कृशमल्पं सन्तान सन्ततिर्धनं द्रव्यं स्यात्। तथा च मंत्रेश्वरः—

फलाधिकं भृगोर्यत्र तत्र भार्याजनिर्यदि।
तस्यां वंशाभिवृद्धिः स्यादल्पे क्षीणार्थसन्ततिः॥' इति

शुक्र के अष्टक वर्ग में जिस राशि में सबसे अधिक रेखाएं हों, यदि उसी राशि में स्त्री का जन्म हो तो वह कुल की वृद्धि करने वाली होती है।

यदि कम रेखा वाली राशि में स्त्री का जन्म हो तो मनुष्य की सन्तान व धन कम होता है।

स्त्री लक्षण का ज्ञान :

स्वभस्थितः स्वतुङ्गगः स्वमित्रभांशगोऽपि वा।
तदीशिता यदा तदा वदेत्कलत्रलक्षणम्॥४३॥

स्वभस्थित इति नगस्वरूपिण्येति छन्दः। यदा तदीशिता पुंजन्मलग्नराशितः सप्तमराशिस्वामीत्यर्थः। स्वभस्थितः स्वराशिगतः, स्वतुंगगोवाऽथवा स्वमित्रभांशगोऽपि ततस्तस्माद्धेतोः कलत्रस्य स्त्रिया लक्षणं चिन्हं स्वरूपादिकमिति यावत् वदेद् दैवज्ञ इति। तथा च देवशालः—

स्वभेव स्वोच्चगो वापि स्वमित्रर्क्षगतोऽपिवा।
स्वमित्रांशगतो वापि वक्तव्यं दारलक्षणम्॥' इति

यदि सप्तमेश अपनी राशि में, अपने उच्च मित्र की राशि में या अपने नवांश में स्थित हो तो उसके स्वरूप से ही स्त्री के स्वरूप लक्षणादि का विचार करना चाहिए।

आशय यह है कि उस ग्रह का जो शील स्वभाव, प्रकृति आकृति वर्ण आदि होगा तदनुसार ही स्त्री का स्वरूप समझना चाहिए। प्रश्न मार्ग नामक ग्रन्थ में इस विषय में कुछ विशेष बताया गया है। स्त्री के विचार में निम्नोक्त विषयों को उपकरण के रूप में प्रयोग करना चाहिए—

'सप्तम स्थान, सप्तमेश, सप्तम भाव द्रष्टा, सप्तमस्थ ग्रह एवं शुक्र।' प्रश्नमार्गकार का स्पष्ट मत है कि सप्तमेश ग्रह के गुणों की अनुकूलता पत्नी में स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है।

स्वस्वामिभूतामनुगुणस्वभावां कुर्युरङ्गनानाम्।
मेषाद्याः द्यूनगाः पुंसां स्वभावः सोऽत्र कथ्यते।"

(अध्याय २०, श्लोक ४)

'सप्तम स्थान में स्थित राशि अपने स्वामी के गुणों के अनुकूल स्वभाव पत्नी को प्रदान करती है। अतः अब सप्तमगत राशि के आधार पर स्वभाव निरूपण किया जा रहा है।'

यहीं पर आगे प्रश्नमार्गकार कहते हैं कि सप्तम में स्थित राशि से मेषादि क्रम से स्त्रियों का स्वभाव निर्दिष्ट कर रहा हूं।

सप्तमस्थ राशि	स्त्री का स्वभाव
मेष	देवताओं का दर्शन करने में तत्पर।
वृष	श्रेष्ठ अन्न-पानादिक देने वाली।
मिथुन	बर्तनों को खूब साफ रखने वाली।
कर्क	स्नान, वस्त्राभूषणों की शौकीन।
सिंह	सुगन्धि से प्रेम करने वाली।
कन्या	बर्तन आदि घरेलू उपकरणों का संग्रह करने वाली।
तुला	गम्भीर व चतुर वाणी वाली।
वृश्चिक	बात न मानने वाली।
धनु	शास्त्रों के श्रवण की इच्छुक।
मकर	सदा निकटता चाहने वाली।
कुम्भ	अन्य लोगों से चीजें लेकर संग्रह करने वाली।
मीन	अच्छे कार्य वाली व वाक्चतुर।

(वही, श्लोक ५)

आगे पुनः प्रश्नमार्गकार कहते हैं कि सप्तम में गुरु या शुक्र हों तो पत्नी सुन्दर होती है।

यदि सप्तम में अन्य ग्रह हों तो कैसे विचार करें। एतदर्थ सप्तमेश का अधिष्ठित नवांशेश एवं सप्तमेश की अधिष्ठित राशि का स्वामी, इन दोनों में से जो बली हो तदनुसार स्त्री के स्वरूपादि का विचार करना चाहिए।

अथवा शुक्र, सप्तमेश व सप्तम स्थान इन तीनों में से जो बली हो तदनुसार ही स्त्री का बाह्य व्यक्तित्व होता है।

कुछ विशेष शुभ योग भी प्रश्नमार्गकार ने बताए हैं—

१. शुक्र से नवम स्थान में शुभ ग्रह हो तथा शुक्र से नवमेश बलवान् हो तो पत्नी भाग्यवान्, सुपुत्रों वाली और धार्मिक स्वभाव वाली होती है।

२. सप्तमेश शुभ ग्रह हो तथा वह शुभ ग्रहों से युत या दृष्ट हो अथवा सप्तमेश जिस राशि में हो, उससे ५, ९, ७, ११ स्थानों में शुभ ग्रह हों या कोई अन्य बली ग्रह हो।

उक्त परिस्थिति में स्त्री व पुरुष दोनों सुखी व सुपुत्रवान् होते हैं। इसके विपरीत स्थिति में स्त्री बांझ या रोगिणी होती है।

३. सप्तम भाव पर अपने स्वामी की दृष्टि हो या सप्तमेश स्वयं सप्तम में स्थित हो।

अथवा सप्तमेश बलवान् होकर शुक्र से शुभ भावों में बैठा हो तो मनुष्य की पत्नी सम्पत्ति देने वाली होती है। अर्थात् स्त्री धन कमाने वाली तथा सम्पत्तिप्रद होती है।

(देखें, प्रश्न मार्ग, अ० २०, श्लोक २७-३२)

दानवार्चितलवप्रमाऽबला
वर्णरूपगुणसंयुताऽथवा ।
यामिनीरमणभागसम्मिता
मारमन्दिरपतेर्गुणान्विता ॥४४॥

दानवेति। दानवार्चितः शुक्रस्तस्य यो लवो नवांशराशिस्तस्य प्रमातुल्या, वर्णेन गौरादिकेन, रूपेणसौन्दर्येण, गुणेन शौर्यादिना, संयुता सहिता, अबला स्त्री, नराणामिति शेषः। अथवा यामिनीरमणश्चन्द्रस्तस्य यो भागो नवांशस्तस्य सम्मिता तुल्या, मारमन्दिरं सप्तमस्थानं, तस्य पते स्वामिनो ये संज्ञाध्यायोक्त गुणास्तै-रन्विता युक्ता स्त्रीति शेषः। तथा च ग्रन्थान्तरे—

शुक्रांशकसमाना स्त्री वर्णरूपगुणान्विता।
भवेच्छशांकतुल्या वा दारेशस्य गुणान्विता॥' इति

शुक्र की नवांश राशि के समान स्त्री का रंग रूप जानना चाहिए।

अथवा चन्द्रमा जिस नवांश में स्थित हो उसके स्वामी व सप्तमेश के मिश्रित गुणों के आधार पर स्त्री के रूपादि का विचार चाहिए।

स्त्री के कष्टकारक समय का ज्ञान :

शनौ कवेः कोणगते न शस्तं
तथाविधे देवगुरावसौख्यम्।
बलाबलत्वेन वदन्ति तेषां
विचक्षणा लक्षणमङ्गनायाः॥४५॥

शनाविति। कवेः शुक्रात्, कोणगते पंचमनवमराशिगते, शनौ सति तदा शस्तं शुभं न स्यादिति। तथाविधे देवगुरौ बृहस्पतौ सति चेत्तदा असौख्यं स्त्रिया इति शेषः। तेषां स्त्री कारकग्रहाणां बलाबलत्वेन विचक्षणा पण्डिता अंगनाया स्त्रिया लक्षणं चिह्नादि वदन्ति। तथा च ग्रन्थान्तरे—

शुक्रान्मन्दे त्रिकोणस्थे नेष्टं जीवेऽसुखप्रदम्।
तेषां बलाबलत्वेन भार्याया लक्षणं वदेत्।
एवमादिफलं ज्ञात्वा निर्दिशेच्छुक्रवर्गतः।" इति

शुक्र से त्रिकोण में यदि शनि हो तो पत्नी के लिए अशुभ फल देने वाला होता है।

शुक्र से त्रिकोण में यदि बृहस्पति हो तो कष्टकारक होता है। स्त्रीकारक ग्रहों की सबलता व निर्बलता का विचार भी स्त्री के प्रसंग में कर लेना चाहिए। यह समस्त विचार शुक्र के अष्टक वर्ग से करना चाहिए।

नीच स्त्री गमन योग :

भार्गवे यमलवे यमयुक्ते
मित्रपुत्रनिलये किमु काव्ये।
साधखेट उताधरभागे
भोगमिच्छति नताङ्गयनार्य्याः॥४६॥

भार्गव इति। भार्गवे शुक्रे यमलवे अन्त्यंशके मकरांशे कुम्भांशे वा, यमेन शनिना युक्ते सति, किमु काव्ये शुक्रे, मित्रः सूर्यस्तस्य पुत्रः शनिस्तस्य निलये गृहे चेत्यर्थः। उतायवा काव्ये शुक्रे, सायखेटे पापग्रहयुक्तेऽधरभागे नीचनवांशे वर्तमाने सति तदा, नताङ्गय नार्याः नीचस्त्रिया भोगमिच्छति वाञ्छति जनः। तथा च ग्रन्थान्तरे—

मन्दांशे मन्दसंयुक्ते मन्दक्षेत्रेऽथवा भृगौ।
नीचांशे पापसंयुक्ते नीचस्त्रीभोगमिच्छति ॥' इति

यदि शुक्र मकर या कुम्भ के नवांश में स्थित हो या शुक्र शनि से युक्त हो अथवा मकर या कुम्भ राशि में शुक्र स्थित हो।

अथवा शुक्र अपने नीच अर्थात् कन्या के नवांश में हो या वह पापग्रह से युक्त हो।

उक्त योगों में उत्पन्न मनुष्य नीच स्त्री से सम्भोग की इच्छा करता है।

प्रश्नमार्गकार ने उक्त योगों के अतिरिक्त शुक्र की नीच राशि में स्थिति होने पर भी उक्त फल को माना है।

(अध्याय २०, श्लोक १६)

पुरुष के व्यभिचारी होने के योग :

वसुधाभवभागयुतोऽथवा
वसुधाभवराशिसमाश्रितः ।
वसुधात्मभवेन युतेक्षितः
परदाररतो यदि भो भवी ॥४७॥

वसुधेति। यदि भः शुक्रो वसुधाभवभागयुतो मंगलनवांशगतः, अथवा वसुधाभवराशि समाश्रितो भौमराशिगतः सन् वसुधात्मभवेन भौमेन युतेक्षितो वा तदा भवी जन्मी परदाररतोऽन्यस्त्रीगामी भवेदिति शेषः। तथा च ग्रन्थान्तरे—

भौमांशगते शुक्रे भौमक्षेत्रगतेऽथवा।
भौमेन युक्तदृष्टे च परस्त्रीभोगमिच्छति ॥' इति

अन्यत्रापि—

मेदिनीतनयभागनिवासी, मेदिनीभवनिकेतन युक्तः।
मंगलेक्षणयुतः सितस्तदाऽन्यसुन्दरपरांगनारतः ॥' इति

यदि शुक्र मंगल के नवांश या मंगल की राशि में हो अथवा मंगल से युत या दृष्ट हो तो वह मनुष्य पराई स्त्री में आसक्त होता है।

इस योग का फल प्रश्नमार्गकार ने कुछ और बताया है।

भौमक्षेत्रे तदंशे वा तद्दृष्टो वाऽथ तद्युतः।
शुक्रो यस्य भवेत्पुंसः क्रूरमिच्छति साङ्गना ॥
(प्रश्नमार्ग, अ० २० श्लोक १५)

'मंगल के क्षेत्र, नवांश में या मंगल से युत दृष्ट शुक्र होने पर मनुष्य की पत्नी क्रूर पुरुष ? को चाहती है।'

'क्रूर पुरुष' यह अर्थ प्रश्नमार्ग के हिन्दी व अंग्रेजी टीका में बताया गया है। स्पष्ट है कि पुरुष शब्द का यहां अध्याहार किया गया है। यदि हम रमण, संभोग या अन्य किसी पर्याय का अध्याहार करें तो अर्थ होगा कि वह स्त्री संभोग के समय क्रूरता (आक्रामकता, तीव्रता या प्रगल्भता) की इच्छा करती है। मंगल का प्रभाव पराक्रम प्रदर्शन में निहित होता है। अतः सम्भोग के समय रमण शूरता अर्थ संगत ही रहेगा।

किन्तु संस्कृत टीका में दो उद्धरण दिए गए हैं जो मूल ग्रन्थकार के सम्मत अर्थ का समर्थन कर रहे हैं। यह विरोधात्मक फल विद्वानों द्वारा निर्णेय है क्योंकि दोनों आधार प्रामाणिक हैं।

स्त्री के व्यभिचारिणी होने का योग :

यस्याङ्गिनोऽनङ्गगृहे कुजांशे
पातङ्गिभांशेऽक्षयमेक्ष्यमाणे।
तत्स्त्रीत्वरी वारवधूश्च दासी
वा चञ्चलानायकतोषनिघ्नी ॥४८॥

यस्येति। यस्य अंगिनो नरस्यानंगगृहे सप्तम भवने, कुजांशे मंगलस्य नवांशे, पातंगिभांशे शनिराश्यंशे वा अक्षयमेक्ष्यमाणे भौमशनिदृष्टे सति चेत्तदा तस्य जातस्य स्त्री भार्या इत्वरी अभिसारिका भवतीति।

दासी दासपत्नी वा चचंला वा नायकतोषनिघ्नी पति सन्तोषहंत्री भवेदिति शेषः। तथा च ग्रन्थान्तरे—

'दारागारे मन्दभांशे कुजांशे, मन्दाराभ्यां वीक्षिते यस्य पुंसः।
स्यात्तद्दारा जारिणी चंचला वा, वेश्या दासी स्वामिसन्तोषनिघ्नी ॥' इति

यदि सप्तम स्थान में शनि की राशि या नवांश हो या सप्तम में मंगल का नवांश हो और शनि मंगल की वहां दृष्टि हो तो ऐसे व्यक्ति

की पत्नी वेश्या, दासी, चंचल स्वभाव वाली या पति को रुष्ट करने वाली होती है।

इस विषय में प्रश्नमार्गकार ने शुक्र के प्रसंग से भी स्त्री के व्यभिचार आदि का विचार किया है—

"चरराशिगतः शुक्रः पापमध्यगतो यदि।
मन्ददृष्टोऽथवायुक्तो भ्रष्टा स्यादस्य भामिनी॥'

(प्रश्नमार्ग, अध्याय २०, श्लोक १४)

यदि शुक्र चरराशि में स्थित हो तथा वह दो पापग्रहों के मध्य में हो तथा शनि दृष्ट या युक्त हो तो पुरुष की स्त्री भ्रष्ट आचरण करने वाली होती है।'

हमारे विचार से स्त्री के चरित्रादि विवेक में सावधानीपूर्वक गवेषणा करने की आवश्यकता होती है। प्रायः कर्क लग्न में उत्पन्न व्यक्तियों का दाम्पत्य जीवन सौम्य नहीं होता। कारण, इनके सप्तम स्थान में शनि की राशि होती है। अतः कर्क लग्नोत्पन्न व्यक्तियों की पत्नियां व्यभिचार करने वाली होंगी, ऐसा सामान्य नियम लोक दृष्ट नहीं है। अतः केवल शनि की राशि व शनि का नवांश सप्तमगत होने पर तथा शनि से दृष्ट व युत होने पर मनोनुकूल पत्नी की अप्राप्ति, उसका उग्र स्वभावादि फल तो कहे जा सकते हैं; किन्तु व्यभिचार जैसा उग्र फल घटित होने के लिए सप्तमेश, सप्तगत ग्रह व द्रष्टा ग्रह एवं शुक्र आदि की स्थिति सम्मिलित रूप से विचारणीय होनी चाहिए।

जातकादेशमार्ग में स्त्रीव्यभिचार के कुछ योग और भी बताए हैं—

"...अन्योन्यांशगयोः सितावनिजयोरन्यप्रसक्तांगना।
द्यूने वा यदि शीतरश्मिसहिते भर्तुस्तदानुज्ञया॥"

(जातकादेश मार्ग, भार्या विचार० श्लोक २५)

'यदि शुक्र व मंगल एक दूसरे के नवांश में हों तो स्त्री पर पुरुष में आसक्त होती है।

यदि सप्तम स्थान में चन्द्रमा, मंगल व शुक्र ये तीनों ग्रह हों तो पत्नी अपने पति की सहमति से परपुरुष संग करती है।

यहीं पर श्लोक ४ में एक और योग बताया है—

"'''सौम्ये नीचारातिभे सप्तमस्थे ।
भार्या दुष्टा जारिणी वैशिकी वा ॥"

'यदि सप्तम स्थान में सौम्य ग्रह नीच या शत्रु राशि में हों तो पत्नी जारिणी (परपुरुषगामिनी) या वेश्या होती है।'

स्त्री के कारण शोक व विपत्ति के योग :

असाध्युयुक्तांशगते सुधाकरे-
ऽवसानयाते किमनङ्गगेऽपि वा ।
सिते सपापे प्रमदानिमित्ततः
शुचं तथापत्तिमुपैति जन्मभृत् ॥४६॥

असाध्विति । सुधाकरे चन्द्रेऽसाधुयुक्तांशगते पापाख्यांशगेऽवसानयाते व्ययस्थानस्थिते किमथवाऽनंगगे सप्तमभावगतेऽथवासिपे शुक्रे सपापे पापसहिते सति तदा प्रमदानिमित्ततः स्त्रियाः कारणेन जन्मभृत् मनुष्यः, शुचं शोकं तथापत्तिं विपत्तिमुपैति लभते । तथा च ग्रन्थान्तरे—

सपापभागगे विधौ व्ययेऽंगनालयेऽपि चेत् ।
सपापभार्गवेऽङ्गना निमित्ततः शुचापदम् ॥' इति

पापग्रह युक्त नवांश में हो यदि चन्द्रमा स्थित हो और वह व्यय स्थान या सप्तम स्थान में हो।

अथवा शुक्र पापग्रह से युक्त हो तो मनुष्य को स्त्री के कारण शोक तथा विपत्ति का सामना करना पड़ता है।

इस विषय में **प्रश्नमार्गकार** ने जब शुक्र पापमध्यत्व में हो तब स्त्री कारण से विपत्ति को माना है। यह विपत्ति स्त्री की मृत्यु के बाद उत्पन्न कठिन पारिवारिक परिस्थितियां भी हो सकती हैं। वहां पर उल्लिखित योगों का सार निम्नलिखित है—

(i) शुक्र दो पापग्रहों के अन्तराल में शुभग्रहों की दृष्टि या युति से रहित हो तो पत्नी के कारण विपत्ति होती है या पत्नी की मृत्यु होती है।

(ii) शुक्र से चतुर्थ और अष्टम स्थान में यदि पापग्रह हो तथा वहां शुभयुति या दृष्टि न हो तो भी उक्त फल होता है।

(iii) जिस व्यक्ति की कुण्डली में सप्तम स्थान में सूर्य व राहु साथ

हों तो उसे स्त्री के कारण सर्वस्वनाश का सामना करना पड़ता है।

(प्रश्नमार्ग, अध्याय २०, श्लोक ११-१३)

स्त्री के कष्टकारक समय का ज्ञान :

बलेर्गुरोः शोध्यकशेषयोगं
तस्मात्कलत्रस्थफलेन हन्यात्।
विभज्य भैः शेषितमृक्षमाप्ते
मन्देऽङ्गनाकष्टमुत त्रिकोणे ॥५०॥

बलेरिति। बलेर्गुरोः शुक्रस्य शोध्यकशेषयोगं, एकाधिपत्यशोध्यावशिष्ट-रेखायोगं, तस्माच्छुक्रायर्याच्छुक्राधिष्ठितराशेर्यः सप्तमो राशिस्तत्र स्थितफलेन हन्याद् गुणयेत्। ततो भैः सप्तविंशत्या विभज्य विहृत्य शेषितं ऋक्षं नक्षत्रमाप्ते मन्दे उताथवा त्रिकोणे दशमैकोनविंशतिभे याते शनौ अंगनायाः स्त्रिया कष्टं दुःखं वाच्यमिति।

शुक्र के शुद्ध पिण्ड को शुक्र से सप्तम भाव में स्थित रेखायोग से गुणा करके २७ का भाग देना चाहिए। तब शेष संख्या के तुल्य अश्विन्यादि नक्षत्र में जब गोचर से शनि आए या उक्त नक्षत्र से त्रिकोण नक्षत्रों में जब शनि आए तो व्यक्ति की पत्नी को कष्ट होता है।

पूर्वोक्त उदाहरण में शुक्र तुला राशि में स्थित है। शुक्र से सप्तम राशि मेष है। मेष का रेखायोग ४ व शुक्र का शुद्ध पिण्ड १८३ है। इन्हें परस्पर गुणा करके २७ से भाग दिया—

१८३×४=७३२÷२७=लब्धि २७, शेष ३ अश्विनी से तीसरा नक्षत्र कृत्तिका है। कृत्तिका से त्रिकोण नक्षत्र उत्तराफाल्गुनी व उत्तराषाढ़ा है। अतः कृत्तिका, उ०फा०, उ०षा० में जब गोचर से शनि आएगा तो जातक की स्त्री को कष्ट होगा।

सप्तष्टक वर्ग के विचारणीय विषय :

स्वस्यायुष्यं जीवनोपायमृत्यू
दुःखं शोकं सर्वनाशं सुभीतिम्।

भास्वद्भूतश्चिन्तयेत्तद्विनाशे
क्लेशाद्यायुश्चिन्तनीयं ग्रहज्ञैः ॥५१॥

स्वस्येति । स्वस्यात्मन आयुष्यमायुः, जीवनस्य वृतेरुपायं साधनं, मृत्यु दुःखं, शोकं, सर्वनाशं सकलवस्तुनाशं, सुभीतिमतिभयं एतत्सर्वं भास्वद् भूतः शनेश्चिन्तयेद् विचारयेत् । तथा च देवशालः—

'आयुष्यं जीवनोपायं दुःखशोकमहद्भयम् ।
सर्वक्षयं च मरणं मन्देनैव निरीक्षयेत् ॥
बलहीनाः ग्रहा ये स्युर्जन्मकाले नृणां सदा ।
ग्रहोक्तफलभिन्नाः स्युर्विपरीतं शनेः फलम् ॥
स्वेषु स्वेष्वष्टवर्गेषु ग्रहोक्तफलमादिशेत् ।
अष्टवर्गाहृते तस्मिन् दशा ज्ञातुं न शक्यते ॥' इति

तदिति । तस्मान्मन्दाधिष्ठितराशेर्यद्विनाशमष्टमस्थानं तस्मिन् क्लेशादि, आयुः, ग्रहज्ञैश्चिन्तनीयं जातस्येति शेषः । तथा च देवशालः—

मन्दादष्टमतश्चायुः क्लेशाद्यं तु विचिन्तयेत् । इति

आयु अर्थात् जीवन की अवधि, आजीविका का साधन, मृत्यु, दुःख, शोक, सर्वस्वनाश और अत्यन्त भय, विपत्ति आदि का विचार शनि से करना चाहिए।

जन्म कुण्डली में शनि जिस राशि में स्थित हो, उससे आठवीं राशि से उक्त विषयों का विचार करना चाहिए।

मृत्यु समय का परिज्ञान :

निक्षिप्य पङ्क्त्यष्टगणं ग्रहेषु
कलेवरात्कालगतैः फलैस्तत् ।
संताड्यपिण्डं विभजेद्भसंख्यैः
शेषोन्मितर्क्षे मृदुगेऽज्चितेऽन्तः ॥५२॥

निक्षिप्येति । ग्रहेषु सूर्यादिषु सलग्नेषु, पंक्त्यष्टगणं शन्यष्टवर्गं निक्षिप्या-र्थान्मन्दाष्टकवर्गं निर्माय, ततस्त्रिकोणैकाधिपत्यशोधनं कृत्वा ततः पिण्डा-नयनरीत्या पिण्डं विधाय तत्पिण्डं कलेवराच्छनेर्लग्नात्कालगतैरष्टमस्थैः फलैः रेखाभिः सन्ताड्य संगुण्य, भसंख्यैः सप्तविंशत्या विभजेद् हरेद् । शेषोन्मितर्क्षे शेषतुल्यनक्षत्रे, मृदुगे शनावंचिते गुरौवाऽऽगच्छति तदान्तो मृत्युः स्यात् । तथा च देवशालः—

शनेरष्टकवर्गं च निक्षिप्याकाशचारिषु ।
त्रिकोणैकाधिपत्याख्यं शोधनं विरचय्य च ॥
पिण्डं संस्थाप्य गुणयेल्लग्नादष्टमगैः फलैः ।
सप्तविंशतिहृच्छेषं मृत्युकालंवदेद्बुधः ॥' इति

जन्मकालीन ग्रहों की स्थिति के आधार पर शनि का अष्टकवर्ग बना लेना चाहिए। तत्पश्चात् त्रिकोण शोधन व एकाधिपत्य शोधन कर लेना चाहिए। तब शनि के शोध्यपिण्ड को, शनि की अधिष्ठित राशि से अष्टम राशि के रेखा योग से गुणा करना चाहिए। इस गुणनफल को २७ से भाग देकर बची शेष संख्या तुल्य अश्विन्यादि नक्षत्र में या इस नक्षत्र से त्रिकोण नक्षत्रों में शनि या बृहस्पति आए तो मनुष्य मृत्यु को प्राप्त होता है।

मृत्यु का प्रकार, कारण व आयु की अवधि आदि का विस्तृत व प्रामाणिक विवेचन हम **आयुर्निर्णय** नामक ग्रन्थ के अभिनवभाष्य में कर चुके हैं। यह ग्रन्थ रंजन पब्लिकेशन्स दरियागंज, नई दिल्ली से प्रकाशित हो चुका है।

प्रस्तुत विषय को समझने के लिए पूर्वोक्त उदाहरण को लिया। वहां शनि मीन राशि में स्थित है। मीन से अष्टम राशि तुला है। तुला का रेखायोग १ है। शनि के शुद्ध योग पिण्ड १८२ को इससे गुणा कर २७ से भाग दिया—

१ × १८२ = १८२ ÷ २७ = लब्धि ६, शेष २० अश्विनी से गणना करने पर बीसवां नक्षत्र पूर्वाषाढ़ है तथा इसके त्रिकोण नक्षत्रों भरणी व पूर्वाफाल्गुनी में जब गोचर से शनि व बृहस्पति आएंगे तो मृत्यु समय जानना चाहिए।

प्रकारान्तर से मरण समय का ज्ञान :

किं कल्पतोऽन्तस्थफलैः प्रताडये-
त्पिण्डं तुरङ्गाशिवमितैर्विभाजयेत् ।
पिण्डं यदूर्ध्वं शतसम्मिताद्यदा
तस्माद् सुधीन्द्रः शतमेव शोधयेत् ॥५३॥
पिण्डमायुष उदीरितं ततो
वक्ष्यमाणविधिना प्रकल्पयेत् ।

वेलिकां मृत्युवरोऽथवा दशा-
छिद्रकेषु मरणं विनिश्चितम् ॥५४॥

किमिति। पिण्डमिति च। किमथवाकल्पतो लग्नादन्तःस्थफलैरष्टम-स्थरेखाभिः शोध्यपिण्डं प्रताडयेत् गुणयेत्। ततस्तुरंगाश्विमितैः सप्तविंशत्या विभाजयेत्। यल्लब्धं पिण्डं शतसम्मिताच्छततुल्याद् यदोर्ध्वमधिकं तस्माल्लब्ध-पिण्डात् सुधीन्द्रः पण्डितवरः शतमेव शोधयेत्। तदायुषो जीवितकालस्य पिण्डं वर्षवृन्दमुदीरितं कथितम्। ततस्माच्छोध्यावशिष्टपिण्डाद् वक्ष्यमाणविधिना समुदायाष्टकवर्गविधिना वेलिकां मृत्युसमयं प्रकल्पयेत् साधयेत्। अथवा दशाया विंशोत्तरी पूर्वायाश्छिद्रेषु दोषेषु मारकेशदशास्ति यावत्। मरणं निधनं विनिश्चितं ज्ञेयम्। तथा च ब्रह्मयामले—

'शोध्यादि गुणनं कृत्वा पिण्डं संस्थाप्य यत्नतः।
अष्टमस्थफलैर्हत्वा सप्तविंशतिभाजितम्॥
शतादूर्ध्वं तु तत्पिण्डं शतमेव त्यजेत्ततः॥' इति

इह पाठान्तरम्—

शतादूर्ध्वं भवति चेच्छतमेव विशोधयेत्। इति
'आयुः पिण्डं विजानीयात्प्राग्वद्वेलां तु कल्पयेत्।
दशाच्छिद्र समायोगे मृत्युरेव न संशयः॥' इति

देवशालजातकेऽपि—

'पिण्डं संस्थाप्य गुणयेल्लग्नादष्टमगैः फलैः।
सप्तविंशतिहृच्छेषं मृत्युकालं वदेद्बुधः॥' इति

लग्न या शनि के अष्टक वर्ग में लग्न से अष्टम स्थान में स्थित राशि में जितनी रेखाएं हों, उनसे शनि के शोध्यपिण्ड को गुणा कर २७ से भाग देने से लब्धि 'वर्षादि पिण्ड' होती है। यदि लब्धि वर्षादि पिण्ड १०० से अधिक हो तो उनमें से १०० घटा लेना चाहिए। इस प्रकार शेष 'आयु पिण्ड' होगा। अब इस आयु पिण्ड से समुदायाष्टक वर्गायुर्दाय पद्धति के अनुसार स्पष्ट आयु का साधन करें। इस आयु समाप्ति पर मृत्यु समय जानना चाहिए अथवा दशा के दोषों से मृत्यु समय जानना चाहिए।

समुदायाष्टक वर्ग में आयुर्दाय का साधन आगे अष्टकवर्गा-युर्दायाध्याय में बताया जा रहा है। इस प्रकार आयु का स्पष्ट साधन करना चाहिए। यह ग्रन्थकार का मत है। यही मत पण्डित देवशाल का

भी है। किन्तु फलदीपिका में मन्त्रेश्वर ने स्पष्ट कहा है कि आयु पिण्ड ही आयुमान है।

२७

'अष्टमस्थफलैर्लग्नात्पिण्डं हत्वा मुखैर्भजेत्।
फलमायुर्विजानीयात्प्राग्वद्वेता तु कल्पयेत्॥"

(अष्टकवर्गाध्याय, श्लोक १५)

यदि उक्त पद्धति से जो आयुमान हो तथा तभी दशाच्छिद्र अर्थात् मारक दशा हो तो निश्चय से मृत्यु कहनी चाहिए।

अब इस विषय को पूर्वोक्त उदाहरण के संदर्भ में समझते हैं। यहां जन्म लग्न मेष है। मेष से अष्टम स्थान में वृश्चिक राशि है। शनि के अष्टक वर्ग में वृश्चिक राशि में फल १ है। शनि का शुद्ध पिण्ड १८२ है। दोनों को परस्पर गुणा किया तो १८२ गुणनफल है। इसे २७ से भाग दिया तो लब्धि ६ व शेष २० है। अत: ६ वर्ष हुए। शेष को मास बनाने के लिए १२ से गुणा किया २०×१२=२४०÷२७=लब्धि ८ मास, शेष २४ को पुन: ३० से गुणा किया—२४×३०=७२०÷२७ लब्धि २६ दिन। शेष १८ को ६० से गुणा किया १८×६०=१०८०÷२७=लब्धि ४० घड़ी। इस प्रकार आयु हुई ६ वर्ष, ८ मास, २६ दिन, ४० घड़ी। यह १०० से कम है। अत: यही आयु पिण्ड या आयु माना जाएगा।

यदि लग्न से अष्टम स्थान की रेखाएं लग्नाष्टक वर्ग से लेकर गुणा करें तो १८२×४ रेखा=७२८÷२७=२६ वर्ष, ११ मास, १६ दिन ४० घड़ी स्पष्टायु हुई। यहां भी मण्डल संस्कार (१०० घटाना) नहीं होगा। किन्तु दशाविचार से देखने पर उक्त अवस्था बीतने पर मारक दशा नहीं है। अत: मृत्यु नहीं होगी, केवल कष्ट होगा।

मरण समय ज्ञान का तृतीय प्रकार :

समूलाष्टवर्गे फलं यत्र नास्ति
गृहे तत्र न स्यात्फलं तत्र याति।
यदा मन्दगस्तद्गृहे सूर्यसोमो
भवेतां दशाच्छिद्रके मृत्युमाहु:॥५५॥

समूलेति। समूलाष्टवर्गे पूर्वोक्त मन्दाष्टवर्गकेभ्यो मन्दाष्टवर्गे विरचय्य तत्र मन्दाष्टवर्गे यत्र यस्मिन् गृहेराशौ फलं रेखानास्ति तत्र फलमपि न स्यात्। यदा तत्र मन्दगः शनिर्यानि तथा तद्गृहे तस्मिन्राशौ यदा सूर्यसोमौ रविचन्द्रावपि मद्देशामागच्छेतां दशाच्छिद्रके मृत्यं मरणं बुधा आहुः। तथा च देवशालः—

'समूलाष्टकवर्गे च यत्र नास्ति फलं गृहे।
तत्र नास्ति फलं तत्र यदायाति शनैश्चरः।
तद्गृहे रविचन्द्रौ चेद्दशाच्छि द्रेमृतिं वदेत्॥' इति

शनि के अष्टक वर्ग में जिस राशि में रेखा न हो, उस राशि में गोचर से शनि, सूर्य व चन्द्रमा के आने पर मृत्यु जाननी चाहिए। साथ ही मारकेशादि ग्रहों की दशा का समन्वय भी कर लेना चाहिए।

मूल पाठ में मूलाष्टक वर्ग भिन्नाष्टक वर्ग का ही वाचक है।

कारक ग्रहों का ज्ञान :

पिता पिङ्गलः शीतभानुः सवित्री
कुजः सोदरो ज्ञः सखा मातुलेयः।
गुरुर्ज्ञान पुण्यात्मजा भोऽबला त-
दृक्ष ऐनिर्मृतिं तत्र काले करोति॥५६॥

पितेति। पिंगलः सूर्यः पिता, शीतभानुः सवित्री चन्द्रः माता, कुजः सोदरो भ्राता, ज्ञो बुधः सखा मित्रं मातुलेयो मातुर्भ्रातुरपत्यं, गुरुर्बृहस्पतिर्ज्ञानं मोक्षधीः पुण्यं धर्मः, आत्मजः पुत्रः, भः शुक्रोऽबला स्त्री, ज्ञेयेति शेषः। तद्भे तेषां भक्षत्रे तत्र काले समये ऐनिः शनि मृत्युं करोति। तथा च देवशालः—

'रविः पिता शशी माता भ्राता भौमो बुधः सुहृत्।
मातुलेयः स्मृतो जीवो ज्ञानपुण्ये सितः स्त्रियः॥
एषामृक्षे च तत्काले मरणं कुरुते शनिः॥' इति

सूर्य से पिता का विचार करना चाहिए। चन्द्रमा से माता, मंगल से भाई, बुध से मित्र एवं ममेरे भाई, गुरु से ज्ञान, पुण्य व पुत्र व शुक्र से स्त्री का विचार करना चाहिए।

जिस समय इन कारक ग्रहों के नक्षत्रों में गोचर से शनि आए तब तत्तत् सम्बन्धी लोगों की मृत्यु की सम्भावना होती है।

सम्बन्धिनाशिक नक्षत्रों का विचार :

> भावानां ये कारका नाकपाख्या-
> स्तेषां शोध्योच्छिष्टकं यत्फलं तत् ।
> भावस्थानैस्ताडितं भैर्विभक्ता-
> दुच्छिष्टर्क्षं सङ्गते गोचरेण ॥५७॥
>
> सञ्ज्ञासूनौ तस्य तातो जनित्री
> भ्राता बन्धुर्नन्दनः स्त्री स्वयं च ।
> तत्तुल्या वा नाशमायान्ति यद्वा
> भूयिष्ठाया नाशहेतू रमायाः ॥५८॥

भावानामिति । संज्ञासूनाविति च । भावानां लग्नादीनां द्वादशानां ये कारकाः नाकपाख्याः ग्रहास्तेषां यच्छोध्योच्छिष्टकं त्रिकोणैकाधिपत्यशोध्यावशिष्टं फलं राशिग्रहयोगपिण्डं वा तद् भावानां स्थाने रेखाभिस्ताडितं गुणितं कार्यं, ततो भैः सप्तविंशत्या विभक्ताद् यदुच्छिष्टर्क्षं शेषनक्षत्रं तद् गोचरेण संगते प्राप्ते संज्ञा सूनौ शनौ, तदा तस्य जातस्य तातः पिता, जनित्री माता, भ्राता सहोदरः, बन्धुः सगोत्रः, नन्दनः पुत्र, स्त्री, स्वमात्मा वा तत्तुल्यास्तेषां तातादीनां तुल्याः समाना वा नाशं क्षयमायान्ति, यद्वा भूयिष्ठाया, प्रभूतायाः रमायाः लक्ष्म्या नाशहेतु-विनाशकारणं भवेदिति शेषः ।

पहले ग्रहों का कारकत्व बताया है। इसके अतिरिक्त जन्म कुण्डली के बारह भावों का कारकत्व भी सूर्यादि ग्रहों को प्राप्त है। लग्नादि भावों से जिन सम्बन्धियों का विचार किया जाता है उनके मरणकारक समय का विचार यहां बताया जा रहा है। मूल श्लोकों व संस्कृत टीका में विषय कुछ उलझ गया है, अतः स्पष्टतया समझाने का प्रयास करते हैं।

लग्नादि बारह भावों के जो कारक ग्रह हों, उनके शोध्यावशिष्ट फल व शोध्यपिण्ड को अभीष्ट भाव के रेखा योग से गुणा कर पूर्ववत् २७ का भाग देना चाहिए। तब जो शेष बचे उसके तुल्य संख्यक नक्षत्र में जब गोचर से शनि आए तब पिता, माता, भ्राता, पुत्र, स्त्री आदि की मृत्यु समझनी चाहिए अथवा पिता आदि के समकक्ष मनुष्यों की मृत्यु होती है। यदि उक्त सम्बन्धियों की मृत्यु सम्भव न हो तो उक्त समय में सम्पत्ति का अत्यधिक नाश होता है।

माना पिता का विचार हमें अभीष्ट है तो सूर्य पिता का कारक है। सूर्य से नवम पितृभाव माना जाएगा। अतः सूर्य के शोध्यावशिष्ट फल को सूर्य से नवमभावस्थ राशि की रेखाओं से गुणा किया जाएगा। यही पद्धति सब जगह अपनायी जाएगी। जैसे मातृकारक चन्द्र व चन्द्र से चतुर्थ भाव, भ्रातृ कारक मंगल तथा मंगल से तृतीय भाव, मित्र कारक बुध व बुध से चतुर्थ भाव इसी प्रकार गुरु से पंचम स्थान, शुक्र से सप्तम स्थान की रेखाओं से गुणा कर शेष किया जाएगा। अपनी मृत्यु का विचार शनि व शनि से अष्टम भाव के आधार पर किया जाता है। अब इस विषय को उदाहरण द्वारा स्पष्ट करने से पहले इनके नाम का अर्थ समझते हैं। सामान्यतः जन्म नक्षत्र से बाईसवां नक्षत्र 'वैनाशिक नक्षत्र' कहा गया है। प्रायः बाईसवां नक्षत्र चन्द्र से अष्टम भाव में पड़ता है। अतः विनाशक होने के कारण ये वैनाशिक कहलाते हैं। यहां शनि अर्थात् मन्द के संयोग से विनाशकारक होते हैं, अतः मन्दवैनाशिक नक्षत्र कहे जाते हैं। काल प्रकाशिका में कहा गया है—

"द्वाविंशं जन्मनक्षत्राद् वैनाशिकमिति स्मृतम्।
विनाशं कुरुते यस्मात् तस्मात् वैनाशिकं भवेत्॥"

अब पूर्वोक्त उदाहरण में पिता का विचार करना अभीष्ट है। वहां पितृकारक सूर्य कन्या राशि में है तथा सूर्य का शोध्यावशिष्ट फल १५ है। सूर्य से नवम राशि वृषभ में रेखायोग २ है। इनकी गुणा करने पर प्राप्त गुणनफल ३० को २७ से भाग देने पर शेष ३ बचा। अतः अश्विनी से तृतीय नक्षत्र कृत्तिका में जब शनि आएगा तो पितृ नाश होगा। शोध्यावशिष्ट फल का तात्पर्य त्रिकोण व एकाधिपत्य शोधन के पश्चात् बचे हुए फल से है। यथा सूर्य के फल का तात्पर्य शोधनानन्तर शेष सारी शुद्ध रेखाओं का योग है।

मातृकारक चन्द्रमा मकर में है। चन्द्र का शोध्यावशिष्ट फल १४ है। चन्द्रमा से चतुर्थ स्थान में ५ रेखाएं हैं। दोनों को परस्पर गुणा किया तथा शेष क्रिया की: १४×५=७०÷२७=२ लब्धि, शेष १६।

सोलहवें नक्षत्र विशाखा में शनि का गोचर मातृनाशक होगा।

भ्रातृ कारक मंगल मीन में है। शोध्यावशिष्ट फल १२ को भौम से तृतीय स्थान वृष के फल १ से गुणा कर शेष पूर्ववत् क्रिया की

तो शेष तुल्य बारहवें नक्षत्र उत्तरा फाल्गुनी में जब शनि गोचर करेगा तो भ्रातृ नाश होगा।

मित्र कारक बुध तुला राशि में है। शोध्यावशिष्ट फल ६ है। बुध से चतुर्थ भाव में फल ५ है। दोनों के गुणनफल ३० को २७ से भाग देने पर प्राप्त शेष ३ तुल्य कृत्तिका नक्षत्र में शनि होने पर मित्रादि को कष्ट होगा।

पुत्र कारक बृहस्पति कन्या में है। उसकी त्रिकोणैकाधिपत्य शोधन के बाद बची समस्त रेखाओं का योग (शोध्यावशिष्ट फल) ५ है। बृहस्पति से पंचम मकर राशि का फल ३ है। ५×३=१५÷२७=१५ शेष। अतः पन्द्रहवें नक्षत्र स्वाति में जब शनि होगा तो पुत्र को कष्ट होगा।

स्त्री कारक शुक्र तुला में है। शोध्यावशिष्ट फल योग २२ है। तुला से सप्तम राशि मेष का फल ४ है। अतः २२×४=८८÷२७= शेष ७ तुल्य नक्षत्र पुनर्वसु में शनि होगा तो स्त्री को कष्ट होगा।

मृत्यु कारक शनि मीन में है। शोध्यावशिष्ट फल योग १६ को मीन से अष्टम तुला के फल १ से गुणा कर २७ का भाग दिया तो शेष १६ तुल्य नक्षत्र विशाखा में शनि हो तो स्वयं की मृत्यु या मृत्यु तुल्य कष्ट होगा।

यहाँ तक त्रिकोण शोधन व एकाधिपत्य शोधन के बाद बची रेखाओं के समस्त योग के आधार पर कष्ट कारक समय का परिज्ञान कराया गया। अब द्वितीय प्रकार अर्थात् शोध्य पिण्ड के आधार पर कष्टकारक समय का ज्ञान करने का प्रकार समझाते हैं। इसकी व्युत्पत्ति के लिए इसी अध्याय का श्लोक १०-११ भी देखें।

राशि पिण्ड व ग्रह पिण्ड के योग से ज्ञात शोध्यपिण्ड को तत्तद् भाव के बिन्दुमान (अशुभ फल) से गुणा किया जाएगा। गुणनफल को १२ से भाग देकर शेष तुल्य राशि (नक्षत्र नहीं) या उससे त्रिकोण राशियों में शनि के जाने पर पिता आदि का कष्टकारक समय जाना जा सकेगा। शुभ फल (रेखा) को ८ में से घटाने पर शेष बिन्दुमान होता है।

सूर्य का शोध्य पिण्ड २४४×६ नृप बिन्दुमान=१४६४÷१२=लब्धि १२२, शेष ०। अतः शून्य अर्थात् मीन राशि व मीन से

त्रिकोण कर्क वृश्चिक राशि में शनि होगा तो पितृ कष्ट होगा।

चन्द्र शोध्य पिण्ड १०७×मेष विन्दु ३=३२१÷१२=लब्धि २६ शेष ६। अतः धनु, मेष व सिंह के शनि में मातृ कष्ट होगा।

भौम शोध्य पिण्ड १६१×वृष विन्दु ७=१३३७÷१२=१११ लब्धि, शेष ५। अतः सिंह, मेष व धनु के शनि में भ्रातृ कष्ट होगा।

बुध शोध्य पिण्ड ६२×मकर विन्दु ३=१८६÷१२=लब्धि १५, शेष ६। अतः कन्या, मकर व वृष के शनि में मित्र व मातुलेय को कष्ट होगा।

गुरु का शोध्य पिण्ड ५८×मकर बिन्दु ५=२६०÷१२= लब्धि २४, शेष २। अतः वृष, कन्या व मकर में जब शनि गोचर करेगा तब पुत्र को कष्ट होगा।

शुक्र शोध्य पिण्ड १८३×मेष बिन्दु ४=७३२÷१२=६१ लब्धि, शेष ०। अतः मीन, कर्क व वृश्चिक का शनि स्त्री के लिए कष्टप्रद होगा।

शनि शोध्य पिण्ड १८२×वृश्चिक विन्दु ७=१२७४÷१२= लब्धि १०६ शेष २। अतः वृषभ, कन्या व मकर के शनि में स्वयं को कष्ट होगा।

यदि उक्त समय में तत्तत् सम्बन्धियों को कष्ट की सम्भावना न हो तो सम्पत्ति का नाश होगा।

निर्बल ग्रह का फल :

अवक्षहीना जनने विहङ्गा
भवन्ति ये जन्मभृतां च तेषाम्।
फलानि यानि प्रथमोदितानो-
तराणि मन्दस्य फलं प्रतीपम् ॥५६॥

अवक्षेति। जन्मभृतां प्राणिनां, जनने जन्मनि ये विहंगा ग्रहा अवक्षहीनाः प्रभूतविबलाः भवन्ति जायन्ते तेषां ग्रहाणां यानि फलानि शुभाशुभात्मकानि प्रथमोदितानिपूर्वोक्तानि तानीतराणि भिन्नानि स्युरिति शेषः। मन्दस्य शनेः फलं प्रतीपं विपरीतं ज्ञेयम्। तथा च देवशालः—

'बहुहीना ग्रहा ये स्युर्जन्मकाले नृणां सदा।
ग्रहोक्तफलभिन्नाः स्युर्विपरीतं शनेः फलम् ॥' इति

मनुष्य के जन्म समय जो ग्रह बहुत निर्बल हों, उनका पूर्वोक्त फल विपरीत होगा। अर्थात् अन्यथा प्राप्त शुभ फल अशुभ में व अशुभ फल शुभ में परिणत हो जाएगा।

किन्तु शनि के विषय में विपरीत समझना चाहिए। यदि शनि निर्बल हो तो शुभ फल व बली हो तो अशुभ फल होगा।

अपने-अपने अष्टक वर्ग से विचार आवश्यक :

स्वस्वाष्टवर्गेषु विहङ्गमोक्त-
फलं मनीषी कथयेदजस्रम्।
तस्मिन् दशा ज्ञातुमृतेऽष्टवर्गा-
न्न शक्यते ज्योतिषिकैः प्रवीणैः ॥६०॥

स्वस्वेति। स्वस्वाष्टवर्गेषु निजनिजाष्टकवर्गेषु पूर्वविरचितेषु रेखाष्टकवर्गेषु विहंगमानां ग्रहाणां यदुक्तं फलं तदस्रं नित्यं मनीषी विद्वान् कथयेत्। अष्टवर्गाद् अष्टकवर्गं ऋते विना तस्मिन् तत्र दशा अवस्था विंशोत्तरी पूर्वा वा ज्ञातुं प्रवीणैश्चतुरैर्न शक्यते। तथा च देवशालः—

'स्वेषु स्वेष्वष्टवर्गेषु ग्रहोक्तफलमादिशेत्।
अष्टवर्गादृते तस्मिन् दशा ज्ञातुं न शक्यते ॥' इति

शुभाशुभ फल का विचार अपने-अपने अष्टक वर्ग के आधार पर ही किया जाएगा। कारण यह है कि अष्टक वर्ग के ज्ञान के बिना मनुष्य के जीवन की अवस्थाएं (उतार-चढ़ाव) या विंशोत्तरी आदि दशाओं का सटीक फल नहीं जाना जा सकता।

[इति श्रीमत्पण्डितमुकुन्ददैवज्ञविरचितेऽष्टकवर्गमहानिबन्धे पं० सुरेशमिश्रकृतायां 'मञ्जुलाक्षरायां' हिन्दी व्याख्यायां ग्रहजन्याष्टकवर्गफलाध्याय पंचमोऽवसितः।]

६

भावजन्याष्टकवर्गफलाध्याय

भावों के विचारणीय विषय :

सञ्चिन्तयेत्संहननं च सम्पदं
देहप्रमाणं हरिजे विचक्षणः।
सौभाग्यसत्यद्रविणानि वित्तभे
सौत्थे स्वरं विक्रमसत्त्वसोदरान् ॥१॥

संचिन्तयेदिति। विचक्षणः पण्डितः, हरिजे लग्ने संहननं शरीरं, सम्पदं विभवं देहस्य प्रमाणं मानं संचिन्तयेत्। तथा च देवव्यासः—

मूर्तिं शरीरसम्पत्तिसांगोपांगविचिन्तनम्। इति

सौभाग्येति। वित्तभे धनस्थाने सौभाग्यं सत्यभूतं द्रविणं धनमेतानि सर्वाणि संचिन्तयेत्।

सौत्थ इति। सौत्थे तृतीये स्वरं गानशब्दं, विक्रमोऽतिशक्तिता, सत्त्वं बलं सोदरो भ्राता एतान् सर्वान् संचिन्तयेद् विचारयेत्। तथा च देवव्यासः—

'सत्यसौभाग्यवित्तं च द्वितीयस्थानतो विदुः।
स्वरं सत्त्वं विक्रमं च भ्रातृस्थानं तृतीयकम्॥' इति

लग्न से शरीर शोभा, वैभव, देह का परिमाण आदि देखा जाता है। धनस्थान से सुन्दर भाग्य, सत्यभाषण और धन सम्पत्ति देखनी चाहिए।

तृतीय स्थान से स्वर, पराक्रम, बल व भाइयों का विचार करना चाहिए।

जले जनित्रीसुखबन्धुमन्दिरं
मनो स्वभावं मतिमंत्रनन्दनान्।

निरीक्षयेज्ज्ञातिरिपुक्षतान्यरौ
स्मरे प्रवासं प्रमदासुखं विदुः ॥२॥

जल इति। जले चतुर्थे जननी माता, सुखं, बन्धुः, मन्दिरं गृहं, एतत्सर्वं निरीक्षयेत्। मताविति। मतौ पंचमे स्वभाव शीलं, मतिर्बुद्धिः, मंत्रोमारण-मोहनादि, नन्दनः पुत्र एतान्सर्वान् विलोकयेत्। तथा च देवशालः—

सुखबन्धु गृहं चैव मातृचिन्ता चतुर्थनः।
स्वभावं बुद्धिविस्तारं पुत्रस्थानं तु पंचमम् ॥' इति

ज्ञातीति। अरौ षष्ठे, ज्ञातिः सगोत्रः, रिपु, क्षत व्रणं एतानि विलोकयेत्। स्मर इति। स्मरे सप्तमभावे प्रवासं दूरदेशवासं, प्रमदायाः स्त्रियाः सुखं विदुर्जानन्ति। तथा च देवशालः—

ज्ञाति शत्रुक्षतादीनि षष्ठस्थानान्निरीक्षयेत्।
प्रवासं दारसौभाग्यं सप्तमस्थानतो विदुः ॥' इति

चतुर्थ स्थान से माता, सुख, बन्धुबान्धव, मित्र तथा मकान वाहनादि का विचार करना चाहिए।

पंचम स्थान से स्वभाव, विद्या, बुद्धि, मंत्र शक्ति व पुत्रादि का विचार करना चाहिए।

षष्ठ स्थान से बिरादरी (ज्ञाति जन), शत्रु, घाव व रोगादि का विचार करना चाहिए।

सप्तम स्थान से प्रवास, स्त्री सुख व कामोपभोगादि का विचार करना चाहिए।

निमीलने नाशगदाधिपञ्चता
विधौ विधिं पुण्यगुरु अथाम्बरे।
अवर्षणं वर्षणकं यशः कुपं
प्रतापवार्ताशुचिकर्मपौरुषम् ॥३॥

निमीलन इति। निमीलनेऽष्टमे, नाशः पलायनं, गदो रोगः आधिर्मानसी-व्यथा, पंचता मृत्युरेतत्सर्वं विलोकयेत्। विधावीति। विधौ नवमे विधिं भाग्यं पुण्यं धर्मं गुरुमेतत्सर्वं विचिन्तयेत्। यथाऽत्र देवशालः—

'आधिव्याधी मृतिं नाशमष्टमे परि चक्षते।
भाग्यस्थानं गुरुस्थानं धर्मस्थानं च तद् विदुः ॥' इति

अथेति। अथेत्यानन्तर्यं, अम्बरे दशमेऽवर्षणमवृष्टिः, वृष्टिः, यशः, कुपो

भूपतिः, प्रतापः प्रभावः, वार्ता जीविका, शुचिः शुद्धाचरणं, कर्म सदसत्कृत्यं पौरुषं पुरुषार्थमेतत्सर्वं विलोकयेत्। तथा च देवशालः—

कर्माजीवं तु दशमे प्रतापं पौरुषं शुचिम्।
कीर्ति क्षमापतिं तत्र वृष्ट्यवृष्टि निरूपणम्॥' इति

अष्टम स्थान से पलायन, रोग, मानसिक बीमारियां व मृत्यु का विचार किया जाता है।

नवम स्थान से भाग्य, गुरु व धर्म का विचार करना चाहिए।

दशम भाव से वर्षा की कमी, सूखा या अतिवृष्टि, कीर्ति, मान, भूस्वामित्व, प्रभाव, जीविका, सदाचार, अच्छे-बुरे काम और पुरुषार्थ का विचार करना चाहिए।

भवे विभूतिं द्रविणस्य लाभं
विनिर्दिशेद्बुद्धिसहायगेहे ।
व्ययं समस्तं दुरितं स्मृतिं च
शरीरनाशं निगदेद्विपश्चित् ॥१४॥

भव इति। भव एकादशे विभूतिमैश्वर्यं, द्रविणस्य धनस्य लाभं, प्राप्तिं विनिर्दिशेत्कथयेद् दैवज्ञ इति शेषः। बुद्धीति। बुद्धिसहायगेहे द्वादश स्थाने समस्तं सम्पूर्णं शुभाशुभं, व्ययं विगममवगमं वा, दुरितं पापं, स्मृतिं चिन्ता, शरीरस्य देहस्य नाशं मरणं विपश्चिद् विद्वान् निगदेत्। तथा च देवशालः—

ऐश्वर्यमर्थलाभं च एकादश गृहात् फलम्।
द्वादशं च व्ययस्थानं पापस्थानं प्रचक्षते॥
शरीरनाशदेहं च चिन्तास्थानं विनिर्दिशेत्॥ इति

एकादश स्थान से ऐश्वर्य, आय व धनागम का विचार करना चाहिए।

व्यय स्थान से सब प्रकार के व्यय (हानि व खर्च) का विचार करना चाहिए। साथ ही पापाचार, चिन्ता व देह की हानि का भी विचार द्वादश भाव से ही किया जाएगा।

भावों के कारकत्व व हानि वृद्धि का विस्तृत व प्रामाणिक विचार हमारी **भावमंजरी** नामक पुस्तक में किया गया है।

भावों की वृद्धि व हानि :

भावेष्विति द्वादशसु प्रचिन्तयेद्
भावाः सपापाः क्षयतां व्रजन्ति ते।
ते सिद्धिदा ये सहिताः शुभग्रहै-
र्मिश्रान्विता मिश्रफलप्रदा मताः ॥५॥

भावेष्विति। इत्येवं द्वादशसु भावेषु विचारणीयवस्तुनि प्रचिन्तयेद् विचारयेत्। ये भावा सपापाः पापसहितास्ते क्षयतां व्रजन्ति। ये भावः शुभग्रहैर-पापबुधचन्द्रगुरुभृगुभिः सहितास्ते सिद्धिदाः शुभफलदाः स्युः ये भावाः मिश्रैः शुभाशुभरूपग्रहैरन्विता युक्तास्ते मिश्रफलप्रदाः। मता ज्ञेयाः। तथा च देवशाल:—

'एवं द्वादशभावेषु चिन्तयेन्मतिमान्नरः।
पापान्वितास्तु ये भावास्ते भावाः नाशतां ययुः॥
सौम्याः सिद्धिकरा ज्ञेया मिश्रा मिश्रफलप्रदाः॥' इति

पूर्वोक्त प्रकार से भावों के कारकत्व (विचारणीय पदार्थों) का विद्वानों को विचार करना चाहिए।

जिन भावों में पापग्रह स्थित हों, वे भाव अपना फल नष्ट कर देते हैं। इसके विपरीत जिन भावों में शुभ ग्रह स्थित हों वे भाव सिद्धि-दायक होते हैं। मिश्रित ग्रहों से युक्त भावों का फल भी शुभाशुभ मिश्रित ही होता है।

यहां भावों की हानि व वृद्धि का सामान्य विचार बताया गया है। सामान्यतः शुभग्रह वृद्धिप्रद व पापग्रह हानिप्रद होते हैं। यदि अशुभ भावों में (६,८,१२) पापग्रह हों तो वे उन भावों की हानि करते हैं। यह हानि अभीष्ट होती है। अर्थात् वे क्रमशः रोग, मृत्यु व व्यय की हानि करने के कारण शुभ फलप्रद ही अन्यथावृत्या माने जाएंगे। इसी कारण केन्द्र त्रिकोणादि में शुभग्रह व पाप भावों में अशुभ ग्रह अन्ततोगत्वा शुभ फलप्रद ही माने जाते हैं। यही बात ग्रन्थकार आगे के श्लोकों में बता रहे हैं।

त्रिकादिभावगत ग्रहों का फल :

पुण्यपापविहगैस्त्रिकयातै-
स्तत्फलं निगदितं विपरीतम्।

पामरोऽपि कुरुते शुभतां स्व-
मित्रतुङ्गगृहगोऽथ शुभोऽपि ॥६॥
मूढनिम्नरिपुमन्दिरयातः
क्रूरतां प्रकुरुते त्रिकपः सन्।
तुङ्गगोऽप्यशुभदोऽथ खलोऽपि
स्वोच्चगः सुगृहपः शुभकर्त्ता ॥७॥

पुण्येति। मूढेति च। त्रिकयातैः षष्ठाष्टमद्वादशयातैः पुण्यपापविहगैः ग्रहैः क्रमेण तत्फलं विपरीतं शुभानामशुभफलं पापानां च शुभफलमित्यर्थः। निगदितं कथितं बुधैरिति शेषः।

पामर इति। पामरः पापग्रहोऽपि स्वमित्रतुंगगृहगो निजराशौ, मित्रराशौ, स्वोच्चराशौ वा स्थितः सन् शुभतां कुरुते। अथ शुभोऽपि सौम्यग्रहोऽपि मूढोऽस्तगतः, निम्नो नीचराशिगतः, रिपुमन्दिरयातः शत्रुराशिगतः, सन् क्रूरतां दुष्टतां प्रकुरुते विधत्ते। तथा च देवशालः—

'षष्ठाष्टमव्ययस्थैश्च विपरीतं शुभाशुभैः।
मित्रोच्चभवनस्थश्चेत्पापोऽपि शुभमृच्छति।
अरिनीचगतोमूढः शुभोऽपि क्रूरतामियात् ॥' इति

त्रिकप इति। सन् शुभग्रहस्तुंगगो निजोच्चराशि गतः सन् त्रिकपो दुष्टस्थानस्वामी अस्ति चेत्तदा अशुभदोऽशुभफलकर्त्ता भवेदिति शेषः। खलःपापग्रहोऽपि यदि स्वोच्चगः सुगृहपस्त्रिकेतरस्थानाधिपः स्यात्तदा शुभकर्त्ता भवेत्। यथा श्रुतकीर्तिः—

ईषत्सुहृत्स्वोच्चभृदिष्टदृष्टो, मित्रर्क्षजन्मोपचये बलीयान्।
योजातकेऽभूत्तु जन्मसंस्थो दद्याच्छुभं न त्वशुभोऽप्यनिष्टम् ॥
अपचयराशौ नीचे शत्रुक्षेत्रे च जन्मकाले स्यात्।
यस्तु स दद्यात्पापं फलमपि शुभदो यथाकालम् ॥ इति

यदि त्रिकस्थानों में शुभग्रह हों तो वे अशुभ फल देने वाले होते हैं। इनके (६,८,१२) त्रिक स्थानों में यदि अशुभ ग्रह हों तो वे शुभ फलप्रद ही समझे जाने चाहिएं।

यदि पापी ग्रह भी अपने ग्रह, मित्र ग्रह, मूल त्रिकोण या उच्चादि राशि या नवांश में होते हैं तो वे शुभ फल देने वाले होते हैं।

यदि शुभ ग्रह भी अस्तंगत, नीच या शत्रु राशि में या इनके नवांशों में होते हैं तो अशुभ फलप्रद ही माने जाएंगे।

यदि शुभग्रह त्रिकस्थानों के अधिपति हों तथा वे अपनी उच्चादि राशि में हों तो अशुभ फल देने वाले होते हैं। इसके विपरीत यदि पापग्रह शुभ स्थानों के स्वामी होकर स्वोच्चादि राशियों में स्थित हों तो शुभफल करने वाले होंगे।

भावगत रेखाओं का फल :

उत्तमा यमयुगोन्मितरेखा
मध्यमा गजविलोचनतुल्याः।
कुत्सिताः कृतधरामितरेखाः
पञ्चतां विनिगदन्ति कृशासु ॥८॥

उत्तमा इति। यमयुगोन्मितरेखा द्विचत्वारिंशत्तुल्या रेखा उत्तमाः शुभफलदाः भवन्तीति शेषः। गजविलोचनतुल्या अष्टाविंशत्तुल्या रेखाः मध्यमाः समानाः भवन्ति। कृतधरामितरेखाश्चतुर्दशतुल्यारेखाः कुत्सिता अधमाः भवन्ति। आभिः कृशास्वल्पासु चतुर्दशोनास्वित्यर्थः। तदा पंचतां मृत्युं निगदन्ति दैवज्ञा इति।

किसी भी भाव में यदि बयालीस रेखाएं हों तो उत्तम फल होगा। अट्ठाईस रेखाओं से युक्त भाव का फल मध्यम होता है। जिस भाव में चौदह रेखाएं हों तो उसका फल कनिष्ठ (अल्प) होता है। चौदह से कम रेखाएं भाव विनाशक होती हैं।

विफल भावों का फल :

बह्वोपतापेन युतोऽथ दुर्विधो-
ऽथो दुर्बलः पञ्चजनोऽतिदुःखितः।
दुःशेमुषीमान् विजयेन संयुतो
भार्याविनाशः सहसा समन्वितः॥९॥

पापान्वितोऽथो निजकर्म्मवर्जितो
भिक्षुस्ततो ह्यव्ययुतो धनादिषु।
गेहेषु रेखारहितेषु सर्वदा
वेद्यानि विज्ञैः क्रमशः फलानि हि॥१०॥

चद्रेति। पापेनि च। चद्रोपतापेन महारोगेण युतः सहितः, दुर्विधो दरिद्रः, दुर्बलः कृशोतिदुःखितः। दुःशेमुषीमान् कुबुद्धियुतः। विजयेनसंयुतः। भार्यायाः स्त्रिया विनाशो मरणम्। सहमा बलेन युक्तः। पापान्वितः। निजकर्मवर्जितः स्वकर्मणा रहितः। भिक्षुर्निर्धनः। द्रव्ययुतो धनी। जातः मनुष्यः स्यादिति शेषः। यदा मनादिषु तस्वादिषु द्वादशसु गेहेषु रेखारहितेषु सर्वदा नित्यं विज्ञैः पण्डितै: क्रमशः फलानि पूर्वोक्तानि वेद्यानि।

यदि लग्न भाव रेखा रहित हो तो मनुष्य महारोगी व शरीर-सुख से वंचित होता है।

धन भाव रेखा रहित हो तो मनुष्य दरिद्र, सहज भाव यदि रेखा रहित हो तो दुर्बल, पराक्रमहीन, चतुर्थ भाव रेखा रहित हो तो सुख से वंचित, सुतभाव रेखा रहित हो तो दुर्बुद्धि वाला, षष्ठ भाव रेखा रहित होने पर विजयी, शत्रुनाशक होता है। सप्तम भाव यदि रेखा रहित हो तो स्त्री-सुख से रहित, अष्टम भाव रेखा रहित होने पर बली (दीर्घायु), नवम भाव रेखा रहित हो तो पापी, दशम भाव रेखा रहित हो तो कर्म व मानादि से रहित, एकादश भाव रेखा रहित हो तो भिक्षुक, आय रहित व द्वादश भाव रेखा रहित हो तो धनी होता है।

ग्रन्थकार ने इस फल की प्रमाणिकता सारावली के आधार पर मानी है। सिद्धान्त यही है कि शुभ भाव कमजोर हैं तो शुभ फल की हानि और अशुभ भाव कमजोर हैं तो अशुभ फल की हानि अर्थात् शुभ फल होता है।

ग्रहाधिष्ठित भाव से फल कथन :

गृहान् समस्तान् गगनाटनाश्रितान्
प्रकल्प्य तत्तत्संज्ञितमुद्गमं त्विति।
फलानि तेभ्योऽष्टविधानि वेश्मनां
वशेन तत्तद्गगनौकसां भवेत्॥११॥

गृहानीति। गगनाटनाश्रितान् ग्रहाश्रितान् समस्तान् सर्वान् गृहान् राशीन् इत्येवं तत्संज्ञितमुद्गमं लग्नं प्रकल्प्य, तेभ्यः प्रकल्पित लग्नेभ्यस्तत्तद्गगनौकसां ग्रहाणां वेश्मनां भावानां, वशेनायत्त त्वेनाष्टविधानि फलानि वदेत्कथयेत्। तथा च मंत्रेश्वरः—

तत्तद्ग्रहाधिष्ठित सर्वराशी नृतत्संज्ञितं लग्नमिति प्रकल्प्य।
तेभ्यः फलान्यष्टविधान्यमूवस्तत्तद् ग्रहाद्भाववशाद् वदन्तु॥ इति

जन्म समय जो ग्रह जिस राशि में स्थित हो, उसी भाव को लग्न मानकर क्रमशः तन्वादि बारह भावों की कल्पना कर लेनी चाहिए।

तब भावों के कारक ग्रहादि के आधार पर तत्तद् भावों व उनके विचारणीय विषयों का विचार करना चाहिए।

यह बात सोदाहरण पिछले अध्याय में बताई जा चुकी है। सूर्यादि ग्रह क्रमशः पिता, माता, भाई, मित्र, पुत्र व स्त्री आदि के कारक होते हैं। अतः भावों का विचार करते समय ग्रहाधिष्ठित राशि को लग्न समझिए। तब नवम भाव पिता का है। अतः सूर्य कुण्डली में नवम भाव से पिता का, चन्द्र कुण्डली में चतुर्थ स्थान से माता का, मंगल कुण्डली में तृतीय स्थान में भाई का, बुध कुण्डली में चतुर्थ स्थान से मातुल पुत्र व मित्रादि का, बृहस्पति की कुण्डली में पंचम भाव से पुत्र का, शुक्र की कुण्डली में सप्तम भाव से स्त्री का व शनि की कुण्डली में अष्टम भाव से अपनी आयु का विचार किया जाता है।

गोचर से भावों के फल का ज्ञान :

> **तत्जन्मखचरगृहांशमितर्क्षभागं**
> **गच्छन्तु गोचरवशेन यदा विहङ्गाः।**
> **तत्तद्गृहोद्भवफलानि शुभाशुभानि**
> **कुर्युः कलेवरभृतां खचरास्तदानीम् ॥१२॥**

तदिति। यदा विहंगा ग्रहा गोचरवशेन तत्जन्मखचर गृहांशमितर्क्षभागं तत्तद्ग्रहराश्यंशकतुल्यराश्यंशं गच्छन्तु तदानीं खचराः ग्रहाः कलेवरभृतां मनुष्याणां तत्तद्गृहोद्भवफलानि तत्तद्भावजन्यफलानि शुभाशुभात्मकानि कुर्युः।

जन्म समय जो ग्रह जिस राशि के जिस नवांश में स्थित होता है वह ग्रह अपने शुभ या अशुभ फल को तभी प्रदान करेगा जब अपनी अधिष्ठित राशि के ही अधिष्ठित नवांश में गोचर करता है।

जन्म समय यदि सूर्य मकर राशि में नवांश में स्थित है तो अपना शुभ या अशुभ फल तभी दिखाएगा जब वह मकर में गोचर करते हुए मेष राशि के नवांश में पहुंचेगा। इसी प्रकार अन्य ग्रहों के विषय में भी समझना चाहिए।

गोचर से अष्टक वर्ग का फल :

अष्टवर्ग इह कारकाश्रित-
राशितः सति कृते यथालयम्।
जल्पिताङ्कमुपगच्छति ग्रह-
स्तन्निकेतनचयं शुभोऽशुभः ॥१३॥
किं करोत्यनुदिते विपरीत-
मेकभे बहुखगा उदिताङ्कान्।
संव्रजन्ति यदि चारवशेन
तन्निकेतफलपुष्टिमिहाहुः ॥१४॥

अष्टवर्ग इति। किमिति च। इहास्मिन् प्रकरणे कारकाश्रितराशितो भावकारकग्रहाधिष्ठितराशेरष्टवर्गेकृते सति यथालयं यद्भावं जल्पितांकं कथितांकं, ग्रहः सूर्यादिः, उपगच्छति प्राप्नोति, सशुभः, किमथवाऽशुभः, तस्य निकेतनस्य भावस्य चयं वृद्धि पुष्टिमिति यावत् करोति। अनुदितेऽकथिताङ्के तु विपरीतं करोति। यद्येकभे एकराशौ, बहुखगा बहवो ग्रहा उदिताङ्कान् कथितांकान् चारवशेन गोचरवशेन संव्रजन्ति गच्छन्ति, तदेह तस्य निकेतनस्य भावस्य यत्फलं तस्य पुष्टिमुपचयमाहुः कथयन्ति विद्वांस इति।

जन्म के समय जो ग्रह जिस राशि में अधिष्ठित हो, उसी राशि को लग्न मानकर आगे लग्नादि द्वादश भावों की कल्पना कर लेनी चाहिए।

अब उनका अष्टक वर्ग बनाकर देखना चाहिए कि किस भाव में अधिक रेखाएं हैं व कहां पर कम रेखाएं हैं।

जब ग्रह (कारक ग्रह) जन्मकालीन राशि से लग्नादि भावों में क्रमशः गोचर करेगा तो जहां जिस भाव में अधिक फल होगा, उस भाव सम्बन्धी फल की वृद्धि करेगा। इसके विपरीत जिन भावों में कम फल है, उन भावों में जब कोई ग्रह संक्रमण करेगा तो उस भाव सम्बन्धी फल की हानि करेगा।

यदि गोचरवश एक ही राशि में कई ग्रह साथ-साथ आ जाएं तो उस भाव की वृद्धि ही होगी।

कल्पना कीजिए कि सूर्य जन्म समय मकर राशि में स्थित है। मकर में ही लग्न भाव की कल्पना कर आगे कुम्भ में द्वितीय भाव,

मीन में तृतीय भाव, मेष में चतुर्थ भाव इत्यादि क्रम से भावों की कल्पना भी कर ली।

अब देखा कि सूर्य लग्न से किन-किन भावों में चार से अधिक रेखाएं हैं? उदाहरणार्थ कुम्भ में ७ रेखाएं, मेष में ६ रेखाएं व कर्क में ७ रेखाएं हैं तो जानना चाहिए कि जब सूर्य गोचर करते हुए कुम्भ राशि में जाएगा तो द्वितीय भाव की वृद्धि होगी अर्थात् धन, वाणी, कुटुम्ब आदि की वृद्धि होगी। जब सूर्य मेष राशि में जाएगा तो सम्पत्ति, वाहन, मातृ सुख आदि की वृद्धि होगी। जब कर्क में जाएगा तो स्त्री सुख आदि की वृद्धि होगी। इसी क्रम से जन्मकालीन ग्रहों की अधिष्ठित राशि से भावों की वृद्धि जानी जाएगी।

अब विपरीत क्रम से देखें। सूर्य से दशम अर्थात् तुला में ३ रेखाएं, एकादश स्थान वृश्चिक में २ रेखाएं हैं। निष्कर्ष यह निकला कि जब सूर्य का गोचर तुला व वृश्चिक में होगा तो क्रमशः मान, पितृ, सुख, राज्य, आय आदि की हानि होगी।

यदि कई ग्रहों के अष्टक वर्ग में किसी एक भाव में ही कई ग्रहों का गोचर होगा यथा चन्द्रमा भी जन्मकालीन राशि से किसी को पंचम में सूर्य, गुरु व शनि आदि भी अपनी जन्म समय की राशि से पंचम भाव में ही एक साथ ही गोचर करेंगे तो निश्चय से पंचम भाव अर्थात् विद्या, बुद्धि सन्तानादि की वृद्धि करेंगे, लेकिन यह फल तभी घटित होगा जब सूर्य, चन्द्रमा, गुरु व शनि के अष्टक वर्ग में पंचम स्थान में अधिक बिन्दु होंगे।

तत्कारकास्तुदयादिगृहे फलस्थे
जातस्य सिद्ध्यवसरस्य विनिर्णयाय।
वित्तत्फलस्य कुशलः प्रहितेऽष्टवर्गे
कुर्याद्दिशोऽष्टकगणं सुखर्स्मगानाम्॥१५॥

तत्कारकेति। तस्य कारकग्रहाधिष्ठितराशेस्तदुदयादिगृहे तत्तन्वादिभावे फलस्थे रेखास्थिते सति तदा जातस्य समुत्पन्नस्य विशः पुरुषस्य सुखर्मगानां ग्रहानामष्टवर्गे प्रहिते क्षिप्ते तस्य फलस्य सिद्धेः प्राप्तेरवसरस्य समयस्य विनिर्णयाय कुशलोवित्पण्डितोऽष्टकगणमष्टवर्गं कुर्यात्।

पूर्वोक्त श्लोक के भाव की पुष्टि करने के लिए ग्रन्थकार कह रहे हैं कि कारक ग्रहों से तन्वादि भावों में यदि रेखाएं होंगीं तभी शुभ फल या अशुभ फल (कम रेखाएं अशुभ व अधिक रेखाएं शुभ) होगा। यदि वहां रेखाएं न हों तब सर्वथा अशुभ फल ही समझना चाहिए। यह शुभाशुभ कब मिलेगा ? इसके लिए प्रस्ताराष्टक वर्ग साधन के उपरान्त यह निश्चय कर लेना चाहिए कि किस कक्ष्या में रेखाएं हैं।

पहले प्रस्ताराष्टक वर्ग के प्रसंग में शनि, गुरु, मंगल, सूर्य, शुक्र, बुध, चन्द्र व लग्न यह कक्ष्या क्रम बताया है। वहां पर प्रत्येक राशि में कक्ष्याओं का विस्तार व सीमा अंशों द्वारा निर्दिष्ट की गई है। अर्थात् ० अंश से ३°.४५′ अंश तक शनि की कक्ष्या आदि क्रम से यह भी समझाया गया है कि किस ग्रह की कक्ष्या प्रत्येक राशि में कितने अंशों से कितने अंशों तक रहती है। पिछले श्लोक के कल्पित उदाहरण में पंचम स्थान की वृद्धि बताई गई है। लेकिन उक्त फल कब मिलेगा ? एतदर्थ यह देखा जाएगा कि पंचम भावस्थ राशि में रेखाप्रद ग्रह कौन से हैं ? जो ग्रह रेखाप्रद होंगे उनकी कक्ष्या में जब फल कारक ग्रह जाएगा तब यह फल होगा।

भाव हानिकारक समय का ज्ञान :

संवीक्ष्य भावं सदसत्फलप्रदं
तस्योक्तपिण्डं परिताडितं फलैः।
तद्राशिजातैर्भहृतावशेषभे
यातीनजो भावफलस्य संक्षयः ॥१६॥

संवीक्ष्येति। सदसत्फलप्रदं शुभाशुभफलदायकं, भावं स्थानं संवीक्ष्य निरीक्ष्य तस्य लग्नस्य, यदुक्तं पिण्डं तद्राशिजातैस्तद्राशि समुत्पन्नैः, फलै रेखाभिः परिताडितं गुणितं, ततो भहृतावशेषभे सप्तविंशत्या विभाजिते शेषनक्षत्रपदेनज' शनिर्यास्यागच्छति तदा भावफलस्य स्थानफलस्य संक्षयोनाशोवाच्यं इति। तथा च ग्रंथान्तरे—

भावं विलोक्य सदसत्फलदायकं च तद्राशिसम्भवफलैश्च तदुक्त पिण्डम्।
निघ्नं भभक्तपरिशेषभे प्रयाति सौरिस्तदा भवति भावफलस्यनाशः॥ इति

पहले लग्न का पिण्ड साधन कर लीजिए। इसका साधन पीछे बताया जा चुका है। अब इस लग्न पिण्ड को तन्वादि द्वादश की रेखा

संख्या से गुणा कीजिए। इस गुणनफल को २७ से भाग दीजिए। लब्धि कर्म के योग्य नहीं होगी तथा शेष हमारी प्रस्तुत प्रक्रिया में उपयोगी होगा। शेष तुल्य अश्विन्यादि नक्षत्र में जब गोचर से शनि आएगा तो उस भाव की हानि समझनी चाहिए।

हमारे पूर्वोक्त वास्तविक उदाहरण में मेष लग्न है। मेष लग्न का पिण्ड २२० है। अब पहले लग्न के ही हानिकारक समय का ज्ञान करना अभीष्ट है। लग्न पिण्ड को लग्न फल ० से गुणा कर पूर्वोक्त प्रकार से क्रिया की: २२०×०=०÷२७=० अश्विनी से गणना करने पर शून्य संख्यक नक्षत्र रेवती है। अतः जब शनि रेवती नक्षत्र में गोचर करेगा तो लग्न सम्बन्धी हानि अर्थात् शरीर कष्ट होगा।

इसी प्रकार लग्न पिण्ड को धन स्थान के फल ५ से गुणा कर शेष क्रिया की २२०×५=११००÷२७=लब्धि ४०, शेष २० अश्विनी से गिनने पर बीसवां नक्षत्र पूर्वाषाढ़ा है। अतः पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र में जब शनि आएगा तो धन हानि आदि फल होंगे।

लग्न पिण्ड २२०×तृतीय नवम व दशम का फल ६=१३२०÷२७=लब्धि ४८, शेष २४ है। अतः अश्विनी से चौबीसवें नक्षत्र शतभिषा नक्षत्र में जब शनि आएगा तो भाई, भाग्य व राज्य स्थानों के संदर्भ में अशुभ फल होगा।

लग्न पिण्ड २२०×चतुर्थ भाव फल ३=६६०÷२७=लब्धि २४, शेष १२ अतः शेष तुल्य नक्षत्र उत्तराफाल्गुनी में जब शनि आएगा तो मातृकष्ट व सुख हानि होगी।

लग्न पिण्ड २२०×पंचम सप्तम व अष्टम भाव फल ४=८८०÷२७=लब्धि ३२ शेष १६ है। अतः शेष तुल्य सोलहवें विशाखा नक्षत्र में जब गोचर से शनि आएगा तो सन्तान, स्त्री व स्वयं को कष्ट होगा।

यहां पर यह बात भी ध्यातव्य है कि जिस भाव में शुभ ग्रह हों उस भाव की कम हानि, जहां पाप ग्रह हों उस भाव की अधिक हानि व जहां मिश्रित ग्रह स्थित हों उस भाव की साधारण हानि होती है। यह प्राचीन विद्वानों का मत है।

भावहानि ज्ञान का दूसरा प्रकार :

किं भावरेखागुणिते पुरोत्थ-
पिण्डे पतङ्गैर्विहृतावशिष्टे ।
राशौ शनिर्गच्छतु गोचरेण
यस्यां समायां शरदीह तस्याम् ॥१७॥
भावस्य तस्य क्षतिमादिशेत्सन्
यद्वा ततः पञ्चमभेऽङ्कभे वा ।
कालं सुधीमान् करणेभ्य एवं
कृत्वा शुभत्वे समवाप्तिकालः ॥१८॥

किमिति भावस्येति च । किमथवा पुरं लग्नं तस्मादुत्थमुत्पन्नं यत्पिण्डं तस्मिन् भाव सम्बन्धिनी या रेखा तया गुणिते ताडिते पतगैर्द्वादशभिर्विहृते विभक्ते यदविशिष्टं शेषं तस्मिन् राशौ यस्यां समायां गोचरेण शनिर्गच्छतु, इह तस्यां शरदि वर्षे सन् पण्डितस्तस्य भावस्य क्षतिं हानिमादिशेत् । यद्वा ततस्तस्माच्छेषराशेः सकाशात्पंचमभेऽङ्कभे नवमराशौ वा यस्यां समायां शनिरागच्छेत्तस्यां शरदि तस्य भावस्य हानिं कथयेत् । एवं सुधीमान् करणेभ्यो बिन्दुभ्यः कालं समयं कृत्वा तस्माच्छुभत्वेऽपि शुभफलस्य समवाप्तिकालः प्राप्तिसमयोवाच्यः । तथा च विश्वनाथः—

'पूर्वोक्तं सौरिनक्त काले रिष्टं कष्टं विश्वनाथस्तमाह ।
पिण्डे रेखा ताडितेभावशेषे राशौ तस्मिन् याति सौरः समायाम् ॥
यस्यां तत्तद्भावहानिं च विद्यात्प्राहुर्वर्षे वाथवा तत् त्रिकोणे ।
कृत्वा बिन्दुभ्यस्तु कालं सुधीमान् तस्माद्वाच्यः प्राप्तिकालः शुभत्वे ॥ इति

अस्यार्थ—लग्नपिण्डे भावफलेन गुणिते द्वादशभक्ते शेषराशौ तत् त्रिकोणे वा यस्यां समायां वर्षे सौरिर्याति तस्मिन्वर्षे तत्तद्भावहानिं विद्यात् । एवं सुधीमान् बिन्दुभ्यः कालं कृत्वा तस्माच्छुभत्वे प्राप्तिकालो वाच्यः । इति

लग्न पिण्ड को लग्नाष्टक वर्ग में प्रत्येक भाव में स्थित रेखाओं से गुणा कर गुणनफल को १२ से भाग देना चाहिए। तब जो शेष बचे उसके तुल्य मेषादि राशि में या उससे त्रिकोण राशि में जब शनि गोचर से आएगा तो उस समय उस भाव की हानि समझनी चाहिए।

इसी प्रकार लग्न पिण्ड को भावगत बिन्दु संख्या से गुणा कर १२ का भाग देकर शेष तुल्य राशि में या उससे त्रिकोण राशि में गोचर से भाव के फल को जानना चाहिए। यह नवीन लोगों का मत है।

लग्न के पूर्वोक्त पिण्ड २२० को लग्नगत फल ० से गुणा किया तथा गुणनफल ० को १२ से भाग दिया तो शेष ० तुल्य राशि मीन में या मीन से त्रिकोण राशि कर्क व वृश्चिक में जब शनि आएगा तो लग्न की हानि होगी।

इसी प्रकार तृतीय, नवम व दशम भावगत फल ६ से लब्ध पिण्ड को गुणाकर गुणनफल १३२० में १२ से भाग दिया तो शेष ० तुल्य राशि मीन में व त्रिकोण राशियों कर्क व वृश्चिक में शनि का गोचर इन भावों से सम्बन्धित फल की हानि करेगा।

इसी प्रकार बिन्दुओं की संख्या से यथावत् क्रिया करके शुभ फल को भी जानना चाहिए।

अरिष्टकारक मास का ज्ञान :

> **यस्मिन्भेऽस्ति विनाशगेहरमणस्तस्य त्रिकोणं फलं**
> **तेनायुर्गृहजं फलं विनिहतं भानूद्धृतोच्छिष्टभम्।**
> **तद्युक्ते तपने त्रिकोणभवने तस्मादुताहो वदे-**
> **द्रिष्टं मासमुत प्रसूजनकयोर्भावाद्बुधः कल्पयेत्॥१६॥**

यस्मिन्निति। विनाशगेहं जन्मलग्नादष्टमस्थानं, तस्य रमणः स्वामी तस्य यस्त्रिकोणं त्रिकोणशोध्यावशिष्टं फलं तेन फलेन आयुर्गृहजं लग्नाष्टवर्गे यन्मृत्यु-भावस्थितं फलं रेखायोगस्तद् विनिहतं गुणितं कार्यं, ततो भानुभिर्द्वादशभिरुद्धृते विभक्ते यदुच्छिष्टं शेषं तत्तुल्यभं तत्समराशिस्तस्मिन् युक्ते तपने सूर्ये, उताहो तस्माच्छेषतुल्यराशेर्नवमे पंचमे राशौ वा तपने सति तदा रिष्टं कष्टं मासं कथयेत्। दैवज्ञ इति शेषः। उताथवा प्रसूजनकयोर्मातापित्रोर्भावात्स्थानाद् बुधः पण्डितो रिष्ट मास कल्पयेत्। तथा च विश्वनाथः—

> मृत्युभावेशभात्कोणघ्नं फलं, मृत्युजं सूर्यशेषर्क्षयुक्ते रवौ।
> तत् त्रिकोणेऽथवा रिष्टमासं वदेत्तातमात्रोर्गृहाच्चेऽथवा कल्पयेत्। इति

अस्यार्थः—मृत्युभावेश्वरो यस्मिन् राशावस्ति तत् त्रिकोण न शोधित-फलेन मृत्युजं मृत्युभावस्थितं फलं गुणितं सूर्यशेषे द्वादशभक्ते शेषर्क्षयुते शेषराशि-युक्ते तत् त्रिकोणे वा रवौ रिष्टमासं वदेत्। अथवैवं तातमात्रोर्गृहात् कल्पयेत्।

जन्म समय, जन्म लग्न से आठवें स्थान का स्वामी जिस राशि में स्थित हो, उस राशि की लग्नाष्टक वर्ग से रेखाएं जान लें। यहां पर त्रिकोण शोधन के उपरान्त बची हुई रेखाएं ली जाएगी। इन रेखाओं से

अष्टम भाव (लग्न से) की रेखाओं को गुणा करना चाहिए। अष्टम भाव की रेखाएं त्रिकोण शोधन से रहित ली जाएंगी। इस गुणनफल में १२ से भाग देना चाहिए। जो शेष बचे उसके तुल्य मेषादि राशि में या उससे त्रिकोण राशि में जब सूर्य आएगा तब उस मास में रिष्ट (कष्ट) कहना चाहिए। इसी प्रकार माता-पिता आदि के भी अरिष्ट मास का निर्णय कर लेना चाहिए।

उदाहरण से इसे समझते हैं। जन्म लग्न मेष है। अष्टमेश मंगल मीन राशि में स्थित है। मीन राशि में त्रिकोण शोधन के उपरान्त रेखा संख्या २ है। अष्टम भाव की रेखा संख्या त्रिकोण शोधन से पूर्व ४ है। इन्हें गुणा किया तथा गुणनफल ८ को १२ से भाग दिया तो लब्धि शून्य व शेष ८ बचा। अब मेष से गणना करने पर आठवीं राशि वृश्चिक है। अतः वृश्चिक, मीन व कर्क राशियों में जब सूर्य गोचर करेगा तो इन्हें शरीर कष्ट होगा।

इसी प्रकार माता आदि का अरिष्ट मास जानना चाहिए। जन्म से चतुर्थ स्थान का स्वामी चन्द्रमा मकर राशि में है। मकर का स्वामी (चन्द्रराशीश) शनि मीन में स्थित है। अब मातृ कारक चन्द्रमा के अष्टकवर्ग में मीन राशि में त्रिकोण शोध्यावशिष्ट रेखाएं ० हैं तथा चन्द्रमा से चतुर्थ स्थान मेष में रेखा योग १ है, इन्हें परस्पर गुणा कर १२ से भाग दिया तो शेष मीन राशि में व इससे त्रिकोण राशियों कर्क व वृश्चिक में जब गोचर से सूर्य आएगा तो माता को कष्टकारक मास होंगे।

इस पद्धति से पितृविचार सूर्य से, मित्रादि विचार बुध से भ्रातृविचार मंगल आदि से करना चाहिए।

अरिष्ट मास जानने का दूसरा प्रकार :

पातङ्गेरुदयस्य यो मृतिपतिस्तस्यान्तकं पिण्डितं
यत्तन्नैधनगेहमानगुणितं मार्त्तण्डशेषर्क्षगे।
भानौ चेत्तननाशनं किमु ततो धीनन्दभे भास्करे
सम्प्राप्ते भविनाशनं निगदितं स्यात्सर्वतोऽयं विधिः ॥२०॥

पातगेरिति। पातंगः शनेयउदयस्य लग्नस्य यो मृतिपतिरष्टमेशस्तस्यान्तकं तत्पर्यन्तमर्थाच्छन्यधिष्ठितराशितो लग्नाष्टमेशाधिष्ठितराशिपर्यन्तं यत् पिण्डितं

तन्मध्यस्थरेखाणामैक्यं नैधनगेहमानगुणितं मृत्युभावस्थफलेन गुणितं मार्तण्ड शेषभंगे द्वादशभिः शेषितनक्षेत्र गते भानौ सति तदा चेतनस्य प्राणिनो नाशनं मरणं वाच्यम्। किमु अथवा ततस्तस्माच्छेषतुल्यराशेर्धीनन्दभे पंचमनवमराशौ भास्करे सम्प्राप्ते तदा भविनोजन्मिनो नाशनं मरणं निगदितं कथितं दैवज्ञेनेति शेषः। अयं विधी रीतिः सर्वत्रस्यात्। तथा च विश्वनाथः —

सूर्यजाल्लग्नमृत्यवीश्वरान्तं च तत् पिण्डितं ताडितं मृत्युमानेन च।
सूर्यशेषर्क्षगे भास्करे नाशनं तत् त्रिकोणेऽथवा स्याद्विधिः सर्वत ॥ इति

जन्म समय शनि जिस राशि में स्थित हो उस राशि से और जन्म लग्न से अष्टम स्थानों के स्वामी जिन राशियों में स्थित हों, इन दोनों राशियों के बीच की राशियों की रेखाओं का योग कर लीजिए। यहां लग्नाष्टक वर्ग की रेखाएं लेनी होंगीं। इस योगफल को लग्न अष्टम-स्थान में स्थित रेखा योग से गुणा कर लीजिए। इस गुणनफल को पूर्ववत् १२ से भाग देकर शेष तुल्य राशि या उससे त्रिकोण राशि मे जब गोचर से सूर्य आएगा तब मनुष्य की मृत्यु समझनी चाहिए। इसी प्रकार अन्य भावों के कारक ग्रहों से उन उन सम्बन्धियों के कायकष्ट का समयजानना चाहिए। अथवा प्रत्येक भाव से सम्बन्धित वस्तुओं की हानि का समय जानना चाहिए।

पूर्वोक्त उदाहरण में जन्म समय शनि मीन राशि में स्थित है। जन्म लग्न का अष्टमेश मंगल भी शनि के साथ मीन राशि में ही स्थित है। इन दोनों की मध्यवर्ती रेखाएं केवल मीन राशि की ही मानी जाएंगी। अतः रेखा योग ५ को लग्न से अष्टमस्थ रेखा योग (लग्नाष्टक का ग्रहण है) ४ से गुणा किया। गुणनफल २० को १२ से भाग दिया तो शेष ८ तुल्य वृश्चिक राशि व इसकी त्रिकोण राशियों कर्क व मीन में जब सूर्य का गोचर होगा तो शरीर में कष्ट होगा।

[इति श्रीमत्पण्डितमुकुन्ददैवज्ञविरचितेऽष्टकवर्गमहानिबन्धे पं० सुरेशमिश्रकृतायां 'मञ्जुलाक्षरायां' हिन्दीटीकायां भावजन्याष्टकवर्गफलाध्यायः षष्ठोऽवसितः ॥]

७

अष्टकवर्गायुर्दायाध्याय:

भिन्नाष्टक वर्गायुर्दाय :

पराशर आदि प्राचीन आचार्यों ने निसर्गायु, पिण्डायु, अंशायु, रश्मिजायु, चक्रायु, नक्षत्रायु व अष्टकवर्गायु प्रभृति प्रकारों से आयुर्दाय के विभिन्न प्रकारों का विवेचन किया है। इनमें से अष्टकवर्गायु प्रकार से जो आयु का साधन बताया गया है वह निश्चय से महत्वपूर्ण है। यद्यपि इस प्रकार से प्राप्त आयु लोक में प्रामाणिकता के आधार पर कनिष्ठ ही पायी जाती है। किन्तु ग्रन्थकार ने अपने अष्टकवर्ग महा-निबन्ध को सांगोपांग बनाने के लिए इसका विस्तृत विवेचन किया है। उसी के अनुरोध से यहाँ आगे प्रस्तुत विषय का विवेचन किया जा रहा है।

मण्डलशुद्ध मध्यमायु साधन :

पूर्वागतं राशिखभोगयोग-
पिण्डं त्रिधा त्र्यग्निनखैः क्रमेण।
संताडितं मासमुखं समाप्तं
कुर्यात्समानामुडुसम्मितानाम् ॥१॥

स्यान्मण्डलं चक्रत ऊर्ध्वकं त-
त्संशोध्य पाथोधिशरप्रमेभ्यः।
ऊर्ध्वं ततो वेदशरानपास्य
षडष्टाधिकेऽष्टाब्जकुतो विशोध्य ॥२॥

पूर्वागतमिति। स्यादिति च। पूर्वोक्त प्रकारेणागतमानीतं यद् राशिखभोग योग पिण्डं राशिपिण्डानां ग्रहपिण्डानां योगे कृते सति तदा जातं योगपिण्डं तद्

त्रिधा स्थानत्रये स्थाप्यम्। क्रमेणग्निग्निनखै स्त्रिभिरग्नि नखैश्च सताडितं गुणित कार्यं तदा मासमुखं मासादिकं स्यादिति शेषः। तन्मासादिकं समाद्यं वर्षादि कुर्याद् विदध्यात्। एवं सलग्नानां रव्यादीनां ग्रहाणां मध्यमभिन्नायुः साध्यम्। तत उडु-सम्मितानां सप्तविंशतितुल्यानां समानां वर्षाणां मण्डलं चक्रं स्यात्। चेद्यदि ग्रहाणां वर्षादिमध्यमायुर्मण्डलोनं स्यात्तदा यथावद्ग्राह्यम्। यदि ततः मण्डलादधिकमूर्ध्वं स्यात्तदा तत्पापोऽधिशर प्रमेभ्यश्चतुःपञ्चाशद् वर्षेभ्यो विशोध्य शेषं मण्डलशुद्धायुः स्यात्। यदि ततस्तस्माच्चतुःपंचाशद् वर्षेभ्योऽधिकं स्यात्तदा मध्यमायुर्वर्षेभ्यश्चतुः पंचाशत्तुल्यान्वालपास्य सशोध्य शेषं मण्डलशुद्धायुः स्यात्। यदि वस्वष्टोर्ध्व-मेकाशीतिवर्षेभ्य ऊर्ध्वं स्यात्तदा अष्टाभ्रकृतोऽष्टोत्तरशताद् विशोध्यापास्य शेषं मण्डल शुद्धायुः स्यात्। एतदायुर्विधानं मणित्यादिरचितग्रंथेभ्य उद्धृतं पुंजराजेन यथा—

> अथ प्रवच्मि दरष्टकवर्गजायुः स्वयामले तद्विधिना तदुक्तम्।
> भिन्नायुराख्यं समुदायकं च निजागमे यत् मणित्थ पूर्वैः॥ इति

मायुरानयनविधिमाह देवशालः—

> योगपिण्डं गुणित्वैवं सप्तभिर्गुणयेत्ततः।
> सप्तविंशोद्धृतात्लब्धं वर्षाण्यत्र भवन्ति हि।
> द्वादशादि गुणैर्लब्धिं मासाहर्घटिकास्तथा।
> सप्तविंशति वर्षाणि मण्डलं परिकीर्तितम्।
> तदूर्ध्वं भूमितः शोध्यं त्यजेद् भूमि तदूर्ध्वकात्।
> कुजाधिकं भवेद्यत्त मण्डलाच्छोधयेत्ततः॥ इति

पिछले अध्याय में त्रिकोण शोधन व एकाधिपत्य शोधन करके योग पिण्ड का साधन सोदाहरण बताया जा चुका है। वही योग पिण्ड यहां उपकरण के रूप में प्रयुक्त होगा। योग पिण्ड को तीन स्थानों पर स्थापित कर लीजिए। उसे क्रमशः ३, ३ व २० से गुणा करने पर मासादि मध्यमायु ज्ञात हो जाती है। मासों में १२ का भाग देने से लब्धि वर्ष व शेष मास होंगे। यही 'वर्षादि मध्यम भिन्नायु' कहलाती है। अब इस मध्यम भिन्नायु में से मण्डल को शुद्ध किया जाएगा। मण्डल या चक्र एक पारिभाषिक शब्द है। भिन्नायु के प्रसंग में मण्डल का मान सत्ताईस वर्ष होता है। यदि ग्रह या लग्न की मध्यम भिन्नायु २७ वर्ष से अधिक आ रही हो तो मध्यमायु के वर्षों को ५४ वर्षों में घटा लेना चाहिए। तब 'मण्डल शुद्ध भिन्नायु' ज्ञात हो जाएगी। यदि मध्यम भिन्नायु के वर्ष स्वतः २७ वर्ष से कम हों तो उनमें इस मण्डल संस्कार

को आवश्यकता नहीं होती। इस परिस्थिति में उन मध्यमायु वर्षों को ही मण्डल शुद्ध मान लिया जाएगा।

यदि मध्यम भिन्नायु के वर्ष ५४ वर्षों से भी अधिक आ रहे हों तो उन आयु वर्षों में से ५४ वर्ष घटाकर शेष को मण्डल शुद्धायु माना जाएगा।

यदि कभी मध्यम भिन्नायु के वर्ष ८१ वर्षों से अधिक हों तो मध्यमायु के वर्षों को १०८ वर्षों में से घटाना चाहिए। तब शेष वर्षादि मण्डल शुद्धायु माने जाएंगे।

ग्रन्थकार ने यह आयुविधान मणित्थ आदि आचार्यों के ग्रन्थों के आधार पर लिखा है। पुञ्जराज ने अपने ग्रन्थ में भी मणित्थादि पूर्व-वर्ती आचार्यों के प्रामाण्य पर यह आयु प्रकार बताया था। यह बात टीकोक्त उद्धरण में स्पष्ट है। संस्कृत टीका में ही श्री देवशाल के नाम से एक उद्धरण दिया गया है। उसमें मध्यम भिन्नायु साधन का प्रकार थोड़ा भिन्न है। क्रिया की केवल भिन्नता है अन्यथा परिणाम समान ही होंगे। वहां कहा गया है कि योग पिण्ड को ७ से गुणाकर गुणनफल में २७ का भाग दीजिए। लब्धि वर्ष होगी।

शेष को १२ से गुणाकर पुनः २७ का भाग देने पर लब्धि मास होगी।

शेष को ३० से गुणाकर पुनः २७ का भाग दीजिए। लब्धि दिन होगी।

शेष को ६० से गुणा करके २७ का भाग दीजिए तो लब्धि घड़ी होगी।

शेष को पुनः ६० से गुणा कर २७ का भाग देने पर लब्धि पल होगी।

श्लोकोक्त प्रकार से क्रिया कीजिए या फिर श्री देवशाल द्वारा बताए गए ढंग से साधन कीजिए, बात एक ही है। प्रत्यक्ष देखिए।

हमारे पूर्वोक्त उदाहरण में सब ग्रहों के योग पिण्ड इस प्रकार हैं—

सूर्य—२४४, चन्द्रमा—१०७, मंगल—१९१, बुध—६२, बृहस्पति—५८, शुक्र—१८३, शनि—१८२, लग्न २२०।

सूर्य के पिण्ड २४४ को तीन स्थानों पर रखकर क्रिया की २४४×३=७३२, २४४×३=७३२ व २४४×२०=४८८० यह मासादि मध्यमायु है। इसे वर्षादि बनाने के लिए ४८८० को ६० से भाग दिया तो लब्धि ८१ व शेष २० आया। शेष २० घड़ियां हैं। लब्धि को दूसरे स्थान के गुणनफल ७३२ में जोड़ा तो योगफल ८१३ हुआ। इस योगफल को ३० (दिन) से भाग दिया तो लब्धि २७ व शेष ३ बचा। यहां शेष ३ दिन हैं।

लब्धि २७ को प्रथम स्थान के गुणनफल में जोड़ा तो योगफल ७३२+२७=७५९ हुआ। इसमें १२ से भाग दिया तो लब्धि ६३ वर्ष हुए व शेष ३ मास हुए। इस प्रकार सूर्य की मध्यम भिन्नायु ६३ वर्ष, ३ मास, ३ दिन व २० घड़ी हुई।

अब दूसरे प्रकार से देखिए। सूर्य के योगपिण्ड २४४ को ७ से गुणा किया। गुणनफल १७०८ को २७ से भाग दिया तो लब्धि ६३ वर्ष हैं। शेष ७ है।

शेष को पुनः १२ से गुणा किया तो १२×७=८४ गुणनफल है। इसमें पुनः २७ से भाग दिया तो लब्धि ३ मास है। शेष ३ बचा। शेष ३ को ३० से गुणा किया तो गुणनफल ९० है। इसमें पुनः २७ से भाग दिया तो लब्धि ३ दिन है। शेष ९ बचा।

शेष ९ को पुनः ६० से गुणा किया तो गुणनफल ५४० हुआ। इसमें २७ का भाग दिया तो लब्धि २० घड़ी है। शेष ० है। अतः पल ० ही माने गए। इस प्रकार मध्यम भिन्नायु ६३ वर्ष, ३ मास, ३ दिन, २० घड़ी व ० पल हुई। आशय यही है कि किसी भी एक प्रकार को ग्रहण कर लीजिए। इसी तरह शेष चन्द्रादि ग्रहों की भी पिण्ड द्वारा मध्यम भिन्नायु ज्ञात की गई तो सब ग्रहों की मध्यम भिन्नायु इस प्रकार रही—

सूर्य—६३ वर्ष, ३ मास, ३ दिन, २० घड़ी, ० पल।
चन्द्र—२७ वर्ष, ८ मास, २६ दिन, ४० घड़ी, ० पल।
मंगल—४९ वर्ष, ६ मास, ६ दिन, ४० घड़ी, ० पल।
बुध—१६ वर्ष, ० मास, २६ दिन, ४० घड़ी, ० पल।
गुरु—१५ वर्ष, ० मास, १३ दिन, २० घड़ी, ० पल।
शुक्र—४७ वर्ष, ५ मास, १० दिन, ० घड़ी, ० पल।

शनि—४७ वर्ष, २ मास, ६ दिन, ४० घड़ी, ० पल।

लग्न—५७ वर्ष, ० मास, १३ दिन, २० घड़ी, ० पल।

अब इन आयु वर्षों को मण्डल शुद्धायु बनाना है। सूर्य के आयु वर्ष ५४ से अधिक होने के कारण उनमें से ५४ को घटाया जाएगा। शेष ९ वर्ष, ३ मास, ३ दिन, २० घड़ी सूर्य की मण्डल शुद्धायु हुई।

चन्द्रमा की मध्यमायु २७ से अधिक व ४४ वर्ष से कम है। अतः इसको ५४ में से घटाया जाएगा।

५४ वर्ष — २७ वर्ष,८ मास, २६ दिन,४० घड़ी=२६.३.३.२० मण्डल शुद्ध वर्षादि हुई।

मंगल की मध्यमायु को ५४ में से घटाया जाएगा। वैसा करने पर शेष ४ वर्ष, ५ मास, २३ दिन, २० घड़ी मंगल की मण्डल शुद्धायु हुई।

बुध व बृहस्पति की आयु २७ वर्षसे कम है। अतः यथावत् मान ली जाएगी। अर्थात् बुध की मण्डल शुद्धायु १६ वर्ष, ० मास, २६ दिन व ४० घड़ी हुई। गुरु की मण्डल शुद्धायु १५ वर्ष, ० मास, १३ दिन, २० घड़ी हुई।

शुक्र की मध्यमायु को नियमानुसार ५४ में से घटाया जाएगा। अतः शेष ६ वर्ष, ६ मास, २० दिन शुक्र की मण्डल शुद्धायु हुई। शनि की आयु को भी ५४ वर्षों में से घटाने पर शेष ६ वर्ष, ९ मास, २३ दिन, २० घड़ी मण्डल शुद्धायु हुई।

लग्न की मध्यमायु ५४ वर्षों से अधिक है। अतः नियमानुसार उसमें से ५४ वर्ष घटा दिए जाएंगे। तब शेष ३ वर्ष, ० मास, १३ दिन, २० घड़ी लग्न की मण्डल शुद्धायु हुई।

सुविधा के लिए इसे एक स्थान पर लिख लिया। सब ग्रहों की मण्डल शुद्धायु निम्नोक्त है—

ग्रह	मण्डल शुद्धायु

सूर्य—९ वर्ष, ३ मास, ३ दिन, २० घड़ी, ० पल।

चन्द्र—२६ वर्ष, ३ मास, ३ दिन, २० घड़ी, ० पल।

मंगल—४ वर्ष, ५ मास, २३ दिन, २० घड़ी, ० पल।

बुध—१६ वर्ष, ० मास, २६ दिन, ४० घड़ी, ० पल।

गुरु—१५ वर्ष, ० मास, १३ दिन, २० घड़ी, ० पल।
शुक्र—६ वर्ष, ६ मास, २० दिन, ० घड़ी, ० पल।
शनि—६ वर्ष, ९ मास, २३ दिन, २० घड़ी, ० पल।
लग्न—३ वर्ष, ० मास, १३ दिन, २० घड़ी, ० पल।

एक राशिगत हानि संस्कार :

यद्येकभे द्विवदना गगनेचराः स्यु-
स्त्वन्योन्यमत्र हरणं शकलं प्रकुर्यात्।
अन्ये जगुर्बलवतः खचरस्य तेषु
हानिं करोतियितर पुष्कर वासिनां नो ॥३॥

यदीति। यदि जन्मनि, एकराशौ, द्विवदना द्विप्रभृतयो गगनेचरा ग्रहाः स्युस्तदा तेषामेकस्थानस्थितानां ग्रहाणामायुषामन्योन्य परस्परमत्र शकलमर्धं हरणं हानिं प्रकुर्यात्। तेषु हानिसंस्कारयोग्येषु ग्रहेषु मध्येबलवतो बलिन एकस्य खचरस्य ग्रहस्यैवहानिं करोति। इतरपुष्करवासिनामन्यग्रहाणां हानिं नो करोतु। इत्यन्ये आचार्या जगुराहुः। तथा च देवशाल—

अन्योन्यमर्धहरणग्रहयुक्ते तु कारयेत्। इति

एतद् ब्रह्मयामले तु प्रकारान्तरेण प्रोक्तम्, तद्यथा—

एकस्थाने स्थिताश्चेत्स्युर्द्वयादयो यत्र खेचराः।
तदा बलयुतः खेटो हरत्येव न चापरः॥

यदि जन्म लग्न में एक ही राशि में दो या अधिक ग्रह एक साथ स्थित हों तो उन ग्रहों की पूर्वागत आयु को २ से भाग देकर शेष का ग्रहण करना चाहिए। अर्थात् उस पूर्वागत आयु का ठीक आधा भाग छोड़ देना चाहिए।

किन्तु कुछ आचार्यों के मतानुसार एक राशि में विद्यमान ग्रहों में से जो सबसे अधिक बलवान् हो, उसकी ही आधी आयु का हरण करना चाहिए। तब शेष अपेक्षाकृत निर्बल ग्रहों की पूर्वागत आयु ही मानी जाएगी।

ग्रन्थकार बताते हैं कि पूर्वागत आयु को हानि संस्कृत करना भी आवश्यक है। इन विशेष हानि संस्कारों में से प्रथम यह संस्कार है। हमें देखना चाहिए कि एक राशि में एकाधिक ग्रह स्थित हैं। जहां ऐसा हो वहां उन सब हानि संस्कार योग्य ग्रहों की आयु का आधा भाग

खरहगिति । खरहक् सूर्यः शशीचन्द्रस्तयोः सपातयो राहुकेतुभ्यांयुक्तयोर्द्व-योरेकतरे वा तदा तयोरेकस्य वाऽऽयुषोऽग्निलवं तृतीयभागहरणं कारयेत् । नतभ इति । यो ग्रहोनतभे नीचराशौ वर्तते तस्यायुषो दलमर्धं हरणं कारयेत् । तथा च देवस्वाम:—

'अर्केन्द्वोःपातसंश्रयात् । इति 'नीचेऽर्धमिति च ।'

तत इति । ततस्तदनु भयमौ शुक्रशनी, विना विहाय रविलुप्तेऽस्तंगते ग्रहेऽपि दलमर्धं हरणं कारयेत् ।

बहुतेति । यदैकस्य बहुताहरणे हान्याः बहुत्वेऽचिते प्राप्तेऽप्येकमेवहरण-वीर्यवद् कारयेत् । तथा च देवस्वामः—

'बहुत्वहरणेप्राप्ते कारयेद् बलवत्तरम् ।' इति

जन्म समय में जो ग्रह अपने निसर्ग शत्रु की राशि में हो उसकी आयु का तिहाई भाग छोड़ देना चाहिए।

जो ग्रह युद्ध में पराजित हो उसकी आयु का भी तृतीयांश छोड़ देना चाहिए।

सूर्य व चन्द्रमा इन दोनों में से जो भी राहु या केतु के साथ स्थित हो, उसकी आयु का भी तृतीयांश घटा लेना चाहिए। जो ग्रह अपनी नीच राशि में हो उसकी आयु का आधा भाग त्याग दिया जाता है।

जो ग्रह अस्तंगत हो, उसकी आयु के आधे भाग को भी छोड़ देना चाहिए। किन्तु शुक्र व शनि अस्तंगत हों तो इनका यह अस्तंगत हानि संस्कार नहीं किया जाता है।

यदि एक ही ग्रह को दो या तीन या चार हानि संस्कार नियमतः प्राप्त हो रहे हों तो जो हानि सबसे अधिक हो वही करनी चाहिए। तब शेष हानियां नहीं की जाएंगी।

यहां पर शत्रु क्षेत्रगत हानि, अस्तंगत हानि, पराजित हानि व राहु केतु युति हानि बतायी गयी हैं। सरल ढंग से विषय को समझाते हैं—

तृतीयांश का हरण होगा यदि

(i) ग्रह अपने निसर्ग शत्रु की राशि हो।

(ii) ग्रह युद्ध में पराजित हो।

(iii) सूर्य चन्द्र यदि राहु केतु से युक्त हों तो केवल इन दोनों का उक्त संस्कार किया जाएगा।

आधे भाग का हरण होगा यदि

(i) कई ग्रह एक ही राशि में स्थित हों।
(ii) ग्रह अपनी नीच राशि में स्थित हों।
(iii) शनि व शुक्र को छोड़कर शेष ग्रह यदि अस्तंगत हों।

यदि एक ही ग्रह को कई हानि संस्कार नियमतः सिद्ध होते हों तो देखिए कि किस संस्कार को करने से सर्वाधिक आयुभाग छोड़ने योग्य सिद्ध हो रहा है? तब उसी को ही कीजिए, शेष नहीं होंगे।

मंगल आदि पांच तारा ग्रहों का परस्पर युद्ध व समागम होता है। यह बात सूर्य सिद्धान्त में बतायी गयी है।

जो ग्रह श्यामल द्युति, रश्मिविहीन, रूक्ष कान्ति, कृश, पतित, दक्षिण दिशा में स्थित व आक्रान्त हो उसे पराजित समझना चाहिए। इसके विपरीत उत्तरस्थ, विपुल कान्ति वाला, स्निग्ध ग्रह विजयी होता है। शुक्र मतान्तर से दक्षिणस्थ भी विजयी होता है।

यदि दोनों ग्रह रश्मियुक्त, स्निग्ध व बड़े आकार वाले (अकृश) हों तो कोई भी पराजित नहीं होता। अर्थात् दोनों का समागम अर्थात् प्रीति है। ऐसी स्थित में (सदृश कलाएं होने पर) युद्ध हानि संस्कार नहीं किया जाएगा। इसके विशेष विवेचन के लिए हमारी पुस्तक **'भाव मंजरी'** (प्रणवाख्या) देखिए।

चक्रार्ध हानि संस्कार :

सर्वं खलोऽन्त्ये हरति ग्रहेन्द्रो
लाभे दलं खे त्रिलवं दयायाम्।
पादं विनाशेऽक्षलवं स्मरेऽङ्ग-
भागं हरेत्सत्खेचर स्तदर्धम् ॥६॥

सर्वमिति। खलः पापो ग्रहेन्द्रो ग्रहोऽन्त्ये द्वादशस्थानं सर्वं समस्तमायुर्हरति। लाभ एकादशे दलमर्धम्, खे दशमे त्रिलवं, दयायां नवमे पादं चतुर्थांशं, विनाशेऽष्टमेऽक्षलवं पंचमांशं, स्मरेसप्तमे ऽङ्गभागं षष्ठांशं हरति। सत्खचरः शुभग्रहः तदर्धं प्रोक्तहानेरर्धं हरेत्। तथा च ग्रन्थान्तरे—

'क्रूरः संस्थो व्यये सर्वं मयेऽर्धं हरति ग्रहः ।
व्यशं दशमे हरति नवमे चतुरशंकम् ॥
अष्टमे पंचमांशं तु षष्ठांश सप्तमे तथा ।
एवं चक्रार्धहानि स्यात् क्रूराणां व्योमगामिनाम् ॥ इति

श्रीवराहोऽपि—

'सर्वार्धत्रिचरणपंचषष्ठभागाः क्षीयन्ते व्ययभवनादसत्सु वामम् ।
सत्स्वर्धं ह्रसति तथैकराशिगानामेकोऽशं हरति बली तथाऽऽहसत्यः ॥' इति

यदि पापग्रह व्यय स्थान में हो तो उसकी समस्त आयु की हानि होती है।

यदि लाभ स्थान में पापग्रह हो तो उसकी आयु का अर्धहानि संस्कार किया जाता है।

यदि दशम स्थान में हो तो तृतीयांश की हानि की जाती है।

यदि नवम स्थान में हो तो चतुर्थांश की हानि की जाती है।

यदि अष्टम स्थान में हो तो पंचमांश की हानि होती है।

यदि सप्तम स्थान में हो तो आयु के षष्ठांश की हानि होती है।

इसके विपरीत शुभग्रह यदि इन भावों में हो तो इस प्रकार से हानि होती है।

व्यय भाव में आधे भाग की हानि, एकादश स्थान में चौथाई भाग की हानि, दशम भाग में छठे हिस्से की हानि, नवम स्थान में आठवें हिस्से की हानि, अष्टम स्थान में दसवें हिस्से की हानि व सप्तम स्थान में आयु के द्वादशांश की हानि होती है।

आशय यह है कि दृश्य चक्रार्ध में पाप ग्रह व शुभ ग्रह की स्थिति से क्रमशः भागहानि उक्त प्रकार से होगी। अब पूर्वोक्त उदाहरण के संदर्भ में एकराशिगतादि हानि संस्कारों की स्पष्ट प्रक्रिया को समझते हैं।

एकराशिगत हानि के लिए देखा तो ज्ञात हुआ कि सूर्य व बृहस्पति एक ही राशि में स्थित हैं। अतः इन दोनों की मण्डल शुद्धायु को आधा करके ग्रहण किया जाएगा—

सूर्य मण्डल शुद्धायु वर्षादि $\frac{९,३,३,२०,०}{२}$ = ४ वर्ष, ७ मास, १६ दिन, ४० घड़ी; यह एक राशिगत हानि संस्कृत सूर्य की आयु हुई।

गुरु मण्डल शुद्धायु $\frac{१५,०,१३,२०,०}{२}$ =७,६,६,४०,० वर्षादि आयु हुई।

इसी प्रकार बुध व शुक्र एक राशि में स्थित हैं। अतः इनकी आयु (मण्डल शुद्धायु) को भी आधा कर लिया गया।

बुध मण्डल शुद्धायु $\frac{१६,०,२६,४०,०}{२}$ = ८,०,१३,२०,० बुध की हानि संस्कृत हुई।

शुक्र मण्डल शुद्धायु $\frac{६,६,२,०,०,०}{२}$ =३,३,१०,०,० शुक्र की हानि संस्कृत आयु हुई।

मंगल व शनि भी एक राशि में ही स्थित हैं। अतः इनकी मण्डल शुद्ध आयु का भी आधा भाग त्याग दिया।

मंगल मण्डल शुद्धायु $\frac{४,५,२३,२०,०}{२}$ =२,२,२६,४०,० मंगल की मण्डल शुद्धायु हुई।

शनि मण्डल शुद्धायु $\frac{६,९,२३,२०,०}{२}$ =३,४,२६,४०,० यह शनि की हानि संस्कृत आयु हुई। शेष ग्रहों पर यह हानि संस्कार लागू नहीं होता है।

शत्रुक्षेत्रगत हानि संस्कार के लिए निसर्ग मैत्री का आश्रय लेकर देखा जाता है। प्रस्तुत उदाहरण में बृहस्पति कन्या राशि में स्थित है। कन्या का स्वामी बुध बृहस्पति का निसर्ग शत्रु है। अतः बृहस्पति की मण्डल शुद्धायु का तीसरा भाग छोड़ दिया जाएगा।

बृहस्पति मण्डल शुद्धायु १५,०,१३,२०,० वर्षादि को ३ से भाग देकर लब्धि का ग्रहण किया। लब्धि ५,०,४,२६,४० को मण्डल शुद्धायु में से घटाया—

बृहस्पति मण्डल शुद्धायु	१५,०,१३,२०,०	वर्षादि में से
तृतीयांश	— ५,०,४,२६,४०	घटाया
	१०,०,८,५३,२०	शत्रुक्षेत्रहानि संस्कृतायु

अन्य ग्रहों पर यह संस्कार लागू नहीं होता क्योंकि वे शत्रुक्षेत्रगत नहीं हैं।

युद्ध हानि संस्कार के लिए देखा तो ज्ञात हुआ कि कोई भी दो ग्रह समान कला वाले नहीं हैं अतः ग्रह युद्ध की सम्भावना निरस्त हो जाने के कारण पराजय हानि नहीं होगी।

पातहानि के लिए देखा कि सूर्य व चन्द्रमा सपात (राहु केतु युक्त) तो नहीं हैं? यहां सूर्य व चन्द्रमा क्रमशः कन्या व मकर में स्थित हैं और राहु केतु वृषभ व वृश्चिक राशि में हैं। अतः उक्त हानि यहां नहीं होगी।

जन्म समय कोई भी ग्रह नीच राशि में नहीं है अतः नीच क्षेत्रगत हानि भी यहां नहीं होगी।

अस्तंगत हानि केवल बृहस्पति पर ही लागू होगी क्योंकि वह अस्तंगत है। अतः गुरु की मण्डल शुद्धायु का आधा भाग ही ग्रहण किया जाएगा।

चक्रार्ध हानि के लिए देखा कि दृश्यार्ध में चन्द्र, मंगल, बुध, शुक्र व शनि स्थित हैं।

चन्द्रमा शुभग्रह है और दशम स्थान में स्थित है। अतः षष्ठांश हानि होगी। चन्द्रमा की मण्डल शुद्धायु के वर्षादि २६, ३, ३, २०, ० हैं। इनका षष्ठांश ४, ४, १५, ३३, २० है।

चन्द्र मण्डल शुद्धायु	२६, ३, ३, २०, ०	वर्षादि में से
षष्ठांश	— ४, ४, १५, ३३, २०	घटाया
	२१, १०, १७, ४६, ४०	चक्रार्ध हानि संस्कृतायु हुई।

मंगल पापग्रह द्वादश स्थान में है। अतः सर्वांश हानि होगी। मंगल की मण्डल व शुद्धायु ४, ५, २३, २०, ० है। इसका समस्त भाग त्याग देने से ०, ०, ०, ०, ० मंगल की चक्रार्ध हानि संस्कृतायु होगी।

यही स्थिति द्वादशस्थ शनि की भी होगी। अर्थात् उसकी भी सर्वांश हानि की जाएगी।

बुध शुभग्रह सप्तम स्थान में स्थित है। अतः उसके बारहवें भाग की हानि होगी। बुध की मण्डल शुद्धायु में द्वादशांश को घटाया—

बुध मण्डल शुद्धायु १६, ०, २६, ४०, ० वर्षादि
द्वादशांश — १, ४, २, १३, २० घटाया

१४, ८, २४, २६, ४० चक्रार्ध हानि संस्कृतायु ।

शुक्र भी सप्तमस्थ है। अतः उसकी भी द्वादशांश हानि होगी।

शुक्र मण्डल शुद्धायु ६, ६, २०, ०, ० वर्षादि
द्वादशांश — ०, ६, १५, १, ४० घटाया

६, ०, ४, ५८, २० चक्रार्ध हानि संस्कारायु ।

किन्तु इन समस्त हानियों का स्पष्टीकरण भी आवश्यक है। ये हानियां अभी मध्यम हैं। स्पष्टीकरण का प्रकार व आयुसाधन का प्रकार आगे बताया जा रहा है।

चक्रार्ध हानि का दूसरा प्रकार व आयु का साधन :

किं विग्रहाङ्के रसभाल्पके हरे-
दस्यांशकाद्यैः खगुणान् खगोनिते ।
कल्पे कुभाल्पे हर तल्लवादिक-
माकाशरामैः फलमिन्दुतुल्यतः ।।७।।

संशोध्य सौम्यग्रहवर्जितोदये
रूपं तदा लब्धिदलेन वर्जितम् ।
चक्रार्धहानेर्गुण एकभे खगा
द्विघ्न्यादयस्तेऽप्यधिकोऽजसो गुणः ।।८।।

दृश्यार्धहानेर्गुणकेन तेन च
पूर्वागतं व्योमसदां समादिकम् ।
आयुर्निहन्यादिह हानिसंस्कृतं
स्याद्वर्षपूर्वं द्युसदामदः समम् ।।९।।

सङ्गुण्य सागरयमज्वलनैर्विभज्य
माराधषट्छिखिभिरब्धमुखं तदायुः ।
अङ्गायुरङ्गगृहतुल्यसमाभिराढ्यं
भास्वद्गतोदयलवादियुतं चपूर्वम् ।।१०।।

अन्य ग्रहों पर यह संस्कार लागू नहीं होता क्योंकि वे शत्रुक्षेत्रगत नहीं हैं।

युद्ध हानि संस्कार के लिए देखा तो ज्ञात हुआ कि कोई भी दो ग्रह समान कला वाले नहीं हैं अतः ग्रह युद्ध की सम्भावना निरस्त हो जाने के कारण पराजय हानि नहीं होगी।

पातहानि के लिए देखा कि सूर्य व चन्द्रमा सपात (राहु केतु युक्त) तो नहीं हैं? यहां सूर्य व चन्द्रमा क्रमशः कन्या व मकर में स्थित हैं और राहु केतु वृषभ व वृश्चिक राशि में हैं। अतः उक्त हानि यहां नहीं होगी।

जन्म समय कोई भी ग्रह नीच राशि में नहीं है अतः नीच क्षेत्रगत हानि भी यहां नहीं होगी।

अस्तंगत हानि केवल बृहस्पति पर ही लागू होगी क्योंकि वह अस्तंगत है। अतः गुरु की मण्डल शुद्धायु का आधा भाग ही ग्रहण किया जाएगा।

चक्रार्ध हानि के लिए देखा कि दृश्यार्ध में चन्द्र, मंगल, बुध, शुक्र व शनि स्थित हैं।

चन्द्रमा शुभग्रह है और दशम स्थान में स्थित है। अतः षष्ठांश हानि होगी। चन्द्रमा की मण्डल शुद्धायु के वर्षादि २६, ३, ३, २०, ० हैं। इनका षष्ठांश ४, ४, १५, ३३, २० है।

चन्द्र मण्डल शुद्धायु	२६, ३, ३, २०, ०	वर्षादि में से
षष्ठांश	— ४, ४, १५, ३३, २०	घटाया
	२१, १०, १७, ४६, ४०	चक्रार्ध हानि संस्कृतायु हुई।

मंगल पापग्रह द्वादश स्थान में है। अतः सर्वांश हानि होगी। मंगल की मण्डल व शुद्धायु ४, ५, २३, २०, ० है। इसका समस्त भाग त्याग देने से ०, ०, ०, ०, ० मंगल की चक्रार्ध हानि संस्कृतायु होगी।

यही स्थिति द्वादशस्थ शनि की भी होगी। अर्थात् उसकी भी सर्वांश हानि की जाएगी।

बुध शुभग्रह सप्तम स्थान में स्थित है। अतः उसके बारहवें भाग की हानि होगी। बुध की मण्डल शुद्धायु में द्वादशांश को घटाया—

बुध मण्डल शुद्धायु	१६, ०, २६, ४०, ०	वर्षादि
द्वादशांश	— १, ४, २, १३, २०	घटाया
	१४, ८, २४, २६, ४०	चक्रार्ध हानि संस्कृतायु।

शुक्र भी सप्तमस्थ है। अतः उसकी भी द्वादशांश हानि होगी।

शुक्र मण्डल शुद्धायु	६, ६, २०, ०, ०	वर्षादि
द्वादशांश	— ०, ६, १५, १, ४०	घटया
	६, ०, ४, ५८, २०	चक्रार्ध हानि संस्कातायु।

किन्तु इन समस्त हानियों का स्पष्टीकरण भी आवश्यक है। ये हानियाँ अभी मध्यम हैं। स्पष्टीकरण का प्रकार व आयुसाधन का प्रकार आगे बताया जा रहा है।

चक्रार्ध हानि का दूसरा प्रकार व आयु का साधन :

किं विग्रहाङ्के रसभाल्पके हरे-
वस्यांशकाद्यैः खगुणान् खगोनिते।
कल्पे कुभाल्पे हर तल्लवादिक-
माकाशरामैः फलमिन्दुतुल्यतः ॥७॥
संशोध्य सौम्यग्रहवर्जितोदये
रूपं तदा लब्धिरसेन वर्जितम्।
चक्रार्द्धहानेर्गुण एकभे खगा
द्विघ्नाद्वयस्तेष्वधिकोऽसो गुणः ॥८॥
दृश्यार्द्धहानेर्गुणकेन तेन च
पूर्वागतं व्योमसवां समाविकम्।
आयुर्निहन्यादिह हानिसंस्कृतं
स्याद्वर्षपूर्वं द्युसदामदः समम् ॥९॥
सङ्गुण्य सागरयमज्वलनैर्विभज्य
नाराचषट्छिखिभिरब्दमुखं तदायुः।
अङ्गायुरङ्गगृहतुल्यसमाभिराढ्यं
भास्वद्गतोदयलवादियुतं द्युपूर्वम् ॥१०॥

किमिति । संशोध्येति । दृश्यार्द्धेति । संगुण्येति च । किं चार्यं । प्रकारान्तरेणेत्यर्थः । विगतो ग्रहो यस्मादेवं भूतमंगं तस्मिन् ग्रहेण रहितं लग्नमित्यर्थः । रसभाल्पहृराशेरल्पके न्यूनेऽस्य षड्भाल्पग्रहोनलग्नस्यांशकार्धैर्लवादिभिः खगुणान् त्रिशतं हरेत् । खगेनोनिते ग्रहरहिते कल्पे लग्ने यदि कुभाल्पके एकराशेन्यूने तदा तस्यैकराश्यल्पग्रहोनलग्नस्य लवादिकमंशादिकमाकाशरामैस्त्रिशता हर भज । तदा यत्फलं लभ्यते तद् इन्दुतुल्यतो रूपात् संशोध्य यदि सौम्यग्रहवर्जितोदये शुभग्रहरहिते लग्ने भवति तदा लब्धिः फलं तस्य दलमर्धं, तेन रूपमेकं वर्जितं रहितं कार्यम् । शेष चक्रार्धहानेर्दृश्यार्धहरणस्य गुणः स्यादिति । यदि एकभे एकराशौ, द्वित्र्यादयो द्वित्रिप्रभृतयः खगा ग्रहाः स्युस्तदा तेषां मध्येऽधिकौजसोऽधिकबलवतएकस्य ग्रहस्यैव गुणः कार्यः । अथादिकस्य बलवतो ग्रहस्यैव हानिः कार्या नेतरेषाम् । ततो व्योमसदां ग्रहाणां यत्पूर्वागतं समादिकं वर्षादिकमायुस्तत्ते न दृश्यार्धहानेर्गणकेन गुणयेत् । इहास्मिन्नायुर्दायसाधने सुसर्वग्रहाणां वर्षपूर्वं वर्षाद्यं हानिसंस्कृतमायुः स्यात् ।

अद इति । अदस्तत्समंसवं वर्षादिकं हानिसंस्कृतरूपं सागरयमज्वलनैश्चतुर्विंशत्युत्तरशतत्रयेण, संगुण्य गुणित्वा नाराचषट्छित्रिभिः पंचषष्ठ्युत्तर शतत्रयेण विभज्य यल्लभ्यते तदब्दमुखं वर्षादिस्पष्टभिन्नायुः स्यात् । तथा च देवशालः—

(३२४)
पश्चासतान् सकलान् कृत्वा भरांगेण विवर्धयेत् ।
(३६५)
मातंगलब्धं शुद्धायुर्भवतीति न संशयः ॥
पूर्ववद् दिनमासाब्दान् कृत्वा तस्य दशा भवेत् ।
एवं ग्रहाणां सर्वेषां दशा कुर्यात्पृथक्पृथक् ।
अष्टवर्गवगामार्गैः सर्वेषामुत्तमोत्तमः ॥' इति

अंगायुरिति । इत्येवमानीतं वर्षादि, अंगायुर्लग्नायुरंगगृहतुल्यसमाभिः स्पष्टलग्नराशितुल्यवर्षैराढ्यं युक्तं कार्यम्, ततस्तस्य लग्नायुषो सुपूर्वं दिनादिकं भास्वद्भि द्वादशभिर्हतं गुणितमुदयलवादि लग्नांशादि तेन युतं सहितं कार्यं तदा स्पष्टलग्नायुर्भवेत् । यथा च देवशालजातके—

राशितुल्यानि वर्षाणि लग्नस्यायुषि योजयेत् ।
अनुपातं च मासादौ लग्नस्यायुः स्फुटं भवेत् ॥' इति

स्पष्ट ग्रह के राश्यादि को स्पष्ट लग्न के राश्यादि में से घटाना चाहिए । शेष राश्यादि यदि ६ राशियों से कम हैं तो उस ग्रह की चक्रार्द्ध हानि होगी ।

यदि शेष ६ राशियों से अधिक हो तो चक्रार्ध हानि नहीं होगी। अब चक्रार्ध हानि प्राप्त होने की स्थिति में षड्भाल्प के अंशादिकों से ३० में भाग दें अथवा शेष राशि आदि की विकला से १०८००० में भाग दें तब जो लब्धि आए उसे १, ०, ० में से घटा लेना चाहिए। यह पापग्रह का चक्रार्धहानि गुणक होगा। यदि शुभग्रह की चक्रार्ध हानि जाननी हो तो लब्धि का आधा करके १, ०, ० में से घटाने पर शुभग्रह का चक्रार्ध हानि गुणक होता है। यदि लग्न में से ग्रह को घटाकर शेष राश्यादि ० बचे अर्थात् शेष फल १ राशि से कम हो तो अंशादि में ३० का भाग दें। तब प्राप्त लब्धि को १, ०, ० में से घटाने पर पापग्रह का चक्रार्ध हानि गुणक होगा।

यदि ० राशि शुभग्रह के प्रसंग में शेष बचे तो अंशादि में ३० से भाग दें तब जो लब्धि हो उसका आधा करके १, ०, ० में से घटाने पर शेष शुभग्रह का चक्रार्ध हानि गुणक होता है।

यदि एक ही स्थान में दो-तीन ग्रह स्थित हों तो चक्रार्ध हानि केवल बलवान् ग्रह की ही की जाएगी, सब ग्रहों की नहीं। ऐसी स्थिति में केवल बलवान् ग्रह का ही चक्रार्ध हानि गुणक निकालना चाहिए, शेष ग्रहों का नहीं।

आयु साधन के लिए पूर्वोक्त हानि संस्कृत मध्यमायु को ग्रह के चक्रार्ध हानि से गुणा करें। यह गुणनफल चक्रार्ध हानि संस्कृत मध्यमायु होगी।

इस मध्यमायु को ३२४ से गुणा कर ३६५ से भाग देना चाहिए। तब ग्रह की स्पष्ट भिन्नायु होगी।

लग्न की मध्यमायु के लिए विशेष प्रकार अपनाया जाता है। लग्न की आयु को एक स्थान पर स्थापित कर लें। अब आयु के वर्षों में लग्न स्पष्ट की राशि के तुल्य वर्षों को जोड़ देना चाहिए। स्पष्ट लग्न के अंशादि को १२ से गुणा करने पर दिनादि होते हैं। इन दिनादिकों को आयु के दिनादिकों में जोड़ देना चाहिए। तब लग्न की स्पष्ट भिन्नायु होती है।

दृश्यार्ध हानि या चक्रार्ध हानि दोनों शब्द समान अर्थ रखते हैं। पिछले श्लोक की व्याख्या में अपने प्रकृत उदाहरण की स्थूल चक्रार्ध हानि बतायी गयी है। अब सूक्ष्म विधि से दृश्यार्ध हरण जानने के लिए

भाव स्पष्ट देखा तो उसका मान ६, २६°, २८', ३२" है। बुध व शुक्र सप्तम स्थान में तो स्थित हैं किन्तु उनका स्पष्ट मान क्रमशः ६, ४, २७, ४२ व ६, १८, ५२, २३ है। अतः स्पष्ट प्रतीत होता है कि ये दोनों ग्रह सप्तम भाव में न होकर उससे पीछे हैं। अतः दृश्यार्ध में न होने के कारण इनकी यह हानि नहीं होगी।

मंगल व शनि एक स्थान में स्थित हैं। वहां मंगल अधिक बली है। अतः केवल उसी की चक्रार्ध हानि होगी, शनि की नहीं। यदि बुध शुक्र की भी हानि नियमतः प्राप्त होती तो उनमें से जो बलवान् होता उसकी ही यह हानि होती।

दृश्यार्ध स्थित ग्रहों में अब चन्द्रमा शेष है। वह अकेला है। अतः उसकी हानि की जाएगी।

ग्रह व लग्न को घटाकर साधित होने वाली चक्रार्ध हानि का द्वितीय प्रकार भी ऊपर बताया गया है। उसकी क्रिया को चन्द्रमा के संदर्भ से समझते हैं।

स्पष्ट लग्न	०, २६, २८, ३२	में से
स्पष्ट चन्द्र	— ८, २६, ७, ५	घटाया
	३, ०, २१, २७	

यह शेष षड्भाल्प (६ राशि से कम) है, अतः हानि प्राप्त हुई। इसे अंशादि बनाकर अंशादिकों से ३० में भाग देना है। ये ३० अंश होते हैं। इन्हें सजातीय बनाने के लिए पहले भाज्य संख्या ३० को ६० से दो बार गुणा किया—

३०×६०=१८०० कला×६०=१०८००० विकला (भाज्य)। इसी प्रकार ग्रहोन लग्न को सजातीय बनाने के लिए भी ६० से दो बार गुणा किया—ग्रहोन लग्न ९०°, २१', २" की विकलाएं ३२५२८७ हैं।

क्रिया समझ लीजिए। अंश ९० को ६० से गुणा किया तो ५४०० कलाएं हुई। इसमें २१ कलाएं जोड़ने से ५४२१ कलाएं हुईं। इन्हें विकला बनाने के लिए पुनः ६० से गुणा किया तो गुणनफल ३२५२६० विकलाएं हैं। इसमें २७ विकलाएं जोड़ने से ३२५२८७ कुल विकलाएं भाजक संख्या हुई। अब भाज्य १०८००० में भाजक विकलाएं ३२५२८७ से भाग दिया तो लब्धि ०, १९, ५५ हुईं। यहां चन्द्रमा

शुभग्रह है, अतः इसके आधे भाग ०, ६, ५८ को १, ०, ० में से घटाया तो शेष ०, ५०, २ चन्द्रमा का चक्रार्ध हानि गुणक हुआ।

व्ययस्थान में केवल मंगल की हानि होगी, अतः स्पष्ट लग्न में से स्पष्ट मंगल को घटाया—

स्पष्ट लग्न ०, २६°, २८′, ३२″
स्पष्ट मंगल — ११, २, ५६, ५१

१, २६, २८, ४१ शेष

यह ६ राशियों से कम है, अतः चक्रार्ध हानि होना सिद्ध हुआ। शेष को सवर्ण किया तो २०३३२१ भाजक विकलाएं हुईं। इससे १०८००० में भाग दिया तो लब्धि ०, ३१, ५२ है। मंगल पापग्रह होने के कारण इस समस्त शेष को १, ०, ० में से घटाया तो शेष ०, २८, ८ मंगल का चक्रार्ध हानि गुणक हुआ। शेष ग्रहों को लग्न में से घटाने पर ६ राशियों से अधिक शेष बचता है, अतः उनकी चक्रार्ध हानि नहीं होगी।

अब एक बार सुकरता के लिए समस्त हानियों का सिंहावलोकन कर लीजिए—

सूर्य की एकराशिगतत्व हानि संस्कार के बाद आयु ४, ७, १६, ४०, ० वर्षादि है।

चन्द्रमा को केवल चक्रार्ध हानि प्राप्त है। अतः इसके चक्रार्ध हानि गुणक ०, ५०, २ से इसकी मण्डल शुद्धायु २६, ३, ३, २०, ० वर्षादि को गोमूत्रिका रीति से गुणा किया तो चन्द्रमा की चक्रार्ध हानि संस्कृत आयु २१ वर्ष, १० मास, २३ दिन, १ घड़ी, ४६ पल व ४० विपल हुई।

मंगल व शनि दृश्यार्ध में स्थित हैं तथा इन्हें एक क्षेत्रगत हानि भी प्राप्त है। इन दोनों हानियों में दृश्य चक्रार्धगत हानि अधिक है। अतः वही होगी और मंगल बलवान् है, अतः केवल मंगल की ही उक्त हानि होगी, शनि की नहीं।

मंगल की मण्डल शुद्धायु ४, ५, २३, २०, ० वर्षादि को मंगल के चक्रार्ध हानि गुणक ०, २८, ८ से गुणा करने पर (गोमूत्रिका रीति) मंगल की चक्रार्ध हानि संस्कृतायु २, १, ६, २८, २६, ४० वर्षादि

शेष ४० को १२ से गुणा किया तो ४८० हुए। इसे पुनः ३६५ से भाग देने पर लब्धि १ व शेष ११५ बचा। लब्धि १ मास है। शेष ११५ को ३० से गुणा किया तो ३४५० गुणनफल हुआ। इसे पुनः ३६५ से भाग दिया तो लब्धि ९ व शेष १६५ बचा। लब्धि ९ दिन हुए।

शेष १६५ को ६० से गुणा किया तो गुणनफल ९९०० हुआ। इसे पुनः ३६५ से भाग देने पर लब्धि २७ व शेष ४५ बचा। यहां लब्धि २७ घड़ियां हुईं।

शेष ४५ को ६० से पुनः गुणा किया तो गुणनफल २७०० हुआ। इसे पुनः ३६५ से भाग दिया तो लब्धि ७ व शेष १४५ बचा। यहां लब्धि ७ पल हुए। शेष को त्याग दिया। इस प्रकार सूर्य की स्पष्ट भिन्नायु ४ वर्ष १ मास ९ दिन २७ घड़ी ७ पल हुई। इसी पद्धति से सब ग्रहों की आयु का स्पष्ट साधन किया जाएगा।

अब लग्न को स्पष्ट भिन्नायु निकालनी है। लग्न की मण्डल शुद्ध आयु के वर्षादि ३, ०, १३, २०, ० को ३२४ से गुणा किया। गुणनफल ९८४, ०, ०, ०, ० हुआ। इसे पूर्वोक्त रीति से ३६५ से भाग दिया तो २, ८, १०, १३, १४ वर्षादि लग्न की आयु हुई।

अब इस लग्नायु में विशेष संस्कार करना है—

लग्न स्पष्ट ०, २९, २८, ३२ है। अतः इस आयु के वर्षों में लग्न की राशि संख्या ० जोड़ी तो आयु वर्ष २ हुए।

लग्न के अंशादि को १२ से गुणा किया तो ३५३, ४२, २४ दिनादि हुए। दिन संख्या ३५३ को ३० से भाग देकर मास बनाया तो लब्धि ११ मास व शेष २३ दिन हुए। अब लग्नायु में ० वर्ष, ११ मास, २३ दिन, ४२ घड़ी व २४ पल को जोड़ दिया—

लग्न भिन्नायु वर्षादि	२, ८, १०, ३१, १४
लग्न स्पष्ट संस्कार	+ ०, ११, २३, ४२, २४
	३, ८, ४, १३, ३८ स्पष्ट लग्न भिन्नायु।

उक्त प्रक्रिया से साधन करने पर सब ग्रहों व लग्न की स्पष्ट आयु इस प्रकार प्राप्त हुई—

ग्रह	स्पष्ट भिन्नायु वर्षादि				
	वर्ष	मास	दिन	घड़ी	पल
सूर्य	०४	०१	०६	२७	०७
चन्द्र	११	०५	०७	३२	१६
मंगल	०१	१०	११	३०	०१
बुध	०७	०१	१८	१६	४४
गुरु	०६	०८	०२	३७	४८
शुक्र	०२	१०	२७	२७	०७
शनि	०३	००	०८	५२	३६
लग्न	०३	०८	०४	१३	३८
योग	४८	१०	२	००	२०

भिन्नायु साधन का द्वितीय प्रकार :

पृथग्विभक्तः खगयोगपिण्डो
वियद्गुणैर्वर्षमुखायुरब्दाः ।
ते स्युर्यदा द्वादशतः प्रवृष्टा-
श्चेन्मण्डलोना विबुधैर्विधेयाः ॥११॥

तन्मण्डलोनायुरथोच्चगस्या-
युर्वोध्नं मस्तासरगस्य खंडं ।
विधेयमस्मादनुपात्य मन्त-
रार्युद्विनिघ्नं शयिरस्य वक्रे ॥१२॥

तुङ्गत्रिकोण स्वभमित्रराशि-
गानां सतां द्युतिसंयुतानाम् ।
आनीतमायुर्विधिनोदितेना-
ऽऽह्विङ्गणस्थस्य विधावमायुः ॥१३॥

पृथगिति । तदिति । तुंगेति च । खगोग्रहस्तस्य योगपिण्डः पृथग् वियद् गुणैस्त्रिंशता विभक्तो कार्यस्तदा वर्षमुखायुर्वर्षादि भवेदायुः । यदा तेऽब्दाः वर्षाणि द्वादशतः प्रवृष्टा अधिकाश्चेत्स्यु स्तदा विबुधैः मण्डलेन चक्रेणोना रहिता विधेयाः । तद् मण्डलोनायुः ग्रहाणामिति शेषः ।

इत्यनेन समुदायायुरपि साध्यते। सर्वग्रहाणां पिण्डानामैक्यं भाप्तमब्दादयः स्युः।

अथेति। अथेत्यानन्तर्ये। उच्चगतस्य निजोच्चराशिगतस्य ग्रहस्यायुर्दीघ्नं द्वाभ्यां गुणितं कार्यम्। अस्तंगतस्य नीचराशिगतस्य च खण्डं दलं विधेयमायुष इति। अस्मादन्तरन्तराले यदि ग्रहोवर्त्तते तदाऽनुपात्यमनुपातविधिना आयुः साध्यम्। अत्रानुपातकरणं श्रीभास्करेणोक्तम्—

प्रमाणमिच्छा च समान जातीआद्यन्तयोः स्तः फलमन्यजातिः।
मध्ये तदिच्छाहतमाद्यहृत्स्यादिच्छाफलं व्यस्तविधिर्विलोमे॥' इति

यदि ग्रहो निजनीचराशिमारभते तदा तस्याशुभफलं पूर्णं यद्येवं ग्रहो नीचराशिमुत्सृजति तदा तस्याशुभफलं शून्यं भवेत्। मध्ये तु त्रैराशिक विधिनाफलं साध्यम्।

आयुरिति। रुधिरस्य भौमस्य वक्रे सति तदा तस्यायुर्द्विनिघ्नं द्विगुणं कार्यम्। इति तस्य स्पष्टायुः स्यात्।

तुंगेति। तुंगः स्वोच्चः त्रिकोणं मूल त्रिकोणं, स्वभं स्वगृहं, मित्रराशिस्तेषु प्राप्तानां सतां शुभग्रहाणां दृग्दृष्टिः, युतिर्योगः, ताभ्यां संयुतानांसहितानां ग्रहाणामिति शेषः। उदितेन प्रोक्तेन विधिना यदायुरानीतमागतं तदेव तस्यायुर्वेद्यम्। अथः पापो द्विट् शत्रुस्तयोर्गणे वर्गे यः स्थितस्तस्यायुस्त्रिपादं चतुर्थांशहीनं कार्यं तदा तस्य स्पष्टायुः स्यात्।

ग्रह के योगपिण्ड में ३० से भाग देने पर लब्ध वर्षादि मध्यम आयु होती है।

यदि मध्यमायु के वर्षादि १२ से अधिक हों तो वर्षों को १२ से भाग दें। तब शेष मण्डल शुद्धायु होती है। यहां मण्डल १२ वर्षों का माना गया है।

इस मण्डल शुद्धायु को स्पष्ट करने के लिए निम्नोक्त प्रकार से संस्कार किए जाएंगे—

(i) यदि ग्रह अपनी उच्चराशि में है तो मण्डल शुद्धायु को २ से गुणा करें अर्थात् दुगुना कर लें।
(ii) यदि ग्रह अस्तंगत या स्वनीच राशि में है तो उसकी मण्डल शुद्धायु को २ से भाग दें अर्थात् आधा कर लें।
(iii) यदि मंगल वक्री हो तो भी मण्डल शुद्धायु को दुगुना करें।
(iv) जो ग्रह मूल त्रिकोण, स्वराशि या मित्र राशि या वर्ग में

हों अथवा शुभग्रहों से दृष्ट हों तो उनकी मण्डल शुद्धायु को ही स्पष्टायु समझना चाहिए।

(v) जो ग्रह उच्चवर्ग में स्थित हो तो उसकी मण्डल शुद्धायु ही स्पष्टायु मानी जाएगी।

(vi) जो ग्रह पाप वर्ग या शत्रु वर्ग में हों उनको मण्डल शुद्धायु में से चतुर्थांश छोड़ देने पर स्पष्टायु होती है।

(vii) अस्त व नीच राशि के मध्य में अनुपात विधि से हरण किया जाएगा।

भिन्नायु साधन का यह प्रकार जातक पारिजात व पराशर होरा के आधार पर लिखा गया है। वैद्यनाथ द्वारा बताया गया यह प्रकार प्रसिद्ध है। इस प्रकार में मण्डल १२ वर्षों का माना गया है। अतः मण्डल शुद्धायु जानने के लिए पिण्ड को ३० से भाग देने के उपरान्त बचे वर्षों में से १२ की संख्या जितनी बार घट सके घटा लेनी चाहिए। तदुपरान्त उपर्युक्त प्रकार से हरण क्रिया या वृद्धि क्रिया करनी भी आवश्यक है। यदि कोई ग्रह परम नीच में न हों या अस्तंगत होने के बाद बीच के दिनों में हो तो वहां अनुपात अर्थात् त्रैराशिक विधि से हरण का मान निकालना चाहिए। अब इस विषय को अपने पूर्वोक्त उदाहरण के संदर्भ में देखते हैं।

सूर्य का योग पिण्ड २४४ है। इसे ३० से भाग दिया तो लब्धि ८ वर्ष हुए। शेष ४ को १२ से गुणा किया तो ४८ गुणनफल हुआ। इसे पुनः ३० से भाग दिया तो लब्धि १ मास हुआ।

शेष १८ को ३० से गुणा किया तो गुणनफल ५४० हुआ। इसे पुनः ३० से भाग दिया तो लब्धि १८ दिन हुए।

शेष ० को ६० से गुणा कर ३० का भाग दिया तो लब्धि ० घड़ी हुई। इसी प्रकार पल भी ० हुए। इस प्रकार सूर्य की मध्यमायु ८ वर्ष, १ मास, १८ दिन, ० घड़ी, ० पल हुई। यहां आयु वर्ष १२ से कम होने के कारण यह स्वतः ही मण्डल शुद्ध है।

अब इसमें विशेष हरण या वृद्धि संस्कार करने हैं। सूर्य स्पष्ट ५, १०°, १८′, ५१″ है। यहां पर सूर्य नीचाभिमुख अर्थात् अपनी नीच राशि की ओर अग्रसर है। उच्च में दोगुनी आयु हो जाती है व परम नीच में आधी आयु हो जाती है। लेकिन बीच में ग्रह हो तो क्या करेंगे?

एतदर्थं त्रैराशिक विधि का सहारा लिया जाएगा। अतः स्पष्ट सूर्य में से परमोच्च मान घटाया—

स्पष्ट सूर्य	५, १०°, १८', ५१″
परमोच्च	— ०, १०°, ०', ०″
	५, ०°, १८', ५१″ उच्चोन सूर्य।

इसे अंशादि बनाया तो १५०, १८, ५१ हुआ। आशय यह है कि सूर्य उच्चराशि से इतने अंश आगे जा चुका है। अब नीच राशि में होने पर आधी आयु समाप्त होती है तो उक्त अंशों में होने पर कितनी आयु कम होगी? उच्च राशि से १८० अंशों पर ग्रह नीच हो जाता है। अनुपात विधि से देखें तो कहेंगे कि १८० अंश स्वोच्च से आगे जाने पर ग्रह अपनी आयु खो देगा तो १५० अंशों पर कितनी खोएगा? जो उत्तर होगा वही मण्डल शुद्धायु में से घटा दिया जाएगा।

मण्डल शुद्धायु का आधा ४, ०, २४, ०,० वर्षादि को स्वोच्चोन सूर्य १५०, १८, ५१ से गुणा किया तो गुणनफल ६११, ३, ९,५६, २४ हुआ। इसे १८० (६ राशियों का अंश योग) से भाग दिया तो लब्धि ३ वर्ष हुई। शेष ७१ को १२ से गुणा किया तो ८५२ हुआ, इसमें गुणनफल में प्रयुक्त ३ मास जोड़ने पर ८५५ हुआ। इसमें १८० से भाग दिया तो लब्धि ४ मास हुई। शेष १३५ को ३० से गुणा किया तो ४०५० दिन हुए, इसमें गुणनफल के ९ दिनों को भी जोड़ा तो ४०५९ हुआ। इसमें १८० से भाग दिया तो लब्धि २२ दिन हुए।

शेष ९९ को ६० से गुणा किया तो ५९४० में ५६ घड़ियां जोड़ने पर ५९९६ हुआ। इसमें १८० से भाग दिया तो लब्धि ३३ घड़ियां हुई।

शेष ५६ को ६० से गुणा किया तो ३३६० पलों में २४ पल भी जोड़े तो ३३८४ पल हुए। इसमें १८० से भाग दिया तो लब्धि १९ पल हुई। इस प्रकार ३ वर्ष, ४ मास, २२ दिन, ३३ घड़ी, १९ पल को मण्डल शुद्ध आयु में से घटाने पर शेष ४ वर्ष, ८ मास, २५ दिन, २६ घड़ी, ४१ पल सूर्य की स्पष्ट भिन्नायु हुई। किन्तु सूर्य शुभग्रह से युक्त है अतः यह हानि नहीं होगी। तब सूर्य की स्पष्ट भिन्नायु ८, १, १८, ०, ० वर्षादि ही सिद्ध हुई।

चन्द्रमा का योगपिण्ड १०७ है। इसे ३० से भाग दिया तो लब्धि ३ वर्ष हुए। शेष १७ को १२ से गुणा किया तथा गुणनफल २०४ को ३० से भाग दिया तो लब्धि ६ मास हुए।

शेष २४ को ३० से गुणा कर पुनः ३० से भाग दिया तो लब्धि २४ दिन हुए। शेष कुछ नहीं बचा, अत घड़ी पल ० माने जाएंगे। इस प्रकार चन्द्रमा की आयु वर्षादि ३, ६, २४, ०, ० है। यह १२ वर्ष से कम है, अतः स्वतः मण्डल शुद्ध है। चन्द्रमा बृहस्पति से दृष्ट है, अतः हानि के अभाव में यही स्पष्ट भिन्नायु हुई।

मंगल का शुद्ध योग पिण्ड १९१ है। इसे ३० से पूर्ववत् भाग दिया तो लब्धि ६, ४, १२, ०, ० वर्षादि हुई। यह भी स्वतः मण्डल शुद्ध है। मंगल यहां पर वक्री है, अतः आगत की दुगुनी १२,८,२४,०, ० मंगल की स्पष्ट भिन्नायु हुई।

बुध का योगपिण्ड ६२ है। इसे ३० से भाग देने पर लब्धि २, ०, २४, ०, ० वर्षादि है। बुध मित्र राशि में शुभ युक्त है, अतः हानि या वृद्धि नहीं होगी। अतः यही बुध की स्पष्ट भिन्नायु है।

बृहस्पति का योगपिण्ड ५८ है। इसे ३० से भाग देने पर लब्धि १, ११, ६, ०, ० वर्षादि हुई। यह स्वयं ही मण्डल शुद्ध है। किन्तु बृहस्पति शत्रुक्षेत्रगत है, अतः इसका चतुर्थांश इसमें से घटाया तो शेष १, ५, १२, ०, ० स्पष्ट भिन्नायु है।

शुक्र का योग पिण्ड १८३ है। इसे ३० से भाग देने पर लब्धि ६, १, ६, ०, ० हुई। यह स्वयं मण्डल शुद्ध है। शुक्र यहां मूलत्रिकोण राशि में शुभयुक्त है, अतः अन्य संस्कारों के अभाव में यही उसकी स्पष्ट भिन्नायु हुई।

शनि का योग पिण्ड १८२ है। इसे ३० से भाग देने पर लब्धि ६, ०, २४, ०, ० हुई। यहां भी यह स्वतः ही मण्डल शुद्ध है और शनि बृहस्पति से दृष्ट है, अतः अन्य संस्कारों के अभाव में यही इसकी स्पष्ट भिन्नायु हुई।

इस मत में लग्न का ग्रहण नहीं होता है। सब ग्रहों की आयु इस प्रकार निश्चित हुई—

ग्रह	स्पष्ट भिन्नायु वर्षादि (द्वितीय प्रकार)
सूर्य	८, १, १८, ०, ०
चन्द्र	३, ६, २४, ०, ०
मंगल	१२, ८, २४, ०, ०
बुध	०२, ० २४, ०, ०
गुरु	१, ५, १२, ०, ०
शुक्र	६, १, ६, ०, ०
शनि	६, ०, २४, ०, ०
योग	४०, १, १२, ०, ०

भिन्नायु साधन का तृतीय प्रकार :

> एकस्थाने स्याद् द्यु सार्द्धं दिनार्द्धं
> त्रिस्थानेषु स्थानयोर्युग्मयोर्द्यु ।
> एकं साम्ये सार्द्धसप्ताहमायु-
> रेवं पंचस्थानकेष्वक्षिवर्षम् ॥१४॥
> षड्रेखासूदन्वदब्दाः षडब्दाः
> सप्तस्थानेष्वष्टरेखास्विभाब्दाः ।
> पादांशोऽह्नोऽक्षेषु यल्लब्धमायुः
> सूर्यादीनां तद्दलं स्पष्टमायुः ॥१५॥

एकस्थान इति। षड्रेखास्विति। शालिनीयुग्मेन। एकस्थाने एकस्यां रेखायां सार्धं दिनं १।३०, त्रिस्थानेषु तिसृषु रेखासु दिनार्धं, युग्मयोः स्थानयोः द्युदिनमेकं, साम्ये यत्र रेखाबिन्द्वोस्तुल्यता तत्र सार्धसप्ताहमायुः, षड्रेखासु उदन्वदब्दा वर्षचतुष्टयमायुः सप्तस्थानेषु षडब्दाः षडवर्षाणि, अष्टरेखासु इभाब्दा-अष्टवर्षाणि ग्राह्याणि। अक्षेषु बिन्दुषु, अह्नो दिनस्य पादांशश्चतुर्थांशोऽयस्ति पंच दशघटी प्रमितायुरित्यर्थः। एवं सूर्यादीनां यल्लब्धमायुर्यथाप्यानीतमायुस्तद्दलं तस्यार्धं स्पष्टमायुर्जीवितकालः स्यादिति शेषः।

श्रीदेशशालेन तु शुद्धरेखा बिन्दुवशेनायुरानयनमुक्तं, तदित्थम्—

> रेखायां वत्सरो ज्ञेयः सार्धसप्तदिनं समे।
> अष्टवर्षो ग्रहायुः स्याद् दिनं पादांशबिन्दुषु॥
> एवं यदागतायुः स्यात्तदर्धमायुरुच्यते॥' इति

एवं कृतानां द्वादशराशीनां या रेखा भवन्ति तत्समा वत्सरा ज्ञेयाः। प्रति-सम सार्धसप्तदिनानि, प्रतिबिन्दु पंचदशदण्डा ज्ञेयाः। एव सर्वयोगो ग्रहदत्तायुरेव भवति। इह सर्वेषां ग्रहाणां लग्नस्य च पूर्वोक्तविधिना रेखागतवत्सरादियोगेन यदि विंशोत्तरशतादधिकमायुर्लभ्यते तदार्धं कार्यं सकलाष्टवर्गायुर्भवेत्।

यहां रेखा बिन्दु के योग से आयु साधन बताया जा रहा है। जहां पर एक शुद्ध रेखा हो उसकी आयु १ दिन व ३० घड़ी होती है। जहां पर दो रेखाएं हों वहां आयु एक दिन होती है। जहां पर तीन रेखाएं हों वहां ३० घड़ी, रेखाएं व बिन्दु समान हों अर्थात् ४ रेखाएं हों तो ७ दिन व ३० घड़ी, पांच रेखा में २ वर्ष, छह रेखाएं हों तो ४ वर्ष, सात रेखाएं हों तो ६ वर्ष, और आठ रेखाएं हों तो ८ वर्ष आयु होती है। इसी प्रकार प्रत्येक बिन्दु की १५-१५ घड़ी जाननी चाहिए। इस प्रकार प्रत्येक ग्रह के अष्टक वर्ग में प्रत्येक भाव में स्थित रेखा व बिन्दु के योग से उस ग्रह की आयु जान लेनी चाहिए। इस प्रकार से प्राप्त आयु वर्षादि से आधा भाग त्याग देना चाहिए। तब शेष स्पष्ट भिन्नायु होती है।

रेखाओं की उक्त आयु **बृहत्पाराशरहोरा शास्त्र** के आधार पर दी गई है। ग्रन्थकार के श्लोक से स्पष्टतया यह अभिप्राय निकलता है कि रेखा बिन्दु योग का आधा भाग (तद्दलं स्पष्टमायुः) ही ग्रहण करना चाहिए। यही बात **पराशर** ने भी कही है। किन्तु संस्कृत में ग्रन्थकार ने स्पष्ट कहा है कि यदि इस प्रकार प्राप्त योग १२० वर्षों से अधिक आए तभी आगत आयु का आधा भाग त्यागना चाहिए। दूसरी ओर ग्रन्थकार ने अपने ग्रन्थ **आयुर्निर्णय** में भी आगत आयु का आधा भाग स्वीकार करने की बात कही है। इस अन्तर्विरोध का निर्णय विज्ञ पाठक स्वयं कर लें। हम यहां ग्रन्थकार द्वारा बताए गए मार्ग का अनुसरण नहीं करेंगे। हमारे विचार से आधा भाग करने पर ही स्पष्टायु होगी क्योंकि बहुमत इसी पक्ष में है। यहीं पर हम यह भी बताना आवश्यक समझते हैं कि संस्कृत टीका में **देशशास्त्र** के नाम से उद्धृत श्लोकों में बताया गया है कि शुद्ध रेखाओं से भी उक्त पद्धति द्वारा आयु का साधन किया जा सकता है।

हमारे पूर्वोक्त उदाहरण में सूर्याष्टक वर्ग में रेखाएं इस प्रकार हैं—

में २ विन्दु हैं। कुल १४ विन्दु हुए। प्रत्येक बिन्दु की १५ घड़ी आयु है अतः कुल आयु ३ दिन, ३० घड़ी हुई।

इनका योग भी १४ वर्ष, १ मास, ११ दिन, ० घड़ी हुआ।

चन्द्राष्टक वर्ग में धनु व कुम्भ में समान रेखा व विन्दु हैं। अतः ७ दिन, ३० घड़ी के हिसाब से कुल १५ दिन आयु हुई।

कन्या व तुला में २-२ रेखाएं हैं। १ दिन प्रत्येक के हिसाब से कुल आयु २ दिन है।

वृष, वृश्चिक व मीन में ३-३ रेखाएं हैं। ३० घड़ी प्रत्येक के हिसाब से १ दिन, ३० घड़ी है।

मेष, मिथुन, सिंह में ५-५ रेखाएं हैं। २ वर्ष प्रत्येक के अनुसार ६ वर्ष आयु है।

मकर में ६ रेखाएं हैं, अतः ४ वर्ष व कर्क में ७ रेखाएं हैं, अतः ६ वर्ष आयु है। सबका योग १६ वर्ष, ० मास, १८ दिन, ३० घड़ी है। यही चन्द्र की आयु है।

शोधित रेखाओं से भी गणना करने पर यही आयु योग आएगा। अतः किसी भी प्रकार को सुविधानुसार अपना लें। इसी प्रक्रिया से प्राप्त सब ग्रहों की आयु निम्नोक्त है—

ग्रह	स्पष्ट भिन्नायु वर्षादि (तृतीय प्रकार)
सूर्य	१४, १, ११, ०, ०
चन्द्र	१६, ०, १८, ३०, ०
मंगल	६, ०, २८, ३०, ०
बुध	१६, ०, २३, ३०, ०
गुरु	१८, १, ०, ३०, ०
शुक्र	२२, ०, ११, ०, ०
शनि	६, १, ६, ०, ०
लग्न	१६, १, ३, ३०, ०
योग	११४, ७, १२, ३०, ०
अर्ध भाग	५७, ३, २१, १५, ०

आयु स्पष्टीकरण का चतुर्थ प्रकार :

> द्वौ मेदिनी शशिकराः शरदोंषि दस्र-
> वेदा ध्रुवोऽब्दवदनः प्रभवेदनेन।
> या नैधनस्थितकलैक्यमितिः खगाष्ट-
> वर्गेऽत्र सा विनिहता पृथगायुरेवम् ॥१६॥
> समाननं मध्यमिदं निजैका-
> ङ्गांशोनितं साङ्गवियच्चराणाम्।
> पृथक् पृथक्कार्यमिहैतदैक्यं
> स्फुटायुरब्दाननमङ्गिनां स्यात् ॥१७॥

द्वाविति। समाननमिति च। द्वौ, मेदिन्येकः, शशिकरा एकविंशतिः, शरदोंषि पंचविंशतिः, दस्रवेदा द्वाचत्वारिंशत्, अयं ग्रहाणामब्दवदनो वर्षादो ध्रुवोऽस्ति। अनेन ध्रुवेणात्र खगाष्टवर्गेऽष्टकवर्गे सूर्यादीनां सलग्नानां या नैधन-स्थितकलैक्यमितिः अष्टमस्थान स्थित रेखाणां योगसंख्या सा पृथग् विनिहता गुणिता कार्या। एवं समाननं वर्षादि मध्यमायुर्भवेदिति। इदं सांगवियच्चराणां लग्नसहित-ग्रहाणामायुः पृथक् पृथग् निजैकांगांशोनितं स्वकीयैकषष्ठ्यंशेन हीनं कार्यं तत इह तदैक्यं कार्यमंगिनां प्राणिनां वर्षादिस्फुटायुः स्यादिति। तथा च जातकरत्नकोशे—

> ग्रहाष्टवर्गस्थितरन्ध्रभावरेखैक्यसंख्यागुणिता क्रमेण।
> द्वाभ्यां भुवा चन्द्रकरैश्च तत्त्वैर्दस्राब्धिभिः स्याच्छरदाद्यमायुः ॥
> स्पष्टं भवेत्स्वेन्दुरसांशहीनं पृथक् पृथग् लग्नयुतग्रहाणाम्।
> कृतैतदैक्यं निखिलायुषैः स्युर्वर्षाश्च मासाश्च दिनानिघट्यः ॥' इति

यहां पर ध्रुव से स्पष्ट भिन्नायु का साधन बताया जा रहा है। २ वर्ष, १ मास, २१ दिन, २५ घड़ी, ४२ पल यह वर्षादि ध्रुव है। अर्थात् यह स्थिरांक सर्वत्र काम आएगा। अब लग्न सहित सातों ग्रहों के अष्टक वर्ग में जो अष्टम स्थान की रेखाओं का योग हो उससे अलग-अलग उक्त ध्रुव को गुणा करना चाहिए। गुणनफल वर्षादि मध्यमायु होगा। इस मध्यमायु को २ स्थानों पर स्थापित कर लेना चाहिए। एक स्थान पर ६१ से इसे विभाजित कर जो लब्धि आए उसे दूसरे स्थान पर स्थापित मध्यमायु में से घटा लेना चाहिए। शेष वर्षादि स्पष्टायु होगी। यह क्रिया प्रत्येक ग्रह की मध्यमायु के साथ पृथक्-पृथक् होगी।

सब ग्रहों की स्पष्टायु का योग करने से मनुष्यों की स्पष्ट आयु के वर्ष, मास, दिन, घड़ी व पल ज्ञात हो जाते हैं।

प्रस्तुत उदाहरण में सूर्याष्टक वर्ग में अष्टम स्थान में ४ रेखाएं हैं। इससे ध्रुव को गुणा किया—

२, १, २१, २५, ४२ × ४ = ८, ६, २५, ४२, ४८ वर्षादि।

यह सूर्य की मध्यमायु है। इसे दो स्थानों पर स्थापित किया—

८, ६, २५, ४२, ४८ ÷ ६१ = ०, १, २०, ३५, ८

— ०, १, २०, ३५, ०८ इसे मध्यमायु में घटाया।

८, ५, ५, ०७, ४० यह सूर्य की स्पष्टायु हुई। इसी प्रकार से चन्द्रादि ग्रहों की लग्न सहित आयु ज्ञात की।

ग्रह	स्पष्ट भिन्नायु (चतुर्थ प्रकार)
सूर्य	८, ५, ५, ७, ४०
चन्द्र	१०, ६, १३, ५४, ३५
मंगल	४, २, १७, ३३, ५०
बुध	६, ३, २६, २०, ४५
गुरु	८, ५, ५, ७, ४०
शुक्र	१२, ७, २२, ४१, ३०
शनि	२, १, ८, ४६, ५५
लग्न	८, ५, ५, ७, ४०
योग	६१, १, १४, ४०, ३५

अब पाठकों की सुविधा के लिए एक चक्र दिया जा रहा है। इससे बार-बार ध्रुव को गुणा कर घटाने व भाग देने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। अष्टम भावस्थ रेखायोग के सामने प्राप्त आयु उस ग्रह की स्पष्ट भिन्नायु (चतुर्थ प्रकार) होगी।

स्पष्ट भिन्नायु सारणी (सर्वत्रोपयोगी)

अष्टमस्थ रेखा योग	वर्ष	मास	दिन		घड़ी
०	०	०	०	०	०
१	२	१	८	४६	५५
२	४	२	१७	३३	५०
३	६	३	२६	२०	४५
४	८	५	५	७	४०
५	१०	६	१३	५४	३५
६	१२	७	२२	४१	३०
७	१४	६	१	२८	२५
८	१६	१०	१०	१५	२०

भिन्नायु दशा व भिन्नायु की व्यवस्था—

कुर्यात्पृथक् पृथगतस्तनु खेचराणां
दायं समाखमथखे सदसत्खगैर्वा।
केन्द्रोनगे सखगचन्द्र उतोऽर्जयुक्ते
ऽर्के वा बलीन्दुरहितैर्युचरैर्हि केन्द्रे ॥१८॥

कुर्यादिति । ग्रहाणां सलग्नानां यदानीतं वर्षादि भिन्नायुरतस्तनोर्लग्नस्य खेचराणां रव्यादीनां सप्तग्रहाणां च पृथक् पृथक् वर्षाद्यं दायं दशां कुर्यात् । अथेति-आनन्तर्ये । यदि खे दशमस्थाने सदसत्खगैः शुभाशुभग्रहैः सद्भिस्तदा भिन्नायुः साध्यम् । तथा च ब्रह्मयामले—

एवं ग्रहाणां सर्वेषां दशां कुर्यात् पृथक् पृथक् ।
अष्टवर्गदशामार्गः सर्वेषामुत्तमोत्तमः ॥
दशमस्थैः क्रूरयुतैः सौम्यैर्भिन्नाष्टवर्गतः ॥ इति

देवशालजातकेऽपि—

अष्टवर्गेण भिन्नायुः कर्याद्यत्नात् पृथक् पृथक् ।
दशमस्थैः क्रूरसौम्यैर्भिन्नाष्टवर्गतो मतम् ॥ इति

वेति । वा अथवा सखगचन्द्रे चन्द्रे ग्रहेणसहिते केन्द्रोनगे केन्द्रेतर स्थानगे तत्रापि भिन्नायुः साध्यम् । तथा च ब्रह्मयामले—

केन्द्रादन्यतरस्थे च शशिनि ग्रहसंयुते।
विनैव शोधनं यत्स्यात्प्रत्येकं व्योमचारिणाम् ॥
फलमाला तदा कार्या आयुर्दायस्य निर्णये ॥' इति

उतेति। उत वार्थे उर्ज्जैबलयुक्ते सहितेऽब्जे भौमे तदापि भिन्नाष्टकवर्गायुः साध्यम्। चेति। वाऽथवा बलिनेन्दुना चन्द्रेण रहितैर्हीनैर्खचरैर्ग्रहै. केन्द्रे सद्भिः हीति निश्चयेन भिन्नाष्टकवर्गायुः साध्यम्।

प्रत्येक ग्रह की भिन्नायु के वर्षादि को ही उसकी भिन्नायु दशा के वर्षादि मान लेना चाहिए।

यदि दशम स्थान में शुभग्रह पापग्रह से युक्त होकर स्थित हो तो भिन्नायु का साधन करना चाहिए।

यदि चन्द्रमा अन्य किसी ग्रह से युक्त होकर केन्द्र स्थानों के अतिरिक्त स्थानों में हो अर्थात् पणफर व आपोक्लिम स्थानों में हो तो भिन्नायु का साधन करना चाहिए।

यदि मंगल बलवान् हो तब भी भिन्नायु का साधन करना चाहिए।

यदि बलवान् चन्द्रमा केन्द्र में न हो और अन्य ग्रह अधियोग से युक्त होकर केन्द्र में हो तो भी भिन्नायु का साधन करना चाहिए।

भिन्नायु दशा साधन का यह एक प्रकार है। मन्त्रेश्वर आदि आचार्यों ने इसी प्रकार से दशा ज्ञान बताया है। भिन्नायु दशा में अष्टक वर्गों के अधिपतियों को दशाधिपत्य दिया जाता है। इन समस्त दशाओं का भोग भिन्नायु स्पष्ट के वर्षादिकों में ही समाप्त हो जाता है। आगे के श्लोकों में कुछ अन्य प्रकार भी दशासाधन के विषय में बताए जा रहे हैं। अष्टक वर्ग दशा का विशेष विचार अगले अध्याय में किया जाएगा।

आचार्यों ने बारह प्रकार के आयुर्दायों का साधन बताया है। कौन-सा प्रकार कब प्रभावी होगा इस विषय में आचार्यों ने व्यवस्था बनायी है। जैसे लग्नेश बलवान् हो तो अंशायु, सूर्य बलवान् हो तो पिण्डायु ग्रहण करनी चाहिए इत्यादि। इसी व्यवस्था में आचार्यों ने बताया है कि मंगल के बली होने पर अष्टकवर्गायु साधन करना चाहिए। अब भिन्नायु साधन किन परिस्थितियों में होना चाहिए यह श्लोक में बताया गया है।

(i) यदि चन्द्रमा ग्रह युक्त होकर या बलवान् होकर १, ४, ७, १० स्थानों के अतिरिक्त स्थानों में हो तो भिन्नायु साधन होगा।

(ii) दशम स्थान में शुभपापयुति हो तो भी भिन्नायु साधन होगा—

> "केन्द्रादन्यगते चन्द्रे सखेटे चाष्टवर्गजम्।
> आयुरेवनभः स्थाने शुभपापयुतेऽथवा॥"

(iii) मंगल बली हो तो भिन्नायु साधन होगा।

(iv) चन्द्रमा केन्द्र से बाहर हो तथा अन्य बली ग्रह अधियोग बनाते हुए व केन्द्र में हों तो भिन्नायु साधन होगा।

अधियोग से तात्पर्य है कि चन्द्र या लग्न से ६, ७, ८ भावों में शुभ ग्रहों की लगातार या एक स्थान में या दो स्थानों में स्थिति। यहाँ शुभग्रहों के स्थान पर चन्द्रातिरिक्त बलवान् ग्रहों का ग्रहण है। यदि बलवान् ग्रह अधियोग बनाते हुए स्थित हों तथा शेष ग्रह केन्द्र में हों तो भिन्नायु का साधन होता है। सरल बात यह है कि चन्द्रमा केन्द्र से बाहर हो तथा शेष बली ग्रह ६, ७, ८, स्थानों में लगातार स्थित हों व केन्द्र स्थानों में हों तो उक्त आयुर्दाय का विचार होगा अथवा अन्य तीनों केन्द्र स्थानों के सम्बन्ध से अधियोग हो अर्थात् बली ग्रह (१२, १, २), (३, ४, ५) या (९, १०, ११) स्थानों में हों तो भिन्नायु देखनी चाहिए।

अष्टक वर्गों में दशा का साधन :

> स्वस्वाष्टवर्गे द्युसदां समेषां
> कृत्वा कलानां पृथगत्र योगम्।
> तां हन्ति खार्कैर्विभजेद्रसाक्षै-
> स्तत्सद्ग्रहाणां शरदादिदायः॥१९॥

स्वस्वेति। समेषां सर्वेषां द्युसदां ग्रहाणां स्वस्वाष्टवर्गे पृथक् कलानां रेखाणां योगं युतिं कृत्वा विधाय तं योगं खार्कैं विंशोत्तरशतेन हन्ति गुणयति। रसाक्षैः षट्पंचाशता विभजेद् हरेत्। तस्य तस्य ग्रहस्य शरदादिर्वर्षादिर्दायो दशा स्यादिति शेषः। तथा च यवनाचार्यः—

नखचन्द्रगुणारेखा   रसबाणविभाजिता।
सर्वं वर्षादिकायुः स्याद्यवनाचार्य भाषितम् ॥' इति

लग्न सहित सूर्यादि ग्रहों के अपने-अपने अष्टक वर्ग में प्रत्येक ग्रह की अधिष्ठित राशि के नीचे जितनी रेखाएं हों उन्हें अलग-अलग १२० से गुणा कर ५६ का भाग देना चाहिए। लब्धि उस ग्रह के अष्टक वर्ग में उस ग्रह की दशा होगी।

इसी पद्धति से सूर्याष्टक वर्ग से सूर्य दशा, चन्द्राष्टक वर्ग से चन्द्र दशा, मंगलाष्टक वर्ग से मंगल दशा आदि सभी ग्रहों की दशाओं का साधन करना चाहिए।

यहां भिन्नाष्टक वर्ग से रेखाएं ली जाएंगी। जिस ग्रह की दशा निकालनी हो उस ग्रह की अधिष्ठित राशि में उसी ग्रह के अष्टक वर्ग में कितनी रेखाएं हैं, यह ज्ञात कर लीजिए।

इस रेखायोग को परमायु अर्थात् १२० वर्ष से गुणा करना है। इस प्रकार प्राप्त गुणनफल को ५६ से भाग दीजिए। जो लब्धि होगी वे वर्ष होंगे।

अब शेष को १२ से गुणा कर पुनः ५६ का भाग दीजिए, लब्धि मास होगी।

अब शेष को ३० से गुणा कर ५६ से भाग देने पर लब्धि दिन होगी।

तदुपरान्त ६० से गुणा कर ५६ का भाग देने पर लब्धि घड़ी व पुनः ६० से गुणा कर ५६ से भाग देने पर लब्धि पल होगी। ये ही वर्ष, मास, दिन, घड़ी, पल उस ग्रह की दशा के वर्षादि होंगे।

गणित क्रिया के संक्षेपार्थ रेखायोग को १५ से गुणा कर ७ से भाग दिया जा सकता है। परिणाम समान ही होंगे। कारण यह है कि यहां गुणक १२० व हर ५६ है। इन्हें ८ से अपवर्तित करके १५ व ७ क्रमशः गुणक व हर प्राप्त होते हैं। अतः निम्नोक्त सूत्र से भी दशा साधन किया जा सकता है—

(रेखायोग × १५) ÷ ७ = ग्रह की अष्टक वर्ग दशा।

अपने पूर्वोक्त उदाहरण में सूर्य कन्या में है। वहां पर रेखाएं ६ हैं। रेखायोग को १२० से गुणा किया तथा ५६ से भाग दिया—

६ × १२० = ७२० ÷ ५६ = १२ वर्ष लब्धि, शेष ४८।

शेष को १२ से गुणा किया १२×४८=५७६=लब्धि १० मास, शेष १६।

इसी प्रकार शेष को क्रमशः ३०, ६० व ६० से गुणा कर बार-बार ५६ से भाग देने पर क्रमशः लब्धि ८ दिन, ३४ घड़ी व १७ पल प्राप्त हुए।

अतः सूर्य की अष्टक वर्ग दशा १२ वर्ष, १० मास, ८ दिन, ३४ घड़ी व १७ पल हुई।

अथवा रेखायोग ६ को १५ से गुणा किया। गुणनफल ९० में ७ से बार-बार पूर्वोक्त प्रकार से भाग देने पर सूर्य की वर्षादि दशा १२, १०, ८, ३४, १७ हुई।

चन्द्रमा मकर में स्थित है। सूर्याष्टक वर्ग में मकर की रेखा संख्या ४ को १५ से गुणा किया। गुणनफल ६० में ७ से भाग दिया तो क्रमिक लब्धि ८ वर्ष, ६ मास, २५ दिन, ४२ घड़ी व ५१ पल हुई। यही चन्द्रदशा है। इसी प्रकार सूर्याष्टक वर्ग में अन्य ग्रहों की दशा निकालनी चाहिए।

इसी पद्धति से अन्य ग्रहों के अष्टक वर्गों में सब ग्रहों की दशा निकाली जाएगी।

ध्रुव से दशानयन प्रकार :

द्वौ भूः स्वर्गास्तत्त्वतुल्या द्विवेदाः
क्ष्मक्षा वर्षाद्यो ध्रुवोऽनेन हन्यात्।
तत्तद्वर्गोत्थाः कलास्तस्य तस्या-
ब्दाद्योदायस्तस्य तस्याष्टवर्गे ॥२०॥

द्वाविति। द्वौ प्रसिद्धौ, भूरेकः, स्वर्गा एकोनविंशति, तत्त्वतुल्याः पंचविंशतिः द्विवेदा द्वाचत्वारिंशत्, क्ष्मक्षा एकपंचाशत्, अयं वर्षाद्यो ध्रुवः स्यात्। अनेन ध्रुवेण वर्षादिकेन तत्तद्वर्गोत्थास्तस्य तस्याष्टकवर्गसम्भवाः कला रेखा हन्याद् गुणयेत्। तदा तस्य तस्याष्टकवर्गे तस्य तस्याब्दाद्यो वर्षाद्यो दायो दशा भवेदिति शेषः। तथा च ग्रन्थान्तरे—

तत्तद्वर्गोत्थरेखाभिर्ध्रुवं संगुणयेद् बुधः।
तत्तद् वर्गाष्टके तत्तद् ग्रहाणां च दशा भवेत्।
द्विवर्षमेकमासञ्च ह्येकविंशदिनानि च।

चविंशतिका घट्यो द्विचत्वारिंशकं पलम् ।
विपलान्येक पंचाशद् ध्रुवो ज्ञेयो बुधैः सदा ।।' इति

अत्र ध्रुवो वर्षादिः (२, १, २१, २५, ४२, ५१) अयं निजनिजाक्रान्त राशयध: स्थितरेखासंख्याभिर्गुणितः कार्यस्तदा ग्रहाणां वर्षाद्यां दशा भवेत् ।

दो वर्ष, एक मास, इक्कीस दिन, पच्चीस घड़ी, बयालीस पल व इक्यावन विपल यह ध्रुव है। इस ध्रुव को प्रत्येक ग्रह के अष्टक वर्ग में प्रत्येक ग्रह की अधिष्ठित राशि के नीचे प्राप्त रेखायोग से गुणा करने पर गुणनफल उस ग्रह की दशा होती है। इसी प्रकार प्रत्येक ग्रह के अष्टक वर्ग में सब ग्रहों की दशा का साधन कर लेना चाहिए।

अपने पूर्वोक्त उदाहरण में सूर्य कन्या राशि में स्थित है। कन्या की रेखाएं ६ हैं। इससे वर्षादि ध्रुव २, १, २१, २५, ४२, ५१ को गुणा किया—

२, १, २१, २५, ४२, ५१ × ६ = १२, १०, ८, ३४, १७, ६ सूर्यदशा है।

इसी प्रकार अन्य ग्रहों की भी दशा का साधन कर लेना चाहिए।

पिछले श्लोक में बताए गए प्रकार से व ध्रुव के द्वारा प्राप्त दशा का मान समान ही होता है। अतः कोई भी प्रकार अपनाएं, परिणाम समान ही होंगे। उदाहरण में सूर्याष्टक भिन्नायु दशा निम्नलिखित है—

सूर्याष्टक भिन्नायुर्दशा

	सू०	शु०	बु०	गु०	चं०	मं०	श०	ल०	योग
वर्ष	१२	१२	८	८	८	१४	१४	८	८९
मास	१०	१०	६	६	६	११	११	६	११
दिन	८	८	२५	२५	२५	२९	२९	२५	२९
घड़ी	३४	३४	४२	४२	४२	५९	५९	४२	५९
पल	१७	१७	५१	५१	५१	५९	५९	५१	५९
विपल	६	६	२४	२४	२४	५७	५७	२४	४२

यहां दशाओं का यह क्रम क्यों माना गया? एतदर्थ प्रत्येक अष्टक वर्ग में देखिए कि यह किस ग्रह का अष्टक वर्ग है?

उसी की पहली दशा होगी। जैसे चन्द्राष्टक में पहली दशा चन्द्र की, मंगलाष्टक में पहली दशा मंगल की इत्यादि।

अब राशि क्रम से आगे जो ग्रह अगली राशियों में स्थित हों उनकी क्रमानुसार दशा होगी।

यदि एक ही राशि में कई ग्रह स्थित हों तो बली ग्रह की पहले तथा शेष ग्रहों की उत्तरोत्तर हीन बल के क्रमानुसार दशा होगी।

सूर्याष्टक वर्ग में कन्या में सूर्य है। सूर्य की पहली दशा के बाद दूसरी दशा कन्या से अगली राशि में स्थित ग्रह की होगी।

किन्तु यहां बृहस्पति स्वयं सूर्य के साथ है। अतः सूर्याष्टक वर्ग का प्रतिनिधि होने के कारण पहली दशा सूर्य की व दूसरी दशा गुरु की है। तत्पश्चात् तुला में बुध व शुक्र हैं। बुध बलवान् है, अतः तीसरी दशा बुध की व चौथी दशा शुक्र की है।

तुला से आगे मकर में चन्द्रमा है, अतः पांचवीं दशा चन्द्रमा की है। मकर से आगे मीन में मंगल व शनि हैं। वहां मंगल बली है, अतः छठी दशा मंगल की, सातवीं दशा शनि की व आठवीं दशा लग्न की हुई। इसी प्रकार अन्यत्र दशाक्रम निर्धारित किया जाएगा।

पाठकों को सुविधा हो एतदर्थ ध्रुव से अलग-अलग रेखा योगों का गुणनफल नीचे दिया जा रहा है। इससे आपको दशा वर्षादि तुरन्त प्राप्त हो जाएंगे।

भिन्नायुर्दशा सारणी

(रेखायोग से दशा वर्षादि ज्ञान, उपकरण रेखायोग)

ग्रहाधिष्ठित राशि रेखा	दशा वर्षादि					
०	०	०	०	०	०	०
१	२	१	२१	२५	४२	५१
२	४	३	१२	५१	२५	४२
३	६	५	४	१७	८	३३
४	८	६	२५	४२	५१	२४
५	१०	८	१७	८	३४	१५
६	१२	१०	८	३४	१७	६
७	१४	११	२९	५९	५९	५७
८	१७	१	२१	२५	४२	४८

समुदायाष्टक वर्गायुर्दाय :

भिन्नाष्टक वर्गायु के बाद अब समुदाय अष्टक वर्ग से आयु साधन की प्रक्रिया समझा रहे हैं। एतदर्थं, समुदायाष्टक वर्ग की रेखाओं में भी त्रिकोण शोधन, एकाधिपत्य शोधन व मण्डल शोधन किया जाता है। अगले श्लोक में इसी विषय में ग्रन्थकार बता रहे हैं।

त्रिकोणैकाधिपत्य शोधन व मण्डल शोधन :

पूर्वानीतं यत्समुदायाष्टकवर्गे
मार्तण्डादीनां फलमर्काधिकमर्कैः।
तष्टं ग्राह्यं चेद्रवितोऽल्पं तु तदेव
प्राग्वत्कोणैकाधिपसंशोधनमत्र ॥२१॥

पूर्वेति। मार्तण्डादीनां सूर्यादीनां ग्रहाणां, समुदायाष्टकवर्गे यत्पूर्वनीतं फलं रेखैक्यं यदि तद् अर्काधिकं द्वादशतोऽधिकं, तदाऽर्कैः द्वादशभिस्तष्टं कार्यम्। तदा यच्छेषं स्यात्तत्तद्राशेरधः स्थापयेत्। चेद्यदि यत्र रेखैक्यं द्वादशतोऽल्पं तदा तदेव ग्राह्यम्। ततो रेखाणां मण्डल शोधनानन्तरं प्राग्वत् पूर्वोक्त प्रकारेण कोणैकाधिपत्यसंशोधनं त्रिकोणैकाधिपत्यशोधनं च कुर्यात्। तथा च ब्रह्मयामले—

अष्टवर्गं समुद्धृत्य ग्रहाणां राशिमण्डले।
एकस्मिन् मण्डलाधिक्यं शोधयेच्चक्र मण्डलम्॥
द्वादशैव तु ग्रह्णीयादेवं सर्वेषु राशिषु।
प्राग्वत्त्रिकोणं संशोध्य पश्चादेकाधिपत्यताम्॥' इति

भिन्नाष्टक वर्गों में प्रत्येक राशि को जितनी रेखाएं मिली हों, उन सबके योग से समुदायाष्टक वर्ग का निर्माण किया जाता है। इस विषय में सोदाहरण विवेचन पीछे यथा प्रसंग किया जा चुका है।

इस प्रकार से आयु साधन में सर्वप्रथम मण्डल शोधन किया जाता है। यहां १२ रेखाओं का एक मण्डल होता है। समुदायाष्टक वर्ग में प्रत्येक राशि के नीचे पहले उसकी समुदाय रेखाएं लिख लेनी चाहिएं। उन समुदाय रेखाओं में जहां पर रेखाएं १२ से अधिक हों, वहां १२ से भाग देना चाहिए। तब जो शेष बचे उसे उसी रेखा के नीचे स्थापित कर लेना चाहिए। जहां १२ से कम रेखाएं हों वहां यथावत् रेखा संख्या लिख लेनी चाहिए। इस प्रकार प्रत्येक राशि की मण्डल शुद्ध रेखाएं प्राप्त हो जाएंगी।

मण्डल शोधन के पश्चात् पूर्ववत् त्रिकोण शोधन व तत्पश्चात् एकाधिपत्य शोधन कर लेना चाहिए।

यहां पर तीन क्रियाएं बताई गई हैं। प्रथम मण्डल शोधन पश्चात् त्रिकोण शोधन व तत्पश्चात् एकाधिपत्य शोधन। एकाधिपत्य शोधन व त्रिकोण शोधन में वे ही नियम लागू होंगे जो पहले भिन्नाष्टक वर्ग के सन्दर्भ में बताए जा चुके हैं—

"प्राग्वत्त्रिकोणं संशोध्य पश्चादेकाधिपत्यताम्।"

मण्डल के विषय में ध्यान रखना चाहिए कि यहां १२ रेखाओं का एक चक्रमण्डल माना गया है।

अब अपने पूर्वोक्त उदाहरण में इस शोधन क्रिया को प्रत्यक्ष करके देखते हैं। सर्वाष्टक वर्ग में राशियों की समुदाय रेखाएं इस प्रकार हैं—

मेष २६, वृष २७, मिथुन ४२, कर्क ३१, सिंह ३३, कन्या २८, तुला २५, वृश्चिक २९, धनु ३२, मकर ३७, कुम्भ ३४, मीन ३४।

उपर्युक्त रेखा संख्या लग्न सहित है। इसमें योग ३३७ नहीं होता है। अतः भ्रम में न पड़ें।

अब इनका मण्डल शोधन करना है। मेष की २६ रेखाओं को १२ से विभाजित किया तो शेष २ बचा। ये मेष की मण्डल शुद्ध रेखाएं हैं। इसी प्रकार वृष २७÷१२=शेष ३, मिथुन ४२÷१२=शेष ६ इत्यादि क्रम से मण्डल शोधन किया तो सब राशियों की मण्डल शुद्ध रेखाएं इस प्रकार रहीं—

मेष २, वृष ३, मिथुन ६, कर्क ७, सिंह ९, कन्या ४, तुला १, वृश्चिक ५, धनु ८, मकर १, कुम्भ १०, मीन १०।

अब यहां पूर्ववत् त्रिकोण शोधन किया जाएगा। त्रिकोण शोधन मण्डल शुद्ध रेखाओं के आधार पर होगा। सरल नियम याद रखिए कि त्रिकोण राशियों में जो सबसे कम रेखा संख्या हो उसे त्रिकोण राशियों में से घटा दिया जाएगा। यदि शून्य हो तो शून्य ही घटाना होगा व समान रेखा संख्या हो तो **सर्वं संशोधयेद्बुधः** न्याय से तीनों के नीचे ० स्थापित कर दिया जाएगा।

यहां प्रथम त्रिकोण में मेष २, सिंह ६ व धनु ८ रेखाएं हैं। यहां २ रेखाएं सबसे कम हैं अतः इसे सर्वत्र घटाया तो मेष ०, सिंह ७ व धनु ६ रेखाएं त्रिकोण शुद्ध रेखा हुईं।

द्वितीय त्रिकोण में वृष ३, कन्या ४ व मकर १ है। अतः सर्वाल्प रेखा संख्या १ को सर्वत्र घटाया तो वृष २, कन्या ३ व मकर ० बचा।

तृतीय त्रिकोण में मिथुन ६, तुला १ व कुम्भ १० हैं। यहां सबसे कम रेखायोग १ को सर्वत्र घटाया। तब मिथुन ५, तुला०, कुम्भ—६ त्रिकोण शुद्ध रेखाएं बचीं।

चतुर्थ त्रिकोण कर्क ३, वृश्चिक ५ व मीन १० रेखा हैं। सर्वाल्प ३ को सर्वत्र घटाया तो कर्क ०, वृश्चिक २, मीन ७ रेखाएं बचीं। यह समुदायाष्टक में त्रिकोण शोधन हुआ।

एकाधिपत्य शोधन के लिए मेष व वृश्चिक में क्रमशः ० व २ रेखाएं हैं। तो 'एकं द्वयोः शून्यभमप्यशोधयेत्' इस नियम से इनका अतः एकाधिपत्य शोधन नहीं होगा।

वृष और तुला में भी यही स्थिति है। अतः उनमें भी यथावत् रेखा संख्या बची। इसी प्रकार ‹ कर व कुम्भ में मकर रेखा रहित है, वहां भी एकाधिपत्य शोधन नहीं हुआ।

मिथुन व कन्या में क्रमशः ५ व ३ रेखाएं हैं। मिथुन ग्रह रहित है और कन्या में ग्रह हैं, अतः कन्या को रेखाएं यथावत् रहीं व मिथुन में से कन्या को रेखाएं घटाने से प्राप्त २ रेखाएं मिथुन की एकाधिपत्य शोधन युक्त रेखाएं हुईं।

धनु व मीन में धनु ग्रह रहित तथा अल्प फल ६ रेखाओं वाली है। जबकि मीन ग्रह युक्त व अधिक फल वाली है तो 'फलाधिके खेटयुते परं त्यजत्' नियम से धनु के समस्त फल का त्याग किया व मीन की संख्या यथावत् रही।

कर्क व सिंह का एकाधिपत्य शोधन नहीं होता। अतः उनकी त्रिकोण शुद्ध रेखाएं ही स्वीकार कर ली गईं। अब इस समस्त निष्कर्ष को सुविधार्थ चक्र में प्रस्तुत किया जा रहा है।

उदाहरण—

रा.	मे.	वृ.	मि.	क.	सि	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं	मी.
ग्र.रेखैक्य	२६	२२	३६	३६	२९	२६	?१	२५	२६	३१	३०	२९
लग्न रेखैक्य	०	५	६	३	४	२	४	४	६	६	४	५
योग	२६	२७	४२	३९	३३	२८	२५	२९	३२	३७	३४	३४
मं.शो.रे.	२	३	६	३	९	४	१	५	८	१	१०	१०
त्रि.शो.रे.	०	२	५	०	७	३	०	२	६	०	९	७
ए.शो.रे.	०	२	२	०	७	३	०	२	०	०	९	७

अब पाठकों की सुविधा के लिए मण्डल शोधन सारणी दी जा रही है। प्रत्येक भाव के रेखायोग के नीचे उसकी द्वादश विभाजित मण्डल शुद्ध रेखाएं दी जा रही हैं।

मण्डल शुद्ध रेखा सारणी (मण्डल १२)

रेखायोग	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४
म.शु.रेखा	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	०
रेखायोग	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	३२	३३	३४	३५	३६	३७
म.शु.रेखा	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	०	१
रेखायोग	३८	३९	४०	४१	४२	४३	४४	४५	४६	४७	४८	४९	५०
म.शु.रेखा	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	०	१	२

पिण्ड साधन व सामुदायायु साधन :

हन्यात्पृथक् तद्गुणकैर्भखोकसां
तद्योगमग्निविनखैस्त्रिधा क्रमात्।
सन्ताडयेन्मासमुखं भवेदिहा-
युः सामुदायं कुरु तच्छरन्मुखम् ॥२२॥

हन्यादिति। यत्पूर्वानीतं, एकाधिपत्य शोध्यावशिष्टं फलं तत् पृथक् भानां राशीनां खौकसां ग्रहाणां च गुणकैः प्रागुक्तैर्गुणैः, हन्याद् गुणयेत्। ततस्तद्योगं तदेकीकृत्य क्रमात् त्रिधा स्थानत्रये, त्रिविनखैस्त्रिभिस्त्रिभिर्विंशत्या च संताडयेद् गुणयेत्। इह मासमुखं मासाद्यं सामुदायायुर्भवेत् तच्छरन्मुखं वर्षाद्यं कुरु विधेहि भोगणक! इति शेषः।

राशि व ग्रहों के गुणक पहले बताए जा चुके हैं। उन गुणकों से एकाधिपत्य शुद्ध फल को गुणा करने से राशि पिण्ड व ग्रह प्राप्त हो जाता है। इन दोनों पिण्डों के योग से ग्रह राशि योग पिण्ड या 'योग पिण्ड' प्राप्त होगा।

इस योग पिण्ड को पूर्ववत् तीन स्थानों पर स्थापित कर क्रमश: तीन, तीन व बीस से गुणा करना चाहिए। तब मासादि मध्यम सामुदायायु प्राप्त हो जाएगी। इस मासादि आयु को १२ से भाग देकर वर्षादि बना लेना चाहिए।

पूर्वोक्त उदाहरण में राशियों के पिण्ड इस प्रकार होंगे—

राशि	रेखा	×	गुणक	=	पिण्ड
मेष	०	×	७	=	०
वृष	२	×	१०	=	२०
मिथुन	२	×	८	=	१६
कर्क	०	×	४	=	०
सिंह	७	×	१०	=	७०
कन्या	३	×	५	=	१५
तुला	०	×	७	=	०
वृश्चिक	२	×	८	=	१६
धनु	०	×	९	=	०
मकर	०	×	५	=	०
कुम्भ	९	×	११	=	९९
मीन	७	×	१२	=	८४

सर्वयोग—३२० राशि पिण्ड

ग्रहों के पिण्ड इस प्रकार होंगे—

ग्रह	रेखा	×	गुणक	=	पिण्ड
सूर्य	३	×	५	=	१५
चन्द्र	०	×	५	=	०

मंगल	७	×	८	=	५६
बुध	०	×	५	=	०
गुरु	३	×	१०	=	३०
शुक्र	०	×	७	=	०
शनि	७	×	५	=	३५
योग					१३६

ग्रह योग पिण्ड

राशि योग पिण्ड ३२० + ग्रह योग पिण्ड १३६ = ४५६ योग पिण्ड।

अब इस योग पिण्ड से मध्यम सामुदायायु का साधन करेंगे।

उपर्युक्त योग पिण्ड ४५६ को क्रमशः ३, ३ व २० से गुणा किया।

४५६ × ३ = १३६८ मास, ४५६ × ३ = १३६८ दिन।
४५६ × २० = ९१२० घड़ी।

इन्हें वर्षादि बनाया तो ११८ वर्ष, २ मास, २० दिन, ० घड़ी व ० पल मध्यम सामुदायायु हुई।

इसी क्रिया को दूसरे प्रकार से भी किया जा सकता है।

योग पिण्ड को ७ से गुणा कर २७ का भाग देने से वर्षादि आयु होती है।

योग पिण्ड ४५६ × ७ = ३१९२ ÷ २७ = ११८ वर्ष लब्धि, शेष ६।

शेष ६ × १२ = ७२ ÷ २७ = २ मास लब्धि, शेष १८।
शेष १८ × ३० = ५४० ÷ २७ = २० दिन लब्धि, शेष ०।

अतः इस प्रकार से भी आयु ११८ वर्ष, २ मास, २० दिन, ० घड़ी, ० पल हुई। दोनों प्रकारों में से यथारुचि कोई भी मार्ग अपना लें।

अब इस मध्यमायु को स्पष्ट करने के लिए मण्डल शोधन करने के बाद पूर्ववत् ३२४ से गुणा कर ३६५ से भाग देना होगा। अगले श्लोकों में यह विषय बताया जा रहा है।

आयु का स्पष्टीकरण व दशा :

ग्राह्यं यथावद्यदि तच्छताल्पकं
पुष्टं शताद्यत्र शतेन वर्जितम्।
गुण्यं तदम्भोधिरदैर्मरुद्रस-
रामैर्हृतं वर्षमुखं नभःसदाम् ॥२३॥
स्याच्छुद्धमायुः समुदायकं ततो-
ऽनेनैव भिन्नाष्टकवर्गसंभवम्।
आयुः पृथक् सङ्गुणितं विभाजितं
भिन्नायुरैक्येन समामना दशा ॥२४॥

ग्राह्यमिति। स्यादिति च। यदि तद् वर्षाद्यं शताल्पकं, तदा यथावद् ग्राह्यम्। यत्र यस्मिन् स्थले, शतात् पुष्टमधिकं तत्र शतेन वर्जितं रहितं कार्यम्। ततस्तच्छेषं यथावस्थितं वाऽम्भोधिरदैश्चतुर्विंशत्युत्तर शत त्रयेण गुण्यं गुणितं कार्यम्। ततो मरुद्रसरामैः पंचषष्ठ्युत्तर शतत्रयेण हृतं विभाजितं कार्यं तदा यल्लभ्यते तन्नभः सदां ग्रहाणां वर्षमुखं शुद्धं स्पष्टं सामुदायायुः स्यात्। अनेन सामुदायुषा भिन्नाष्टकवर्गसम्भवं भिन्नाष्टकवर्गजनितं, प्रत्येकग्रहस्यायुः पृथक् संगुणितं विनिहतं कार्यम्। ततो भिन्नायुरैक्येन भिन्नायुर्योगेन विभाजितं कार्यं तदा समानना वर्षामुखा दशा स्यात्। तथा च ब्रह्मयामले—

पूर्वोक्त गुणकारैस्तु वर्धयेच्च पृथक् पृथक्।
एकीकृत्य ततः सर्वं सप्तभिर्गुणयेत्पुनः॥
सप्तविंशतिहृल्लब्धमायुः पिण्डं प्रदृश्यते।
द्वादशादिगुणाल्लब्धं मासाहर्घटिकाः स्मृताः॥
शतादूर्ध्वं तु तत् पिण्डं मण्डलं शोधयेच्छतम्।
शतमेकं तु गृह्णीयाद् दीर्घायुर्योगसम्भवे॥
तत्सर्वं सकलं कृत्वा वरांगेण विवर्धितम्।
मातंगहृल्लब्धायुर्मातङ्गाब्दं प्रदृश्यते॥
सर्वग्रहाणां शुद्धोऽयं पिण्डरूपं विनिर्दिशेत्।
ग्रहाणां तु विभागार्थमुपायः कथ्यतेऽधुना॥
भिन्नायुवर्गआयुश्च स्वस्वखेटैश्च संगुणम्।
सामुदायेन भिन्नायुर्योगाप्तं स्वदशा भवेत्॥ इति

देवकेरलजातकेऽपि—

सर्वग्रहेभ्यः शुद्धायुः पिण्ड रूपं विनिर्दिशेत्।
ग्रहाणां तु विभज्यार्थ उपायः कथमुच्यते॥

व्यस्ताष्टक वर्गदशामेकीकृत्य च नाडिका ।
भागहारं तु सर्वेषामेकान्ते रचिता क्वचित् ॥
समस्ताष्टक वर्गाणां भिन्नाष्टकदशाहृता ।
भाग हारेणयल्लब्धं ग्रहस्यायुर्भविष्यति ॥
सर्वेषां सर्वनाडीभिर्भागहारं तदुच्यते ।
दिनमासाब्दपर्यन्तं कृत्वा पूर्ववदाचरेत् ॥
एवं ग्रहाणां सर्वेषां शुद्धायुश्च पृथक् पृथक् ।
समुदायदशामार्गमेवं कार्यमुदाहृतम् ॥' इति

इहापि श्रीदेवशालेन लग्नायुः साधनमुक्तं, तदित्थम्—

'राशितुल्यानि वर्षाणि प्रयच्छन्त्युदयस्य च ।
उदयतोऽपि विज्ञेयो लग्नादायुर्विनिर्दिशेत् ।
तथोच्चनीचमार्गेण दशां कुर्याद् विचक्षणः ॥' इति

सामुदायायु के प्रसंग में मण्डल का मान १०० वर्ष है। यदि पर्वोक्त रीति से साधित सामुदायायु १०० वर्षों से अधिक हो तो उसमें से १०० वर्ष घटा लेने चाहिएं। तब मण्डल शुद्ध मध्यम सामुदायायु होगी। यदि आयु वर्ष १०० से कम हो तो वह स्वतः ही मण्डल शुद्ध होगी।

इस मध्यम सामुदायायु को स्पष्ट करने के लिए उसे ३२४ से गुणा कर पूर्ववत् ३६५ से भाग देना चाहिए। तब स्पष्ट सामुदायायु के सौरमान से वर्षादि प्राप्त हो जाएंगे। यह स्पष्ट सामुदायायु होगी। इसमें दशा का साधन करने के लिए स्पष्ट सामुदायायु को प्रत्येक ग्रह की भिन्नायु से पृथक्-पृथक् गोमूत्रिका रीति से गुणा कर भिन्नायु के वर्षादि योग से भाग देना चाहिए। तब लब्धि सामुदायायु के वर्षादि में प्रत्येक ग्रह की वर्षादि दशा होगी।

यहां तीन मुख्य बातें बतायी गयी हैं। सर्वप्रथम मण्डल शोधन करना, तत्पश्चात् स्पष्टीकरण करना व तत्पश्चात् प्रत्येक ग्रह की दशा के वर्षादि ज्ञात करना।

इस समस्त विषय को अपने पूर्वोक्त उदाहरण के संदर्भ में समझते हैं। हमारी सामुदायायु के वर्षादि ११८, २, २०, ०, ० हैं। यह आयु मण्डल मान अर्थात् १०० वर्षों से अधिक है। इसे मण्डल शुद्ध करने के लिए इसमें से १०० वर्षों को घटाया तो शेष १८, २, २०,०,० मध्यम सामुदायायु हुई।

इसे स्पष्ट करने के लिए ३२४ से गुणा कर ३६५ से भाग दिया।

मध्यम सामुदायायु १८, २, २०, ०, ० × ३२४ = ५६०४, ०, ०, ०, ०।

इसे ३६५ से भाग दिया तो ५६०४ ÷ ३६५ = लब्धि १६ वर्ष, शेष ६४।

शेष को १२ से गुणा कर पुनः ३६५ से भाग दिया—

६४ × १२ = ७६८ ÷ ३६५ = २ मास लब्धि, शेष ३८।

शेष ३८ × ३० = ११४० ÷ ३६५ = लब्धि ३ दिन, शेष ४५।

शेष ४५ × ६० = २७०० ÷ ३६५ = लब्धि ७ घड़ी, शेष १४५।

शेष १४५ × ६० = ८७०० ÷ ३६५ = लब्धि २४ पल।

इसे वर्षादि क्रम से न्यस्त करने पर १६ वर्ष, २ मास, ३ दिन, ० घड़ी, २४ पल स्पष्ट सामुदायायु हुई।

इसमें दशा विभाग जानने के लिए सूर्य की भिन्नायु ४, १, १६, २७, ७ को सामुदायायु से गोमूत्रिका रीति से गुणा किया तो गुणनफल ६६, ५, २०, ३८, २६ भाज्य संख्या प्राप्त हुई। इसमें भिन्नायु योग ४८, १०, ०, ०, २० से भाग दिया। एतदर्थ दोनों को सवर्ण किया तो सवर्णित सामुदायायु ८६१५०३०६ भाज्य व सवर्णित भिन्नायु ६३२८८०२० भाजक हुआ। भाज्य में भाजक से भाग देने पर लब्धि १ वर्ष व शेष २२८६२२८६ है।

शेष को १२ से गुणा कर पुनः भाजक से भाग दिया—

२२८६२२८६ × १२ = २७४३४७४३२ ÷ ६३२८८०२० = लब्धि ४ मास व शेष २११९५३५२ है।

शेष २११९५३५२ × ३० = ६३५८६०५६० ÷ ६३२८८०२० = लब्धि १० दिन व शेष २९८०३६० है।

शेष २९८०३६० × ६० = १७८८२१६०० ÷ ६३२८८०२० = लब्धि २ घड़ी व शेष ५२२४५५६० है।

शेष ५२२४५५६० × ६० = ३१३४७३६०० ÷ ६३२८८०२० = लब्धि ५० पल हुई।

इस प्रकार सामुदायायु में सूर्य की दशा १ वर्ष, ४ मास, १० दिन, २ घड़ी व ५० पल हुई।

दशा साधन के लिए दूसरे प्रकार से भी गणित क्रिया की जा सकती है।

सामुदायायु वर्षों को सवर्ण किया तो २०९६३२४४ भाज्य हुआ। भिन्नायु योग का सवर्ण मान ६३२८८०२० भाजक हुआ। भाज्य में भाजक से भाग दिया।

२०९६३२४४ ÷ ६३२८८०२० = ० लब्धि, शेष २०९६३२४४।

शेष २०९६३२४४ × १२ = २५१५५८९२८ ÷ ६३२८८०२० = लब्धि ३ मास, शेष ६१६९४८६८ है।

शेष ६१६९४८६८ × ३० = १८५०८४६०४० ÷ ६३२८८०२० = लब्धि २९ दिन, शेष १५४१३४६० है।

शेष १५४१३४६० × ६० = ९२९६०७६०० / ६३२८८०२० = लब्धि १४ घड़ी।

शेष ४३५७५३२० × ६० = २६१४५१९२०० / ६३२८८०२० = लब्धि ४१ पल।

शेष १९७१०३८० × ६० = ११८२६२२८०० / ६३२८८०२० = लब्धि १९ विपल।

यह ० वर्ष, ३ मास, २९ दिन, १४ घड़ी, ४१ पल व १९ विपल का ध्रुव हुआ इसे रवि की भिन्नायु ४, १, ९, २७, ७ वर्षादि से गोमूत्रिका रीति से गुणा किया तो सामुदायायु में सूर्य की दशा १ वर्ष, ४ मास, १० दिन, २ घड़ी, ५० पल हुई। इसी प्रकार से सामुदायायु में सब ग्रहों की दशा जान ली गई तो परिणाम इस प्रकार रहा—

ग्रह	सामुदायायु दशा वर्षादि
सूर्य	१, ४, १०, २, ५०
चन्द्र	१, ५, ७, १०, २
मंगल	०, ७, १२, २५, २९
बुध	२, ४, १०, ४१, १९
बृहस्पति	२, २, १५, ५०, ११
शुक्र	०, ११, १६, ५७, १२
शनि	१, ०, ०, ४०, २९
लग्न	१, २, १८, ३७, ५२
योग	१६, २, ३, ७, २४

यदि सब दशाओं का योग सामुदायायु के वर्षादि के समान न आए तो गणित क्रिया में कहीं पर त्रुटि समझनी चाहिए। इस स्थिति में सावधानी से पुनः दृष्टिपात करें।

सामुदायायु साधन का दूसरा प्रकार :

अनूनमाकाटननैधनोपग-
फलैक्यमक्षामृतरश्मिताडितम्।
विभाजितं वाजिमितैः समाननं
भवेन्नुरायुर्विबुधैरितीर्य्यते ॥२५॥

अनूनेति। अनूनाः समस्ता, आकाटना ग्रहास्तेषां नैधनेऽष्टमे उपगाना-माश्रितानां फलानां रेखैक्यमक्षामृतरश्मिभिः पंचदशभिस्ताडितं गुणितं कार्यं, ततो वाजिमितैः सप्तभिर्विभाजितं तदा नुर्मनुष्यस्य वर्षादि आयुर्भवेत्। तथा च मदीय-पद्धतौ—

सर्वग्रुचार्यष्टमभावसंस्थित रेखायुतिर्धस्त्रहृता तुरंगमैः।
विभाजितायुः शरवादिकं भवेद् विधानमेतत् कथितं मुनीश्वरैः ॥' इति

आठों अष्टक वर्गों में ग्रहों की अधिष्ठित राशियों से अष्टम राशि में जितनी रेखाएं हों उन सबका योगफल कर लेना चाहिए। इस योगफल को १५ से गुणा कर ७ से भाग दें। लब्धि वर्षादि आयु होगी, ऐसा पण्डित जनों ने कहा है।

यहां पर भिन्नाष्टक वर्गों में ग्रह जिस राशि में स्थित हो, उससे आठवीं राशि में उसी ग्रह के अष्टक वर्ग में जो रेखाएं हों उनका यहां ग्रहण है।

उदाहरण में सूर्याष्टक में सूर्य की अधिष्ठित राशि कन्या से अष्टम राशि में रेखायोग ४, चन्द्रमा से अष्टम में ५, मंगल अष्टम में २, बुध से अष्टम में ३, बृहस्पति से अष्टम में ४, शुक्र से अष्टम में ६, शनि से अष्टम में १, लग्न से अष्टम में ४ रेखायोग है। इन सबका योग २९ है। इसे १५ से गुणा किया तो गुणनफल ४३५ है। इसे सात से भाग दिया तो लब्धि ६२ वर्ष है।

शेष १ को १२ से गुणा कर ७ का भाग दिया तो लब्धि १ मास है।

शेष ५ को ३० से गुणा किया व गुणनफल १५० को ७ से भाग दिया तो २१ दिन लब्धि है।

शेष ३ को ६० से गुणा किया तो गुणनफल १८० है। इसे ७ से भाग दिया तो लब्धि २५ घड़ी है।

शेष ५ को ६० से गुणा किया तथा गुणनफल ३०० में ७ का भाग दिया तो लब्धि ४३ पल है। इस प्रकार स्पष्ट सामुदायायु ६२ वर्ष, १ मास, २१ दिन, २५ घड़ी ४३ पल है।

सामुदायायु की व्यवस्था :

केन्द्रे चन्द्रे सविहङ्गे बलोनै-
रन्यैः केन्द्रेतरयातैर्नभोगैः।
तज्ज्ञैः साध्यं सामुदायाष्टवर्गो-
त्थायुर्मन्दे बलयुक्ते कृशाङ्के ॥२६॥

केन्द्र इति। सविहंगे ग्रहसहिते चन्द्रे स्थिते केन्द्रे भवति, अन्यैरितरै र्नभोगैर्ग्रहैर्बलोनैर्वीर्यरहितैः केन्द्रयातैः, सद्भिः तज्ज्ञैर्जातकशास्त्रविद्भिः समुदायाष्टकवर्गोत्थायुः साध्यम्। श्रीदेवशालो यथा—

ग्रहसहिते केन्द्रस्थे चन्द्रे केन्द्राद्बहिः स्थितैः शेषैः।
सामुदायाष्टकविधिना ग्रहदायं चिन्तयेन्मणित्थोक्तिः॥' इति

मन्देति। मन्दबाकृशांगे शनौ बलैः षड्बलैर्युक्ते सहिते सति तथापि सामुदायाष्टवर्गायुः साध्यम्। तथा च जातक पारिजाते—

'देवाचार्ये वयायुर्दिनकरतनये सामुदायं बलिष्ठे ॥' इति

चन्द्रमा किसी ग्रह से युक्त होकर केन्द्र स्थानों में स्थित हो। शेष ग्रह निर्बल होकर केन्द्र के अतिरिक्त स्थानों में स्थित हों अथवा शनि बलवान् हो तो सामुदायायु का साधन करना चाहिए।

कलेशे केन्द्रस्थेऽधिबल इतरैः कण्टकगतैः
सवीर्यैर्भिन्नायुर्बलयुत उडेशे विचरैः।
समैः केन्द्रान्यस्थैर्जनुषि समुदायायुरितरैः
सहोयुक्तैः संसाधय गणक वेदाष्टगणजम् ॥२७॥

कलेश इति। जनुषि जन्मसमयेऽधिक बलवति कलेशे चन्द्रे केन्द्रस्थे इतरैर्ग्रहैः सवीर्यैः कण्टकगतैः सद्भिः, भिन्नायुर्भिन्नसमुदायाष्टवर्गजायुः साध्यम्।

चन्द्रे बलयुते समैः सर्वैदिविचरैर्ग्रहैः केन्द्रान्यस्थैः पणफरापोक्लिमगतैः सद्भिः सामुदायायुः संसाधय । इतरैश्चन्द्रातिरिक्तग्रहैः सहोयुक्तबलयुक्तैः सद्भिः वेधाष्टकजं भिन्नाष्टकवर्गजनितमायुः भो गणक ! संसाधय ।

अधिक बलवान् चन्द्रमा यदि केन्द्र में स्थित हो और अन्य ग्रह भी बलवान् होकर केन्द्र में ही स्थित हों तो मिश्रायु का साधन करना चाहिए ।

यदि चन्द्रमा बलवान् हो और अन्य ग्रह केन्द्र में न हों तो सामुदायायु का साधन करना चाहिए ।

चन्द्रमा बलवान् न हो और शेष ग्रह बलवान् हों तो भिन्नाष्टक वर्गजायु का साधन करना चाहिए ।

मिश्रायु का तात्पर्य है कि भिन्नाष्टक वर्गजायु व सामुदायाष्टक वर्गजायु के योगफल का आधा भाग। दोनों के मिश्रण से मिश्रायु नाम सार्थक है ।

दशाक्रम बल व दशाफल का ज्ञान :

यत्षड्बलैक्यं तु दशाक्रमाय स-
बोधो गृहाणैकमगैः समग्रहैः ।
केन्द्रान्यगैर्दायफलं विबुध्यत
आयुर्विभागैरिह सम्यगङ्गिनाम् ॥२८॥

यदिति । ग्रहाणां यत्पूर्वानीतं षड्बलैक्यं तत्तु दशाया दायस्य क्रमाय क्रमार्थं बोधो ज्ञानं गृहाण । तथा च देवशालः—

ग्रहाणां षड्बलं ग्राह्यमष्टवर्गदशाक्रमे ।
भणित्थादिभिराचार्यैरनुक्तं बलमन्यकम् ॥' इति

एकेति । समैः खेटैः सर्वैः ग्रहैः केन्द्रान्यगैः केन्द्रभिन्नस्थानगतैः, एकभगैरेकस्थानगतैः सद्भिः, इहाङ्गिनां मनुष्याणां दायस्य दशायाः फलमायुर्विभागैर्गणितागतायुर्वशेनैव सम्यग् विबुध्यते विज्ञायते । दैवज्ञैरिति शेषः । तथा च देवशालः—

'एकर्क्षगतैः सर्वैः केन्द्रादन्यत्रसंस्थितैर्जन्तोः ।
आयुर्दायविभागैर्दशाफलं ज्ञायते सम्यक् ॥' इति

अष्टक वर्गायु की दशा का क्या क्रम हो इसे जानने के लिए ग्रहों के प्रसिद्ध षड्बल का ही ग्रहण करना चाहिए ।

यदि सब ग्रह पणफर या आपोक्लिम स्थानों में हों तो आयु-र्भाग से दशा का फल जानना चाहिए।

पीछे श्लोक २० की व्याख्या में दशेशों के क्रम के विषय में यथा प्रसंग बताया गया था। अब ग्रन्थकार उसी बात को यहां कह रहे हैं। बली ग्रह की दशा पहले होगी, उससे कम बली ग्रह की बाद में, इसी प्रकार उत्तरोत्तर हीन बल वाले ग्रहों की दशा का क्रम होगा। यहां पर यह आशय है। किन्तु स्पष्ट रूप से समझिए कि सूर्याष्टक वर्ग में पहली दशा सूर्य की होगी। अब यदि सूर्य के साथ कोई एक दो ग्रह स्थित हैं तो देखिए कि सूर्यातिरिक्त सूर्य के साथ स्थित ग्रहों में किसका षड्बल अधिक है? जो बली होगा, दूसरा दशेश वही होगा। तीसरा उससे हीन बली होगा। अब आगे के दशेश आगे की राशियों में स्थित ग्रह होंगे। यदि पुन: कहीं एक राशि में एकाधिक ग्रह स्थित हों तो पुनः षड्बलाधिक्य के आधार पर पूर्वापर क्रम निश्चित कर लीजिए। इसी प्रकार दशाक्रम का निर्धारण कर लेना चाहिए।

अब देखना यह है कि इस दशाक्रम से मनुष्य के शुभाशुभ फल का विचार किन-किन परिस्थितियों में किया जाएगा। इसके लिए यह व्यवस्था बताई है कि यदि सब बलवान् ग्रह केन्द्र के अतिरिक्त स्थानों में स्थित हों तब इस दशा का सम्यक् फल मनुष्यों को मिलता है। इस दशा से फल प्राप्ति की कुछ अन्य स्थितियां आगे बताई जा रही हैं।

आकाशवासैः सकलैः सपत्न-
निम्नांशभस्थैः किमु तल्लवैर्हि।
प्रकल्पयेदम्बरचारिदायं
होरागमज्ञो यवनोक्तिरेषा॥२१॥

आकाशेति। सकलैः सर्वैराकाशचारिभिर्ग्रहैः सपत्ननिम्नांशकभस्थैः नीच-शत्रुराश्यंशगतैः, किमु अथवा तल्लवैः शत्रुनीचांशैः सद्भिः तदा होरागमज्ञो जातकशास्त्रवेत्ताऽम्बरचारिणां ग्रहाणां दायं दशां प्रकल्पयेत्। फलज्ञानायेति शेषः। एषेयं यवनाचार्याणामुक्तिर्वचनमस्तीति शेषः। तथा च देवशालः—

'नीचारिभांशकगतैर्ग्रहैः समस्तैस्तदंशकैर्वापि।
यवनाचार्यमतेन ग्रहदायं कल्पयेन्मतिमान्॥' इति

यदि सभी ग्रह शत्रु की राशि या शत्रु नवांश में हों अथवा नीच राशि या नीच नवांश में हों अथवा जन्म लग्न में लग्नेश के शत्रु का नवांश हो या लग्नेश का नीच नवांश हो तो ग्रहों की दशा की कल्पना करनी चाहिए।

अर्थात् उक्त परिस्थितियों में इस दशाक्रम से शुभाशुभ फल का विचार करना चाहिए। यह यवनाचार्य का मत है।

आयु विभाग से दशादि का ज्ञानः

योगः प्रसूतौ मनुजस्य यस्य
कृशायुषो वा विपुलायुषोऽपि।
दशाविभागैरुभयोर्नरस्य
न शक्यते ज्ञानमिहायुषो ज्ञैः॥३०॥

योग इति। यस्य मनुजस्य प्रसूतौ जन्मनि कृशायुषोऽल्पायुषो विपुलायुषो वा योगो भवेत्, तदोभयोर्द्वयोः प्रकारयोर्दशा विभागैः, ज्ञैः पण्डितैः नरस्य पुरुषस्यायुषो ज्ञानं न शक्यते। आयुर्विभागैरेवायुषां ज्ञानं न भवेदित्याशयः। तथा च देवशालः—

'अल्पायुर्योगजातो दीर्घायुर्योगजातोऽथवा भवति।
उभयोर्दशाविभागैरायुर्जातं न पश्यते धीमान्॥' इति

अल्पायु, मध्यायु व दीर्घायु ये तीन आयुयोग विभाग प्रसिद्ध हैं। अब इनके आधार पर अष्टकवर्गायु के फल को बता रहे हैं। यदि किसी व्यक्ति का जन्म अल्पायुर्योग में अथवा दीर्घायुर्योग में हुआ हो तो अष्टकवर्गायुर्दाय द्वारा प्राप्त आयु विद्वानों ने लोक में घटित होती नहीं देखी। अर्थात् अष्टकवर्गजायु की यथोक्त अवधि ही वास्तव में मनुष्य की वास्तविक आयु है या नहीं? इस विषय में विद्वानों का मत है कि अल्पायुर्योगों में व दीर्घायुर्योगों में इस आयु के अनुसार मनुष्यों की आयु नहीं देखी जाती है।

यहां दशा विभाग से समुदाय दशा व भिन्नाष्टकदशा दोनों का ही ग्रहण है। यह देवशाल के उद्धरण के **'उभयोर्दशाविभागैः'** पद से स्पष्ट है।

मध्यायुर्योगों में जन्म होने पर इस आयुर्दाय का फल यथावत् मिलेगा यह बात अन्यथा वृत्या सिद्ध होती है।

संक्षिप्त आयुर्योग ज्ञान :

दुष्टै खगैर्दुष्टनिकेतयातैः
कृशायुरुक्तं जनितस्य पुंसः।
कल्याणखेटैर्विपरीतमायु-
र्मिश्रोपयातैर्यदि मिश्रमायुः ॥३१॥

दुष्टैरिति। दुष्टैः पापैः खगैर्ग्रहैर्दुष्टनिकेतयातैः षष्ठाष्टम द्वादशभावगतैः, तदा जनितस्य मनुष्यस्य कृशायुरल्पायुरार्यैः विद्वद्भिरुक्तम्। तत्र गतैः कल्याण-खेटैः शुभग्रहैर्विपरीतं विपर्ययः स्यात्। दीर्घायुरित्यर्थः। यदि तत्र मिश्रोपयातैः शुभाशुभग्रहैः सद्भिः मिश्रं मध्यमायुः स्यात्। तथा च देवशाल----

'षष्ठाष्टमद्वादशगतैः पापैरल्पायुरादिशेत्तज्ज्ञः।
सौम्यैर्विपरीतं स्यान्मिश्रगतैर्मिश्रमादेश्यम् ॥' इति

यदि पापग्रह त्रिक्स्थानों अर्थात् षष्ठ, अष्टम व द्वादश स्थानों में हो तो मनुष्यों की अल्पायु होती है।

यदि उक्त स्थानों में शुभग्रह हों तो दीर्घायु होती है।

यदि शुभाशुभ मिश्रित ग्रह उक्त स्थानों में हों तो मध्यायु होती है।

यहां पर सामान्यतः आयु खण्ड का निर्धारण बताया गया है। इसका आशय यह भी लिया जा सकता है कि ६, ८, १२ स्थानों में यदि शुभ व अशुभ ग्रह स्थित हों तो अष्टकवर्गजायु का फल यथार्थ मिलता है, अन्यथा नहीं।

आयुर्योगों व आयु साधन के समस्त प्रकारों को हम **आयुर्निर्णय** के **अभिनव भाष्य** में सविस्तार समझा चुके हैं। अतः आयुसाधन की दिशा में विशिष्ट ज्ञानवृद्धि के लिए इस सर्वांगपूर्ण ग्रन्थ को देख लें।

दशाक्रम ज्ञान :

प्राग्लग्नलौभास्वतां योऽधिवीर्यो
ज्ञेया तस्याद्या दशा जन्मकाले।
तस्मात्केन्द्रादिस्थितानां नभोगा
यत्र वृध्याद्यास्तत्र वीर्यक्रमेण ॥३२॥

साम्यं वीर्य्याणां प्रभूतायुरब्द-
दातुः साम्यं हायनानां तु यत्र।
तत्रार्कात्पूर्वोदितस्य क्रमेण
खेटस्य ज्ञेया दशा होरिकेन्द्रैः ॥३३॥

प्रागिति। साम्यमिति च। प्राग्लग्नं क्षितिजलग्नं जन्मलग्नमित्यर्थः। ग्लौश्चन्द्रः, भास्वान् रविः, तेषां मध्ये योऽधिवीर्योऽधिकबलवान्, जन्मनि तस्याद्या प्रथमा दशा स्यात्। तस्मादाद्यदशेशात्केन्द्रादिस्थितानां केन्द्रपणफरापोक्लिमगतानां दशा स्यात्। अर्थादाद्यदशेशाक्रान्तराशितः समुत्पन्नानि यानि केन्द्रगृहाणि तत्र गतानां ग्रहाणां द्वितीयादिदशा स्यात्। ततः पणफरस्थानां ततश्चापोक्लिमगतानां ग्रहाणां दशा ज्ञेयेत्यर्थः। यत्र यस्मिन् केन्द्रे पणफरे आपोक्लिमे वा द्विप्रमुखा ग्रहा स्युस्तत्र बलस्य क्रमेण परिपाट्या दशा ज्ञेया। तथा च ब्रह्मयामले—

'यदायुर्यस्य खेटस्य ततस्यैव दशा भवेत्।
ज्ञेया लग्नेन्दुसूर्याणामाद्या यो बलवांस्ततः॥
केन्द्रादिषु स्थितानां च क्रमेण तु पुनर्दशा।
द्वित्र्याद्यो ग्रहा यत्र तत्र वीर्यं क्रमेण च॥' इति

श्री देवशालेनेह दशाक्रमबलज्ञानमुक्तम्—

'ग्रहाणां षड्बलं ग्राह्यमष्टवर्गदशाक्रमे।
मणित्थादिभिराचार्यैरनुक्तं बलमन्यकम्॥' इति

साम्यमिति। यदा द्वयोस्त्रयाणां वा वीर्याणां बलानां साम्यं तुल्यत्वं भवेत्तदा प्रभूतायुरब्ददातुर्बहुलायुर्वर्षप्रदातुर्ग्रहस्याद्या दशा भवेत्। यत्र तु हायनानां वर्षाणां साम्यं तुल्यत्वं भवेत्तत्रार्कात् सूर्यात् पूर्वोदितस्य प्रथमोदितस्य खेटस्य क्रमेण होरि-केन्द्रैर्गणकोत्तमैः दशा ज्ञेया। तथा च ब्रह्मयामले—

'यदा द्वयोस्त्रयाणां च वीर्यसाम्यं भवेत्क्वचित्।
तदायुरधिकः खेटः प्रथमं पाचयत्यपि॥' इति

जन्म लग्न, जन्मकालिक चन्द्रमा व जन्मकालिक सूर्य, इनमें से जो सबसे अधिक बली हो अर्थात् जिसका षड्बलैक्य सर्वाधिक हो, अष्टकवर्ग में उसी की सबसे पहली दशा होती है। दूसरी, तीसरी आदि दशाओं का क्रम जानने के लिए भावों का क्रम ही अपनाया जाता है।

केन्द्रगत ग्रह के बाद पणफरस्थानगत ग्रह की व तत्पश्चात् आपोक्लिम स्थानगत ग्रह की दशा होगी।

यदि किसी केन्द्रादि स्थान में एकत्र दो तीन ग्रह स्थित हों तो उनमें बल के तारतम्य से दशाक्रम का निर्धारण किया जाएगा। अर्थात् अधिक बली ग्रह की दशा पहले व अल्पबली ग्रह की दशा बाद में होती है।

यदि कहीं एक स्थान पर स्थित ग्रहों का बल भी समान हो तो जिसके आयु वर्ष अधिक होंगे उसी की दशा पहले होगी व कम आयु वर्ष वाले ग्रह की दशा बाद में होगी।

यदि आयु वर्ष भी समान हों तो जो ग्रह पहले उदित हुआ हो अर्थात् सूर्य की किरणों से उदित होने के क्रम में ज्येष्ठ हो उसी की दशा को पहले माना जाएगा तथा बाद में उदित ग्रह की दशा बाद में मानी जाएगी।

दशाक्रम के निर्धारण में सबसे पहले आद्या दशा का निर्धारण किया जाएगा। इसके लिए विचारणीय ग्रह लग्न, चन्द्रमा व सूर्य हैं। इनमें जो सबसे बलवान् हो उसी की पहली दशा होती है।

अब आद्या दशा के निर्धारण के बाद शेष दशेशों का क्रम निर्धारित करना है। इनमें लग्न, चन्द्र व सूर्य में से निर्धारित आद्यदशेश को छोड़कर शेष दोनों पर भी विचार करना है। अर्थात् शेष सातों ग्रहों का क्रम निर्धारित किया जाएगा। इसके लिए देखिए कि आद्यदशेश किस स्थान में स्थित है? वह जहां हो उस स्थान से आगे-आगे के भावों में स्थित ग्रहों को दशेशत्व भाव क्रम से मिलता जाएगा। भावों का क्रम प्रथम द्वितीयादि नहीं होगा। अपितु आद्यदशेश से केन्द्र स्थानों में स्थित ग्रहों की सूची बना लीजिए। उनमें बल के क्रम से दशा का क्रम निर्धारित कर लीजिए। अर्थात् आद्यदशेश केन्द्र स्थानों में जो ग्रह सर्वाधिक बली होगा वह द्वितीयदशेश, उससे कम बली तृतीयदशेश इत्यादि क्रम अपनाना है। इस प्रकार केन्द्र स्थानों में स्थित सभी ग्रहों के क्रम को निर्धारित करने के बाद पणफर स्थानों २, ५, ८, ११ में स्थित ग्रहों को एक स्थान पर लिख लीजिए। तब उनके भी षड्बल के तारतम्य से दशाक्रम निर्धारित करना होगा। तत्पश्चात् आपोक्लिम स्थानों (३, ६, ९, १२) में स्थित ग्रहों के बलानुसार क्रम निर्धारित कर लीजिए।

यदि ग्रहों का बल समान हो तो आयु वर्षों की अधिकता को आधार बनाया जाएगा।

यदि आयु वर्ष भी समान हों तो उदय होने की ज्येष्ठता को आधार बनाया जाएगा।

अब पूर्वोक्त उदाहरण में इस विषय को समझाते हैं। इस दिशा में बढ़ने से पहले उदाहरण में जन्म कुण्डली व ग्रहों के षड्बल का विहगावलोकन कर लें।

जन्म कुण्डली (पूर्वोक्त उदाहरण)

षड्बलैक्य (अंशादि)
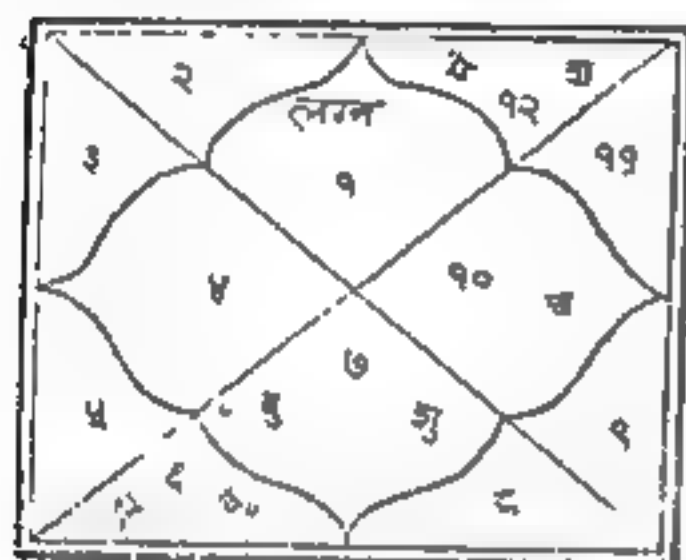
सूर्य	६, ११, ४५
चन्द्र	७, १६, १६
मंगल	७, ४७, ४६
बुध	८, ४४, ५३
गुरु	५, ४२, १
शुक्र	५, ५४, ४१
शनि	३, २२ २७
लग्न	१०, २७, ३७

यहां पर लग्न का षड्बलैक्य १०°, २७', ३३", सूर्य का षड्बलैक्य ६°, ११', ४५" व चन्द्रमा का षड्बलैक्य ७°, १६' १६" है।

इन तीनों में लग्न का बल सबसे अधिक है। अतः पहली दशा लग्न की होगी।

लग्न से केन्द्र स्थानों में चन्द्र, बुध व शुक्र स्थित हैं। इन तीनों में बुध का षड्बलैक्य सबसे अधिक है। अतः दूसरी दशा बुध की होगी। शुक्र व चन्द्रमा में चन्द्रमा अपेक्षाकृत अधिक बली है। अतः तीसरी दशा चन्द्रमा की होगी व चौथी दशा शुक्र की रहेगी।

अब पणफर स्थानों में स्थित ग्रहों पर विचार करना है। संयोगसे यहां कुण्डली में पणफर में कोई भी ग्रह नहीं है। अतः आपोक्लिम स्थानों में स्थित ग्रहों पर विचार करना है। वहां पर सूर्य, गुरु, मंगल व शनि स्थित हैं। इनमें मंगल का षड्बल सबसे अधिक है। अतः पांचवीं दशा मंगल की होगी।

सूर्य, गुरु व शनि में से सूर्य बलवान् है। अतः छठी दशा सूर्य की होगी।

शनि की अपेक्षा बृहस्पति अधिक बलवान् है। अतः सातवीं दशा गुरु की व आठवीं दशा शनि की होगी।

यहां षड्बल के ही ग्रहण का कारण श्री देवशाल के उद्धरण के आधार पर बताया है कि प्राचीन मणित्थ, सिद्धसेन आदि आचार्यों ने अन्य बल का उल्लेख नहीं किया है। अर्थात् षड्बल का ही ग्रहण किया है ।

यहां यह बात भी ध्यातव्य है कि केन्द्र पणफरादि का विचार साधारण जन्म कुण्डली से ही करना है न कि भाव (चलित) कुण्डली से। दशा के वर्षों का निर्धारण कैसे होगा ? इस विषय में यह कहना है कि पूर्वसाधित आयु वर्ष ही ग्रह की दशा के वर्ष होंगे। अर्थात् भिन्नायु के वर्षादि भिन्नायुर्दशा व सामुदायायु के वर्षादि समुदाय दशा के वर्ष माने जाएंगे। इस प्रकार भिन्नायु व सामुदायायु में दशेशों का क्रम व वर्ष इस प्रकार निर्धारित हुए। यहां यह भी ध्यान रखिए कि दशेशों का उक्त क्रम भिन्नायु व सामुदायायु दोनों में ही ग्रहण किया जाएगा।

'अथ भिन्नायुषि दशाक्रमः' उदाहरणमेतत्'

ल.	सू.	चं.	बु.	मं.	शु.	गु.	श.	यो.
१	७	१९	२	१	४	६	३	४८
८	१	५	१०	१०	१	८	०	१०
४	१८	७	२७	११	९	२	८	०
१३	१९	३२	२७	३०	२७	३७	५२	०
३८	४४	१९	७	१	७	४८	३६	२०

'अथ समुदायायुषि दशाविभागोऽयम्' 'उदाहरणं'

ल.	सू.	चं.	बु.	मं.	शु.	गु.	श.	यो.
१	२	६	०	०	१	२	१	१६
२	४	५	११	७	४	२	०	२
१८	१०	७	१६	१२	१०	१५	०	३
३७	४३	५०	५७	२५	२	५०	४०	७
५२	१९	२	१२	२९	५०	११	२९	२४

दशा प्रवेश का समय साधन :

> शको जन्मनः स्थाप्य ऊर्ध्वं शकाधो
> अनुः स्पष्टभानुस्तदा स्थापनीयः ।
> दशावर्षपूर्वं तदाढ्यं शकोऽर्कः
> स्फुटो जायते तद्दशायाः समाप्तौ ॥३४॥

शक इति । जन्मनो जन्मसमयस्य यः शकः शकनामा वत्सरः स ऊर्ध्वमुपरि स्थाप्यो वर्षस्थाने स्थाप्य इत्यर्थः । ततः शकस्याधोऽधरे अनुः स्पष्टभानुर्जन्मकालीन स्पष्टसूर्यः स्थापनीयः । मासादि स्थाने स्थाप्यः । एवं प्रथमदशा प्रवेशो ज्ञेयः । तदनन्तरं दशाया आद्यदशेशस्य वर्षपूर्वमब्दाद्यं तेन प्रथमदशाप्रवेशस्य शकादिकेन युक्तं कार्यं तदा तस्य दशाया समाप्ताववसानकाले, शकः स्पष्टः स्फुटोऽर्कः जायते । एवं द्वितीयदशाप्रवेशकालीन शकादौ द्वितीयदशेशस्य वर्षादिदशा योज्या तदा तृतीय-दशा प्रवेश समयो भवेत् । एवमग्रेऽपि दशाप्रवेशसमयो वेद्यः ।

जन्मकालीन शक संवत् को ऊपर स्थापित करके उसके नीचे जन्मकालीन स्पष्ट सूर्य के राश्यंशादि को स्थापित कर लेना चाहिए।

जन्म शक प्रथम दशा के प्रवेश का वर्ष होगा व स्पष्ट सूर्य के राश्यादि क्रमशः प्रथम दशा प्रवेश के मास, दिन, घड़ी, पल होंगे। अब प्रथम दशा प्रवेश के समय में प्रथम दशेश के दशा वर्षादि को जोड़ लेना चाहिए। योगफल प्रथम दशा का समाप्ति काल व द्वितीय दशा का प्रारम्भ काल होगा। इसी प्रकार बार-बार अगली दशाओं के वर्षादिकों को पिछली दशा के समाप्तिकाल में जोड़ने से दशा चक्र बन जाएगा।

सुविधा के लिए यदि ईस्वी सन् भी लिख लें तो कोई हानि नहीं होगी। चाहे जन्मकालीन निरयण स्पष्ट सूर्य से दशा प्रवेश समय जानें या मध्यम सूर्य या सायन सूर्य स जानें कोई अन्तर नहीं पड़ेगा। हमारे पूर्वोक्त उदाहरण में जन्मकालीन शकाब्द १८३१ है। इसमें जन्म-कालीन स्पष्ट सूर्य ५, १०°, १८′, ५१″ को स्थापित किया तो प्रथम दशा प्रवेश समय १८३१, ५, १०, १८, ५१ हुआ। इसमें प्रथम दशा के वर्षादि ३, ८, ४, १३, ३८ को जोड़ा तो द्वितीय दशा का प्रवेश समय हुआ १८३५, १, १४, ३२, २९।

इसी प्रकार बार-बार अगली-अगली दशाओं के वर्षादि को जोड़ा तो सब दशाओं का प्रवेश समय ज्ञात हो जाएगा। यह समस्त विषय चक्र में स्पष्ट किया जा रहा है।

भिन्नायुर्दशा चक्र

ग्रहाः		लग्न	बुध	चन्द्र	शुक्र	मंगल	सूर्य	गुरु	शनि	योग
वर्ष		३	७	११	२	१	४	६	३	४८
मास		८	१	५	१०	१०	१	८	०	१०
दिन		४	१८	७	२७	११	९	२	८	०
घटी		१३	१९	३२	२७	३०	२७	३७	५२	०
पल		३८	४४	१९	७	१	७	४८	३६	२०
शकाब्द	१८३१	१८३४	१८४२	१८६१	१८६४	२०६६	२०७०	२०७७	२०८०	
स्पष्ट सूर्य	५	१	३	८	७	५	६	३	३	
	१०°	१४	२	१०	८	१९	२९	१	१०	
	१८'	३२	५२	२४	२१	५१	१८	५६	४९	
	५१"	२९	१३	३२	३९	४०	४७	३५	११	

इसी प्रकार सामुदायायुर्दशा का चक्र भी बनाकर वहां दशा प्रवेश व दशा समाप्ति का समय जान लेना चाहिए।

दशा का फल ज्ञान :

शून्यभागसहितेषु खगेषु
नीचराशिरिपुमन्दिरगेषु।
तद्दशासु लभते मनुजन्मा-
ऽऽधिप्रसूतिजरुजाव्यदनानि ॥३५॥

शून्येति। शून्यभागसहितेषु रेखारहितराशिगतेषु, नीचराशिषु, रिपु-मन्दिरगेषु शत्रुक्षेत्रगतेषु, खगेषु ग्रहेषु सत्सु तेषां दशासु मनुजन्मा मनुष्यः आधिर्मानसीं व्यथां, प्रसूतिजं दुखं, रुजाव्दनं रोगादि, एतानि सर्वाणि लभते। यथा ब्रह्मयामले प्रोक्तम्—

'दशायाः शून्यभागेषु शत्रुनीचगृहेषु च।
व्याध्याधिदुःखरोगादील्लभते नात्र संशयः ॥' इति

जो ग्रह रेखारहित राशि में स्थित हो, नीच राशिगत हो, शत्रु-राशिगत हो तो उसकी दशा में मनुष्य को मानसिक रोग, दुःख, शोक व शरीर में रोगादि की उत्पत्ति होती है।

फलाधिको यो खचरो दशायाः
प्रवेशकाले स शुभं प्रपूर्णम्।
दशाफलं यच्छति नाकचारी
दायाधिको यो बहुलार्तिदायी ॥३६॥

फलेति। यो खचरो ग्रहो दशाया दायस्य प्रवेशकाले आरम्भसमये फलाधि-कोऽधिकरेखाराशौ वर्तते स दशाया दायस्य फलं प्रपूर्णं समस्तं शुभं शस्तं यच्छति ददाति। यो नाकचारी ग्रहो दशाप्रवेशे दायाधिकोऽधिकबिन्दुराशौ वर्तते, स बहुलार्तिदायी अतिकष्टप्रदः। स्यादिति। तथा च ब्रह्मयामले—

'दशाप्रवेशसमये ग्रहो रेखाधिको यदि।
तदा दशाफलं पूर्णं शुभं मिश्रं तथा भवेत् ॥' इति

जातक चन्द्रिकायामपि—

'बिन्द्वाधिको यः खचरो दशायाः प्रवेशकाले बहुकष्टदायी।
रेखाधिकस्यैव फलं तु पूर्णं श्रेष्ठं प्रवीणैर्गदितं मुनीन्द्रैः ॥' इति

दशा प्रवेश के समय ग्रह यदि अपनी गोचर गति से अधिक रेखाओं वाली राशि में हो तो वह दशा के सम्पूर्ण शुभ फल को देता है।

इसके विपरीत यदि ग्रह गोचर से अधिक बिन्दु वाली राशि में स्थित हो और दशा का उसी समय प्रवेश हो जाए तो उस दशा में बहुत अधिक कष्ट मिलता है।

यदि मध्यम रेखायुक्त राशि में गोचर करते समय दशा का आरम्भ हो तो उस दशा में शुभफल मध्यम मिलेगा। यह बात क्रमशः समझनी चाहिए।

गोचर से अष्टक वर्ग की श्रेष्ठता :

वरः खगो यो यदि गोचरे भवे-
त्स एव खेटोऽष्टगणेषु मध्यमः।
तथा दशायामधमो भवेद्यदि
खगः स धीरैरधमाधमो मतः॥३७॥

वर इति। यदि गोचरे यः खगो ग्रहो, वरः श्रेष्ठो भवेत्, स एव खेटो ग्रहोऽष्टवर्गेषु मध्यमः समानो भवेत् तथा दशायां दाये, यदि अधमो निकृष्टो भवेत्, स खगो ग्रहो धीरैः पण्डितैरधमाधमो निकृष्टतरो मतो ज्ञेयः। तथा च मानसागरी-पद्धतौ—

'यो ग्रहो गोचरे श्रेष्ठस्त्वष्टवर्गेषु मध्यमः।
अधमस्तु दशायां हि स ग्रहो ह्यधमाधमः॥' इति

यदि कोई ग्रह गोचर से श्रेष्ठ हो अर्थात् शुभ भावों में स्थित हो तथा अष्टकवर्ग में वही ग्रह मध्यम हो तथा दशा में वह निकृष्ट हो तो उस ग्रह को निकृष्ट समझना चाहिए।

आशय यह है कि गोचर से चाहे कोई ग्रह कितना भी श्रेष्ठ क्यों न हो यदि वह अष्टकवर्ग की अपेक्षा से शुद्ध न हो तो उत्तम फल देने में समर्थ नहीं हो सकेगा।

कल्पना कीजिए, कोई ग्रह जन्म समय रेखारहित राशि में स्थित है या चार रेखाओं तक युक्त हो तो वह अष्टक वर्ग में क्रमशः निकृष्ट मध्यम हुआ। जब इस ग्रह की दशा (अष्टवर्गदशा) चलेगी तो स्पष्टतया फल अशुभ ही होगा। अब यदि दशा प्रवेश के समय वही ग्रह गोचर से शुभ हो अर्थात् जन्मराशि से केन्द्र त्रिकोणादि शुभ स्थानों में हो तथा

अन्य दृष्टि से भी शुभ हो तो क्या अपनी अष्टवर्गदशा के परिपाक काल में वह ग्रह कुछ अच्छा फल दिखाएगा ? इसका निर्भ्रान्त उत्तर यही है कि वह ग्रह निकृष्टतम फल दिखाएगा।

इससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि अष्टकवर्ग में शुभ व गोचर में शुभ हो तो अपनी दशा में उत्तम फल देगा। इसके विपरीत यदि अष्टकवर्ग में मध्यम, गोचर में श्रेष्ठ व दशा में अधम हो तो उस ग्रह को अधमाधम ही मानना चाहिए।

यही बात स्पष्ट शब्दों में टीकोक्त मानसागरी पद्धति के उद्धरण में भी कही गई है। निष्कर्ष यही है कि अष्टकवर्ग की शुद्धि के बाद गोचर की शुद्धि आवश्यक नहीं है और न ही फलदायिनी। अतः अष्टक वर्ग शुद्धि के समक्ष गोचर शुद्धि अप्रामाणिक हो जाती है।

अष्टकवर्गदशा में अन्तर्दशादि साधन :

दलस्यैकर्क्षस्थः सुतसुकृतगः साङ्गखचरो
भवेत्पक्ता दायज्वलनलवकस्यास्तमयगः।
स्वराशांस्यच्छिद्राम्बुग उदधिभागस्य कथितो
यदैकर्क्षे द्व्याद्या द्युसद इह तेषामधिबलः ॥३८॥

पक्ता दशापरिवृढस्य हृतिर्हराणां
ज्ञेयो गुणः परहरैर्विहृतः परेषाम्।
उक्तो गुणो गुणगुणा च दशा गुणैक्य-
भक्ता फलं भवति भुक्तिरिहाब्दपूर्वा ॥३९॥

दलस्येति। पक्तेति च। अंगेन लग्नेन सहितः खचरो ग्रहो यद्येकर्क्षस्य एकराशिगतस्तदा दलस्यार्धस्य, सुतसुकृतगः पंचमनवमस्थितो दायस्य दशाया ज्वलनलवकस्य तृतीयांशस्यास्तमयगः सप्तमस्थितः, स्वराशांस्य, सप्तमांशस्य, छिद्राम्बुगोऽष्टमचतुर्थग उदधिभागस्य चतुर्थांशस्य पक्ता पाचकः कथितो बुधैरिति शेषः। यदैकर्क्षे एकराशौ, द्व्याद्या द्विप्रभृतयः द्युसदो ग्रहाः स्युस्तेषां मध्ये योऽधिकबलो, बलाधिकः स एव पक्ता पाचकः कथितः। इहास्मिन् स्थले हराणां भाजकानां, हृतिर्घातो दशायाः परिवृढस्य स्वामिनो गुणो ज्ञेयः। स दशापतेर्गुणः परेषामन्येषां, हरैर्भाजकैर्विहृतो विभक्तः सन्, परेषामन्येषां गुण उक्तः। दशा मूलदशा वर्षादिका, गुणेन गुणा गुणिता कार्या। ततो गुणानामैक्यं योगस्तेन भक्ता विहृता सती अब्दपूर्वा वर्षाद्या भुक्तिरन्तर्दशा भवति जायते। तथा च श्री विठ्ठलः—

दशार्धमेकर्क्षगतस्त्रिकोणे त्र्यंशं स्वरांशं स्मरगोऽष्टवेदैः।
पादं ग्रह: पाचयिता सलग्नः फलैर्बहूनां फलदो बलीयान्॥
घातो हराणां च दशापतेः स्याद् गुणोऽथमन्यैस्तु हरैर्हृतः सन्।
गुण: परेषां च दशागुणघ्ना गुणैक्यभक्तान्तरजा दशा स्यात्॥' इति
समच्छेदकरणं यथा लीलावत्याम्—

अन्योऽन्यहाराभिहतौ हरांशौ राश्योः समच्छेदविधानमेवम्।
मिथो हराभ्यामपवर्तिताभ्यां यद्वा हरांशौ सुधियात्र गुण्यौ॥' इति
अत्रन्यासः—

मूलदशेशस्य १/१, एकर्क्षगस्य १/२, त्रिकोणगस्य १/३ सप्तमगस्य १/७, चतुरस्रस्थस्य १/४, एवं कृते हरांशौ मिथो गुण्यौ समच्छेदो भवतीति।

मूलदशेश अपनी समस्त दशा का पाचक होता है। अर्थात् मूलदशेश की दशा में $\frac{1}{1}$ भाग उसकी अन्तर्दशा होती है।

मूलदशेश के साथ एक ही राशि में स्थित ग्रह तथा लग्न मूलदशेश की दशा में आधे भाग के पाचक होते हैं।

मूलदशेश से त्रिकोण स्थानों में स्थित ग्रह $\frac{1}{3}$ भाग का पाचक होगा।

मूलदशेश से सप्तम स्थान में स्थित ग्रह तथा लग्न मूलदशेश की दशा के $\frac{1}{7}$ भाग का पाचक होता है।

मूलदशेश से चतुर्थ व अष्टम स्थानों में स्थित ग्रह व लग्न $\frac{1}{4}$ भाग का पाचक होगा।

यदि उक्त स्थानों में एकत्र कई ग्रह हों तो उनमें से जो सबसे अधिक बली ग्रह हो वही दशा के उक्त भाग का पाचक होगा, दूसरे ग्रह नहीं होंगे।

मूलदशेश का हर १, एकराशिस्थ ग्रह का हर २, त्रिकोण स्थानों में स्थित ग्रह का हर ३, सप्तमस्थ ग्रह का हर ७, चतुरस्र (४,८) स्थानों में स्थित ग्रह का हर ४ होता है।

इस प्रकार अन्तर्दशा में जितने ग्रह पाचक हों, उनके हरों को परस्पर गुणा कर जो गुणनफल प्राप्त होगा वह 'मूलदशापति का गुणक' होगा।

अब मूलदशापति के इस गुणक में अन्य पाचक ग्रहों के हरों से अलग-अलग भाग देना चाहिए। लब्धि 'अन्य पाचक ग्रहों का गुणक' होगी।

अब मूलदशापति के दशावर्षादि को दशेशों के गुणकों से अलग-अलग गुणा कर सब गुणकों के योग से भाग देना चाहिए। इस प्रकार लब्धि पाचक ग्रहों की वर्षादि अन्तर्दशा होगी।

इसी पद्धति से वर्षादि अन्तर्दशा से वर्षादि विदशा (प्रत्यन्तर्दशा) का साधन किया जा सकता है।

इसी तरह क्रमशः विदशा से सूक्ष्मदशा व सूक्ष्मदशा से प्राणदशा का साधन हो जाएगा।

अंश व हर गणित के पारिभाषिक शब्द हैं। ऊपर का अंक अंश व नीचे का अंक हर कहलाता है। जैसे—८०/२० में ८० अंश भाग है व २० हर भाग है।

अब हमें विषय को अपने पूर्वोक्त उदाहरण के संदर्भ में स्पष्ट समझना है। एतदर्थ हमने हरादि का न्यास किया—

मूलदशेश १/१	सप्तमगत १/७
एकराशिगत १/२	चतुर्थगत १/४
त्रिकोणगत १/३	अष्टमगत १/४

सर्वप्रथम लग्न की दशा में अन्तर्दशा का विचार करना है। लग्न यहाँ मूलदशेश रहेगा। मूलदशेश का १/१ अंश व हर भाग हुआ।

दशापति (लग्न) में कोई ग्रह नहीं है तथा दशापति से त्रिकोण स्थानों में भी कोई ग्रह नहीं है। अतः वहाँ से कोई भी पाचक नहीं है। सप्तम स्थान में (दशेश से) बुध व शुक्र स्थित हैं। इनमें बुध अधिक बली है। अतः १/७ भाग का पाचक बुध हुआ। शुक्र की पाचकों में गणना नहीं की जाएगी।

चतुर्थ व अष्टम स्थानों में भी कोई ग्रह नहीं है, अतः १/४ भाग का पाचक कोई नहीं हुआ। कुल दो पाचक सिद्ध हुए—लग्न व बुध।

अब गुणक निकालने के लिए दोनों के हरों को परस्पर गुणा किया १×७=७ दशापति का गुणक हुआ।

अब बुध का गुणक निकालना है। इसके लिए दशापति के गुणक में इसके हर का भाग दिया तो ७÷७=१ यह बुध का गुणक है। दोनों गुणकों का योग ७+१=८ भाजक हुआ।

अब दशापति लग्न की दशा के वर्षादि मान को दशापति के गुणक से गुणा किया—

लग्नदशा ३, ८, ४, १३, ३८ × ७ = २५, ८, २९, ३५, २६ भाज्य हुआ।

अब २५, ८, २९, ३५, २६ ÷ ८ = लब्धि ३, २, १८, ४१, ५६, वर्षादि मूलदशापति लग्न की अन्तर्दशा हुई।

अब पुनः मूलदशापति के दशावर्षादि ३, ८, ४, १३, ३८ को बुध के गुणक १ से गुणा कर ८ का भाग दिया तो लब्धि ०, ५, १५, ३१, ४२, वर्षादि सातवें भाग के पाचक बुध की अन्तर्दशा हुई। शेष अन्तर्दशाएं पाचकाभाव में लग्नदशा में नहीं होंगीं।

अब इसी प्रकार बुध की दशा में अन्तर्दशाएं देखनी हैं। बुध मूलदशापति है। अतः उसके अंश व हर $\frac{1}{1}$ हुए।

बुध के साथ शुक्र है। अतः शुक्र की हर व अंश $\frac{1}{2}$ है। बुध से त्रिकोण स्थानों में कोई ग्रह नहीं है। अतः वहां से कोई भी पाचक नहीं है। सप्तम स्थान में लग्न है। अतः $\frac{1}{7}$ भाग का पाचक है।

चतुर्थ में चन्द्रमा है। अतः उसके अंश व हर भाग $\frac{1}{4}$ हुए। अष्टम स्थान में कोई ग्रह नहीं है। इस प्रकार बुध के अतिरिक्त शुक्र, लग्न व चन्द्रमा ये तीन पाचक हुए।

सब हरों को परस्पर गुणा करने से दशापति का गुणक ५६ प्राप्त हुआ (१ × २ × ७ × ४ = ५६)।

दशापति के गुणक में शुक्र के हर २ का भाग दिया तो लब्धि २८ शुक्र का गुणक हुआ।

लग्न के हर ७ से दशापति के गुणक को विभाजित किया तो लग्न का गुणक ८ प्राप्त हुआ।

चन्द्रमा के हर ४ से ५६ को विभाजित किया तो लब्धि १४ चन्द्रमा का गुणक प्राप्त हुआ।

सब गुणकों का योग ५६ + २८ + ८ + १४ = १०६ भाजक है।

अब बुध की भिन्नायु ७, १, १८, १९, ४४ को दशापति के गुणक ५६ से गुणा किया तथा भाजक १०६ से भाग दिया तो लब्धि बुध की अन्तर्दशा हुई।

७, १, १८, १९, ४४ × ५६ = ३९९, ६, ६, २५, ४ ÷ १०६ = ३, ९, ६, ५१, ११ बुध की अन्तर्दशा है।

अब मूलदशापति बुध के वर्षादि ७, १, १८, १६, ४४ को शुक्र के गुणक २८ से गुणा किया तथा भाजक का भाग दिया।

७, १, १८, १६, ४४ × २८ = १६६, ६, ३, १२, ३२ ÷ १०६ = १, १०, १८, २५, ३५ शुक्र की अन्तर्दशा हुई।

लग्न के लिए पुनः भिन्नायु वर्षों को लग्न के गुणक ८ से गुणा कर १०६ से भाग दिया तो लग्न की दशा ०, ६, १३, ५०, १० हुई।

इसी प्रकार बुध के भिन्नायु वर्षों को चन्द्र के गुणक १४ से गुणा कर १०६ से भाग दिया तो लब्धि ०, ११, ६, १२, ४८ चन्द्रमा की अन्तर्दशा हुई।

अन्तर्दशा साधन में प्रत्यन्तर्दशा ज्ञात करने के लिए अन्तर्दशा के वर्षों को दशा वर्ष मानकर अन्तर्दशाधिपति को ही मूलदशेश मानकर शेष क्रिया करनी चाहिए।

उदाहरणार्थ लग्न की अन्तर्दशा में पहली विदशा लग्न की ही रहेगी, दूसरी विदशा बुध की होगी।

दशेश के अन्तर्दशा वर्षों ३, २, १८, ४१, ५६ को लग्न के गुणक ७ से गुणा किया तो गुणनफल २२, ६, १०, ५३, ३२ हुआ। इसे भाजक ८ से भाग दिया तो लब्धि २, ६, २३, ५१, ४२ लग्न की अन्तर्दशा में लग्न की विदशा हुई।

इसी प्रकार दशा वर्ष ३, २, १८, ४१, ५६ को बुध के गुणक १ से गुणा कर भाजक ८ से भाग दिया तो लब्धि ०, ४, २४, ५०, १४ बुध की अन्तर्दशा हुई। इसी प्रकार विदशा के वर्षों को दशा वर्ष मान कर सूक्ष्म व प्राणादि दशा का साधन किया जा सकता है। उदाहरण में अन्तर्दशाएं इस प्रकार प्राप्त हुईं।

लग्नान्तर्दशा

	व०	मा०	दि०	घ०	प०	गुणक
लग्न	३	२	१८	४१	५६	७
बुध	०	५	१५	३१	४२	१
योग	३	८	४	१३	३८	योग ८

बुधान्तर्दशा

	व०	मा०	दि०	घ०	प०		गुणक
बुध	३	९	६	५१	११		५६
शुक्र	१	१०	१८	२५	३५		२८
लग्न	०	६	१५	५०	१०		८
चन्द्र	०	११	९	१२	४८		१४
योग	७	१	१८	१९	४४	योग	१०६

चन्द्रान्तर्दशा

	व०	मा०	दि०	घ०	प०		गुणक
चन्द्रमा	१२	३	९	२९	५३		१२
सूर्य	४	१	११	१९	५८		४
लग्न	३	०	२४	५२	२८		३
योग	१९	५	७	३२	१९	योग	१९

इसी प्रकार अन्य दशाएं भी निकाली जा सकेंगीं। यहां संकेत मात्र करने से हमारा अभिप्राय है कि प्रक्रिया पक्के तौर पर मस्तिष्क में जम जाए।

अब हम दक्षिण भारत के प्रसिद्ध ज्योतिष ग्रन्थ **'देवकेरलम्'** से अष्टकवर्ग दशा के विषय में कुछ विशेष बातें बताना चाहेंगे। हमारे विचार से इनका समन्वय विंशोत्तरी आदि दशा में भी करना चाहिए।

(i) लग्न स्थान में जितनी समुदाय रेखाएं हों उतने वर्ष की आयु व्यतीत हो जाने पर मनुष्य को परम सुख अर्थात् सफलता मिलती है। किन्तु यहां पर लग्नादि बारह भावों के फल का समन्वय भी कर लेना चाहिए। अर्थात् अन्य दृष्टि से भी भाग्योदय काल जानकर इस पद्धति से भी भाग्योदय काल जान लेना चाहिए।

(ii) लग्नभिन्नाष्टक वर्ग में जो राशियां फलरहित हों उनके द्वारा अधिष्ठित भावों के स्पष्टमान का योग करने पर प्राप्त राशि में जब बृहस्पति गोचर करता है तो कष्ट होगा।

इसी प्रकार लग्नाष्टक में जहां १, २, ३ रेखाएं हों वहां जब शनि का गोचर होगा तो क्लेश होगा।

(iii) लग्नाष्टकवर्ग की पांच बिन्दु वाली राशि में शुभ ग्रह का गोचर सम्पत्ति देगा।

(iv) चन्द्रमा यदि आठ रेखाओं वाली राशि में हो तो चन्द्र-राशीश की दशा महासुख देने वाली होगी। इस समय में राजयोग होना है। दशादि के सामंजस्य से इसका समय निर्धारण कर लेना चाहिए।

(v) यदि दशेश पूर्णफल से युक्त हो तो हाथी, घोड़े व उत्तम वाहनों के साथ कीर्ति व सुख प्राप्त होता है।

(vi) दशेश मध्यमफल (४ रेखाओं से अधिक) से युक्त हो तो ऐश्वर्य व क्षेम होता है। किन्तु आरम्भ किये गए कार्यों में विलम्ब से सफलता मिलती है।

(vii) हीनफलयुक्त दशेश अपनी दशा में धननाश, स्थानभ्रंश, बदनामी व परिवार जनों की हानि करेगा। नष्टबली दशेश शरीर नाशक होता है। शत्रुराशि व नवांश में स्थित ग्रह की दशा में शत्रुओं व चोरों का डर बना रहता है। तब स्थानभ्रंश व स्वजनों से विरोध भी होता है।

यदि दशेश दुष्टस्थानगत व हीन फल वाला हो तथा दुस्थानेशों से दृष्ट हो, शुभ ग्रहों की दृष्टि दशेश पर न हो तो धननाश, भ्रातृनाश व अत्यन्त दुःख होता है।

शत्रुराशि या नवांश में स्थित ग्रह की दशा में जब शत्रु स्थानगत ग्रह या स्वस्थानगत ग्रह की भी दशा शत्रुपक्ष से भय व कष्ट करती है।

चन्द्रमा पूर्ण रेखायुक्त राशि में हो व अपने राशीश से युक्त हो तो अपने जीवन के मध्य में व्यक्ति सुखी, महाभाग्य वाला व राजपुत्रों का प्रिय होता है।

मीन में तुला नवांश में बृहस्पति हो तो राजयोगवान् तीन पुत्र होते हैं तथा व्यक्ति का अपने चाचाओं से द्वेष होता है।

सूर्याष्टकवर्ग में यदि नवम स्थान में बिन्दु न हों तो मनुष्य के पिता को चाचाओं के कारण अरिष्ट होता है। इस मनुष्य की माता

व्याकुल रहती है। यह व्यक्ति भाइयों से विहीन होता है। इसका भाग्योदय जन्म स्थान से बाहर जाकर सूर्य के दशा परिपाक में होता है।

जिन राशियों में सम्पूर्ण रेखाएं हों, उन राशियों के अधिपति ग्रह की दशाओं में जब जब भाग्यधीश की अन्तर्दशाएं आएंगी तो मनुष्य को महान् सुख व राज योग प्राप्त होता है।

धनेश व कर्मेश की दशा में जब सुखेश की अन्तर्दशा होगी तो मनुष्य अच्छे काम करता है व उसे वाहनादि का खूब लाभ होता है।

षष्ठाष्टम व्ययाधीश की दशा में जब लग्नेश का अन्तर आता है तो वह योगकारक होता है।

एक, दो, तीन रेखाओं वाली राशियों के स्वामी ग्रहों की अन्त-र्दशाएं भी क्लेश देने वाली व धन-धान्य का नाश करने वाली होती हैं।

पांच रेखाओं वाली राशि के स्वामी ग्रह की अन्तर्दशा में योगा-नुसार श्रेय व सिद्धि होती है।

जिस ग्रह की दोनों राशियों (आधिपत्य राशियों) की रेखाएं अधिक हों तो उसकी दशा बहुत शुभफल देने वाली, हीन फल से हीन फल व शून्य रेखाएं होने पर शून्य फल होता है।

यदि दो राशियों के अधिपति भौमादि ग्रहों की दोनों राशियों में चार से अधिक रेखाएं हों, तो महासुख होगा। किन्तु एकराशि में अधिक रेखाएं होने पर अनुपात से फल समझना चाहिए।

सूर्य व चन्द्रमा एक एक ही राशि के अधिपति हैं। अतः फलहीन होने पर इनकी दशा व्यर्थ कार्य कराने वाली व असफलता देने वाली होती है।

चन्द्राष्टकवर्ग से जिस राशि में पांच से अधिक रेखाएं हों, उस राशीश की दशा का पूर्व भाग शुभफल देने वाला होता है।

भिन्नाष्टक वर्गों में सब ग्रहों के प्रस्तार से फल प्राप्ति का समय निर्धारित करना चाहिए।

देव केरलकार ने चन्द्राष्टक वर्ग व लग्नेशाष्टक वर्ग का विचार दशाफल निर्णय के संदर्भ में बहुत महत्त्वपूर्ण माना है। उनके मतानुसार चन्द्रमा शरीर है व लग्न प्राण संज्ञक है, अतः दोनों की सावधानी से परीक्षा करनी चाहिए—

'निशाकराष्टके वर्गे लग्नाधिपतिवर्गके ।
तत्तत्कालदशादीना फलानि परिचिन्तयेत् ॥'
(देवकेरलम् अष्टवर्गदशा० श्लोक ४५३)

दशमेश की दशा में व धनेश व तृतीयेश की दशा में मामा को खूब सुख मिलता है।

इस प्रकार का यह फल हम समझते हैं कि देवकेरलकार ने विंशोत्तरी या अष्टोत्तरी दशा पद्धति को दृष्टि में रखकर ही किया है। उन्होंने इस सम्बन्धित अध्याय का नाम भी अष्टवर्ग सम्बन्ध दशाफल रखा है। इससे यही ध्वनि निकलती है कि यहां अष्टकवर्गायुर्दाय के प्रसंग में बताई गई अष्टकवर्ग दशा का तो कदाचित् ग्रहण है ही, साथ ही अन्य दशा-पद्धतियों को भी दृष्टिगत रखा गया है' अष्टक वर्ग के विचार से गोचर व दशा का फल सटीक होता है। यह बात अनुभव सिद्ध है।

[इति श्रीमत्पण्डितमुकुन्ददैवज्ञ विरचितेऽष्टकवर्गमहानिबन्धे पं०सुरेशमिश्रकृतायां 'मञ्जुलाकराया हिन्दीव्याख्यायामष्टकवर्गायुर्दायाध्यायः सप्तमोऽवसितः ॥]

८

अष्टकवर्गारिष्टाध्याय

मृत्यु समय का ज्ञान :

> नैधनान्त्यपरिपन्थिपतीनां
> स्पष्टयोगभगते भगसूनौ ।
> तत्त्रिकोणभवने निचिते वा
> पञ्चतां जनिमतां कथयन्ति ॥१॥

नैधनेति । नैधनमष्टम मन्त्यं व्यय, परिपन्थी शत्रुः, तेषां पतीनां स्पष्टयोग-भगते स्फुटानामैक्य राशि प्राप्ते वा विकल्पार्थे । तत्त्रिकोणभवने स्पष्टयोगराशे-र्नवमपंचमराशौ निचिते प्राप्ते, भगसूनौ शनौ सति तदा जनिमतां प्राणिनां पंचतां-मृत्यु कथयन्ति । तथा च ग्रन्थान्तरे—

> 'षष्ठाष्टम व्ययेशानां स्फुटयोगागते शनौ ।
> मृतिं तत्र विजानीयात्तत्त्रिकोण गतेऽपि वा ॥' इति

अष्टम स्थान, व्यय स्थान व षष्ठ स्थान के स्वामी ग्रहों के स्पष्ट राश्यादि का योग कर लेना चाहिए। तब जो राशि प्राप्त हो उसमें जो नक्षत्र हो, उसमें या उससे त्रिकोण नक्षत्र (१०/१९) में जब गोचर से शनि आए तो मनुष्य की मृत्यु का समय जानना चाहिए।

प्रश्नमार्ग में मृत्यु समय जानने के यूं तो कई प्रकार बताए गए हैं, परन्तु अष्टकवर्ग से उक्त समय जानने के प्रसंग में यहां कुछ भिन्न प्रकार बताया है।

(i) प्रमाण गुलिक की राशि के स्वामी की अधिष्ठित राशि में जब शनि गोचर करता है तब मृत्यु सम्भावित है।

(ii) प्रमाण गुलिक की नवांश राशि के स्वामी की अधिष्ठित राशि में गुरु आता है तो मृत्युदायक होता है।

(iii) प्रमाण गुलिक के द्वादशांशेश की राशि में सूर्य मृत्युदायक है।

(iv) प्रमाण गुलिक के त्रिशांशेश की राशि में चन्द्र भी मृत्युकारी है।

इतना बताने के बाद प्रश्नमार्गकार कहते हैं—

'मन्दजीवार्कचन्द्राणां प्रोक्तेष्वेतेषु राशिषु।
मृतिदा स्वाष्टवर्गेषु हीनाक्षभवनस्थितिः ॥'

(प्रश्नमार्ग अ० १०, श्लो० २६)

'शनि, गुरु, सूर्य व चन्द्रमा की उक्त राशियों में अपने-अपने अष्टक वर्ग में जहां कम रेखाएं हों, उस राशि में इनका गोचर मृत्यु-कारक होता है।'

आशय यह है कि प्रमाण गुलिक की राशि के स्वामी की अधि-ष्ठित राशि में यदि शनि के अष्टक वर्ग में कम रेखाएं हों तो वहां शनि का गोचर मृत्युदायक होगा। इसी प्रकार प्रमाण गुलिक की नवांशराशि के स्वामी की राशि में यदि बृहस्पति के अष्टकवर्ग में कम रेखाएं हों तो बृहस्पति का इस राशि में गोचर मृत्युदायक होगा।

यदि सूर्याष्टकवर्ग में गुलिक के द्वादशांशेश की राशि में कम रेखाएं हों तो वहां सूर्य का गोचर मरणकारक होगा।

यदि चन्द्राष्टक वर्ग में प्रमाण गुलिक के त्रिशांशेश की राशि में कम रेखाएं हों तो चन्द्रमा का उस राशि में गोचर मृत्युकारक होगा।

प्रमाण गुलिक क्या है? इस विषय में वहां बताया गया है कि पहले जन्मकालिक गुलिक को स्पष्ट कर लीजिए।

(i) यदि दिन में जन्म है तो स्पष्ट गुलिक + ६ राशि = गतनिशा गुलिक।

(ii) यदि रात्रि में जन्म है तो स्पष्ट गुलिक + ६ राशि = प्राग्दिन गुलिक।

ये गतनिशा व प्राग्दिन गुलिक ही प्रमाण गुलिक कहलाते हैं।

"जातस्याह्नि सपद्‌ग्रहो गतनिशा मान्दिः प्रमाणाह्वयो
रात्रौ प्राग्दिनमान्दिरेव ॥"

(प्रश्नमार्ग, अ० १०, श्लोक २६)

प्रश्नमार्ग का यह मत विशेष व्युत्पत्ति के लिए दिया गया है। अब ग्रन्थोक्त मत का विश्लेषण करते हैं। षष्ठेश, अष्टमेश व व्ययेश के स्पष्ट राश्यादि का योग करने पर जो राश्यादि आएं उनमें वर्तमान नक्षत्र में अथवा उससे त्रिकोण नक्षत्रों में शनि का गोचर होने पर मृत्यु सम्भावित होती है।

पूर्वोक्त उदाहरण में जन्म लग्न मेष है। मेष से षष्ठेश बुध ६, ४, २७, ४२; अष्टमेश मंगल ११, २, ५६, ५१; व्ययेश बृहस्पति ५, ३, ५४, १। इन तीनों का योग किया तो १०, ११, २१, ३४ प्राप्त हुआ। यहां कुम्भ राशि में चौथा नवांश विद्यमान है। अर्थात् कुम्भ राशि के ९ नक्षत्र चरणों में से चौथा चरण चल रहा है। कुम्भ राशि का प्रारम्भ धनिष्ठा के तृतीय चरण से होता है। अतः चौथे चरण में शतभिषा के दूसरे चरण की स्थिति सिद्ध हो रही है। अतः शतभिषा नक्षत्र में जब शनि का गोचर होगा अथवा शतभिषा के त्रिकोण नक्षत्रों—आर्द्रा या स्वाती में जब शनि का गोचर होगा तो मृत्यु की सम्भावना होगी।

हमारे विचार से यदि अन्य आयु योगों के आधार पर तथा दशादि के आधार पर मृत्यु सम्भावित न हो तो शरीर कष्ट बताना चाहिए। क्योंकि शनि तो हर तीसवें वर्ष में भचक्र का संक्रमण पूरा करते करते उसी राशि में वापस आ जाता है।

इसी उदाहरण में देखिये, जन्म समय में शनि मीन राशि में स्थित है। षष्ठेशादि योग में कुम्भ राशि आती है। अतः जब कुम्भ के चतुर्थ चरण या नवांश में शनि आयेगा तो मृत्यु होनी चाहिए। यह स्थिति जन्म से २७-२८ वर्षों बाद आ जायेगी। इसके अतिरिक्त मिथुन व तुला में शनि तो जन्म से क्रमशः ८ वर्षों व १६-१८ वर्षों में ही आ जायेगा। यदि मध्यायु व दीर्घायु योग होंगे तो एतदनुसार वे निरर्थक हो जाने चाहिएं। अतः योगादि व दशादि का विचार भी इस प्रसंग में आवश्यक है।

मृत्यु समय ज्ञान का दूसरा प्रकार :

> **वाक्पतेरहिपतेः स्फुटयोग-**
> **राशिगे पथि सुते किमु तस्मात्।**
> **गोचरेण शिथर्गे यदि याते**
> **विन्दते मनुजवोऽस्तनिकेतम्॥२॥**

वाक्पतेरिति। वाक्पतेर्गुरोरहिपते राहोः स्फुटयोगराशेः पथि नवमे, सुते पंचमे यदि गोचरेण चारवशेन, धिष्ण्ये गुरौ, याते तदा मनुभवो मनुष्यः, असुः यमस्य निकेतं संयमिनीं विन्दते प्राप्नोति। यथा ग्रन्थान्तरे—

'राहुयुक्तगुरुराशिगे गुरौ तत्त्रिकोणमपि रिष्टकारकम्।
अन्त्यमृत्युरिपुनायकयोगर्क्षे शनौ मरणयोगसम्भवः॥' इति

अस्यार्थ द्वयम्—यस्य जन्मलग्ने धनुर्मीनराशौ राहुरस्ति तत्र राशिगे गुरौ रिष्टसम्भवो वाच्यः। तत्त्रिकोणे वा यत्र कुत्र राशौ राहुयुक्तगुरुरस्ति तत्र राशिगते शनौ रिष्टसंभवो वाच्यः। तत्त्रिकोणे वा।

गुरु व राहु के स्पष्ट राश्यादि का योग कर लेना चाहिए। जो राशि योगफल में हो, उसमें या उससे त्रिकोण राशि में जब गोचर से बृहस्पति आता है तब मनुष्य मृत्यु को प्राप्त होता है।

यह मत बलभद्र मिश्र के 'होरारत्न' नामक ग्रन्थ पर आधारित है—

"राहोर्गुरोः स्फुटं राशियोगयाते गुरौ तथा।
तदैव निधनं विद्यात् तत्त्रिकोणगतेऽथवा॥"

(देखें, होरारत्न)

संस्कृत टीका में दिये गए 'राहुयुक्तगुरुराशिगे' इत्यादि श्लोक में दो बातें प्रतिभासित होती हैं :

(i) यदि जन्म समय राहु बृहस्पति की राशियों (धनु, मीन) में हो तो गुरु का इनमें गोचर मृत्युप्रद होगा।

(ii) अथवा जिस राशि में गुरु व राहु साथ-साथ हों तो उस राशि में बृहस्पति का गोचर मरणकारक होगा।

साथ ही उक्त राशियों से त्रिकोण राशियों में भी गुरु का गोचर मरणकारक होगा।

तृतीय व चतुर्थ चरण में ग्रन्थोक्त विषय की ही पुनरावृत्ति की गई है।

श्लोकोक्त विषय को उदाहरण से समझते हैं।

स्पष्ट गुरु	५, ३, ५४, १
स्पष्ट राहु	१, १८, १७, ५७
योग	६, २२, ११, ५८

यहां तुला राशि का सातवां नवांश है, अतः विशाखा नक्षत्र में अथवा इसके त्रिकोण नक्षत्रों पूर्वा भाद्रपद व पुनर्वसु में बृहस्पति का गोचर मरणकारक होगा।

लग्न व चन्द्र से तीसवें द्रेष्काणवश मृत्यु ज्ञान :

होराग्लावोस्त्र्यंशके खाग्नितुल्ये-
ऽर्च्ये तस्येशस्यापि कोणे यमेऽब्दे।
पीडा पञ्चत्वोन्मिताऽङ्गे विदेश-
यात्रा वाच्या कोविदैर्वा विवादः॥३॥

होरेति। होरा लग्नं ग्लौश्चन्द्रस्तयोर्मध्ये एकतरस्य बलवतः 'निर्धारणे षष्ठी' खाग्निमिते त्रिंशत्तिमे त्र्यंशके द्रेष्काणेऽर्च्ये गुरौ, सति तथा तस्य द्रेष्काणस्य य ईशः स्वामी, तस्य कोणे पंचमनवमभवनेऽपि यमे शनौ याति गोचरेणेति शेषः। तस्मिन्नब्दे वर्षे कोविदैः पण्डितैरंगेऽवयवे शरीर इति यावत्। पंचत्वोन्मिता मृत्युतुल्या पीड़ा व्यथा वाच्या। विदेशयात्रा विदेशगमनं वा विवादो परिवेदितव्यः। इति शेषः। तथा च ग्रन्थान्तरे—

'लग्नेन्दुतस्त्रिंशतिमे दृगाणे गुरौ त्रिकोणेऽपि तदीश्वरस्य।
वर्षे विवादं परदेशयानं शरीरपीडा मृतिसन्निभा स्यात्॥' इति

अस्यार्थ—यदा लग्नस्य चन्द्रस्य च त्रिंशतिमे दृगतो गुरुरस्ति यस्य जन्मनि, प्रतिराशौ द्रेष्काणत्रयमस्ति एवं गणनया लग्नस्य चन्द्रस्य च त्रिंशतिमे दृगाणे गुरौ सति तदीश्वरस्य द्रेष्काणस्य योऽधिपतिस्तस्य त्रिकोणे शनैश्चरे याति तस्मिन्वर्षे विवादः परदेशयानं शरीरपीडा मृतिसन्निभा मृतितुल्या स्यादिति।

जन्म समय लग्न व चन्द्रमा के वर्तमान द्रेष्काण से तीसवें द्रेष्काण की राशि में जब गोचर से बृहस्पति आये तो मरण की सम्भावना होती है। अथवा विदेशवास, विवाद व अन्य कष्ट होते हैं।

तीसवें द्रेष्काण का स्वामी जिस राशि में हो उससे पंचम या नवम राशि में बृहस्पति का गोचर मृत्युकारक या उक्त फलदायक होता है।

तीसवां द्रेष्काण जानने के लिये देखिए कि एक राशि में तीन द्रेष्काण होते हैं। प्रत्येक द्रेष्काण का मान १०° होता है। द्रेष्काण मान १०° को यदि २९ से गुणा किया तो २९०° हुए। इन्हें राश्यादि ३० से भाग देकर राश्यादि बनाया तो ९, २०° राश्यादि प्राप्त हुए। इसका

तात्पर्य है कि २६ द्रेष्काणों का मान ६ राशि २० अंश हुआ। इसे अपने स्पष्ट लग्न या स्पष्ट चन्द्र में जोड़ने से वर्तमान ३०वां द्रेष्काण ज्ञात हो जाएगा।

अपने उदाहरण में स्पष्ट लग्न ०, २६, ३८, ३२ है। इसमें २६ द्रेष्काणों का मान ६, २०° राश्यादि जोड़ा—

स्पष्ट लग्न	०, २६, ३८, ३२	
	६, २०, ०, ०	२६ द्रेष्काण मान
	१०, १६, ३८, ३२	तीसवां द्रेष्काण

अब कुम्भ राशि का दूसरा द्रेष्काण अर्थात् मिथुन का द्रेष्काण ३०वां द्रेष्काण हुआ। ध्यान रखिए, पहला द्रेष्काण अपनी राशि का, दूसरा पांचवीं राशि का व तीसरा नौवीं राशि का होता है। जैसे मेष में पहला द्रेष्काण मेष का, दूसरा सिंह का व तीसरा द्रेष्काण धनु का होगा। ये तीनों परस्पर त्रिकोण राशियां हैं। पीछे बार-बार त्रिकोण राशियों में किसी ग्रह के गोचर करने पर भी वही फल बताया गया है जो कि उस राशि के संक्रमण काल में होता है। इसके पीछे रहस्य द्रेष्काण का ही है। अन्यथा तो त्रिकोण स्थान शुभ स्थान होते हैं।

प्रस्तुत विषय को लें। मिथुन में जब बृहस्पति का गोचर होगा अथवा बुध (द्रेष्काणेश) से (त्रिकोण राशियों) में जब शनि गोचर करेगा तो शरीर कष्ट, परदेश वास व पीड़ा होगी। इसी प्रकार चन्द्रमा से भी देखिए।

स्पष्ट चन्द्र	६, २६, ७, ५	
२६ द्रेष्काण मान	६, २०, ०, ०	
	७, १६, ७, ५	तीसवां द्रेष्काण

अर्थात् वृश्चिक का दूसरा द्रेष्काण (मीन) तीसवां द्रेष्काण हुआ। अतः मीन में या मीन के स्वामी बृहस्पति से त्रिकोण राशियों में क्रमशः गुरु व शनि जब गोचर करेंगे तो उक्त फल मिलेगा।

इस विषय में पाठकों को बहुत सावधानी की आवश्यकता है। इस विषय में विस्तार से आयुर्निर्णय के अभिनव भाष्य में लिखा जा चुका है। अब यहां कुछ सूक्ष्म निर्देश देना हम आवश्यक समझते हैं।

मरण समय का निर्धारण करने से पहले आयु के खण्ड व कष्ट-खण्ड का निर्धारण कर लेना चाहिए।

अर्थात् सबसे पहले यह जान लें कि व्यक्ति की कुण्डली के विचार से साधक व बाधक प्रमाणों की ऊहापोहपूर्वक गवेषणा करने से व्यक्ति अल्पायु, मध्यायु या दीर्घायु वाला सिद्ध होता है। सामान्यतः ३२ वर्ष तक अल्पायु, ६४ वर्ष तक मध्यायु व ९६ वर्ष तक दीर्घायु माननी चाहिए।

जातकादेशमार्ग में कहा गया है कि यूं तो व्यक्तियों की परमायु १०० वर्ष मानी जाती है पर व्यवहार में लोग ९० से पहले पहले ही दिवंगत हो जाते हैं। अतः ९० के तीन भागों को अर्थात् ३०, ६०, ९० को ही क्रमशः अल्पायु, मध्यायु व दीर्घायु का खण्ड मानना चाहिए।

स्पष्ट है कि अल्पायु योगों वाले व्यक्ति की मृत्यु ३०-३२ वर्षों से पूर्व, मध्यायु जनों की ६० वर्ष से पूर्व व दीर्घायु जनों की ९० वर्षों से पूर्व होनी चाहिए।

इस प्रकार खण्ड निर्धारण करके मृत्यु समय का निर्धारण करने की दिशा में अग्रसर होना चाहिए।

मनुष्य के जीवन में बृहस्पति, शनि, राहु व गुलिक का प्रभाव विशेष रूप से मारक के सम्बन्ध में किया जाता है।

अब साथ ही साथ कष्टखण्ड का भी निर्धारण कर लीजिए।

मीन, मेष, वृष, मिथुन ये चार राशियां जीवन के प्रथम खण्ड की द्योतक हैं।

कर्क, सिंह, कन्या, तुला ये चार राशियां जीवन के द्वितीय खण्ड का द्योतक हैं।

वृश्चिक, धनु, मकर व कुम्भ ये चार राशियां जीवन के अन्तिम खण्ड की द्योतक हैं।

अब सर्वाष्टक वर्ग की रेखाओं को इन खण्डों की राशियों में स्थापित कर योग कर लीजिए। जिस खण्ड का रेखायोग अधिक है वह खण्ड श्रेष्ठ है। जिसका योग सबसे कम हो वह अधम है या कष्टखण्ड है। शेष तृतीय खण्ड मध्यम खण्ड है।

(देखें प्रस्तुत ग्रन्थ, समुदायाष्टक वर्ग प्रकरण)

अपने पूर्वोक्त उदाहरण में प्रथम खण्ड का रेखायोग ११३ है। द्वितीय खण्ड का रेखायोग ११२ व तृतीय खण्ड का रेखायोग भी ११२ है।

यहां तृतीय खण्ड को कष्टखण्ड निर्धारित किया था।

(देखें सम्बद्ध प्रकरण श्लोक ५-१६)

इसी प्रकार सर्वाष्टक वर्ग की रेखाओं के आधार पर कष्टखण्ड का निर्धारण कर लीजिए।

इस प्रकार आयुखण्ड में कष्टखण्ड का समन्वय कर चुकने के बाद जब उक्त समय में गुरु या शनि का गोचर रेखारहित राशियों में होगा या उससे त्रिकोण राशियों में होगा तो मृत्यु समझनी चाहिए।

"कष्टखण्डे कष्टराशित्रिकोणे मन्दजीवयोः।
चारे कष्टदशान्येषां कष्टकाले मृतिप्रदाः॥"

(जातकादेश, मरणनिर्णय, श्लोक १)

'अर्थात् कष्टखण्ड में कष्टराशि व उससे त्रिकोण राशियों में गुरु व शनि का चार हो तथा साथ ही दशा भी कष्टकारक अशुभ चल रही हो तो मृत्यु होती है।'

निष्कर्ष यही है कि गोचर अष्टकवर्ग दशा, कष्टखण्ड व आयुखण्ड के समन्वय से ही निर्भ्रान्त निर्णय पर पहुंचा जा सकता है। यहां मान्दि, शनि व गुरु की कुछ मरणकारक स्थितियां दी जा रही हैं—

(i) गुलिक की राशि अर्थात् गुलिक जिस राशि में हो उससे ५-९ राशियों में शनि हो और रात्रि में जन्म हो तो मृत्यु हो सकती है।

(ii) गुलिक की राशि से सप्तम राशि में जब शनि का गोचर हो तथा दिन में जन्म हो तो मृत्यु हो सकती है।

(iii) जन्मराशीश, अष्टमेश, चन्द्राधिष्ठित द्रेष्काणेश, अष्टमभावस्थ द्रेष्काणेश, मान्दि (गुलिक), चन्द्रमा व शनि, इन सातों की अधिष्ठित राशि या नवांश में व इनसे त्रिकोण राशियों में शनि का गोचर मारक हो सकता है।

(iv) लग्नेश, शनि व गुलिक के राश्यादि स्पष्ट का योग कर लीजिए। योगफल तुल्य राशि या नवांश में या उससे त्रिकोण राशियों में जब शनि आए तो मृत्यु सम्भावित होती है।

(v) अष्टमेश की अधिष्ठित राशि या नवांश, चन्द्राष्टमेश की अधिष्ठित राशि या नवांश, बाईसवें द्रेष्काण के स्वामी की अधिष्ठित राशि, लग्न में स्थित द्रेष्काणेश की अधिष्ठित राशि या नवांश, इनमें या इनसे त्रिकोण राशियों में जब बृहस्पति का गोचर होगा तो मृत्युकारक हो सकता है।

इस विषय का विशेष विवेचन पढ़ने के लिए आयुर्निर्णय, अभिनवभाष्य का सम्बद्ध प्रकरण देखें।

मरणकारक सूर्य का परिज्ञान :

विष्टान्त्यपद्वादशभागकोणगो-
ऽगुरन्त्यपात्कोणगते कपौ मृतिः।
तमः कला हेलिकलाहता हरि-
पवाप्तवट्स्वर्गहृतात्फलं च तत् ॥४॥
संयोजय स्पष्टभगे ब तादृशे-
ऽर्के मासि यस्मिन्वद तत्र पञ्चताम्।
किं तत्त्रिकोणोपगते विनिर्दिशे-
त्तत्रात्ययं निम्नगृहे निमीलनेद् ॥५॥
ज्योत्स्नाकरे अन्त्यजिघांसुगेऽपि वा
अन्माङ्कअन्येऽभिजिघांसुगस्य च।
तन्मासि मृत्युं मतिमान्विनिर्दिशे-
त्कुर्याद्विवस्वत्कुमुवोः कलाहतिम् ॥६॥
विभज्य शून्याश्वरसैकलोचनै-
र्यदाप्यते तत्परियोजयेद्दिने।
पपौ यदा तादृश एति पञ्चतां
क्लेशं वदेत्तत्पथि पुत्रगेऽपि वा ॥७॥

विष्टान्तेति। संयोजयेति। ज्योत्स्नेति। विभज्येति च। विष्टान्त्यपोऽष्टमेशस्तस्य द्वादशभागो द्वादशांशस्तस्मात्कोणः त्रिकोणगतोऽगू राहुस्तथाऽन्त्यपाष्टमेशात्कोणगते कपौ रवौ सति तदा मृतिः स्यात्। तथा च ग्रन्थान्तरे—

'मृत्युपद्वादशांशत्रिकोणेऽसुरो मृत्युनाथत्रिकोणस्थसूर्ये मृतिः ॥' इति

तम इति। तमो राहुस्तस्य कला लिप्ताः, हेलिः सूर्यस्तस्य कला लिप्तास्ताभिर्हता गुणिताः कार्याः। ततो हरिपदाभ्रषट्स्वर्गैर्हृतान् षट्छतोत्तरैकविंशतिसहस्रेण २१६०० चक्रकलाभिरित्यर्थः। हृताद् विभक्ताद्यत्कलादि फलं स्यात् तत्स्पष्टभगे स्पष्टसूर्ये श ! पण्डित ! संयोजय। यस्मिन्मासि तादृशि तत्समानेऽर्के सूर्ये सति तत्र तस्मिन्मासे पंचतां मृत्यु वद। किमथवा तस्मात्त्रिकोणोपगते रवौ तत्र तस्मिन्मासेऽप्ययं मृत्युं विनिर्दिशेत्। तथा च ग्रन्थान्तरे—

> 'अर्कस्फुटकलाः स्थाप्या राहोः स्फुटकलाहृताः।
> चक्रलिप्ताहृताल्लब्धं योजयेद् भास्करे स्फुटे॥
> तादृशे भास्करे यस्मिन् तस्मिन्मासे मृतिं वदेत्।
> तत् त्रिकोणगते वापि निधनं तत्र निर्दिशेत्॥' इति

निम्नेति। निमीलनेड् अष्टमेशो निम्नग्रहे नीचराशौ तिष्ठति, ज्योत्स्नाकरे चन्द्रे, जन्यजिघांसुगेऽष्टमषष्ठगते वा जन्मांग जन्ये जन्मलग्नाराशेष्टमराशौ वाऽभिजिघांसुगस्य षष्ठगतस्य रिपुगत इत्यर्थः। तस्मिन्मासि मतिमान् मृतिं मृत्युं वदेत्। विवस्वदिति। विवस्वान् सूर्यः कुभूमौ मरतयोः कलानां हतिं घातं कुर्यात्। ततः शून्याभ्ररसैकलोचनैः षट्छतोत्तरैकोनविंशति सहस्रेण (२१६००) विभज्य विहृत्य यदाप्यते तद्दिने सूर्ये स्पष्टे योजयेत्। तदा तादृशे तत्समाने यपौ रवौ भवति वा पथि पुत्रगे नवमपंचमगे सति सूर्ये तदा पंचतां मृत्युमेति प्राप्नोति मानवः। वा क्लेशं दुःखं वदेत्। तथा च ग्रन्थान्तरे—

> 'भौममार्त्तण्डलिप्ताहतिं कारयेच्चक्रलिप्ताहृताल्लब्धयुक्तो रविः।
> याति यस्मिंस्तदा तत्त्रिकोणेऽपि वा क्लेशमाहुः क्षयं मासि धीमान्वदेत्॥' इति

(i) जन्म लग्न से अष्टम स्थान का स्वामी, द्वादशांश कुण्डली में जिस राशि में स्थित हो उस राशि से त्रिकोण राशियों में जब गोचर से राहु हो और साथ ही अष्टमेश की अधिष्ठित राशि से त्रिकोण राशियों में गोचर से सूर्य आए तो मृत्यु समय जानना चाहिए।

(ii) राहु की कला को सूर्य की कला से गुणा कर चक्रकला (२१६००) से भाग देना चाहिए। तब जो लब्ध कलादि हों उनको जन्मकालीन स्पष्ट सूर्य के कलादि में जोड़ लेना चाहिए। तब योगफल तुल्य राश्यादि में जब गोचर से सूर्य आए या उससे त्रिकोण राशियों में सूर्य का गोचर हो तो मृत्यु समय जानना चाहिए।

(iii) जन्म लग्न से अष्टम स्थान का स्वामी अपनी नीचराशि में हो और चन्द्रमा भी षष्ठ या अष्टम स्थान में हो तो लग्न से षष्ठ व अष्टमस्थ राशि में चन्द्रमा का चार मारक हो सकता है।

(iv) स्पष्ट सूर्य व स्पष्ट मंगल की कलाओं को आपस में गुणा कर लीजिए। गुणनफल में चक्रकला (२१६००) का भाग दीजिए। लब्ध कलादि को जन्मकालीन स्पष्ट सूर्य में जोड़ दीजिए। योगफल तुल्य राशि में या उससे त्रिकोण राशि में जब गोचर से सूर्य आएगा तो उस सौर मास में मृत्यु तुल्य कष्ट या मृत्यु समझनी चाहिए।

उक्त गोचरों के अतिरिक्त जातकादेशमार्ग में निम्नलिखित बातें भी बताई गई हैं—

(i) यदि सूर्य जन्म समय चर राशि में हो तो देखिए कि वह किस राशि के द्वादशांश में स्थित है। जब वह अपनी द्वादशांश राशि या उससे त्रिकोण राशियों में जाए तो मरण-समय जानना चाहिए।

(ii) यदि सूर्य स्थिर राशि में हो तो अष्टमेश का अधिष्ठित नवांश देखिए। वह जिस राशि में हो उसमें या उससे त्रिकोण राशि में जब सूर्य का गोचर हो तो मृत्यु समझनी चाहिए।

(iii) यदि सूर्य जन्म समय द्विस्वभाव राशि में हो तो लग्नेश का अधिष्ठित नवांश देखिए। वह जिस राशि में हो उसमें या उससे त्रिकोण राशि में जब गोचर से सूर्य आये तो मरण काल हो सकता है।

स्वस्य द्वादशभागकोणगृहगे सूर्ये चरस्थः स चेद्,
यद्यर्कः स्थिरगेऽष्टमेशनवभागर्क्षत्रिकोणस्थिते।
लग्नेशस्य नवांशराशिसहिते तस्य त्रिकोणेऽपि वा,
सूर्ये मृत्युमुशन्ति यद्युभयगः सोऽयं भवेज्जन्मनि॥"

(जातकादेश, मरणनिर्णय, श्लोक १२)

(iv) सूर्य, शनि व मान्दि के स्पष्ट राश्यादि के योग तुल्य राशि में जब सूर्य आये तो मृत्यु होती है।

(v) लग्न स्पष्ट व मान्दि स्पष्ट का योग करदीजिए। जो राशि व नवांश हो उसमें सूर्य आने पर मृत्यु हो सकती है।

"भानुभानुजमान्दीनां स्फुटयोगं गते रवौ।
लग्नमान्दिस्फुटैक्योत्थभांशगे वा रवौ मृतिः॥"

(वही, श्लोक १७)

अब श्लोकोक्त विषय को पूर्वोक्त उदाहरण के संदर्भ में देखते हैं। जन्म लग्न मेष है। अष्टमस्थ राशि वृश्चिक का स्वामी मंगल द्वादशांश में मेष में है। अतः गोचर से मेष, सिंह या धनु में जब राहु आएगा तो मृत्यु हो सकती है।

इसी प्रकार अष्टमेश मंगल मीन राशि में स्थित है। मीन से त्रिकोण कर्क या वृश्चिक में जब गोचर से सूर्य आएगा तो शरीर में कष्ट होगा।

नियम सं० (ii) को समझने के लिए स्पष्ट सूर्य ५, १०, १८, ५, १ है। राहु स्पष्ट १, १८, १७, ५७ है।

इनकी कलाएं बनाईं तो सूर्य का कलागण ९६१९ व राहु का कलागण २९९८ हुआ।

इन दोनों को आपस में गुणा करके २१६०० से भाग दिया।

९६१९×२९९८=२७८७५८६२÷२१६००=लब्धि १२९० कला, शेष ११८६२ है।

शेष ११८६२×६०=७११७२०÷२१६००=लब्धि। ३३ विकला, शेष निरर्थक हुआ।

इस प्रकार कलादि फल १२९०/३३ प्राप्त हुआ। इसमें राश्यादि सूर्य की कलाएं ९६१९ जोड़ीं तो योगफल १०९०९/३३ हुआ। इसे राश्यादि बनाया तो ६, १, ४९, ३३ यह स्पष्ट सूर्य जब होगा तो मृत्यु सम्भावित है।

नियम सं० (iv) को समझने के लिए स्पष्ट मंगल ११,२,५९,५१ है। इसका कलागण १९९८० हुआ। सूर्य का कलागण ९६१९ है।

१९९८०×९६१९=१९२१८७६२०÷२१६००=लब्धि ८८९७/३४ कलादि हैं।

इसमें सूर्य का कलागण जोड़ा तो १८५१६/३६ हुआ इसके

राश्यादि बनाए। इस प्रकार प्राप्त राश्यादि १०, ८, ३६, २४ तुल्य स्पष्ट रवि के समय मृत्यु तुल्य कष्ट होगा।

प्रकारान्तर से निधनकालिक सूर्य ज्ञान :

> **यस्मिन् गृहे गुह्यगृहाधिनाथो**
> **यद्वा यदंशे गतवान् विहङ्गः।**
> **तदंशनाथस्य निकेतयाते**
> **मृणालिनीशे मृतिरङ्गिनः स्यात् ॥८॥**

यस्मिन्निति। गुह्यगृहाधिनाथोऽष्टमेशो विहंगो ग्रहो यस्मिन् गृहे राशौ यद्वा यस्मिन्नंशे भागे गतवान् प्राप्तवान् तस्यांशस्य भागस्य यो नाथः स्वामी तस्य निकेते राशौ याते प्राप्ते मृणालिनीशे सूर्ये अंगिनः प्राणिनो मृतिर्मरणं स्यात्। तथा च भगवान् वशिष्ठः—

> 'अष्टमाधिपतिर्यस्मिन् राश्यंशे गतवान् ग्रहः।
> तदंशाधिपतेर्गेहं प्रविष्टे भास्करे मृतिः ॥' इति

अष्टम स्थान का स्वामी जिस राशि के नवांश में हो, उस नवांश का अधिपति ग्रह जिस राशि में हो उसमें जब सूर्य का गोचर हो तो मृत्यु-कारक होता है।

निधनकालीन चन्द्रमा का परिज्ञान :

> **अस्तुः पतेः कोणगते भपेऽथवा**
> **तद्भागकोणेऽल्पफलोत्थवासरे ।**
> **मृत्युं वदेद्वोदयभार्य्यभागतो**
> **राहौ चतुःषष्ठिलवे लयं लपेत् ॥९॥**

अस्तुरिति। जन्मलग्नाद्यो ग्रहोऽस्तुर्मृत्योः पतिरष्टमेशस्तस्मात् कोणगते पंचमनवमगतेऽथवा तस्याष्टमेशस्य यो नवांशराशिस्तस्मात् कोणे भपे चन्द्रे भवति तदाऽल्पफलोत्थवासरेऽल्परेखोद्भवदिने मृत्युं निधनं वदेत् कथयेत्। तथा च ग्रन्थान्तरे—

> 'अष्टमेशत्रिकोणे विधुः स्याद्यदा योगमिन्दौ तथा तन्नवांशेऽपि वा।
> तत्त्रिकोणे प्रयाते मृतिं निर्दिशेन्निश्चयात्स्वल्परेखोद्भवे वासरे ॥' इति

वेति। वा विकल्पार्थे, उदयो लग्नं भार्याश्चन्द्रस्तयोर्भागतो नवांशराशितः चतुःषष्ठि लवे तत्संख्ये नवांशे राहौ भवति तदा लयं नाशं लपेत् कथयेद् दैवज्ञ इति। तथा च ग्रन्थान्तरे—

'जन्मलग्नांशकाच्चन्द्रनवांशादथवापि वा।
राहौ चतुःषष्ठिमिते निधनं च विनिर्दिशेत् ।।' इति

जन्म लग्न से अष्टम स्थान का स्वामी जिस राशि में स्थित हो, उस राशि से नवम व पंचम राशि में जब चन्द्रमा आता है तो मृत्युकारक होता है।

अष्टमेश नवांश कुण्डली में जिस राशि में हो उससे पंचम व नवम राशि में जब चन्द्रमा का गोचर हो तो मृत्यु संभावित होती है।

समुदायाष्टक वर्ग में जिस दिन न्यून रेखाएं हों उसी दिन मृत्यु कहनी चाहिए।

लग्न में जो नवांश हो या चन्द्रमा का जो नवांश हो उससे चौसठवां नवांश जिस राशि में पड़ता हो उस राशि में जब गोचर से राहु आए तब मृत्यु कहनी चाहिए।

इस विषय में जातकादेश मार्ग में कुछ भिन्न मत प्रकट किया गया है—

"चण्डांशुभे वा निधनेशभे वा,
मन्देन्दुमान्दिस्फुटयोगभे वा।
जन्माधनिष्टोदितभांशके वा,
याते शशांके मरणं वदन्ति ।।"

(जातकादेश, मरणनिर्णय: श्लोक १८)

'जन्मकालीन सूर्य की अधिष्ठित राशि, अष्टमेशाधिष्ठित राशि चन्द्रमा+मान्दि+शनि स्पष्टयोग तुल्य राशि, जन्म चन्द्र से अष्टमेश की अधिष्ठित राशि या नवांश में जब चन्द्रमा आए तो मृत्यु होती है।'

पूर्वोक्त उदाहरण में स्पष्ट लग्न ०, २६, २८, ३२ है। स्पष्ट चन्द्रमा ६, २६, ७, ५ है। इनमें ७ राशि जोड़ने से ६४वां नवांश प्राप्त हो जाएगा। क्रमशः लग्न व चन्द्रमा ७, २६, २८, ३२ व ४, २६, ७, ५ हुए। लग्न का ६४वां नवांश मीन में व चन्द्रमा का धनु राशि में पड़ता है। अतः मीन व धनु राशि में जब राहु आयेगा तो मृत्यु होगी।

मृत्युकारक लग्न का ज्ञान :

राशौ अनुःप्रागवसुधाजनैधने
किं वा नराणां जनमोद्गमोदये।

आहो जनुर्लग्नतोदयेऽथवा
तच्छून्यलग्ने मृतिरुच्यते बुधैः ॥१०॥

राशाविति। जनुषो जन्मनः प्राग्वसुधावं लग्नं, तस्मान्निधनेऽष्टमे राशौ किं वा विकल्पार्थे। जननोद्गमोदये जन्मलग्नोदये, जनुषो जन्मनो लग्नमुदयस्तस्य यन्नतं नीचराशिस्तस्योदये लग्नेऽथवा तेषां पूर्वोक्तानां लग्नानां मध्ये यच्छून्यं रेखारहितं लग्नं राशिस्तस्मिन् नराणां बुधैः मृतिर्निधनं वक्तव्यम्। तथा च ग्रन्थान्तरे—

'जन्मलग्नाष्टमे राशौ जन्मलग्नोदयेऽपि वा।
लग्ननीचोदये वापि तेषां शून्योदये मृतिः॥' इति

जन्म लग्न से अष्टम राशि के लग्न में, जन्म लग्न में, अथवा जन्म लग्न से सप्तम राशि के लग्न में अथवा इन दोनों लग्नों के बीच जो राशि रेखाओं से रहित हो उस लग्न में मनुष्य की मृत्यु कहनी चाहिए।

अभी तक शनि, बृहस्पति, सूर्य व चन्द्रमा के गोचर से मृत्यु समय ज्ञान बताया गया है। शनि राशि चक्र का भ्रमण ३० वर्षों में पूरा करता है। अतः पहले दशा अन्तर्दशादि से व आयुयोगों से मृत्युकारक समय का ज्ञान कर लेना चाहिए।

तदुपरान्त इस समय को और अधिक सूक्ष्मता प्रदान करने के लिए बृहस्पति के गोचर का अवलोकन करना चाहिए। बृहस्पति एक राशि में लगभग एक वर्ष तक रहता है। अतः शनि के अशुभ गोचर के ढाई वर्षों में से कौन-सा वर्ष अशुभ होगा, एतदर्थ बृहस्पति के गोचर की भूमिका निर्णायक होगी।

तदुपरान्त उस वर्ष में भी कौन सा मास अधिक अशुभ है, इसके लिए सूर्य का गोचर उसे प्रामाणिकता प्रदान करेगा। सूर्य एक राशि को लगभग १ मास में भोगता है। अतः सरलता से सूर्य के गोचर से मृत्यु कारक मास का निर्णय किया जा सकता है।

अब निर्णीत मास में भी कौन से विशेष दिन मृत्युकारक हो सकते हैं, इस विषय में चन्द्रमा निर्णायक रहेगा। कारण यह है कि चन्द्रमा का एक राशि का भोगकाल सवा दो दिन होता है।

अब इसे अत्यन्त सूक्ष्मता प्रदान करने के लिए लग्न का साधन करना चाहिए। अर्थात् मरण कारक वर्ष, मास व दिनों को निश्चित कर लेने के उपरान्त मृत्यु कारक लग्न प्रामाणिकता को सुदृढ़ बना देगा।

इस विषय में ग्रन्थकार ने बताया है कि जन्म लग्न से सप्तम या अष्टम भावस्थ राशि के लग्न में मृत्यु होगी। अथवा सप्तम भावगत व अष्टम भावगत राशियों के बीच में राशिक्रम से जो राशि कम रेखाओं से युक्त हो या बिल्कुल रेखारहित हो उसी राशि का लग्न मरणकारक होगा।

अपने पूर्वोक्त उदाहरण में जन्म लग्न से सप्तम स्थान में तुला व अष्टम स्थान में वृश्चिक राशि है।

अत: निष्कर्ष यह निकला कि मेष लग्न, तुला लग्न या वृश्चिक लग्न में मृत्यु होगी। इसमें भी मेष राशि रेखारहित है। अत: मेष को विशेषतया मृत्युकारक माना जाएगा।

प्रकारान्तर से मृत्यु लग्न का विचार :

क्रमेण गोंऽशा जनिलग्नचन्द्रगाः
समुद्रषष्ठ्यंशभगे घने किमु।
जनस्तनूमृत्यधरोदये मृतिः
खरेखिकागेऽघखसवृशोदये ॥११॥

क्रमेणेति। जनेर्जन्मनोर्लग्नमुदयः, चन्द्र इन्दुस्तयोर्गच्छन्ति प्राप्नुवन्ति, यावन्तो नवांशाः क्रमेण समुद्रषष्ठ्यंशभागगे चतुःषष्ठिनवांशतुल्यराशौ गते प्राप्ते घने लग्ने, किमु जनुषो जन्मनस्तनूर्लग्नं मृतिरष्टमं तयोरधरे नीचभे: सप्तमभे इत्यर्थ। तयोरुदये लग्ने किमु वार्थे खरेखिकाभे रेखारहितभे लग्नेऽघखसत् पापग्रहस्तस्य दशाया उदये तद्गमे मृति: स्यात्। तथा च ग्रन्थान्तरे—

'जन्मलग्नेन्दुगा नन्दभागाः क्रमाद्वेदषष्ठ्यंशराशौ प्रयाते तनौ।
मृत्यु जन्मांशनीचोदये शून्यगे दुष्टपाकोदये देहमुक्तिर्भवेत् ॥' इति

जन्म समय में लग्न या चन्द्रमा जिस नवांश राशि में हो उनके क्रम से जो चौंसठवां नवांश सिद्ध हो रहा हो, उन राशियों के लग्न में मृत्यु होगी।

प्रत्येक मेषादि राशि से सप्तम अर्थात् तुलादि राशि नीच राशि होती है। अत: जन्म लग्न से नीच अर्थात् सप्तमस्थ राशि के लग्न में मृत्यु हो सकती है।

अन्यथा अष्टम भावस्थ राशि से नीच अर्थात् सप्तम राशि के लग्न में मृत्यु हो सकती है।

अथवा लग्नाष्टकवर्ग में जिस राशि में रेखाएं न हों, उस राशि के लग्न में मृत्यु समझनी चाहिए। यदि उस समय दुष्ट ग्रह की दशा भी चल रही हो तो मृत्यु की अवश्यंभाविता को माना जा सकता है।

हमारे पूर्वोक्त उदाहरण में लग्न स्पष्ट ०, २६, २८, ३२ है। चन्द्र स्पष्ट ९, २६, ७, ५ है। एक नवांश का मान ३ अंश व २० कला होता है। अत: नवांश मान को ६३ से गुणा करने पर ६३ नवांशों का मान प्राप्त हो जाएगा।

३°, २०′ × ६० = २१० ÷ ३० = ७ राशि।

अत: लग्न व चन्द्रमा में ७ राशियां जोड़ने पर ६४वां नवांश आ जाएगा।

लग्न में ७, २६, २८, ३२ व चन्द्र में ४, २६, ७, ५ चौंसठवें नवांश की स्थिति का द्योतक हुआ।

लग्न में चौंसठवां नवांश मीन का व चन्द्रमा में धनु राशि का है। अत: मीन या धनु लग्न में देहान्त का समय जानना चाहिए।

अथवा अष्टम स्थान में वृश्चिक राशि है। वृश्चिक से सप्तम राशि वृष लग्न में अथवा जन्म लग्न से सप्तम राशि तुला लग्न में मृत्यु हो सकती है।

किन्तु लग्नाष्टकवर्ग में यहां दो स्थानों में शून्य रेखाएं नहीं हैं। अत: यह फल इस उदाहरण से सम्बन्धित व्यक्ति के विषय में घटित नहीं होगा।

मरण समय व आयु खण्ड का निर्धारण करने के लिए जातक **पारिजात** में एक अन्य प्रकार बताया गया है। इसका विवेचन आयुर्निर्णय में भी हो चुका है। यहां संक्षेप में बता रहे हैं—

एतदर्थ जीव, देह व मृत्यु का साधन कर लेना चाहिए। ये पारिभाषिक शब्द हैं तथा यथा नाम तथा गुण प्रभाव वाले होते हैं।

(i) लग्न को ५ से गुणा कर मान्दि स्पष्ट जोड़ दीजिए। यह स्पष्ट जीव या प्राण होगा।

(ii) स्पष्ट चन्द्रमा को ८ से गुणा कर मान्दि स्पष्ट जोड़ देने पर स्पष्ट देह होगा।

(iii) स्पष्ट मान्दि को ७ से गुणा कर उसमें स्पष्ट सूर्य जोड़ दीजिए तो मृत्यु आ जाएगी।

यदि मृत्यु देह व जीव से अधिक हो तो मनुष्य दीर्घायु व मृत्यु इन दोनों से अधिक हो तो व्यक्ति अल्पायु होता है।

मरण समय जानने के लिए जीव, मृत्यु व देह के स्पष्ट को जोड़ लीजिए।

इस योगफल के समान राशि में जब गोचर से शनि आता है तो धननाश होता है।

योग राशि से त्रिकोण राशियों में शनि का गोचर होने पर शारीरिक कष्ट होता है।

योगफल की नवांश राशि पर जब गोचर से शनि आए तो मृत्यु हो जाएगी।

यहां प्रसंगवश मान्दि आदि के स्पष्टीकरण की प्रक्रिया बता रहे हैं। इससे पाठकों को सुविधा होगी।

काल, परिधि, धूम, अर्धयाम, यमकण्टक, इन्द्रधनु, गुलिक या मान्दि व्यतिपात, उपकेतु ये उपग्रह माने गए हैं।

(i) स्पष्ट सूर्य+४, १३°, २०´ ०″=धूम स्पष्ट।
(ii) १२ राशि—स्पष्ट धूम=स्पष्ट व्यतिपात।
(iii) स्पष्ट व्यतिपात+६ राशि=स्पष्ट परिवेष (परिधि)।
(iv) १२ राशि—स्पष्ट परिवेष=स्पष्ट इन्द्रधनु।
(v) इन्द्रधनु स्पष्ट+०, १६°, ४०´, ०″=स्पष्टध्वज (उपकेतु)
(vi) स्पष्ट उपकेतु+१, ०°, ०´, ०″=स्पष्ट सूर्य।

गुलिक को स्पष्ट करने के लिए स्थानीय दिनमान व रात्रिमान को एकत्र लिख लीजिए। यहां ध्यान रखिए कि कुछ विद्वान् गुलिक व मान्दि को अलग-अलग मानते हैं। उनके मत से धूमादि अप्रकाश ग्रहों की संख्या दस हो जाती है। जबकि बहुमत गुलिक व मान्दि को एक ही मानता है। मान्दि का दक्षिण भारत में बहुत प्रचार है। अस्तु, दिनमान या रात्रिमान का आठवां भाग गुलिक खण्ड अर्थात् शनि का खण्ड माना जाता है। इसके लिए ये बातें जान लीजिए—

(i) जन्मकाल दिन है या रात्रि।
(ii) उस दिन सूर्योदय के समय कौन-सा वार है।
(iii) घटी-पलात्मक दिनमान व रात्रिमान।

दिन में रविवारादि क्रम से ७, ६, ५, ४, ३, २, १ ये गुलिक के खण्ड या गुणक होते हैं।

रात्रि में वार क्रम से ३, २, १, ७, ६, ५, ४ ये खण्ड गुलिक के गुणक होते हैं।

यदि दिन में जन्म हो तो दिनमान को वार गुलिक गुणक से गुणा कर ८ का भाग देना चाहिए। अर्थात् दिन में जन्म हो और रविवार हो तो गुणक ७, सोमवार को ६ इत्यादि क्रम से गुणा करनी है। अब जो घट्यात्मक गुणनफल होगा वह सूर्योदयात् गुलिकेष्ट होगा। इस इष्ट-काल से लग्न साधन की प्रक्रिया के अनुसार स्पष्ट गुलिक आ जाएगा।

रात्रि में जन्म हो तो रात्रिमान को वारानुसार रात्रि से गुणा कर पूर्ववत् ८ का भाग देना चाहिए। तब जो घट्यादि फल प्राप्त हो उसमें दिनमान जोड़ने से गुलिकेष्ट होगा। अब इष्टकाल से लग्न साधन की तरह गुलिक स्पष्ट हो आएगा।

विद्वान् ग्रन्थकार ने अपने ग्रन्थ ज्योतिस्तत्त्व में मान्दि को गुलिक से पृथक् मानकर उसके स्पष्टीकरण की यह रीति बताई है—

२६, २२, १८, १४, १०, ६, ४ ये मान्दि घड़ियां सूर्यवारादि क्रम से बताई हैं। दिन में जन्म हो तो दिनमान को व रात्रि में जन्म हो तो रात्रिमान को अभीष्ट वार की मान्दि घड़ियों से गुणा कर ३० का भाग देना चाहिए। तब दिन में लब्धि मान्दि का इष्टकाल होगा। रात्रि में लब्धि में दिनमान जोड़ देने पर मान्दीष्ट काल होगा। इससे लग्नसाधन-वत् मान्दि स्पष्ट साधन कर लिया जाएगा।

विहगावलोकन :

यहां तक ग्रन्थानुरोध से समस्त आवश्यक सामग्री का यथा प्रसंग विवेचन किया है। विषय अत्यन्त गूढ़ एवं व्यापक होने के कारण सामान्य पाठकों को अभ्यास के समय कुछ कठिनाई हो सकती है। इसी बात को दृष्टि में रखकर हम क्रमशः अष्टकवर्ग प्रणाली का विहगावलोकन करेंगे। इससे पाठकों को अवश्य लाभ होगा, ऐसा हमारा विश्वास है। अष्टकवर्गों के निर्माण की दिशा में प्रवृत्त होने के लिए निम्नलिखित सावधानियां रखिए—

(i) जन्म समय, जन्मतिथि आदि की प्रामाणिकता।

(ii) शुद्ध पद्धति से प्राप्त तथ्यों के आधार पर जन्म कुण्डली का निर्माण।

(iii) स्वस्थ चित्त से अष्टकवर्ग पद्धति का अनुशीलन करके उसकी मस्तिष्क में सुदृढ़ स्थिति।

अस्तु, सर्वप्रथम जन्मलग्न, ग्रह स्पष्ट, भाव स्पष्ट, चलित चक्र, षड्वर्ग निर्माण, षड्बल साधन (प्रारम्भिक अभ्यास में इसे छोड़ा जा सकता है) व विंशोत्तरी पद्धति से दशा व अन्तर्दशा चक्रों का निर्माण कर लीजिए। इतनी साधन सामग्री उपलब्ध होने पर सरलतापूर्वक हम इस दिशा में आगे बढ़ सकते हैं।

अष्टक वर्ग से क्या तात्पर्य है? आप जानते हैं कि जन्म लग्न व चन्द्र से फल कहना प्रामाणिक माना जाता है। जन्म चन्द्र राशि को ही जन्म राशि माना जाता है। अब जिस तरह गोचर का विचार जन्म चन्द्र से होता है उसी प्रकार जन्मकालीन सूर्यराशि, मंगलराशि, बुधराशि अर्थात् सब ग्रहों की अधिष्ठित राशियों से गोचर विचार किया जाना चाहिए। चन्द्रमा में क्या विशेषता है तथा अन्य ग्रहों की क्या न्यूनता है कि उनसे गोचर विचार न किया जाय? इस प्रश्न का उत्तर महर्षियों ने अष्टकवर्ग प्रणाली में ढूंढा। अर्थात् जन्मकालीन ग्रहों की अधिष्ठित राशियों से गोचर का विचार प्रामाणिक ढंग से किया जाता है। इसमें सूर्यादि सातों ग्रह और लग्न कुल आठ ग्रह सम्मिलित हैं। इन आठों के वर्ग अर्थात् समूह का नाम 'अष्टक वर्ग' है।

यदि लग्नराशि प्राण रूप है तो चन्द्रराशि देह रूप। इसी धारणा के अनुसार सब ग्रहों को समान पदवी देकर मनुष्य पर पड़ने वाले इनके समवेत प्रभाव की अध्ययन पद्धति ही अष्टकवर्ग पद्धति है।

इस पद्धति के फलादेश में मुख्यतया तीन उपयोग हैं। मनुष्य जीवन में घटित होने वाली विविध घटनाओं को ज्योतिषीय आधार प्रदान करते हुए सामान्य फलकथन करना।

मनुष्य के जीवन में होने वाले गोचरप्रभाव को तर्कसम्मत समयबद्ध ढंग से बताना अर्थात् सटीक भविष्य कथन करना।

मनुष्य की आयु व तत्सम्बन्धी अवान्तर विषयों का ज्ञान प्राप्त करना।

भविष्य कथन की सभी प्रणालियों में अष्टकवर्ग को सर्वोत्तम माना गया है। गोचर पद्धति से फलादेश, जन्मकालीन ग्रह स्थिति से फलादेश व दशाक्रम से फलादेश इन तीनों का समावेश अष्टकवर्ग में ही हो जाता है। अष्टकवर्ग फलकथन की सभी प्रणालियों का उपबृंहित रूप है।

श्रुतिपरम्परा से यह ज्ञात होता है कि अष्टकवर्ग के रहस्य को पहले स्वयं भगवान् शंकर ने प्रकट किया था जिसे बाद में पराशर, मणित्थ, बादरायण व यवन आदि महर्षियों व आचार्यों ने प्रतिष्ठित किया था। अष्टकवर्ग के स्वरूप के विषय में संक्षेप में बता चुके हैं कि जन्मकालीन सूर्यादि सात ग्रहों की अधिष्ठित राशि व आठवीं लग्न राशि इनकी निर्णायक भूमिका होती है।

प्रत्येक ग्रह अपने अधिष्ठित स्थान से किन्हीं विशेष स्थानों को शुभ फल देता है तथा शेष स्थानों को अशुभ फल देता है। इसी प्रकार शेष ग्रह भी प्रत्येक ग्रह की अधिष्ठित राशि कुण्डली में विशेष स्थानों को बल देता है। इसे सरलता से समझने के लिए पहले सूर्य आदि सातों ग्रहों की अधिष्ठित राशि को लग्न मानकर उनकी कुण्डली बना लीजिए। आठवीं कुण्डली लग्न की होगी। इस प्रकार आपके समक्ष सूर्य कुण्डली, चन्द्र कुण्डली, मंगल कुण्डली, बुध कुण्डली, गुरु कुण्डली, शुक्र कुण्डली, शनि कुण्डली व जन्म लग्न कुण्डली ये कुल आठ कुण्डलियां तैयार हो जाएंगी। प्रत्येक कुण्डली में ग्रहों को यथास्थान लिख लीजिए व लग्न की राशि जिस स्थान में पड़े वहां लग्न लिख लीजिए।

अब देखिए, सूर्य कुण्डली में सूर्य १, २, ४, ७, ८, ९, १०, ११ स्थानों को शुभ फल देने वाला होगा। अर्थात् सूर्य जिस राशि में है उससे प्रथमादि भावों की कल्पना से प्राप्त पूर्वोक्त भावों को सूर्य शुभ फल देगा। इसी प्रकार अन्य ग्रह भी सूर्य कुण्डली में अपनी राशि से विशेष भावों में शुभ फल देंगे। यथा सूर्य कुण्डली में चन्द्रमा ३, ६, १०, ११ स्थानों में शुभ फलप्रद होता है।

सुविधा के लिए शुभ फल को रेखा (।) से व अशुभ फल को बिन्दु (०) से प्रतीकित करते हैं। दक्षिण भारत में शुभ फल द्योतक बिन्दु व अशुभ फल द्योतक रेखा मानी जाती है।

कौन-सा ग्रह किस ग्रह की कुण्डली में किस-किस स्थान को शुभ फल देने वाला होता है यह बात पहले अध्याय के चक्रों में स्पष्ट समझाई गई है। शुभ फल वाले उक्त स्थानों के अतिरिक्त शेष स्थानों में बिन्दु स्वतः ही लगा लेना चाहिए। इस प्रकार से आठ भिन्नाष्टकवर्ग चक्र बन जाएंगे। भिन्न अर्थात् अलग-अलग रेखाप्रद ग्रहों के स्वतन्त्र प्रभाव का अध्ययन भिन्नाष्टक वर्ग में होता है। प्रत्येक ग्रह प्रत्येक कुण्डली में किस-किस स्थान को शुभ फल देता है यह पारिभाषिक रूप से भिन्नाष्टक वर्ग कहलाता है।

भिन्नाष्टक वर्ग के बाद समुदायाष्टक वर्ग बनाना चाहिए। ग्रह किस भाव को सम्मिलित रूप से बल दे रहे हैं एतदर्थ समुदायाष्टक वर्ग बनाया जाता है। इस विषय को अधोनिर्दिष्ट एक संक्षिप्त उदाहरण से समझिए।

जन्म लग्न
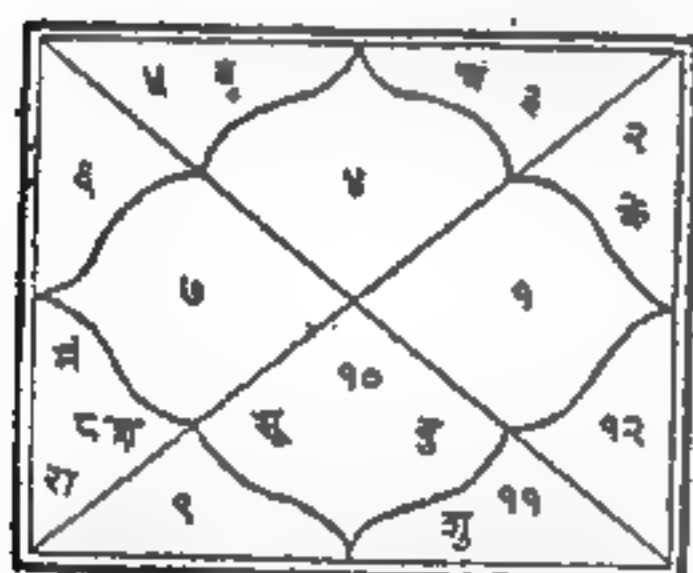
जन्मतिथि २५-१-१९५६
सायं ५-१० भा० स्टै० टा०
जन्मस्थान—निकट दिल्ली।

अब प्रथमाध्याय में बताए गए रेखाप्रद स्थानों के चक्रों को अपने सामने रखिए। प्रत्येक ग्रह की अधिष्ठित राशि को लग्न माना तथा उस ग्रह कुण्डली में प्रोक्त स्थानों में रेखाएं लिखीं—

सूर्य मकर राशि में स्थित है। अतः सूर्य से १,२,४,७,८,९,१०,११ स्थानों में रेखाएं लिखीं। चन्द्रमा भी सूर्य को अपनी अधिष्ठित राशि मिथुन से ३, ६, १०, ११ स्थानों में रेखाएं देगा। मंगल भी स्वाधिष्ठित वृश्चिक राशि से १, २, ४, ७, ८, ९, १०, ११ स्थानों में रेखाएं देगा। इसी प्रकार अन्य ग्रह भी प्रोक्त स्थानों में सूर्य को रेखाप्रद होंगे। स्पष्ट देखिए—

सूर्याष्टक

राशि	म.	कु.	मी.	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	क.	तु.	वृ. मं.	धनु
ग्रह	सू. बु.	शु.			के.	च.	लग्न	गु.			श. रा.	
सू.	।	।	०	।	०	०	।	।	।	।	।	०
चं.	०	०	।	।	०	०	०	।	०	०	।	०
मं.	०	।	०	०	।	।	।	।	।	०	।	।
बु.	०	०	।	०	।	।	०	०	।	।	।	।
गु.	।	०	०	।	०	।	०	०	०	०	०	।
शु.	।	०	०	०	०	०	।	।	०	०	०	।
श.	०	।	०	०	।	।	।	।	।	०	।	।
ल.	०	०	०	।	।	।	०	०	।	।	०	।
योग	३	३	२	४	४	५	४	५	५	३	५	६

लग्न में कर्क राशि है। अतः कर्क से तन्वादि भावों में निम्न-लिखित रेखाएं सूर्याष्टक वर्ग में मिलीं—

अर्थात् सूर्याष्टक वर्ग में लग्नभाव में ४ रेखा, द्वितीय में ५,तृतीय में ५ इत्यादि क्रम से समझिए। इसी प्रकार सब ग्रहों के अष्टकवर्ग बनाए।

सूर्याष्टक वर्ग
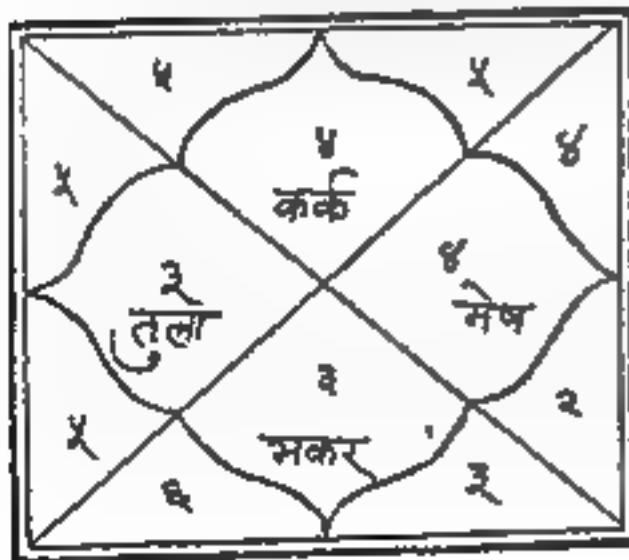
चन्द्राष्टक वर्ग
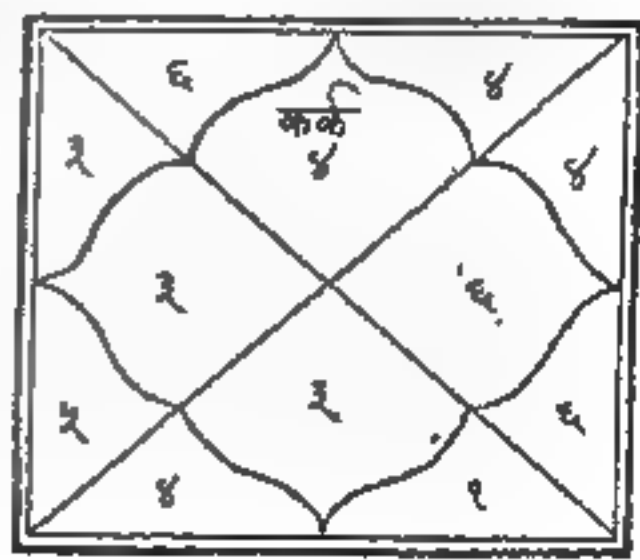
समुदायाष्टक रेखा चक्र

भाव	राशि	रेखाएं	योग
१	कर्क	४+४+४+५+४+४+४+०	२९
२	सिंह	५+६+३+३+४+४+४+५	३४
३	कन्या	५+३+४+६+४+६+४+५	३७
४	तुला	३+३+१+३+७+४+४+३	२८
५	वृश्चिक	५+५+५+५+६+४+३+६	३९
६	धनु	६+४+३+६+४+३+४+३	३३
७	मकर	३+३+२+३+४+३+५+४	२७
८	कुम्भ	३+१+२+४+५+४+१+४	२४
९	मीन	२+६+२+४+५+६+२+३	३०
१०	मेष	४+६+२+३+५+४+५+८	३७
११	वृष	४+४+६+६+४+५+१+४	३४
१२	मिथुन	५+४+५+६+४+४+२+४	३४

इस प्रकार भिन्नाष्टक व समुदायाष्टक वर्ग बना लेना चाहिए। किस स्थान में कितनी रेखाओं का क्या विशेष फल है, यह तत्तत् अध्याय में ग्रन्थ में विस्तार से बता दिया गया है। सामान्यत: समझिए कि रेखाप्रद ग्रह कुल ८ हैं, अत: किसी भी स्थिति में कहीं भी एक स्थान पर ८ से अधिक रेखाएं नहीं हो सकतीं। यदि ८ रेखाएं हैं तो निश्चय से उस स्थान से सम्बन्धित उत्तम फल होगा। यदि रेखा ० है तो अवश्य अशुभ फल होगा। ४ रेखाएं मध्यम हैं, अर्थात् न शुभ और न अशुभ। अब चार से अधिक जितनी रेखाएं होती जाएंगी तो उस स्थान की उत्तरोत्तर वृद्धि समझनी चाहिए। यदि ४ से कम रेखाएं होती चलेंगी तो अवश्य ही आनुपातिक ढंग से अशुभ फल बढ़ता जाएगा व शुभ फल उत्तरोत्तर घटेगा। यह व्यवस्था भिन्नाष्टकवर्ग के लिए बताई गई है। समुदायाष्टक वर्ग में देखना हो तो अधिकाधिक ३३७ रेखाएं हो सकती हैं। वहां २८ एक स्थान पर मध्यम फल देने वाला रेखा योग हुआ। जितनी रेखाएं २८ से कम होती जाएंगी उतना ही शुभ फल कम व अशुभ फल अधिक होगा। इसी प्रकार २८ से ऊपर उत्तरोत्तर रेखा संख्या में वृद्धि उत्तम फल देने वाली होगी। यह सामान्य व्यवस्था है।

यहां एक बात विशेष ध्यान रखने की है—षष्ठ, अष्टम व व्यय ये तीनों स्थान दुष्ट स्थान हैं। अर्थात् क्रमशः रोग, मृत्यु व शरीरादि हानि के प्रतिनिधि हैं। इन भावों की बलवत्ता अर्थात् २८ से या ४ से अधिक रेखाएं पड़ने पर बढ़ेगी, तब निश्चित ही अशुभ फल की वृद्धि होगी जो हमें अभीष्ट नहीं है। अतः इन भावों में कम रेखाएं ही शुभ मानी जाएंगी। लग्न की अपेक्षा अष्टम में कम रेखाएं शुभ हैं। इसी तरह व्यय स्थान में आय से कम रेखाएं शुभ होंगी। उदाहरण में लग्न में २९ व अष्टम में २४ रेखाएं हैं, अतःशुभ है। किन्तु आय व व्यय स्थान में समान रेखाएं मध्यम हैं। अर्थात् जितनी आय उतना खर्च, बचत नहीं समझिए।

लग्न में कम व व्यय में अधिक रेखाएं शरीर कष्ट की द्योतक हैं। प्रत्येक भाव से द्वादश भाव उसका हानि स्थान है। यथा षष्ठ में ३३ व षष्ठ के हानि स्थान पंचम में ३९ रेखाएं रोगों से बचाव करेंगीं तथा विद्या, बुद्धि व सन्तान की वृद्धि करेंगीं। किन्तु लग्न से अधिक रेखाएं षष्ठ व द्वादश में हों तो सामान्यतः रोगोत्पत्ति व शरीर कष्ट की द्योतक तो समझी ही जाएंगीं। इस प्रकार ऊहापोहपूर्वक जातक पद्धति से भावों की हानि व वृद्धि का विचार अष्टकवर्ग से किया जाता है। यह अष्टक वर्ग का आधारभूत उपयोग है।

यहां पर यह बात भी ध्यातव्य है कि शत्रुक्षेत्रगत व नीचगत ग्रह अधिक रेखायुक्त होकर भी अधिक शुभ फल नहीं दिखा पाएगा।

जीवन घटनाओं का पुलिन्दा है। अतः स्पष्ट है कि जीवन में मनुष्य को सदा शुभ व सदा अशुभ फल नहीं मिलता। शुभाशुभ फल की प्राप्ति में कुछ तारतम्य होता है। देखिए, पिछले उदाहरण में दशम स्थान में ३७ रेखाएं हैं। अतः अच्छा फल तो सिद्ध हुआ, किन्तु क्या सारे जीवन भर समान फल इस भाव से सम्बन्धित मिलता रहेगा। इसका निर्भ्रान्ति उत्तर नकारात्मक है। तब इस भाव से सम्बद्ध शुभ फल कब-कब मिलेगा ? इसकी सटीक भविष्यवाणी के लिए **प्रस्ताराष्टक वर्ग** बनाया जाता है।

प्रस्ताराष्टक वर्ग वास्तव में भिन्नाष्टक वर्ग का ही विस्तृत रूप है। प्रस्तार अर्थात् विस्तार। प्रत्येक राशि में ३० अंश होते हैं। ३० अंशों को आठ अर्थात् अष्टकवर्ग के आठ अधिपतियों की संख्या से भाग

देने पर एक राशि का आठवां हिस्सा ज्ञात हो जाएगा। इस प्रक्रिया से ३०° ÷ ८ = ३ अंश ४५ कला लब्धि एक अष्टकवर्गाधिपति की कक्ष्या हुई। अब किस ग्रह को पहले रखें तथा किसे बाद में, इसके निर्धारणार्थ आचार्यों ने वही क्रम माना है जिस क्रम से ग्रह आकाश में अपना अस्तित्व रखते हैं। कक्ष्या—आकाश में ग्रह की स्थिति। यह क्रम इस प्रकार है—

मन्दार्यभौमार्कसितज्ञचन्द्राः।

मन्द—शनि, आर्य—बृहस्पति, भौम—मंगल, अर्क—सूर्य, सित—शुक्र, ज्ञ—बुध व चन्द्रमा।

यह क्रम ग्रहों की कक्ष्या का है। अब यह निश्चित हुआ कि प्रत्येक राशि में फलप्रदाता आठ ग्रहों की सीमा इस प्रकार रहेगी—

(i) ०° से ३°, ४५′ तक शनि की कक्ष्या
(ii) ३°, ४५′ से ७°, ३०′ तक बृहस्पति की कक्ष्या।
(iii) ७°, ३०′ से ११°, १५′ तक मंगल की कक्ष्या।
(iv) ११°, १५′ से १५° तक सूर्य की कक्ष्या।
(v) १५°, ००′ से १८°, ४५′ तक शुक्र की कक्ष्या।
(vi) १८°, ४५′ से २२°, ३०′ तक बुध की कक्ष्या।
(vii) २२°, ३०′ से २६°, १५′ तक चन्द्रमा की कक्ष्या।
(viii) २६°, १५′ से ३०°, ००′ तक लग्न की कक्ष्या।

इस प्रकार एक ही राशि में आठों वर्गाधिपतियों को समान प्रतिनिधित्व दिया जाता है। ध्यान रखिए कि अष्टकवर्ग पद्धति सारी फल कथन पद्धतियों में से सर्वाधिक समन्वयपरक है।

अब यदि कोई एक राशि अधिक रेखाओं से युक्त है तो उसमें गोचर करने वाला ग्रह अपना शुभ फल तभी दिखाएगा जब वह उस राशि के रेखाप्रद ग्रहों की कक्ष्या अर्थात् उपर्युक्त निर्धारित अंशों में संक्रमण करेगा। जब वह रेखारहित ग्रहों की कक्ष्याओं से गुजरेगा तो अपना फल देने में असमर्थ रहेगा। पिछले उदाहरण में सूर्याष्टक वर्ग में सूर्य को धनु राशि में ६ रेखाएं मिली हैं। रेखा देने वाले ग्रह मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र व शनि हैं। अतः जब धनु में संक्रमण करते हुए सूर्य शनि की कक्ष्या (०—३°, ४५′) गुरु की कक्ष्या (३°, ४५′—७°, ३०′) आदि प्रकार से रेखाप्रद ग्रहों के अंशों से गुजरेगा तो शुभ फल देगा। जब सूर्य स्वयं

अपनी कक्ष्या (११° १५' से १५°) व चन्द्रमा की कक्ष्या (२२°, ३०' से २६° १५') से गुजरेगा तो रेखाभाव के कारणशुभ फल नहीं देगा। इसी प्रकार अन्य ग्रहों के अष्टकवर्गों में भी फलप्रद समय का निर्धारण सफलतापूर्वक किया जा सकता है। इसे प्रदर्शित करने के लिए आचार्यों ने प्रस्तार चक्र बनाने का निर्देश दिया है किन्तु हमारे विचार से यदि भिन्नाष्टकवर्ग चक्रों को बना लिया जाए तो रेखाप्रद ग्रहों को वहां से ज्ञात करके भी फल प्राप्ति का समय जाना जा सकता है। प्रस्ताराष्टक का उपयोग मुख्य रूप से गोचर में होता है, अतः ग्रन्थ में इसका विवेचन गोचराध्याय में किया गया है।

विशेष फल जानने के लिए भिन्नाष्टक वर्ग में **त्रिकोण शोधन व एकाधिपत्य शोधन** भी किया जाता है।

त्रिकोण शोधन क्या है? पंचम व नवम राशि त्रिकोण राशि होती है। अतः त्रिकोण स्थान (१, ५, ९) माने जाते हैं। अर्थात् लग्न से पंचम भाव व नवम भाव त्रिकोण हैं व नवम से लग्न व पंचम त्रिकोण है। इसी पद्धति से यहां राशियों के त्रिकोण निर्धारित किये गए हैं। प्रत्येक त्रिकोण तीन-तीन राशियों का समूह है। इस प्रकार कुल चार त्रिकोण बनते हैं।

१. मेष, सिंह, धनु।
२. वृष, कन्या, मकर।
३. मिथुन, तुला, कुम्भ।
४. कर्क, वृश्चिक, मीन।

त्रिकोण शोधनके लिए देखिए कि त्रिकोण राशियों के किसी एक समूह में भिन्नाष्टक वर्ग में किस राशि को सबसे कम रेखाएं मिली हैं। न्यूनतम रेखा संख्या को तीनों त्रिकोण राशियों की रेखा संख्या में से घटा दीजिए। शेष रेखाएं त्रिकोण शुद्ध रेखाएं होंगी। कहा गया है—

'त्रिकोणेषु च यन्न्यूनं तत्तुल्यं त्रिषु शोधयेत्।'

इस सूत्र को सदा याद रखिए। त्रिकोणों में जो सबसे कम हो उसे तीनों राशियों में से घटाकर शेष का ग्रहण कर लीजिए। यह पद्धति उत्तर भारत में प्रचलित है। इसी पद्धति को प्रस्तुत ग्रन्थ में भी स्वीकृत किया गया है। दक्षिण भारत के विद्वान् दैवज्ञ उक्त सूत्र का अर्थ भिन्न प्रकार से करते हैं। उनके मतानुसार त्रिकोण राशियों में जो सबसे कम

रेखायोग हो वही सर्वत्र स्वीकार करना चाहिए। अर्थात् मेष में ४, सिंह में ६ व धनु में यदि ३ रेखाएं कहीं हों तो न्यूनतम ३ को सर्वत्र मानिए। तब ३, ३, ३ ये त्रिकोण शुद्ध रेखाएं होंगी। उत्तर भारतीय पद्धति से करेंगे तो २ को सर्वत्र घटाने से मेष में १, सिंह में ३ व धनु में ० रेखाएं होंगी। पाठक भ्रम में न पड़ें और सूत्र के सीधे अर्थ को लेते हुए पहले से त्रिकोण शोधन कर लें।

इस स्थिति में ध्यान रखिए कि एक जगह सदा ० शेष रहेगा। यदि किसी समूह में ० रेखाएं हों तो वहां यथावत् रेखाएं रहेंगी, क्योंकि ० को सर्वत्र घटाने पर कोई अन्तर नहीं पड़ेगा।

इसी प्रकार यदि तीनों राशियों में समान रेखायोग हो तो तीनों जगह ० शेष बचेगा।

एकाधिपत्य क्या है ? सूर्य व चन्द्रमा को छोड़कर शेष ग्रहों को दो-दो राशियों का स्वामी माना गया है। जैसे—मेष, वृश्चिक, मंगल। अत: एकाधिपत्य शोधन कर्क व सिंह राशि को छोड़कर शेष दस राशियों में होगा। अर्थात् जिन दो राशियों का स्वामी एक ही ग्रह हो उनकी रेखाओं का एकाधिपत्य शोधन होगा।

यहां ध्यान रखिए कि **एकाधिपत्य शोधन सर्वत्र त्रिकोण शोधन के बाद ही होगा**। त्रिकोण शुद्ध रेखाओं को यहां उपकरण के रूप में ग्रहण किया जाएगा। एकाधिपत्य शोधन के नियम इस प्रकार हैं—

(i) दोनों राशियों में से एक में ग्रह हो तथा ग्रह युक्त राशि का फल कम हो तो दोनों राशियों के फलों का अन्तर कर शेष को ग्रह रहित राशि के नीचे रखें व ग्रह युक्त राशि का यथावत् फल रहने दें।

(ii) यदि ग्रहरहित राशि का फल कम हो तो उसके समस्त फल को त्यागकर वहां शून्य रखें व ग्रहयुक्त राशि का फल यथावत् ही रखें।

(iii) यदि दोनों राशियों में ग्रह हों अथवा एक में शून्य फल हो तथा दूसरी में फलहो तो दोनों परिस्थितियों में एकाधिपत्य शोधन न करें।

(iv) दोनों ग्रह रहित राशियों में समान फल हो तो दोनों स्थानों पर ० स्थापित करें।

(v) यदि दोनों ग्रहरहित राशियों में फल कम अधिक हो तो अधिक फल में से अल्प फल को घटाकर शेष को अधिक फल वाली राशि के नीचे लिखें व अल्प फल वाली राशि के नीचे ० लिखें।

(vi) यदि एक में ग्रह हो व फल समान हो तो ग्रह सहित राशि का फल यथावत् रखें व ग्रह रहित राशि के नीचे ० रखें।

बारह राशियों के गुणक क्रमशः ७, १०, ८, ४, १०, ५, ७, ८, ९, ५, ११, १२ हैं। इनसे एकाधिपत्य शोधन के बाद बची हुई रेखाओं को गुणा करने से **राशिगुणपिण्ड** होगा।

ग्रहों के गुणक सूर्यादि क्रम से इस प्रकार हैं : ५, ५,८,५,१०,७,५। इनसे अधिष्ठित राशि के एकाधिपत्य शुद्ध रेखायोग को गुणा करने से **ग्रहगुणपिण्ड** होगा।

यदि एक राशि में कई ग्रह हों तो सब ग्रहों के गुणकों से अलग-अलग गुणा करना चाहिए।

राशियों व ग्रहों के पिण्डों को जोड़ने से **योगपिण्ड** ज्ञात हो जाएगा। उदाहरण के संदर्भ में इस समस्त विषय को चक्र में समझिए।

सूर्य शोधन

राशि	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु.	मी.
रेखायोग	४	४	५	४	५	५	३	५	६	३	३	२
त्रिकोण शुद्ध रेखा	०	१	२	२	१	२	०	३	२	०	०	०
एका. शु. रेखा	०	१	०	२	१	०	०	३	२	०	०	०
राशि गुणक	७	१०	८	४	१०	५	७	८	९	५	११	१२
राशि पिण्ड	०	१०	०	८	१०	०	०	२४	१८	०	०	०
ग्रह गुणक	—	—	५	—	१०	—	—	८/५	—	५/५	७	—
ग्रह पिण्ड	—	—	१०	—	१०	—	—	२४/१५	—	०/०	०	—

सब राशियों के पिण्डों ०+१०+०+८+१०+०+०+२४+१८+०+०+० को जोड़ने पर ७० राशि गुणपिण्ड हुआ।

ग्रहों के पिण्डों १०+१०+२४+१५+०+०+० को जोड़ने से ५९ ग्रहगुणपिण्ड हुआ। इन दोनों का योगफल ७०+५९=१२९ सूर्य का योगपिण्ड हुआ।

चन्द्र शोधन

राशि	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु.	मी.
रेखायोग]	६	४	४	४	६	३	३	५	४	३	१	६
त्रि. शु. रे.	२	१	३	०	२	०	२	१	०	०	०	२
एका. शु. रे.	१	०	३	०	२	०	१	१	०	०	०	२
राशि पिण्ड	७	१०	२४	०	२०	०	७	८	०	०	०	२४
ग्रह पिण्ड	—	—	१५	—	२०	—	—	८/५	—	०/०	०	—

राशि गुण पिण्ड ७+१०+२४+२०+७+८+२४=१००

ग्रहगुणपिण्ड १५+२०+८+५=४८ योगपिण्ड १००+४८=१४८ यह चन्द्रमा का योगपिण्ड हुआ।

इसी प्रकार शेष ग्रहों के पिण्ड निम्नलिखित हैं—

मंगल शोधन

राशि	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु.	मी.
रेखायोग	२	६	५	४	३	४	१	५	३	२	२	२
त्रि. शु. रे.	०	४	४	२	१	२	०	३	१	०	१	०
एका. शु. रे.	०	४	४	२	१	०	०	३	१	०	१	०
राशि पिण्ड	०	४०	३२	८	१०	०	०	२४	६	०	११	०
ग्रह पिण्ड	—	—	२०	—	१०	—	—	२४/१५	—	०	७	—

राशिगुणपिण्ड १३४, ग्रह गुणपिण्ड ७६, योगपिण्ड २१० है।

बुध शोधन

राशि	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	क.	तु.	वृ.	ध	म.	कु.	मी.
रेखायोग	३	६	६	५	३	६	३	५	६	३	४	४
त्रि. शु. रे.	०	३	३	१	०	३	०	१	३	०	१	०
एका. शु. रे.	०	३	३	१	०	०	०	१	३	०	१	०
राशिपिण्ड	०	३०	२४	४	०	०	०	८	२७	०	११	०
ग्रह पिण्ड	—	—	१५	—	०	—	—	८/५	—	०	७	—

राशिगुणपिण्ड १०४, ग्रहगुणपिण्ड ३५ व योगपिण्ड १३९ हुआ।

गुरु शोधन

राशि	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु.	मी.
रेखायोग	५	४	४	४	४	४	७	६	४	४	५	५
त्रि. शु. रे.	१	०	०	०	०	०	३	२	०	०	१	१
एका. शु. रे.	०	०	०	०	०	०	३	२	०	०	१	१
राशिपिण्ड	०	०	०	०	०	०	२१	१६	०	०	११	१२
ग्रहपिण्ड	—	—	०	—	०	—	—	१६/१०	—	०	७	—

राशिगुणपिण्ड ६०, ग्रहगुणपिण्ड ३३, योगपिण्ड ९३ हुआ।

शुक्र शोधन

राशि	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु.	मी.
रेखायोग	४	५	४	४	४	६	४	४	३	३	४	६
त्रि. शु. रे.	१	२	०	०	१	३	०	०	०	०	०	२
एका. शु. रे.	१	२	०	०	१	३	०	०	०	०	०	२
राशि पिण्ड	७	२०	०	०	१०	१५	०	०	०	०	०	२४
ग्रह पिण्ड	—	—	०	—	१०	—	—	०/०	—	०	०	—

राशिगुणपिण्ड ७६, ग्रहगुणपिण्ड १०, योगपिण्ड 86 हुआ।

शनि शोधन

राशि	मे.	वृ.	मि.	क.	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.
रेखायोग	५	१	२	४	४	४	४	३	४	५	१	२
त्रि.शु.रे.	१	०	१	२	०	३	३	१	०	४	०	०
एका.शु.रे.	०	०	१	२	०	२	३	१	०	४	०	०
राशिपिण्ड	०	०	८	८	०	१०	२१	८	०	२०	०	०
ग्रह पिण्ड	—	—	५	—	०	—	—	८/५	—	२०/३२	०	—

राशिगुणपिण्ड ७५, ग्रहगुणपिण्ड ७०, योगपिण्ड १४५ हुआ।

लग्न शोधन

राशि	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु.	मी.
रेखायोग	८	४	४	०	५	५	३	६	३	४	४	३
त्रिशु.रे.	५	०	१	०	२	१	०	६	०	०	१	३
एका.शु.रे.	०	०	१	०	२	०	०	६	०	०	१	३
राशि पिण्ड	०	०	८	०	२०	०	०	४८	०	०	११	३६
ग्रहपिण्ड	—	—	५	—	२०	—	—	४८/३०	—	०/०	७	—

राशिगुणपिण्ड १२३, ग्रहगुणपिण्ड ११०, योगपिण्ड २३३ हुआ।

यहां तक बताई गई क्रियाओं को करने के बाद ही अष्टकवर्ग से विभिन्न फलाफल का विचार किया जा सकेगा।

हम पहले बता चुके हैं कि अष्टक वर्ग में मुख्यतया कुण्डली का समन्वयात्मक फल (जातक), आयुनिर्णय व गोचर फल, ये तीन वस्तुएं प्रामाणिक ढंग से मानी जाती हैं। वैसे अष्टक वर्गों से अपने फल के अतिरिक्त अपने सम्बन्धियों, पिता, माता, भाई, मित्र, स्त्री आदि का भी आत्मसम्बन्ध से फल माना जा सकेगा। गोचर व अष्टक वर्ग के समन्वय से वर्ष, मास व दिन तथा दिन के भी प्रहरों का विशेष शुभाशुभ फल जानना सम्भव है। इस दिशा में हम क्रमशः आगे बढ़ेंगे।

भिन्नाष्टक वर्ग से फल जानने के लिए रेखा व बिन्दुओं का शोधन भी अनिवार्य है। आशय यह है कि रेखा शुभ फल की द्योतक है तथा बिन्दु अशुभ फल का द्योतक। अब कल्पना कीजिए कि किसी स्थान में रेखाएं अधिक हैं तो अवश्य ही शुभ फल होगा व बिन्दुओं का आधिक्य अशुभ फल को प्रतीकित करेगा। किसी भी स्थान पर अधिकतम ८ बिन्दु व रेखाएं हो सकती हैं। शोधन से हम शुभ व अशुभ फल का अनुपात सरलता से जान सकते हैं। रेखा संख्या को ८ में से घटाने पर उस स्थान की बिन्दु संख्या ज्ञात हो जाती है। बिन्दु शोधन के लिए रेखा संख्या को ८ में से घटाकर बिन्दु ज्ञात कर लीजिए। अब कहीं पर बिन्दु अधिक होंगे व कहीं पर रेखाएं अधिक होंगी। अब अधिक में से कम को घटाने पर प्राप्त फल शुद्ध रेखा या शुद्ध बिन्दु यथा प्रसंग होंगे। इस उदाहरण में सूर्य का बिन्दु रेखा शोधन करके दिखा रहे हैं—

सूर्य रेखा शोधन

राशि	मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	म	कु.	मी.
रेखायोग	४	४	५	४	५	५	३	५	६	३	३	२
बिन्दुयोग	४	४	३	४	३	३	५	३	२	५	५	६
शुद्धरेखा	०	०	२	०	२	२	०	२	४	०	०	०
	०	०	०	०	०	०	२	०	०	२	२	४

इसी प्रकार शुद्ध रेखा व शुद्ध बिन्दुओं से ही सूक्ष्म फल जाना जा सकेगा। सामान्यतः ८ शुद्ध रेखाएं होने पर पूर्ण शुभ फल, ६ रेखाओं से ७५% शुभ फल, ४ शुद्ध रेखाएं होने पर ५०% शुभ फल व २ रेखाएं होने पर २५% शुभ फल होगा। यदि शुद्ध रेखा ० हो तो शुभाशुभ फल सामान्य होगा। इस विषय के विस्तृत ज्ञान के लिए ग्रन्थ का भिन्नाष्टक वर्ग फलाध्याय देखें।

यहां फल विवेक में यह बात विशेषतया ध्यान रखिए कि जन्म समय में जो ग्रह वृद्धि स्थान (३, ६, १०, ११) में हो या स्वमित्रोच्च त्रिकोणादि राशि में हो तो उसका शुभ फल (शुद्ध रेखाओं से आनुपातिक ढंग से ज्ञात) पूरा मिलेगा। यदि ग्रह भिन्नादि राशि में हो तथा अशुभ फल आ रहा हो तो उसकी मात्रा मध्यम हो जाएगी। आशय यही है कि अष्टक वर्ग रेखाओं का फल ग्रह की अधिष्ठित राशि से प्रभावित होगा। यदि वह नीचादि राशि में है तो उसका रेखा जनित फल कम व उच्चादि गत है तो अधिक समझना चाहिए।

अष्टक वर्ग से आयु विचार भी किया जाता है। यह विचार भिन्नाष्टक वर्ग व समुदायाष्टक वर्ग से पृथक्-पृथक् किया जाता है। कब भिन्नाष्टकायु का ग्रहण किया जाएगा व कब समुदायाष्टकायु का ग्रहण होगा, इस विषय में निम्नलिखित बातें याद रखिए—

भिन्नाष्टकायु का ग्रहण इन परिस्थितियों में होगा—

(i) बली या ग्रहयुक्त चन्द्रमा यदि केन्द्र से अतिरिक्त स्थानों में हो।

(ii) दशम स्थान में शुभ व पाप ग्रहों की युति हो।

(iii) मंगल बलवान् हो।

(iv) चन्द्र केन्द्र से बाहर हो और अन्य बली ग्रह ६, ७, ८ स्थानों में या १२, १, २ स्थानों में या ३, ४, ५ स्थानों में या ९, १०, ११ स्थनों में हों।

सामुदायायु का ग्रहण निम्नलिखित परिस्थितियों में होगा—

(i) चन्द्रमा केन्द्र में हो तथा ग्रह युक्त हो।
(ii) शेष ग्रह केन्द्रातिरिक्त स्थानों में हों।
(iii) शनि बलवान् हो।
(iv) यदि बली चन्द्रमा केन्द्र में हो तथा अन्य बली ग्रह भी केन्द्र में हों तो मिश्रायु साधन करना चाहिए।

(भिन्नाष्टकायु+सामुदायायु)÷२=मिश्रायु।

प्रस्तुत उदाहरण में मंगल केन्द्राधीश व त्रिकोणाधीश होकर त्रिकोण में स्वराशि में स्थित है तथा चन्द्रमा भी केन्द्र से बाहर है, अतः भिन्नायु यहां लागू होगी।

अब आयु साधन में प्रवृत्त होंगे। हम पहले सब ग्रहों के योग पिण्ड निकाल चुके हैं। इन्हीं योग पिण्डों के आधार पर आयु साधन किया जाता है। आयु साधन के लिए प्रत्येक ग्रह के योग पिण्ड को ७ से गुणा कर २७ से से भाग दीजिए तो लब्धि आयु के वर्षादि होंगे।

उदाहरण में सूर्य का पिण्ड १२९×७=९०३÷२७=३३ वर्ष, ५ मास, १० दिन, ० घड़ी।

इसकी क्रिया का प्रकार अष्टक वर्गायुर्दायाध्याय में देखिए।

इसी पद्धति से सब ग्रहों के पिण्डों से आयु साधन किया—

	वर्ष	मास	दिन	घड़ी	पल
सूर्य प्रदत्तायु	३३	५	१०	००	०
चन्द्र प्रदत्तायु	२५	११	३	२०	०
मंगल प्रदत्तायु	५४	५	१०	०	०
बुध प्रदत्तायु	३६	०	१३	२०	०
गुरु प्रदत्तायु	२४	१	१०	०	०
शुक्र प्रदत्तायु	२२	३	१५	३३	२०
शनि प्रदत्तायु	३७	७	३	१०	००
लग्न प्रदत्तायु	६०	४	२६	४०	०

अब इस भिन्नायु में निम्नलिखित संस्कार (शोधन) करने आवश्यक हैं—

(i) मण्डल शोधन।

(ii) एक राशिगत हानि संस्कार।

(iii) शत्रु क्षेत्रादिगत हानि संस्कार।

(iv) चक्रार्ध हानि संस्कार।

एक-एक करके समझिए। भिन्नायु में मण्डल २७ वर्षों का होता है। आयु को २७ या २७ के गुणकों से शुद्ध करना मण्डल शोधन कहलाता है। इसका प्रकार आयुर्दायाध्याय श्लोक १-२ में बताया गया है। इस उदाहरण में गुरु व शुक्र के आयु वर्ष २७ वर्ष से कम होने के कारण स्वत: मण्डल शुद्ध हैं।

शेष ग्रहों में से सूर्य, चन्द्रमा, बुध व शनि के आयु वर्षों को ५४ में से घटाया गया।

मंगल व लग्न के आयु वर्षों में से ५४ को घटाया गया। इस प्रकार मण्डल शोधन हुआ।

एक राशिगत हानि के लिए सूर्य व बुध, मंगल व शनि की मण्डल शुद्ध आयु को आधा किया गया क्योंकि ये एक राशिगत हैं।

शत्रु क्षेत्रादि हानि के लिए देखा कि सूर्य व शनि निसर्ग शत्रु की राशि में हैं। अत: उनकी आयु (मण्डल शुद्ध) का तृतीयांश त्याग दिया जाना चाहिए।

युद्ध संस्कार व पात (राहु केतु युति हानि) संस्कार यहां लब्धावसर नहीं है।

बुध अस्तंगत होने के कारण उसकी मण्डल शुद्धायु का आधा भाग त्याग दिया जाना चाहिए।

चक्रार्ध हानि के लिए देखा कि सूर्य, बुध, शुक्र व चन्द्रमा दृश्यार्ध में हैं।

इसमें सूर्य पाप ग्रह है व सप्तमस्थ है। अत: मण्डल शुद्धायु का षष्ठांश त्याज्य है।

बुध सप्तमस्थ भी सम्पर्क दोष से पाप है, अत: षष्ठांश हानि प्राप्त है।

शुक्र अष्टमस्थ शुभ है, अत: दशमांश हानि प्राप्त है।

चन्द्रमा व्ययस्थ है, अतः अर्धांश हानि प्राप्त है।

यह स्थल चक्रार्ध हानि है। इसे स्पष्ट करने के लिए भाव स्पष्ट व ग्रह स्पष्ट हमारे पास होने चाहिएं। इस हानि का स्पष्टीकरण प्रकार आयुर्दायाध्याय के श्लोक ७-१० में बताया गया है।

हानि संस्कार करते समय निम्नलिखित बातें ध्यान रखिए—

(i) यदि एक ही ग्रह को कई प्रकार से हानि प्राप्त हो रही हो तो सबसे बड़ी केवल एक हानि ही करें।

(ii) चक्रार्ध हानि के समय यदि एक स्थान में एक से अधिक ग्रह स्थित हों तो केवल बलवान् ग्रह की ही चक्रार्ध हानि कीजिए, शेष ग्रहों की नहीं।

जैसे प्रस्तुत उदाहरण में सूर्य व बुध को एक राशिगत हानि व चक्रार्ध हानि तथा बुध को अस्तंगत हानि व सूर्य को शत्रु क्षेत्र हानि प्राप्त है। इनमें एक राशिगत हानि सबसे बड़ी है, अतः सूर्य की मण्डल शुद्धायु का आधा भाग ही त्याग दिया जाएगा। बुध का भी अर्धांश ही त्याज्य है। मंगल शनि की भी सबसे बड़ी एक राशिगत हानि ही की जाएगी। चन्द्र, शुक्र की चक्रार्ध हानि निर्विवाद है।

इस प्रकार हानि संस्कार करके बचे आयु वर्षों को सौर वर्षमान बनाने के लिए ३२४ से गुणा कर ३६५ से भाग देना चाहिए। तब स्पष्ट भिन्नायु होगी।

लग्न के विषय में यह ध्यान रखिए—

(i) लग्न की स्पष्ट भिन्नायु के वर्षों में लग्न स्पष्ट की राशि संख्या को भी जोड़िए।

(ii) शेष अंशादिकों को १२ से गुणा करने पर गुणनफल दिनादि होता है, इसे भी पूर्वागत लग्नायु में जोड़िए।

भिन्नायु साधन का यह एक प्रकार है। इसके अतिरिक्त ग्रन्थ में कई अन्य प्रकार भी बताए गए हैं। उन प्रकारों में से सर्वाधिक प्रचलित प्रकार रेखा बिन्दु योग से प्राप्त भिन्नायु है। यह पराशर मत पर आधारित है।

हमारे विचार से कई प्रकारों से भिन्नायु साधन कर लीजिए व एकाधिक प्रकार से प्राप्त लगभग समान आयु को स्वीकार करें

लीजिए। वैसे अनुभव में यह आता है कि अष्टकवर्गजायु से प्राप्त आयु प्रमाण लोक में खरा नहीं उतरता। आयु विचार के साथ-साथ मारक दशा, अरिष्ट व मरण समयादि से प्राप्त निष्कर्षों की भी आपस में समीक्षा करके किसी निर्भ्रान्ति निर्णय पर पहुंचने का प्रयत्न करना चाहिए।

यह प्रथम प्रकार से साधित आयु होगी। द्वितीयादि प्रकार से भी आयु साधन करना चाहिए, यहां वृथा विस्तार के भय से यह सब नहीं दिया जा रहा है। ग्रन्थ के सम्बन्धित अध्याय में समस्त विषय विशेष व्युत्पत्ति के साथ समझाया गया है, वहां देख लें।

इसी प्रकार कहीं आवश्यकतानुसार सामुदायायु का साधन भी किया जाएगा।

यदि नियमतः मिश्रायु प्राप्त हो रही हो तो दोनों प्रकार से आयु निकालकर जोड़ लीजिए, तब उसे २ से भाग देकर प्राप्त लब्धि मिश्रायु होगी।

पीछे चक्रार्ध हानि के दो प्रकार बताए गए हैं। प्रारम्भिक अभ्यास के समय स्थूल चक्रार्ध हानि से भी काम चलाया जा सकता है। क्योंकि स्पष्ट हानि में प्रायः माह दो माह का ही अन्तर पड़ेगा।

यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि जिस प्रकार में हानि बतायी गयी है वहीं पर करनी है। जहां अन्यथा निर्देश है वहां तदनुसार ही क्रिया की जाएगी। कहीं पर वृद्धि भी होती है, जैसे देखिए दूसरा प्रकार।

तीसरा मुख्य उद्देश्य इस प्रणाली में गोचर को तर्कसम्मत व वैज्ञानिक आधार प्रदान करना है।

किसी भाव की वृद्धि या हानि कब होगी तथा किस ग्रह के प्रभाव से होगी, एतदर्थ भाव जन्माष्टक वर्ग फलाध्याय देखिए।

सामान्यतः ६, ८, १२ स्थानों में कम रेखाएं व शेष स्थानों में अधिक रेखाएं शुभ होती हैं।

इसी प्रकार लग्न का विचार करते समय उसके हानि स्थान व उसके नीच स्थान (सप्तम) का भी अध्ययन कीजिए। बारहवें भाव में लग्न से कम रेखाएं, अष्टम में लग्न से कम रेखाएं, दीर्घायुकारक होंगी। इसी पद्धति से भाव विचार कीजिए।

कष्टकारक समयादि का ज्ञान ग्रहजन्याष्टक व भावजन्याष्टक वर्ग में कराया गया है।

पहले अष्टक वर्ग निर्माण का अभ्यास कर लेना चाहिए। इसमें खूब अभ्यस्त हो जाने पर फलादेश करना चाहिए। धीरे-धीरे अभ्यास से क्रान्त दृष्टि विकसित हो जाएगी व आप स्वयं अपने निष्कर्षों पर चकित हो जाएंगे।

ग्रन्थ का माहात्म्य :

ये जानन्ति बुधाः खगाष्टवर्ग-
माहात्म्याभिधमीश्वरत्वमीयुः ।
ते तस्मात्सततं निबन्धमेतं
निष्णाता वसुधासुराः पठेयुः ॥१२॥

य इति । ये बुधाः पण्डिताः खगा ग्रहास्तेषां येऽष्टकवर्गास्तेषां माहात्म्याभिधं महत्त्वं जानन्ति ते ईश्वरत्वमीयुर्गच्छेयुः । तस्मात्कारणात् निष्णाता निपुणाः वसुधा पृथ्वी तस्याः सुरा देवा ब्राह्मणा इत्यर्थः । सततं निरन्तरमेतमिमं निबन्धं ग्रन्थरचनां पठेयुः । तथा च वृद्धवचः—

'अष्टवर्गदशामार्गः सर्वेषामुत्तमोत्तमः ।
अष्टवर्गस्य माहात्म्यं यो जानाति स ईश्वरः ॥' इति

जो विद्वान् पण्डित ग्रहों के अष्ट वर्ग की महत्ता को जानते हैं, वे निश्चय से ईश्वरत्व को प्राप्त हो जाते हैं। अर्थात् उनकी वाणी कभी मिथ्या नहीं होती है।

अतः निपुण ब्राह्मण को अपने भविष्य कथन की शक्ति में सटीकता व प्रामाणिकता बढ़ाने के लिए इस अष्टकवर्ग महानिबन्ध का निरन्तर अनुशीलन करना चाहिए।

यहां ग्रन्थकार ने अष्टकवर्ग की महिमा को रेखांकित किया है। भविष्य कथन की प्रामाणिकता अष्टकवर्ग से निःसन्देह बढ़ जाती है, यह बात अनुभव सिद्ध है। अतः इस दिशा में विद्वान् दैवज्ञों को निरन्तर अभ्यास करते रहना चाहिए, जिससे निश्चय से तथ्यवाक् कहलाकर संसार में प्रतिष्ठा व गौरव प्राप्त कर सकेंगे।

उपसंहार :

खण्डग्रामे विप्रमुख्यो मुकुन्दो
योऽभूत्संघं जातकानां निरीक्ष्य।
गोगोगोभूसम्मिते विक्रमाब्दे
चैत्रे मासे शुक्लपक्षे दशम्याम् ॥१३॥
भोपेतायां व्योमरत्ने विसारं
प्राप्ते प्रोक्तस्तेन कान्तो निबन्धः।
बद्धो वृत्तैर्बाणबाणाब्धितुल्यैः
प्रीत्यै राधाकृष्णयोरेव भूयात् ॥१४॥

खण्डेति। भेति च। खण्डग्रामे गढ़वालदेशान्तरे देवप्रयाग समीपवर्तिने खण्ड नाम्निग्रामे यो विप्रेषु ब्राह्मणेषु मुख्यः मुकुन्दो मुकुन्दरामदैवज्ञोऽभूत्। येन जातकानां जातकसम्बन्धिफलादेशग्रन्थानां संघं समूहं निरीक्ष्य गोगोगोभूसमिते एकोनद्विसहस्र-तुल्ये विक्रमाब्दे चैत्रे शुक्लपक्षे भोपेतायां शुक्रवारयुक्तायां दशम्यां व्योमरत्ने रवौ विसारं प्राप्ते मीनराशिं गतवति, तदा तेन बाणबाणाब्धितुल्यैः पंचपंचाशदुत्तरचतुःशततुल्यैर्वृत्तैश्छन्दोभिर्बद्धो ग्रथितः कान्तो मनोहारः निबन्धः प्रोक्तः। एवं राधाकृष्णयोः प्रीत्यै भूयात्।

एवमिह विवृतिपूर्तिकालकथनम्—

आसीद् विप्रकुले मुकुन्दगणकः खण्डाभिधे ग्रामके,
तेनाकारि मनोरमा गतमला टीका निबन्धस्य हि।
वर्षे विक्रमभूभृतोऽम्बरवियत्खोष्ठोन्मिते माधवे,
मासे मेचकपक्षके फणितिथौ भानोर्दिनेऽर्केऽजगे ॥' इति

इति श्री गढ़देशान्तर्गत देवप्रयागसमीपवर्ति खण्डग्रामवास्तव्येन बडेथवाल वंशावतंस श्रीमत्पण्डित रघुवरदत्तशर्मतनुजनुषा श्रीमत्पण्डित मुकुन्ददैवज्ञशर्मणा विरचितेऽष्टकवर्ग महानिबन्धे निजनिर्मित मनोरमा व्याख्योपेतेऽष्टकवर्गारिष्टा-ध्यायः समाप्तिमाप्तः॥ श्रीरस्तु

इति श्री गढ़वालदेशान्तर्गत देवप्रयाग समीपवर्ति खण्ड ग्रामवास्तव्येन बडेथवालवंशावतंसश्रीमत्पण्डितरघुवरदत्त शर्म तनुजनुषा श्रीपं० मुकुन्द दैवज्ञ शर्मणा विरचितेऽष्टकवर्गमहानिबन्धे निजनिर्मित मनोरमा संस्कृतटीकोपेतेऽष्टक वर्गारिष्टाध्यायः समाप्तिमाप्तः। श्रीरस्तु।

गढ़वाल प्रदेश में देव प्रयाग जैसे दर्शनीय व रमणीय स्थान के निकट 'खण्ड' नामक ग्राम के निवासी ब्राह्मण वर्ग में प्रतिष्ठा प्राप्त 'पं० मुकुन्दराम दैवज्ञ' उत्पन्न हुए हैं।

उन्होंने समस्त जातक ग्रन्थ समुदाय का मनन व परिशीलन करने के उपरान्त विक्रम सं० १६६६, चैत्र शुक्ली दशमी तदनुसार शुक्रवार को मीन राशि के सूर्य संक्रमण काल में ४५५ वृत्तों से विभूषित यह अत्यन्त मंजुल ग्रन्थ सम्पूर्ण किया। इस ग्रन्थ के निर्माण से श्री राधाकृष्ण प्रसन्न हों।

व्याख्या पूर्तिकालादि कथन :

यत्प्रसादाद्विलीना मे मोहाद्याः कार्यशत्रवः।
विराजं सृष्टिहेतुं तं धामधाम नमाम्यहम् ॥१॥

रेखाकाशग्रहात्मसम्मित शके(१६०८)ऽर्के कर्कटे सायने,
राकेशस्य तिथौ दिनेशदिवसे ज्येष्ठे मुकुन्दकृतौ।
भ्रान्तिव्याधिनिवारणैककुशला टीकावसानं गता,
सेयं मंजुलसाक्षरेति रमतां नूनं सतां मानसे ॥२॥

अष्टौ वर्गाः ख्यातपूर्वा हि लोके,
ग्रन्थस्तेषां नास्ति लोकोपकारी।
तस्मात्सर्वं सारमादाय बद्धं,
गूढं ग्रन्थं सम्यगाचष्ट मिश्रः ॥३॥

मिश्रोपाह्वसुरेशेन कृतेयं मंजुलाक्षरा।
स्वारस्येन सदा कुर्याज् जिज्ञासूनां विबोधनम् ॥४॥

[इति श्रीमत्पण्डित मुकुन्ददैवज्ञविरचितेऽष्टकवर्गमहानिबन्धे पं० सुरेश मिश्र-कृतायां 'मंजुलाक्षरा' यां हिन्दीव्याख्यायामष्टकवर्गारिष्टाध्यायोऽष्टमोऽवसितः।]

॥ समाप्तश्चायं महानिबन्धः ॥

ॐ शान्तिः ॐ शान्तिः ॐ शान्तिः ॥

हस्त-रेखाएं बोलती हैं मूल लेखक—कीरो

हस्त-रेखा विज्ञान के क्षेत्र में काउन्ट लुईस हेमन (कीरो) का नाम किसी परिचय का मोहताज नहीं है।

हस्त-रेखा के साथ-साथ अंक् विद्या और ज्योतिष के तालमेल द्वारा की गई अपनी भविष्यवाणियों से सारे विश्व को चमत्कृत कर देने वाले कीरो की यह सर्वश्रेष्ठ रचना है। मूल अंग्रेजी पुस्तक से केवल अनुवाद ही नहीं किया गया है; अपितु विद्वान् अनुवादक ने स्थान-स्थान पर भारतीय सामुद्रिक शास्त्र एवं अन्य मान्यता प्राप्त पाश्चात्य हस्त-रेखाविदों के मतों का साथ-साथ तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत कर पुस्तक की उपयोगिता को निश्चय ही बढ़ाया है।

यह कोरा अनुवाद नहीं है, हाथ की भाषा को समझने की तुलनात्मक दृष्टि पाने का एक प्रशंसित सोपान है।

हिन्दी के पाठकों को सर्वोत्तम ज्ञान मिले, यही हमारे इस प्रयास का उद्देश्य है। हस्तरेखा को सम्पूर्ण विज्ञान के रूप में आप इससे समझेंगे तथा इसके सप्रमाण विवेचन से स्वयं चमत्कृत हुए बिना नहीं रह सकेंगे।

इसमें कई प्रसिद्ध व्यक्तियों के हाथों के चित्र देकर हस्त-रेखा के नियमों को प्रत्यक्ष सिद्ध किया गया है। इसमें स्वयं कीरो का भी हाथ शामिल है।

हाथ का आकार, रोयें, हाथ का पिछला भाग, मणिबन्ध, नाखून, गांठें, अंगूठा, अंगुलियां, पर्वों व सभी छोटी-बड़ी रेखाओं व चिह्नों का एक प्रामाणिक विवेचन कीरो की कलम से।

इस पुस्तक को पढ़िए तथा अपने सम्पर्क में आने वाले व्यक्तियों का अध्ययन कीजिए। फिर देखिए कि कुछ ही दिनों में आपका उत्साह दूना बढ़ जाएगा। आप स्वयं तो चमत्कृत होंगे ही, अपने विश्लेषण से अपने चारों तरफ प्रशंसकों की भीड़ पाएंगे।

थोड़ा समय खर्च कीजिए और पूर्ण आनन्द पाइए।

हस्त-रेखाओं की भाषा अब आपको जटिल बिल्कुल भी नहीं लगेगी। जी हां, आप स्वयं एक कुशल हस्तरेखा परीक्षक बन सकते हैं?

इस दिशा में अपना पहला कदम कीरो के निर्देशन में उठाइए।

रोग, आयु, उन्नति, सुख, यश, पदवी आदि के संकेत आपकी मुट्ठी में हैं।

पढ़िए और विचित्र अनुभव प्राप्त कीजिए। मूल्य : ४० रुपये

अनिष्ट ग्रह : कारण और निवारण

—जगन्नाथ भसीन

ग्रहों के कुफल का कारण क्या है ? उसे कैसे दूर किया जा सकता है ? इस विषय का तर्कसम्मत वैज्ञानिक विवेचन।

ग्रहों की पूजा परमात्मा की ही पूजा का रूप है। अनुष्ठान से सब मुसीबतों को दूर किया जा सकता है।

शान्ति के पीछे क्या रहस्य है ? रत्नों द्वारा शान्ति, मन्त्र, तन्त्र व यन्त्र से शान्ति तथा अनुभव सिद्ध टोटकों से शान्ति की सम्पूर्ण जानकारी।

टोटकों से शान्ति के विषय में उर्दू की प्रसिद्ध 'लाल किताब' का जवाब नहीं; इसके आवश्यक अनुभूत व तुरन्त फल देने वाले सस्ते टोटकों का खजाना भी साथ है।

किस प्रकार क्या उपाय करें ? कब किस उपाय को अपनाना चाहिए ? सब कुछ सरल व सटीक ढंग से पेश किया है आपके सुपरिचित यशस्वी लेखक स्व० श्री जगन्नाथ भसीन ने। फिर भला प्रामाणिकता की क्या शंका ? सारी सम्बन्धित जानकारी बहुत थोड़े नाममात्र मूल्य में है। न हल्दी लगे न फिटकरी और रंग आए चोखा। मूल्य : २० रुपये

ज्योतिष और रोग

—जगन्नाथ भसीन

'आरोग्यं मूलमुत्तमम्' अर्थात् पहला सुख निरोगी काया है।

रोग का कारण क्या है ? रोग की समाप्ति कब तक होगी ?

रुग्णावस्था में क्या सावधानियां रखें ? रोग के दूर करने का क्या उपाय है ? इन सब प्रश्नों का उत्तर ज्योतिष के झरोखे से पाइए।

सब कुछ इतना तर्कपूर्ण (Logical) कि शंका का अवसर ही नहीं बचेगा।

प्राचीन आचार्यों के नियम व आधुनिक शिक्षा शैली का मणि-कांचन योग।

विषय को प्रस्तुत करने का ढंग इतना व्यावहारिक कि ज्योतिष का थोड़ा-सा परिचय रखने वाले लोग भी पूरा लाभ पा सकेंगे।

ज्योतिष शास्त्र के नियमों की खरी, सच्ची किन्तु कड़ी परीक्षा कीजिएगा, क्योंकि साथ में लगभग 80 वास्तविक कुण्डलियों का विवेचन किया गया है।

विवेचन इतना निष्पक्ष, तार्किक एवं युक्तियुक्त कि आप स्वयं ही निष्कर्षों पर मोहित हो जायेंगे।

शैली ऐसी कि प्रत्येक क्यों ? व कैसे ? का सन्तोषजनक उत्तर मिले। लेखक के दीर्घकालीन परिश्रम व व्यापक अनुभव का पूरा लाभ उठाइए।

मूल्य : २० रुपये